हुज़ूरी चिट्ठियाँ

और अन्य लेख

भाग १

अथवा

स्वामीजी महाराज, हुज़ूर महाराज, महाराज साहब

और

बाबूजी महाराज

की चिट्ठियाँ सतसंगियों के नाम
और दीगर तहरीरात

अनुवादक

संतदास माहेश्वरी, एम० एस सी०

पर्सनल असिस्टेंट टू बाबूजी महाराज

राधास्वामी सतसंग, स्वामी बाग़, आगरा

INTRODUCTORY NOTE

This volume contains the letters of Soamiji Maharaj, Huzur Maharaj, Maharaj Saheb and Babuji Maharaj. In case of the Hindustani letters, English rendering has been given below the originals : likewise the English letters have been translated into Hindustani.

No apology is needed for bringing out the scriptural literature of this type. As a matter of fact most of these letters have already appeared in print from time to time in different publications, but it was felt that a collation of all the sacred epistolary writings in a book form would be of greater benefit to Satsangis. Hence this book. But it appears proper to mention one incident in this connection. Since the departure of Babuji Maharaj, attempts are being made, though abortive so far, to prop up half-baked gurus. Some of these blind leaders have taken recourse to indecent methods, not excluding the vilification of the true Gurus and subversion of the pristine principles and tenets of this Faith. One of such misguided persons has gone to the length of asserting that Babuji Maharaj was not a Sant Sat Guru. In support of this assertion, he refers to a particular letter of Babuji Maharaj, wherein He is said to have used the subscription "Khaksar" (insignificant, like dust) for Himself. This prompted me to rummage the old writings and letters in my possession. I found a letter of Huzur Maharaj addressed to Babuji Maharaj, wherein Huzur Maharaj has used the subscription "Kam-tarin" (the lowliest) for Himself. This letter commences as under :—

राधास्वामी के प्यारे शब्द के संवारे अज़ीज़ मेरे बाबू माधो प्रसाद जी साहब !

Radhasoami ke Pyare, Shabd Ke Sanware, Aziz Mere, Babu Madhav Prasad Ji Saheb !

(Beloved of Radhasoami, Adorned with Shabd, My dear Babu Madhav Prasad ji Saheb)

It would be pertinent to mention here that Soamiji Maharaj, in His letters, often addressed Huzur Maharaj as :—

सतगुरु के प्यारे साहब के दुलारे शब्द के सँवारे अज़ीज़ मेरे सालिग राम !

"Sat Guru Ke Pyare, Saheb ke Dulare, Shabd ke Sanware, Aziz Mere, Salig Ram."

(*Beloved of the Satguru, Blessed of the Lord, Adorned with Shabd, My dear Salig Ram !*)

From the above, even a novice can see what position Babuji Maharaj occupied in the Satsang of Huzur Maharaj. In any case, there can be no more conclusive and indisputable proof of Babuji Maharaj's high spiritual status and position. He was as much the recipient of Huzur Maharaj's affection and favour as Huzur Maharaj was of Soamiji Maharaj.

Good cometh out of evil. The vilification by the निंदक *nindak* (slanderer) mentioned above has thus resulted in salvaging a very valuable letter. This reminds me of the line.

कबीर निंदक मत मरो, जीओ आद जुगाद
Kabir nindak mat maro. jeeyo adi jugadi

Translation :—Kabir prays that nindak (slanderer) may not die at all. May he live for ages and ages.

It appears fitting, therefore, that besides thanking my friends who have helped me in the preparation of this book, I should thank that *nindak* (slanderer) particularly.

May 20, 1964.

S D Maheshwari

प्राक्कथन

इस ग्रंथ में स्वामीजी महाराज, हुज़ूर महाराज, महाराज साहब और बाबूजी महाराज के पत्र दिये गये हैं। हिन्दी पत्रों का अनुवाद, उनके नीचे, अँग्रेजी में और इसी प्रकार अंग्रेजी पत्रों का अनुवाद हिन्दी में दिया गया है।

इस प्रकार के पारमार्थिक पत्र विषयक साहित्य की क्या उपयोगिता है, सतसंगी और खोजी भली भांति जानते हैं। बहुत से पत्र समय समय पर विभिन्न पुस्तकों में प्रकाशित हो चुके हैं। यदि इन सब पत्रों को एक स्थान पर एकत्रित कर दिया जाय तो पाठकों को विशेष सुविधा और लाभ प्राप्त होगा, इस आशय से प्रस्तुत ग्रंथ का सृजन हुआ है। किन्तु इस संबंध में एक विशेष घटना का उल्लेख करना उपयुक्त प्रतीत होता है। बाबूजी महाराज के निज धाम सिधारने के पश्चात् अनेक अध-कचरे गुरुओं के खड़े करने की कोशिशें जारी हैं। इन अध और अज्ञानी व्यक्तियों में से ज़्यादातर ना-मुनासिब और ना-ज़ेबा तरीकों और हथकंडों का इस्तेमाल करते हैं। वे सच्चे गुरुओं की निन्दा करने और मत के आदि, मूल और निर्विवाद सिद्धांतों और उसूलों में हेर फेर करने से नहीं चूकते। इन ना-समझ और बे-तमीज़ लोगों में से एक व्यक्ति ने यहां तक कहने की धृष्टता और दुस्साहस कर डाला है कि बाबूजी महाराज संत सतगुरु नहीं थे। अपने कथन के समर्थन में वह कहता है कि उसके पास एक पत्र मौजूद है जिसमें बाबूजी महाराज ने अपने को "ख़ाकसार" लिखा है।

"ख़ाकसार" के मानी हैं, "अति दीन, तुच्छ, विनम्र, विनीत, इत्यादि"। प्राय: नम्रता दिखलाने के लिये अपने संबंध में बोलते या लिखते हैं।

इस बात से मेरे दिल में कुरेद पैदा हुई कि हुज़ूरी चिट्ठियां जो मेरे पास रक्खी हैं, उनको देखूँ। इनमें से हुज़ूर महाराज की अपने हाथ की लिखी हुई एक चिट्ठी, बाबूजी महाराज के नाम, मिली जिसमें हुज़ूर महाराज ने चिट्ठी के अंत में "कम-तरीन" लिख कर "सालिग राम" दस्तखत किये हैं। "कम-तरीन" के मानी हैं, "सबसे कम, न्यूनतम, बहुत ही तुच्छ"। इस शब्द का प्रयोग भी बोलने या लिखने वाला नम्रता दिखलाने को अपने लिये करता है।

उपरोक्त पत्र को परम पुरुष पूरन धनी हुज़ूर महाराज ने इस तरह शुरू किया है :—

राधास्वामी के प्यारे शब्द के सँवारे अज़ीज़ मेरे बाबू माधो प्रसाद जी साहब ! इस संबंध में सतसंगी जानते हैं कि स्वामीजी महाराज, अपने पत्रों में, अक्सर हुज़ूर महाराज को इन शब्दों में संबोधित किया करते थे :—

सतगुरु के प्यारे साहब के दुलारे शब्द के सँवारे अज़ीज़ मेरे सालिगराम !

इस से नव दीक्षित व्यक्ति भी समझ सकते हैं कि हुज़ूर महाराज के सतसंग में बाबूजी महाराज का क्या रुतबा और मर्तबा था । हर प्रकार से, बाबूजी महाराज की उच्च आध्यात्मिक गति और पदवी के विषय में इससे अधिक अकाट्य, निर्विवाद और निश्चित् प्रमाण नहीं हो सकता । स्वामीजी महाराज की जो शफ़क़त* और दया हुज़ूर महाराज पर थी, वही हुज़ूर महाराज की बाबूजी महाराज पर थी ।

कहावत है कि बुराई में से भलाई निकलती है । उस निंदक की निंदात्मक बातों से यह नतीजा बरामद हुआ कि एक अमूल्य पत्र, जो दबा हुआ पड़ा था, ७६ वर्ष पश्चात् सतसंगियों को दर्शन करने के लिये मिला । कबीर साहब ने ठीक ही कहा है :—

कबीर निंदक मत मरो, जीओ आद जुगाद

अतः यह उचित ही है कि जिन मित्रों ने इस ग्रंथ की तैयारी में सहायता और सहयोग दिया है, उनको धन्यवाद देने के अतिरिक्त मैं उस निंदक को भी बहुत २ धन्यवाद दूँ ।

२० मई १९६४

सन्तदास माहेश्वरी

---

* बड़ों की ओर से छोटों पर दया दृष्टि, ममता, आत्मीयता ।

CONTENTS

No. of Chapter	Subject	No. of Page
1.	Letter of Soamiji Maharaj to His younger brother Rai Bindraban Saheb	17
2.	Letter of Huzur Maharaj to Seth Sudarshan Singh Saheb, the nephew of Soamiji Maharaj	26
3.	Letter of Maharaj Saheb to Seth Sudarshan Singh Saheb	29
4.	Extracts from Huzur Maharaj's letters to Satsangis	32
5.	Extracts from Maharaj Saheb's Letters to Satsangis	82
6.	Extract from Babuji Maharaj's letters to Satsangis	134
7.	Correspondence exchanged between the Secretary, Soami Bagh, Agra (India), and a follower of the Beas group, Mr. Harvey H. Myers, California, U. S. A.	323
8.	A note dictated by Babuji Maharaj	376
9.	Questions and answers	388
10.	Translation of Bachans of Babuji Maharaj and questions by Satsangis and His answers contained in gramophone records	409

सूचीपत्र

अध्याय संख्या	विषय	पृष्ट संख्या
१	स्वामीजी महाराज का ख़त राय बिंद्राबन साहब के नाम	१७
२	हुज़ूर महाराज का ख़त सेठ सुदर्शन सिंह साहब के नाम	२३
३	महाराज साहब का ख़त सेठ सदर्शन सिंह साहब के नाम	३१
४	हुज़ूर महाराज की चिट्ठियां सतसंगियों के नाम	३३
५	महाराज साहब की चिट्ठियां सतसंगियों के नाम	८२
६	बाबूजी महाराज की चिट्ठियां सतसंगियों के नाम	१३४
७	व्यास वाले फ़िरक़े के अनुयायी मिस्टर हारवे मीयर्स कैलीफोरनिया, अमेरिका, के साथ पत्र व्यवहार	३५१
८	बाबूजी महाराज के लिखाए हुए एक नोट का सारांश	३७९
९	सवाल जवाब	३८०
१०	बाबूजी महाराज के बचन और चन्द सवाल और उनके जवाब जिनके ग्रामोफोन रेकार्ड बने	३९८

Soamiji Maharaj with some of the male members of His family, and Huzur Maharaj. Soamiji Maharaj is sitting in the chair. His younger brother Rai Bindraban Saheb is sitting on a stool. Uncle Partap Singh, Soamiji Maharaj's youngest brother, is sitting on the carpet close to Soamiji Maharaj. Huzur Maharaj is standing, with a Chanwar (a kind of flapper to drive away flies) in his right hand, close to and behind Soamiji Maharaj's chair.

Suchet Singh is standing in between Soamiji Maharaj and Rai Bindraban Saheb. Sujan Singh is standing on the right of Rai Bindraban Saheb. Sudarshan Singh alias Seth Saheb is sitting on the carpet in between Soamiji Maharaj and Rai Bindraban Saheb.

Suchet Singh, Sujan Singh and Sudarshan Singh were the three sons of uncle Partap Singh alias Chachaji Saheb.

स्वामीजी महाराज सकुटुम्ब और हुजूर महाराज

स्वामीजी महाराज की कुर्सी के पीछे स्वामीजी महाराज के बाईं ओर हुजूर महाराज दाहिने हाथ में चँवर लिये खड़े हैं। स्वामीजी महाराज के दाहिनी ओर मूढे पर राय बिन्द्राबन साहब बैठे हैं। स्वामीजी महाराज के बाएं चरण के पास चाचाजी साहब और दाहिने चरण के पास लाला सुदर्शनसिंह सेठ बैठे हैं। स्वामीजी महाराज की कुर्सी के पीछे स्वामीजी महाराज के दाहिनी ओर लाला सुचेतसिंह सेठ और राय बिन्द्राबन साहब के दाहिनी ओर लाला सुजानसिंह सेठ खड़े हैं।

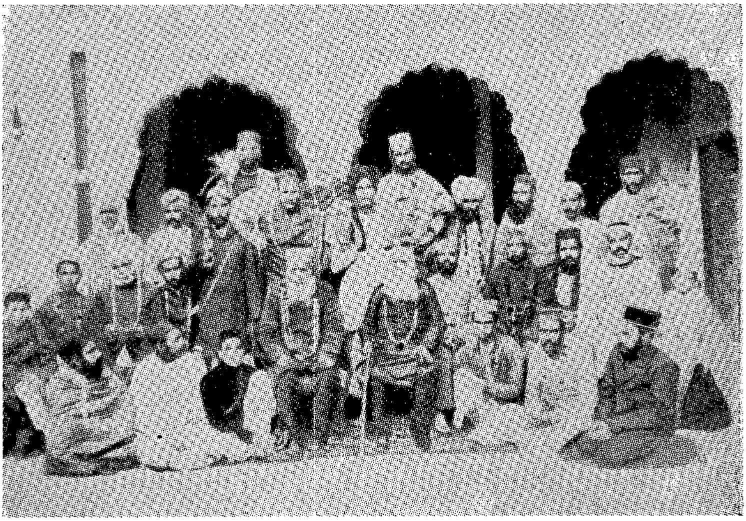

Huzur Maharaj and uncle Partap Singh (Chachaji Saheb) sitting on chairs (in the centre). Uncle Partap Singh with a stick in his right hand is on the left of Huzur Maharaj. Maharaj Saheb is standing just behind the chair of Huzur Maharaj. Babuji Maharaj is sitting on the ground on the extreme left and is looking at Huzur Maharaj.

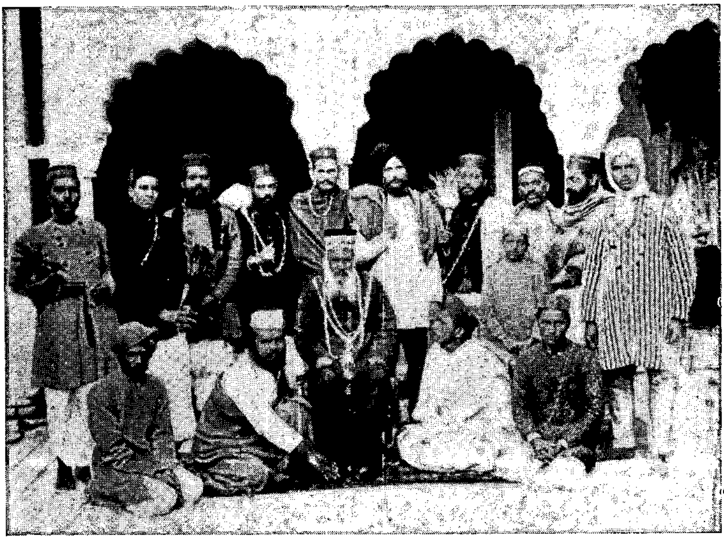

Huzur Maharaj with His Satsangis. Maharaj Saheb is standing just behind Huzur Maharaj and against the central pillar. Babuji Maharaj is standing last but one on the right (against the pillar) and is looking at Huzur Maharaj.

CHAPTER 1

LETTER OF SOAMIJI MAHARAJ

To

His Younger Brother
Rai Bindraban Saheb

अध्याय १

स्वामीजी महाराज का ख़त

राय बिंद्राबन साहब

के नाम

FASCIMILE OF A LETTER FROM SOAMIJI MAHARAJ

TO HIS YOUNGER BROTHER RAI BINDRABAN SAHEB

स्वामीजी महाराज का ख़त
राय बिंद्राबन साहब के नाम

प्रतिलिपि

अज़ीज़ अज़ जान सआदत व इक़बाल निशान लाला बिन्द्राबन जाद क़द्रहू। बाद दुआहाय तज़ायद दौलत व हशमत कि अखस मारबे दिलीस्त वाजै खातिर अज़ीज़ बाद। अहवाल ईं नवाहे ब-फ़ज़्ल सतगुरु साहब मक़रून ब-शुक्रो सिपास। अज़ीज़ एशाँ कि अज़ ईं जा रुखसत शुदा ब-जानिब अजमेर रसीदा अंद। यक़ीन कि अज़ कारे सरकारी ख़बरदार बूदा व-होशियारी व दयानत अंजाम ख़्वाहंद दाद। व हर यकेरा ब-जानिबे दयानत व ईमान राहनुमा बाशंद व हरचे नसायह कि ब आँ अज़ीज़ करदा दादाअम आंरा दस्तूर उल अमल रोज़मर्रए ख़ुद दानिस्ता ब-यादे गुरु इश्तग़ाल दारंद व बजुज़ दो अमूर यके कारे सरकार कि बाइसे रिज़्क़ दुनियास्त व दोम यादे हक़ कि बख़्शिदये सरवते अबदीस्त ब-अम्रे सोयमी मुतलक़ मुख़ातिब न शवंद। ज़ीराकि अज़ाँ तरक़्क़ी दर्जात दो जहानस्त व दर हालते रंजीदगी व तशवीश हिरासाँ न शवंद व पोथीहाय हमराही रा मुताला नुमाइंद व यक दम अज़ हर दो अमूर मुसर्रहे बाला ग़ाफ़िल न बाशंद व ईं जानिब हम ब-कारे सरकार मसरूफ़ अस्त। अव्वल नामये आँ अज़ीज़ मशअरे हालाते आँ जा मय रास्ता ख़्वाहद रसीद। आं ज़मां हरचे नविश्तनी ख़्वाहद बूद ख़्वाहम निगाश्त। व दर हर हालत ब-यादे गुरु बायद परदाख़्त व दर हक़्क़े दोस्त व दुश्मन बजुज़ नेकी खयाले दीगर दर दिल न गुज़रानन्द। व हम दिलरा मसरूफ़ रज़ामंदीए ख़ालिक़ दारंद। आइंदा हरचे मर्ज़ीए ओस्त ख़्वाहद शुद व हर हाल खंदां रुए व खुश दिल बाशंद व हंगामे ज़रूरत खते मरसूला ईं जानिब रा निगहदाश्ता मुताला मी नमूदा बाशंद कि वक़्ते दिक़्क़त बाइसे तसकीने तबियत ख़्वाहद गरदीद व हिम्मते ख़ुदरा दर हर कार ज़्यादातर दारंद। ज़्यादा दुआ। फ़क़त।

ब-खिदमते क़िबला खुंदाबंद लाला नंदीशंकरजी आदाब तसलीमात पिज़ीराबाद। मज़मून वाहिदस्त। तबियतरा मसरूफ़े वहदत फ़रमायंद। मुतवज्जह कसरते हर जिन्स न गरदंद। आयन्दा हिकमत ब-लुक़मान पिन्दाश्तम्। लिहाजा ज़्यादा नियाज़ अस्त। फ़क़त। दर खानए आं साहब ब-हर नौ खैरियत अस्त। अज़ शिवनरायन किरानीए दफ़्तर सलाम बरसद व अज़ बाबू रामधन राइटर दफ़्तर बंदगी बरसद।

अनुवाद

जान से प्यारे भाई लाला बिन्द्राबन जिनसे नेक-बख़्ती[1] और इक़बालमंदी[2] ज़ाहिर होती है, क़द्र बढ़े । दौलत और हशमत[3] की ज़्यादती की दुआ के बाद जो ख़ास दिली[4] मक़सद[5] है, मालूम हो कि यहाँ सतगुरू साहब की दया से हालत क़ाबिल शुक्र है । जब से कि तुम यहां से रुख़सत[6] होकर अजमेर की तरफ़ गए हो, यक़ीन है कि अपना सरकारी काम होशियारी और ईमानदारी से अंजाम[7] देते होगे और हर शख़्स को दयानतदारी[8] और ईमानदारी से काम करने के लिए रहनुमाई[9] करते होगे और जो दो नसीहतें[10] कि मैं करता रहा हूँ, उनको रोज़ाने का दस्तूर उल अमल[11] समझ कर गुरु महाराज की याद में मशग़ूल[12] रहो और सिवाय दो कामों के यानी एक सरकारी काम जिससे दुनियावी रोज़ी हासिल होती है और दूसरे मालिक की याद कि जिससे हमेशगी की दौलत नसीब होती है किसी तीसरी बात की तरफ़ किसी तौर पर हरगिज़ मुख़ातिब[13] न हो क्योंकि इससे दोनों जहान[14]की तरक़्क़ी होती है । और रंज और परेशानी की हालत में घबराना नहीं चाहिये और जो पोथियां साथ में हैं, उनको पढ़ते रहो और जो दो बातें ऊपर बतलाई गई हैं.उनसे दम भर भी ग़ाफ़िल मत. हो और हम भी सरकारी काम में मसरूफ़[15] हैं । पहले ख़त तुम्हारे पहुँचने का आवेगा जिसमें वहाँ के और रास्ते के हालात लिखे होंगे, उस वक़्त जो कुछ लिखना होगा, लिखेंगे और चाहे जैसी हालत हो गुरु की याद नहीं बिसरना चाहिये और दोस्त और दुश्मन दोनों के हक़[16] में सिवाय नेकी के और दूसरा ख़याल दिल में नहीं आना चाहिये और अपने दिल को भी मालिक की मरज़ी में लगाए रखना चाहिये । आइन्दा जो कुछ उसकी मरज़ी है, होगा । हर हालत में ख़ुश दिल और हँसमुख रहना चाहिये और ज़रूरत के वक़्त हमारे भेजे हुए ख़त को तवज्जह के साथ पढ़ते रहना चाहिये ताकि दिक़्क़त के वक़्त तबियत को तसकीन[17] हो और हर काम में अपनी हिम्मत बुलंद[18] रखनी चाहिये ।

क़िबला[19] लाला नंदीशंकरजी की ख़िदमत[20] में आदाब[21] तसलीमात[22] क़बूल हो । उनके लिये भी यही मज़मून है । अपनी तबियत को एक मालिक की तरफ़ लगाए रक्खें । दुनिया के परपंच में न पड़ें । आइन्दा कुछ और ज़्यादा लिखना लुक़मान हकीम को हिकमत[23] सिखाना है । ज़्यादा नियाज़[24] । आपके घर हर तरह से ख़ैरियत है । शिवनारायन किरानी[25] दफ़्तर की तरफ़ से सलाम पहुँचे और रामधन राइटर[25] दफ़्तर की तरफ़ से बन्दगी पहुँचे । हस्ताक्षर स्वामीजी महाराज

(1) नेक बख़्त = भाग्यवान् । (2) ईक़बालमंद = प्रतापशाली । (3) संपत्ति । शान शौकत । (4) दिल का (5) मतलब (6) रवाना । (7) अंजाम देना = पूरा करना । (8) ईमानदारी । (9) रास्ता बतलाना । (10) शिक्षाएँ । (11) नियम (12) काम में लगे हुए (13) मुख़ातिब होना = किसी की ओर मुँह करके बोलना । (14) लोक परलोक । (15) काम में लगे हुए । (16) हक़ में = पक्ष में । (17) तसल्ली । ढारस । संतोष (18) ऊँची । (19) पूज्य । (20) सेवा । (21) सलाम । बन्दगी । (22) प्रणाम । (23) विद्या । ज्ञान । (24) सलाम । (25) मुंशी । क्लर्क ।

TRANSLATION

My most beloved, blessed and eminent brother Lala Bindraban, may you always prosper !

After blessings for the enhancement of your wealth and rank, which is the genuine wish of my heart, I should like you to know that by the grace of Sat Guru Saheb all is well here, for which we should be grateful to the Almighty. I believe that, since the time you left this place for Ajmer, you have been attending to your official work with care and honesty and that you are leading and guiding others also along the path of honesty and righteousness. Following as a regular rule of conduct, the advice which I have been giving you, of discharging your duties faithfully and honestly, you should, at the same time, remain engaged in your devotion to the Guru, and but for attending to these two duties, namely, first your official work, which provides the means of your livelihood, and secondly devotion to the Supreme Being, who bestows the precious gift of eternal life, you should, on no account, attend to anything else. Such course of action will lead to your advancement and progress in both the worlds. You should not feel disheartened during the period of worries and difficulties. Keep on reading the holy books, which you have with you, and do not, even for a moment, forget the two instructions given above. I, too, am busy with official work. Your first letter should contain a description of that place and of the journey. I shall then write to you whatever would seem appropriate at that time. Under all circumstances, keep yourself engaged in the devotion to the Guru. Do not think of doing anything but good to your friend and foe alike. You should attune your mind to the will of the Supreme Creator. Whatever He wills shall come to happen. Under all conditions keep cheerful and smiling and, when necessary, read my letter with attention, so that it may afford you the necessary peace of mind, when you are faced with any difficulty. Keep your spirits high in whatever you do. With blessings.

Please convey my respects to revered Lala Nandi ShanKar. I have the same message for him. He should also keep his mind engaged in devotion to the Almighty alone and should not get himself entangled in unnecessary worldly affairs. To say anything more to him would be like teaching medicine to Luqman. I close with blessings. All is well at the residence of that gentelman.

Please accept Satnam from Shiva Narain, clerk of the office, and respects from Babu Ram Dhan writer.

(Shiv Dayal)

अध्याय २

हुजूर महाराज का ऐतिहासिक पत्र सेठ सुदर्शन सिंह साहब

के नाम

जिसके आधार पर सार बचन बार्तिक के बचन २५०, २५१ और २५२ लिखे गए

मुशफ़िक़[1] व मुकर्रम[2] मन[3] सेठ सुदर्शन सिंह साहब ज़ाद[4] लुत्फ़हू — बाद राधास्वामी फ़रावां[5] इल्तमास[6] यह कि दो क़िता[7] रोज़नामचा[8] आपके पहुँचे। अभी दरबार हुज़र में सुनाए नहीं गए। मैंने एक नज़र सरासरी उन पर करके दो सवालात आपके जिनका जवाब जरूरी समझा गया हुज़ूर में अर्ज़ करके हुक्म हासिल किया सो वास्ते इत्तिला आपके तहरीर[9] करता हूँ। अव्वल निस्बत भजन व सुमिरन ब-अय्याम[10] दरसी[11] इम्तिहान — हुज़र ने फ़रमाया कि इसमें ज़्यादा कोशिश की जरूर नहीं। जिस क़दर कि फ़ुरसत मिले और उसमें जिस क़दर कि बन सके भजन व सुमिरन करना और तादाद[12] मुअइयना[13] वक़्त का ख्याल कुछ जरूर नहीं है और फ़िज़ूल तकलीफ़ अपने ऊपर गवारा न करना। बाद इनकज़ाअ[14] अज़[15] इम्तिहान फिर जैसा मौक़ा होवे और जिस क़दर फ़ुरसत हासिल होवे उस ब-मूजिब अमल दरामद[16] करना। फ़क़त। दूसरे

(1) मेहरबान। (2) प्रतिष्ठित। (3) मेरे। (4) आप पर मालिक की दया विशेष हो। (5) बहुत। (6) निवेदन। (7) खंड। (8) डायरी। (9) लिखना। (10) दिनों में। (11) पढ़ने के मुताल्लिक़। (12) गिनती। (13) मुकर्रर किया हुआ। (14) खतम होना। (15) से। (16) आचरण करना।

ब-मुक़दमे[1] सरन लेने पूरे गुरु के जो बाद कर लेने एक गुरु शब्द भेदी के मिलें—यह हुक्म हुआ है कि जिस शख़्स को अव्वल एक गुरु बे भेदी शब्द के मिले और फिर सतगुरु शब्द भेदी मिलें तो उसको अव्वल गुरु को फौरन तर्क करके सतगुरु की सरन लेना चाहिये। क़ौल—झूठे गुरु की टेक को तजत न कीजे बार, द्वार न पावे शब्द का, भटके बारम्बार। बल्कि उस गुरु को भी मुनासिब है कि हमराह[2] अपने चेले के सतगुरु की सरन में आवे। दूसरे यह कि जिसको शब्द भेदी गुरु मिले पर वे अभी पूरे नहीं हैं, अभ्यासी हैं, और फिर उसको पूरे सतगुरु शब्द मार्गी मिलें तो उसको चाहिए कि गुरु अव्वल को पूरे सतगुरु में दाख़िल समझ कर सतगुरु की सरन लेवे और उसके अव्वल गुरु को फिर ज़रूर है कि वह भी चेले का संग देवे और जो ईरखावान ख़्वाह अहंकारी हैं तो वह सरन में न आवेंगे तो उनसे कुछ ग़र्ज़ और मतलब न रक्खे और खुद पूरे गुरु की सरन में आवे। तीसरे "जिसको पूरे सतगुरु मिले हैं और वह उनकी सेवा और सतसंग और प्रीति प्रतीत भी करता है" मगर इस अरसे में पूरे सतगुरु गुप्त हो गए और इसका काम अभी पूरा नहीं हुआ यानी कुछ अंतर में नहीं खुला "तो अगर इसको ख्वाहिश है कि मेरा काम पूरा होवे तो जो सतगुरु वक़्त दूसरे यानी उन्हीं सतगुरु के बनाए हुए सतगुरु मिलें तो उनसे वैसी ही प्रीति और उनकी सेवा और सतसंग करे और सतगुरु पहले को उन्हीं में मौजूद समझे क्योंकि शब्द स्वरूप करके संत सतगुरु और संत एक ही हैं, दो नहीं हैं और जिस्म[3] करके दो दिखलाई देते हैं। पिछलों की मानता इस सबब से बे-फ़ायदा है कि उनसे प्रीति नहीं हो सकती। न तो उनको देखा, न उनका सतसंग किया और जो सतगुरु मिले नहीं, उनके चरनां में प्रीति मुमकिन नहीं, पस सेवक तालिब[8] को चाहिये कि सतगुरु सानी[9] वक़्त से ऐसी ही प्रीति करे और उनमें और सतगुरु साबिक़[6] में सिवाय जिस्मानियत[7] के भेद या फ़र्क़ न करे और अपना काम पूरा करवावे और जो उसको ख्वाहिश तरक़्क़ी की नहीं है तो सतगुरु साबिक़ की प्रीति और प्रतीत दिल में रक्खे हुए उन्हीं का ध्यान और जो जुगत उन्होंने बताई है, उसी का अभ्यास करे जावे, आखिर को वही सतगुरु उसी रूप से उसका कारज जिस क़दर कि होगा, करेंगे, मगर पूरा कारज नहीं होगा, फिर उसको जन्म धारन करना पड़ेगा और फिर सतगुरु मिलेंगे और तब उनकी भक्ति और सतसंग करके कारज पूरा होगा। और हुज़ूर ने फ़रमाया कि जब सतगुरु वक़्त गुप्त होते हैं, वह उस वक़्त किसी को अपना जा-नशीन मुक़र्रर करके उसमें खुद आ समाते हैं और ब-दस्तूर जीवों का कारज करते रहते हैं और जब मौज ऐसी कार्रवाई की नहीं होती है, तब अपने धाम में जा समाते हैं। इस वास्ते सेवक तालिब[8] को ऐसे सतगुरु में फ़र्क़ न करना चाहिए, मगर जो सिर्फ़ टेकी सेवक हैं, वह सतगुरु सानी[10] की भक्ति में नहीं आवेंगे और इस वास्ते उनका कारज भी जिस क़दर कि सतगुरु पहले के रू-ब-रू हो गया होगा, उसी क़दर होगा, आगे तरक़्क़ी और दुरुस्ती नहीं होगी। फ़क़त। यह सवाल आपका एक था, मगर सेठ सुजान सिंह ने इसमें सवालात करके जवाब मुफ़स्सल हासिल कराया कि ब-जिनसहू[11] आपकी इत्तिला के वास्ते तहरीर हुआ। यकीन है कि अब किसी तरह का शक व शुबहा बाक़ी न रहेगा। बाक़ी खैरियत है। हुज़ूर की और राधाजी की तरफ़

---

(1) विषय में। (2) साथ। (3) देह स्वरूप। (4) अनुरागी। (5) प्रत्यक्ष। (6) पहले (7) देह स्वरूप। (8) अनुरागी। (9) प्रत्यक्ष। (10) दूसरे। (11) ठीक ठीक।

से आपको और सबको दया और सेठ परतापसिंह साहब और सेठ सुजानसिंह की तरफ़ से और सब सतसंगी और सतसंगिनों की तरफ़ से राधास्वामी सबको पहुँचे।....को मेरी तरफ़ से...........राधास्वामी कहना। आज रोज़ दिवाली है। आपको और सबको मुबारक होवे।...........मेरी तरफ़ से तसलीम व शौक़ कहना। एक ख़त पहले भेजा गया है, पहुँचा होगा।

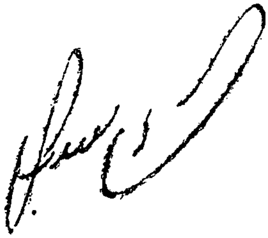

कमतरीन

सालिगराम

CHAPTER 2

THE HISTORICAL LETTER

written by

HUZUR MAHARAJ

to

SETH SUDARSHAN SINGH SAHEB

on which are based

BACHANS Nos. 250, 251 and 252

of

SAR BACHAN PROSE

(Translation)

My dear respected Seth Sudarshan Singh Saheb !

May you be blessed with the special grace of the Supreme Father ! After hearty Radhasoami, the receipt of two pieces of your diary is acknowledged. The diary has not yet been read out to His Graciousness. Having, however, cursorily perused the contents, I read out two questions, which appeared to be important, and obtained the gracious commands thereon, which I am writing for your information.

The first question relates to the performance of Bhajan and Sumiran during examination days. His August Grace has ordered that you need not exert much. You may perform Bhajan and Sumiran whenever you have time. You need not stick to the fixed and scheduled period of time to do so. Do not undergo any hardship unnecessarily. When the examination is over, you may devote as much time as you can manage.

Your second question relates to the acceptance of a perfect Guru after the departure of the first Shabd-Bhedi Guru (Guru knowing the secrets of Shabd). The gracious orders in this behalf are, "If a person, who is first under

the guidance of a guru who does not know the secret of Shabd practice, meets with the Sat Guru who knows it, he should immediately renounce the. first guru and come under the protection of the Sat Guru.

Saying : झूठे गुरु की टेक को, तजत न कीजे बार ।
द्वार न पावे शब्द का, भटके बारम्बार ।।

Jhoote guru ki tek ko, tajat na keeje bar.
Dwar na pawe Shabd ka, bhatke barambar.

(Delay not in renouncing faith in a false guru, otherwise, you will not find the gateway to Shabd and will go astray every time). Rather that guru should also join his disciple in accepting the protection of such a Sat Guru."

Secondly, "He, who first meets a guru who knows the secrets of Shabd but has not yet attained perfection, and later on meets the Sat Guru who is perfect in Shabd practice, should consider the previous guru as included in the perfect Sat Guru and take the protection of the latter. It is also incumbent on his guru to follow the example of his disciple and surrender himself to the Sat Guru. But if he is jealous and conceited, he will not come under the protection of the Sat Guru. In that case the disciple should have no connection with him and should himself come under the protection of the Perfect Sat Guru."

Thirdly, "There is a person who has met with the perfect Sat Guru, performs His service, attends His Satsang and has love for and faith in Him, but before he fully achieves his object, i. e., gets any inner realization, the Sat Guru departs. Such a person should, if he is keen to attain this goal, cultivate the same love for and faith in the succeeding Sat Guru, that is, the one appointed by the departed Sat Guru and should perform His service, attend His Satsang and consider the departed Guru as present in Him. He should know that Shabd forms of the Sant Sat Guru and the Sant are one, though outwardly in physical forms they appear to be two."

"As regrds faith in the past Sat Guru, it is not beneficial for the reason that no love can be generated for Him, because the devotee has not seen Him nor attended His Satsang. If a man has not already met the Sat Guru, he can have little devotion for His Feet. Therefore, an earnest devotee ought to devote himself to the succeeding Sat Guru of the time. He should make no distinction between Him and the previous Sat Guru except the human form; and thus have his work accomplished. But if a man is not keen on further progress, he should, with love for and faith in the former Sat Guru in his heart, meditate on His Form and perform the practices taught by Him. In the end that Sat Guru will, by that very form, help him as far as possible. But his ultimate object will not be fully achieved, He will have to take birth again and meet the Sat Guru

If he devotes himself to Him and attends His Satsang, he will attain complete salvation."

And His Graciousness has further added, "When the Sat Guru of the time departs, He appoints some one as His successor in whom he reincarnates and thus continues the work of regeneration of Jivas as before. When, however, such is not the Mauj, He returns to His original abode. Therefore, an earnest devotee should make no distinction between the previous Sat Guru and His successor. But those who are prejudiced and biased will not accept the allegiance of the succeeding Sat Guru. For this reason their progress will stop at the stage they had reached during the time of the former Sat Guru and there would be no further progress and improvement."

You had asked only one question. But Seth Sujan Singh put many other questions, and thus a detailed reply was obtained which has been exactly and accurately communicated to you for your information. It is hoped there would now remain no doubt or misgiving of any sort. Rest is all right. His Graciousness and Radhaji send you Daya. Seth Pratap Singh Saheb, Seth Sujan Singh and all Satsangis and Satsangins tender their Radhasoami to you. Please convey Radhasoami to.........Today is Diwali. Compliments to you and all. Please convey my salutation to.........You must have received the letter posted prior to this.

Humblest of the humble

Salig Ram

CHAPTER 3

LETTER OF MAHARAJ SAHEB

TO

SETH SUDARSHAN SINGH SAHEB

R. S.

Agra, 15th March 1897

My dear respected and beloved brother,

I have been directed by Huzur Maharaj to acknowledge the receipt of your last letter and postcard and to communicate the following reply.

To enable you to obtain long leave the requisite period of three months from return from privilege leave elapses, I think, on the 8th May next and you are permitted to apply for furlough from any date thereafter. You may initially take about 6 or 8 months furlough which will, if required, be extended.

Your Suratia has been enlarged by the addition of 4 more lines as per enclosure and you will see now that others, viz., Prem Pyariji, Prem Saroopji and Prem Prakashji (Lala Chotoo Lal) are also specially related with you. You will no doubt gratefully thank the Supreme Father for the mercy He has shown you by this addition.

With regard to your application for passport for the higher regions I am to say that you have apparently forgotten the passport already granted to you for Sat Lok. It was given to you long ago when you were taken under the protection of the Supreme Father but you have, it seems, mislaid it somewhere in the box of your heart. Your request for passport is, therefore, unnecessary. Moreover your case is special and the S. Masters and guards at the intermediate stations will not ask for it as in the case of the postal and railway mail service Superintendents, it is alredy known to them that you are in possession of the special pass. But they cannot dispense with the examination of spiritual worth necessary for transit at each station. The travellers from the plague striken regions of the third division of creation are examined and detained there and allowed to proceed when their mental malady is cured to the extent necessary for progress to the next. You ought, therefore, to submit to this quarantine cheerfully and patiently to ensure your mental cure at various stages. As to eventual location in Sat Lok there is not the slightest doubt and you ought to be gratefully and patiently thankful to the Supreme Father for it.

Huzur Maharaj sends you His grace and we all jointly and severally our hearty and affectionate R. S.

Yours affly.,
B. S. Misra

P. S. The distance to be traversed is so long long...to complete the journey... ...... should not therefore be impatient at the quarantine delays or the time occupied in transit. If he is over anxious for the acceleration of speed he should endeavour jointly with the fellow passengers and the Master of the Train to increase the Prem power which is the real motor force by which the spiritual train moves.

अध्याय ३

महाराज साहब का खत
सेठ सुदर्शन सिंह साहब
के नाम

अनुवाद

रा० स्वा० आगरा

१५ मार्च सन् १८६७

मेरे प्यारे आदरणीय प्रिय भाई !

हुज़ूर महाराज ने मुझको हुकुम दिया है कि मैं आपके पिछले पत्र और कार्ड की पहुँच और नीचे दर्ज किया हुआ जवाब लिखूं।

तीन महीने की आपकी लंबी छुट्टी मेरे ख़याल में आठ मई को ख़तम होती है जिसके बाद और लम्बी छुट्टी लेने के लिए अर्ज़ी देने की आपको इजाज़त दी जाती है। पहले आप छः या आठ महीने की छुट्टी ले सकते हैं जो बाद में अगर ज़रूरत हो, बढ़ाई जा सकती है।

आपकी सुरतिया में चार पंक्तियाँ और बढ़ा दी गई हैं जो इसके साथ भेजी जा रही हैं और आपको मालूम होगा कि दूसरे लोग यानी प्रेमप्यारीजी, प्रेमस्वरूपजी और प्रेमप्रकाशजी (लाला छुट्टूलाल) भी ख़ास तौर से आपके साथ शामिल हो गए हैं। निस्संदेह इस दया के लिए आप परम पिता के शुकर-गुज़ार होंगे।

ऊँचे देशों में जाने के लिए जो आपने परवाना माँगा है उसके विषय में मेरा कहना यह है कि सत्तलोक का परवाना तो आपको मिल चुका है पर मालूम होता है कि आप भूल गए। बहुत पहले जब कि परम पिता ने आपको अपनी शरण में लिया था, तभी वह परवाना दे दिया गया था लेकिन मालूम होता है कि आप उस परवाने को अपने हृदय रूपी संदूक़ में कहीं रख कर भूल गए हैं। इसलिए परवाने के लिए आपकी दरख्वास्त ग़ैर-ज़रूरी है। और भी आपकी तो बात ही जुदी है, इसलिए कि डाकख़ानों और आर० एम० एस० के सुपरिन्टेन्डेन्टों की तरह बीच के देशों के धनी और मालिक

आपसे परवाना न माँगेंगे क्योंकि उनको मालूम हो गया है कि आपके पास परवाना-ख़ास है लेकिन रास्ते के हर स्टेशन से गुज़रने के लिए ज़रूरी रूहानी क़ाबलियत का इम्तिहान लिए बग़ैर वह नहीं छोड़ सकते। रचना के तीसरे दर्जे में जहाँ प्लेग फैल रहा है, वहाँ से जाने वाले यात्रियों को रोका और उनका इम्तिहान लिया जाता है और जब मन की बीमारी इतने दर्जे में अच्छी हो जाती है कि आगे जा सकें तब आगे बढ़ने की इजाज़त दी जाती है। इसलिए आपको छूत की बीमारी वालों पर जो रुकावटें लगाई जाती हैं उनको ख़ुशी से और सब्र से झेलना चाहिए और स्थान २ पर मन की दुरुस्ती और इलाज के लिए रुकना और इन्तज़ार करना चाहिए। अलबत्ता अंत में सत्तलोक में ज़रूर बासा पावेंगे। इसमें किंचित मात्र भी संदेह नहीं है। और इसके लिए आपको सब्र और शुकर गुज़ारी के साथ परम पिता को धन्यवाद देना चाहिए।

आपको हुज़ूर महाराज की दया पहुँचे। हम सब लोग व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से प्रेमपूर्वक राधास्वामी कहते हैं।

सप्रेम आपका

ब्रह्म शंकर मिश्र

पुनश्च

रास्ता इतना दूर और लम्बा है कि··········जगह २ जो इलाज में देरी लगती है, उससे उकताना नहीं चाहिए। अगर किसी को रफ़्तार बढ़ाने की बहुत ज़्यादा फ़िक्र हो तो चाहिए कि अपने साथी यात्रियों के साथ और रेलगाड़ी के मास्टर के साथ मिल कर प्रेम की शक्ति बढ़ाने में कोशिश करे। प्रेम शक्ति से ही रूहानी गाड़ी चलती है।

CHAPTER 4

EXTRACTS FROM HUZUR MAHARAJ'S LETTERS

to

SATSANGIS

अध्याय ४

हुज़ूर महाराज की चिट्ठियां

सतसंगियों के नाम

(1)

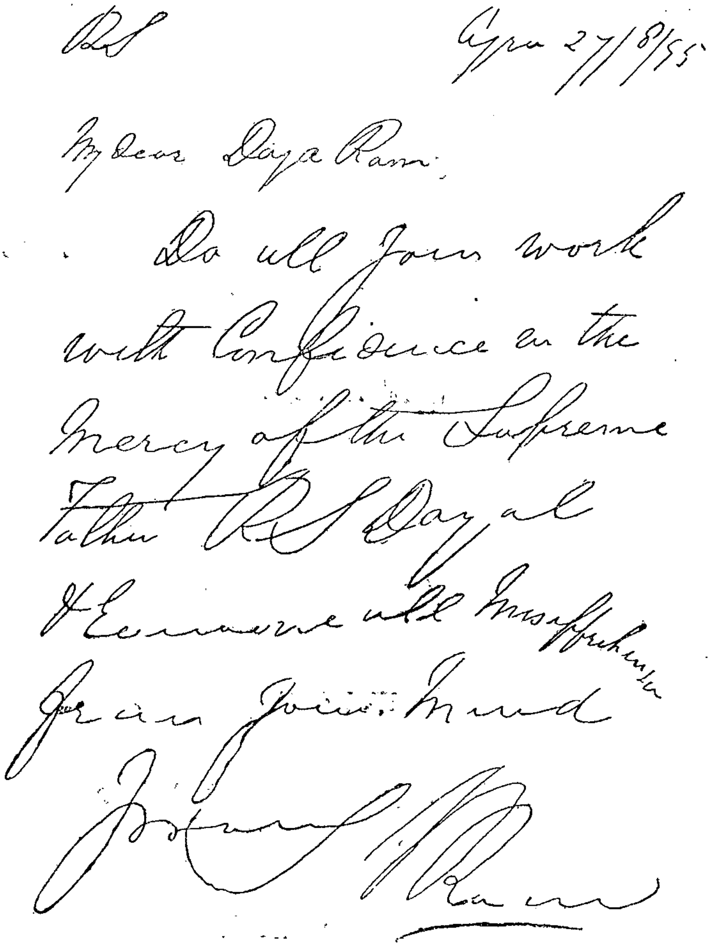
R S

Agra 27/8/95

My dear Daya Ram:

Do all your work with confidence in the Mercy of the Supreme Father R S Dayal & remove all misapprehensions from your mind

Yours S Ram

R. S.

Agra 27-8-1895

My dear Daya Ram,

Do all your work with confidence in the Mercy of the Supreme Father R. S. Dayal and remove all misapprehensions from your mind.

Yours sincerely,
S. Ram

(१) अनुवाद

रा० स्वा०

आगरा २७-८-९५

प्रिय दयाराम !

कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रख कर अपने सब काम करो और चित्त से सब संशय निकाल दो ।

तुम्हारा सच्चा हितकारी

सालिग राम

(2)

Faith, worth the name, must be living. It must consist in acquiring an affection, or rather an intense love, for the Supreme Being and an intense desire to approach Him; and this latter we can do in the interior of the body, for the highway is within us.

(२) अनुवाद

विश्वास, जीता जागता होना चाहिए। विश्वास के यह अर्थ हैं कि कुल्ल-मालिक के चरनों में प्रेम यानी तीव्र अनुराग हो एवं उसका सामीप्य प्राप्त करने की प्रचंड अभिलाषा हो। यह अंतर में होना चाहिये, क्योंकि रास्ता हमारे अंतर में ही है।

(3)

Could you now obtain a glimpse of the higher planes at your will, future progress would be retarded and you would be rendered, in a manner, unfit for devoting proper attention to your worldly concerns. The Supreme Father is, through His grace, regulating every thing according to the requirements of each person ; and you may rest assured that He will not withhold any favour when the time arrives for it.

(३) अनुवाद

यदि तुमको जब चाहो तब ऊपर के घाटों की झाँकी दिखला दी जावे तो तुम्हारी आगामी उन्नति का रास्ता बंद हो जावेगा और अपने सांसारिक कार्यों की ओर उचित ध्यान देने के लिये, एक तौर पर, अयोग्य बन जाओगे। प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं का ख़याल रखते हुए परम पिता, दया से, हर चीज़ का इंतज़ाम और बंदोबस्त कर

रहे हैं और तुम्हें विश्वास रखना चाहिये कि कोई भी दात उचित समय पर देने से इनकार नहीं किया जावेगा।

(4)

The worldly troubles should not discourage you in following the devotional practice. These are the times of trial, and in such a state your trust and belief are tested. You should argue with your mind and convince it that the devotional practice you are following can be the only true means of salvation, as the current of sound is the only current by which the spirit can ascend to the sphere whence it originally emanated, it having descended into our body by the very current. Mere trust in the so-called incarnations of God cannot help it to free itself from the bodily bondage and ascend towards the celestial regions. The trusts and beliefs as are commonly received by the generality of mankind are the results of hearsays imbibed from childhood but not the acceptance of a religion after a careful consideration of the pros and cons of its truth based upon internal devotional practice, and observation and experience of the action of mind and spirit.

(४) अनुवाद

दुनियावी तकलीफ़ात और तरद्दुदात की वजह से भजन ध्यान में कोताही[1] नहीं करनी चाहिए। यह परीक्षा का समय है। ऐसी हालतों से ही जाँच होती है कि तुमको किस क़दर विश्वास और भरोसा है। तुम्हें अपने मन के साथ बहस करके उसे क़ायल करना चाहिये कि भजन ध्यान और करनी जो तुमको बतलाई गई है, करके ही सत्य उद्धार प्राप्त हो सकता है, क्योंकि केवल शब्द-धार के सहारे ही सुरत चढ़ कर वहाँ पहुँच सकती है जहाँ से कि वह आई है। उसी धार के ज़रिये सुरत उतर कर हमारे शरीर में आई थी। जो परमात्मा के अवतार माने जाते हैं, उनमें सिर्फ़ विश्वास होने से, दैहिक बंधनों से छुटकारा नहीं हो सकता और न सुरत की ऊपर के लोकों में चढ़ाई हो सकती है। प्रत्येक मनुष्य जैसा बचपन से सुनता आया है, वैसा ही विश्वास या समझौती धारण कर लेता है। यह वह विश्वास नहीं है जो किसी धर्म के सिद्धांतों की मुआफ़िक व मुख़ालिफ़ दलायल[2] को अच्छी तरह समझ कर पैदा हुआ हो अथवा अंतरमुख अभ्यास जिसका आधार हो अथवा जो मन और सुरत की क्रियाओं की परख पहचान से पैदा हुआ हो।

(5)

You need not lose heart on account of your embarrassed circumstances. Place your reliance on the mercy of the Supreme Father Radhasoami Dayal

1—कमी। 2—पक्ष व विपक्ष की युक्तियों।

and at the proper time you will receive mercy and grace if you continue firmly in your belief and practice.

(५) अनुवाद

परेशानी की हालत में हिम्मत नहीं हारना चाहिये। राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रक्खो। अगर तुम्हारा विश्वास दृढ़ रहा और अपना अभ्यास व परमार्थी करनी करते रहे तो उचित समय पर मेहर और दया होगी।

(6)

If you are in a very weak state of health you need not devote yourself to practice for a long time. You may continue it and should leave it as soon as you feel tired. Fifteen to thirty minutes is not a long time for practice if you can possibly manage to do it without much disturbance of your thoughts and mind; and this, I think, will help rather than interfere with your recovery. You may, however, spend ten or fifteen minutes in repeating the Holy Name mentally before commencing your practice.

(६) अनुवाद

अगर तन्दुरुस्ती अच्छी न हो तो ज़्यादा देर तक अभ्यास नहीं करना चाहिये। अभ्यास शुरू करने के बाद ज्योंही थकान महसूस हो कि अभ्यास बंद कर देना चाहिये। अभ्यास के लिये पाव घंटे से आध घंटे तक का समय कोई ज़्यादा नहीं है, बशर्ते कि मन की चंचलता और गुनावन ज़्यादा विघ्न न करें। और इतने से वक़्त के लिये अभ्यास करने से तन्दुरुस्ती में कोई ख़लल वाक़ै होने की बजाय तन्दुरुस्ती अच्छी हो जावेगी। भजन करने से पहले दस पन्द्रह मिनट नाम का सुमिरन कर लेना बेहतर होगा।

(7)

With devotees of our religion it generally occurs in the beginning that at the time of practice, forms of some of the previous incarnations such as Ram, Krishna, etc., whom they formerly believed as the Supreme Deity, appear to them in dreams and try to mislead them either by forbidding our practice or sometimes by themselves personifying Radhasoami, the Highest Creator. But they soon disappear in dream if the Name RADHASOAMI is then repeated; and this is the sure test to know that they appeared with the intention of leading astray.

(७) अनुवाद

हमारे मत के अनुयाइयों के साथ अक्सर ऐसा होता है कि शुरु २ में अभ्यास के वक़्त या स्वप्न में पहले के अवतारों की जैसे राम कृष्ण आदि की शक्लें जिनको वे

इष्ट धारण किये हुए थे, दिखलाई देती हैं और वे अभ्यासी को हमारे मत का अभ्यास करने से रोक कर अथवा स्वयं कुल्ल-मालिक राधास्वामी का रूप धारण करके गुमराह करने की कोशिश करते हैं। लेकिन राधास्वामी नाम का उच्चारण करते ही वे गायब हो जाते हैं और यही इस बात की यक़ीनी पहचान है कि वे ग़लत रास्ते पर ले जाने के इरादे से ज़ाहिर हुए थे।

(8)

You need not be dissatisfied nor feel dejected with the circumstances in which Supreme Father has placed you. You should place full and sincere faith in His mercy, and love Him with your heart and soul. The ever-merciful Father will extend His helping hand to you both in your devotion and at the proper season in your worldly circumstances. The greater your love and faith in His Most Exalted and Sacred Feet the easier your effort in devotional practice and the more contentment with your lot, which gradually will begin to brighten.

(८) अनुवाद

परम पिता ने जिन परिस्थितियों में तुमको रक्खा है उनसे असंतुष्ठ या निराश होने की आवश्यकता नहीं है। उनकी दया में पूरा और सच्चा विश्वास रखना चाहिए और दिल व जान से चरनों में प्रेम पैदा और दृढ़ करना चाहिए। दयालु पिता अभ्यास में तथा उचित समय पर सांसारिक कारोबार, दोनों में, तुम्हारी सहायता करेंगे। जितना ज़्यादा प्रेम और अनुराग उनके पवित्र चरनों में होगा, उतनी ही ज़्यादा आसानी और सहूलियत अभ्यास में होगी और अपने भाग्य से जो कि दिन ब दिन धीरे धीरे चमकता जावेगा, संतुष्ट रहोगे।

(9)

True, the mind is very powerful and strong and leaves nothing untried to hinder a devotee's progress. But our Beloved Father is great and almighty and through His blessing and grace we shall, by and by, overcome the opponent. Trust in Him and in His mercy; and whenever the mind revolts, try to overpower it by calling on the Holy Name mentally, fixing your attention on the first stage; or contemplate the Father's form (face) at the above spot with an affectionate regard and you will find a change in the attitude of your mind. When practicable fix your earnest attention on the sound coming from above. Any of these plans if carefully adopted will prove successful in repelling the attacks of the improper thoughts and desires that now and then spring up. But take care that in doing so you place your full confidence in the Father's grace and, in a manner, keep His name or His form or His word with you as your safeguard and consider yourself, at all times and in all places, under His pro-

tection and care. Sometimes it is necessary to show you the secrets and powers of your mind in order to teach you how weak you are without your Protector and it is necessary for you to adhere to Him and call upon Him for help. Such conditions of mind (which occur occasionally) also indirectly aid your progress and conduce to your advancement. So don't feel dejected, but stick more closely and closely to your Protector and Helper.

(९) अनुवाद

यह सच है कि मन बहुत बलवान और ज़बरदस्त है और अभ्यासी की उन्नति में विघ्न बाधा उपस्थित करने में कोई उपाय बाक़ी नहीं छोड़ता। लेकिन हमारे पिता सर्व शक्तिमान और समर्थ हैं, उनकी दात और दया से हम धीरे २ उस दुश्मन पर विजय प्राप्त करते जावेंगे। उन पर तथा उनकी दया पर भरोसा रक्खो। जब कभी मन बग़ावत और विद्रोह करे, तभी पहले मुकाम की ओर अपने चित्त को फेर कर मन ही मन राधास्वामी राधास्वामी करो। इससे मन परास्त हो जावेगा अथवा वहीं चित्त जमाये हुए प्रेम और अनुराग से गुरु स्वरूप का ध्यान करो, इससे उसका रुख बदलता हुआ मालूम होने लगेगा। अगर मुमकिन हो तो अभ्यास में ऊपर से आते हुए शब्द में अपनी सुरत को लगाओ। इनमें से जो बन सके, वही उपाय करो। मन में उठने वाले ना-मुनासिब ख़यालों और चाहों को दूर करने में ज़रूर कामियाबी हासिल होगी। मालिक की दया का पूरा विश्वास रक्खो। उसके नाम और रूप और शब्द को अपना हिमायती बनालो और याद रक्खो कि किसी भी समय, कहीं भी हो, तुम्हारे सिर पर रक्षा और सम्हाल का हाथ सदा रहता है। कभी २ यह दिखलाना भी ज़रुरी होता है कि मन कैसा बदमाश और ज़ोरावर है और तुमको महसूस हो कि बिना हिमायती के तुम कुछ नहीं कर सकते और इसलिए मालिक की ओर दौड़ने और मदद के लिये पुकारने की जरूरत है। कभी २ मन की इन हालतों का तजरुबा कराने से तरक़्की होने और चाल चलने में मदद मिलती है। इसलिए ना-उम्मीद मत हो, बल्कि अपने रक्षक और हिमायती के अधिकाधिक निकट होने और उससे लिपटे रहने की कोशिश करो।

(10)

The wish raised in your mind to convince your relatives and your friends of the truth and sublimity of your Faith is an off-shoot of the usual desire to do good to humanity. But an effort of this kind seldom succeeds with the rich and the powerful. They are the men of the world more anxious to shine in their community and make a name for themselves than to follow with meekness and humility, from the bottom of their hearts, the dictates of true Bhakti or love for the Supreme Being. There are few, if any, amongst the people of this class who will even be ready to sacrifice their pride and pleasures to acquire heavenly bliss if kindly taught by the Sants of our Faith. So you should

not persevere in this matter beyond what you have already done. It was a duty you owed them as your relatives and friends to have informed them of what you considered the holiest and truest of all faiths in vogue in this world and the only means of obtaining true salvation for their soul. You have done your duty; and if they are not inclined as yet to receive the above Faith, leave them to pursue their enquiries, if they really intend to search for truth, in whatever direction they think proper.

(१०) अनुवाद

रिश्तेदारों और मित्रों को राधास्वामी मत की श्रेष्ठता और सच्चाई को प्रमाण द्वारा समझाने की इच्छा जो तुम्हारे मन में पैदा होती है, वह कमोबेश वैसी ही है जैसी कि आम तौर पर लोगों को मानव जाति का उपकार करने की भावना उठती है। लेकिन धनवानों और हुकूमत व ओहदे वाले व्यक्तियों के साथ इसमें कामियाबी बहुत कम हासिल होती है। पैसे और हुकूमत व अख्तियार वाले लोग दुनियादार हैं। उनको ज्यादा इच्छा इस बात की रहती है कि अपनी जाति में चमकें व पबलिक में नामवरी हासिल करें। दीन अधीन होकर अपने हृदय अंतर से मालिक की सच्ची भक्ति करने की उनको इच्छा नहीं होती। इस तरह के लोगों में मुश्किल से कोई ऐसा निकले जो संतों के बतलाये हुए मार्ग पर चल कर अमर आनन्द प्राप्त करने के लिये अपने ऐशो आराम और मानन को छोड़ने के लिये तैयार हो। इसलिये जितना तुम कर चुके हो, उससे अधिक प्रयत्न इस बात में करने की ज़रूरत नहीं है। सच्चा उद्धार प्राप्त करने के लिये जो सबसे ज़्यादा सत्य और पवित्र मार्ग है, उसके विषय में अपने रिश्तेदारों और मित्रों को सूचित करके और उनको समझा कर तुमने अपना फ़र्ज़ अदा कर दिया। लेकिन अगर वे तुम्हारी बात मानने को तैयार न हों तो यदि उनको सत्य की खोज है तो जिधर चाहें उधर खोजें और तलाश करें।

(11)

In religion it is better and more advantageous for a devotee to have only as much money as would suffice for his absolutely necessary expenses. To have more, will not conduce to his spiritual advancement, but on the other hand, increase his or his family's desires for worldly gaieties and pleasures and render him, to a certain extent, indifferent to the benefits of a firm faith founded on pure love for the Supreme Being.

(११) अनुवाद

परमार्थी के पास सिर्फ़ उतना ही पैसा होना लाभकारी है जितना कि उसके ज़रूरी खर्च के लिये दरकार हो। ज़रूरत से ज़्यादा पैसा होना, परमार्थी तरक़्क़ी में मददगार नहीं है। बर अक्स इसके, उसको और उसके कुटुम्बियों को ऐशो आराम के सामान की

ज़्यादा इच्छा उठेगी और वह किसी क़दर मालिक के प्रेम, अनुराग और विश्वास में ढीला पड़ जावेगा।

(12)

The mind will, now and then, play its part. The result will, in no way, be injurious to you, if you fight your battle strongly with the help of Grace. On the other hand, you will acquire more strength.

(१२) अनुवाद

मन समय समय पर अपनी नटखटी दिखलाता रहेगा। लेकिन यदि तुम दया का भरोसा रखते हुए मन से जूझते रहोगे तो तुम्हारा कुछ हर्ज नहीं होगा। बल्कि तुमको विशेष शक्ति प्राप्त होगी।

(13)

Yes, all desires should be avoided as far as possible; but that for the necessaries cannot be so easily controlled. But the Supreme Father is merciful and He will grant your request to attend Satsang and provide you with necessary funds to defray your expenses.

(१३) अनुवाद

हाँ, जहाँ तक मुमकिन हो, चाहों को न उठने देना चाहिये लेकिन जीवन की आवश्यकताओं से संबंध रखने वाली चाहों को नहीं टाला जा सकता। परम पिता दयाल हैं, सतसंग में हाज़िर होने की प्रार्थना को वे मंज़ूर फरमावेंगे और उसके ख़र्च का भी इंतजाम करेंगे।

(14)

You should get on as you possibly can under the protection of Grace. But to be clear of all local influences, say, mental, emotional, intellectual, temporal, social, etc., requires time. Go on increasing your esteem, regard and affection for the Supreme Father with strong conviction in His sublime Faith; and your progress, though at times seemingly slow, would be sure and certain. But to get all you desire is a work which necessarily requires time.

(१४) अनुवाद

दया के सहारे जिस क़दर बने, तरक़्क़ी करते रहो। लेकिन मानसिक, जज़बाती बौद्धिक, दुनियावी, सामाजिक इत्यादि असरों और प्रभावों से बिलकुल परे चले जाने

में वक़्त लगेगा । मालिक के चरनों के प्रेम को बढ़ाए जाओ और उसके आला मत में विश्वास पक्का करे जाओ । तरक़्क़ी निश्चित और पक्के तौर पर होती जावेगी चाहे वह कभी २ धीमी मालूम पड़े । अभिलाषित फल प्राप्त करने में अवश्य समय लगेगा ।

(15)

If you be discouraged or disappointed at any time, pray to Him internally, ask for grace and still continue your practice without insisting upon immediate response. These are the ways by which a devotee can proceed on his long journey and you should follow it patiently and perseveringly; and too much impatience nearly amounting to despair is to be carefully avoided.

(१५) अनुवाद

अगर किसी वक़्त ना-उम्मीदी हो या हिम्मत हारने लगो तो अंतर में दया के लिये प्रार्थना करो मगर फ़ौरन जवाब न माँगो यानी उसके पूरा करने की ज़िद न करो और अपना अभ्यास जारी रक्खो । इस विधि से यह लंबी यात्रा पूरी हो सकती है । धीरज और दृढ़ लगन से अपना अभ्यास करते रहो । इतने अधीर मत हो कि क़रीब क़रीब ना उम्मीदी के घाट पर पहुँच जाओ ।

(16)

Go on with your practice with confidence in Supreme Father's mercy and grace, and try your best to check and control your passions. But if you fail at any time, repent and pray and again proceed on your journey. This is not the work of a few days but of years ; and rest assured that through grace you will eventually come out victorious.

(१६) अनुवाद

मालिक की मेहर और दया में भरोसा रखते हुए अपना अभ्यास जारी रक्खो । मन के विकारों पर क़ाबू पाने के लिये भरसक प्रयत्न करते रहो । अगर किसी वक़्त मन के विकारों में बह जाओ तो पश्चात्ताप और प्रार्थना करो और फिर परमार्थी चाल चलाते रहो । यह दिनों का नहीं, बल्कि वर्षों का काम है । विश्वास रक्खो कि अंत में तुम अवश्य विजयी होंगे ।

(17)

Perfect reformation of character will be brought about in course of time. It is not easy to remove what we have been at pains to establish several

years past. But grace is at work and will perform its work mork rapidly than can be expected.

(१७) अनुवाद

अहार, व्यवहार, विचार और बरताव में पूरे तौर पर सुधार होते होते होगा। पिछले कई वर्षों में जिसकी बड़े जतन से स्थापना हुई हो, उसका दूर करना आसान नहीं है। लेकिन दया अपना काम कर रही है और हम लोगों की उम्मीद से बहुत पहले, जल्द, काम बन जावेगा।

(18)

Yes, you may practise concentration when you go to bed before you fall asleep. It is very beneficial, as the whole time you are sleeping after having practised concentration, the spirit is in a higher plane than when you fall asleep ordinarily.

(१८) अनुवाद

सोते वक़्त, नींद आने से पहले, सुमिरन ध्यान करना चाहिये यानी सुमिरन ध्यान करते २ ही नींद आवे तो उससे बड़ा फ़ायदा होगा। क्योंकि जितनी देर सोते रहोगे, सुरत ऊँचे घाट पर रहेगी और अगर बिना सुमिरन ध्यान किए हुए मामूली तौर पर सो जाओगे तो सुरत नीचे घाट पर रहेगी।

(19)

.........but greater care should be exercised in future in mixing with worldly people whose aim and object in this world is nothing but the indulgence of their passions, be they sensual, social or political. Their aura is full of loathsome effluvia rising from the mind and body and is, therefore, injurious to the spiritual health of those whose object is to obtain salvation by approaching the Supreme Father.

(१९) अनुवाद

आयंदा दुनियादारों के साथ रलने मिलने में ज़्यादा सम्हाल की ज़रुरत है क्योंकि उनका उद्देश्य और ध्येय केवल भोग विलास में बरतना और सामाजिक या राजनैतिक कार्य करना है। उनकी देह और मन से बड़ी ख़राब धारें निकलती हैं जिनसे उन लोगों को जिनका ध्येय मालिक के चरनों में पहुँच कर उद्धार प्राप्त करना है, बड़ा नुक़सान होता है।

(20)

It is love or strong affection to approach the Supreme Father that will draw you closer and closer and on one day bring you face to face with the Most Merciful. It is true that *tan, man* and *dhan,* or body, mind and money or property must be given up as an offering to the Supreme Father. This, however does not mean taking away any thing by the Supreme Father; but the object in asking for the above offering or sacrifice is to relieve the devotee's mind from the desire of obtaining, possessing and indugIng in the riches and the articles and objects of sensual pleasures in this world. This is necessary for the entry in our heart of a strong desire or affection to approach the Supreme Father, which depends much on the mind being emptied of the thoughts of worldly affections and pleasures. All this will be accomplished by Grace provided one perseveres in his efforts to internally change himself. Of course we (human souls) are weak and helpless, have no power to withstand the temptations raised within us, but our Saviour is great and all-powerful and can easily discover, check, remove and subvert all the snares and tricks in our way, provided we sincerely ask for His mercy to help us and are really determined to get rid, mentally and spiritually, of all that attracts our attention and thereby causes obstruction in our practice and affects our love towards the Supreme Father.

Don't, therefore, fear any obstacle or mishap or temporary loss or disadvantage in your way as long as you sincerely long to see Him and have Him, and as such you will by and by become His own. In fact you are beginning to be so regarded by the Supreme Father and will be completely so in course of time as you progress in your practice and advance in your love.

(२०) अनुवाद

मालिक के चरनों का दृढ़ प्रेम और अनुराग ही तुमको निकट खींचता जावेगा और एक दिन अत्यन्त दयालु पिता से साक्षात्कार करावेगा। यह ठीक है कि तन मन धन और सब माल मता मलिक को अर्पण कर देना चाहिये। लेकिन इससे यह न समझना चाहिये कि मालिक इन चीज़ों को ले लेगा। अर्पण करने या कराने से यह मतलब है कि भक्त के मन में इन चीज़ो को प्राप्त करने और संग्रह करने और इन्द्रियों के भोग विलासों की चाह न रहें। हृदय में मालिक के प्रति तीव्र अनुराग और प्रेम पैदा करने के लिये यह जरूरी है कि मन में से दुनियावी ख़यालों और चाहों को निकाल दिया जावे। अगर अंतर में इस परिवर्तन के लाने की चाह होगी और प्रयत्न किया जावेगा तो मालिक मदद देगा और दया से यह हो सकेगा। यह सच है कि जीव निबल और निस्सहाय है और मन में पैदा होने वाले प्रलोभनों से बचना उसकी ताक़त से बाहर है, लेकिन हमारा रक्षक और हिमायती सर्व

शक्तिमान और सर्व समर्थ है। हमारे मार्ग में काल द्वारा बिछाए हुए जालों और उनकी चालाकियों को हमारा रक्षक और हिमायती खूब जानता और पहचानता है और वह इन सब से बचाता हुआ हमको निकाल ले जावेगा, यदि हम उसकी सहायता और दया के लिये सच्चे दिल से प्रार्थना करें और दुनिया की तरफ़ खींचने वाले और हमारे अभ्यास में विघ्न डालने वाले और मालिक की भक्ति और प्रेम को हानि पहुँचाने वाले पदार्थों की ओर से अपने मन और सुरत को हटा लेने का पक्का इरादा करें।

इसलिये अगर मालिक के दर्शनों की चाह सच्ची और पक्की हो तो रास्ते के विघ्नों और बाधाओं की और अभ्यास में ऊँचे नीच हालतों के आने की कुछ परवाह नहीं करनी चाहिये। मालिक ने तुमको अपना लिया है और धीरे २ जैसे २ अभ्यास में तरक्की होती जावेगी, तुम पूरे तौर से मालिक के हो जाओगे।

(21)

You should not feel despondent at your wishes not being fulfilled. Go on with your practice and gradually purify your heart and mind of all except the love of Father and some day or other you will realise what you want. Moreover you will, now and then, in the interior, experience greater joy and pleasure in your practice than usual, which will to a certain extent be a source of satisfaction to you in order to convince you that you are proceeding onward in your path to your destination.

(२१) अनुवाद

अगर मन की अभिलाषाएं पूरी न हों तो कोई हर्ज नहीं है, ना-उम्मीद मत हो। अपना अभ्यास करते रहो। धीरे २ मन और सुरत की सफ़ाई हासिल करते रहो। मालिक के प्रेम के सिवा जो कुछ हो, सब निकाल दो। एक दिन सब अभिलाषाएं पूर्ण होंगी। बीच में समय समय पर अंतर अभ्यास में साधारण से ज्यादा रस और आनन्द मिलता जावेगा जिससे तुमको संतोष होगा और विश्वास आवेगा कि तुम्हारी चाल चल रही और उन्नति हो रही है।

(22)

Your demands are proper but the Supreme Father cannot grant them in full at once, because, you have to ride on two horses and therefore must be able to drive them both without injuring any one's interests.

(२२) अनुवाद

तुम्हारी माँगें ठीक हैं पर मालिक तुरन्त ही सब माँगें मंजूर नहीं कर सकता क्योंकि तुम दो घोड़ों पर पाँव रक्खे हुए हो, इसलिये जरूरत इस बात की है कि दोनों

को यानी स्वार्थ और परमार्थ को बराबर चलाते रहो और दोनों में से किसी एक को भी नुकसान न पहूँचे।

(23)

You do not know how many births you have undergone : and desires and aims were created and nourished in your mind then and also in the present birth. The Supreme Father can root out anything in a second, but then of what good will it be to you who are living under several covers or mind, senses, and matter of various degrees and lives ? The immediate separation of one cover, for instance, will render you insensible and injure or retard your growth (progress) in the same manner as the separation by force of the cover of an unripe fruit from the plant or tree causes it serious injury, and damages its further growth. You do not thoroughly appreciate that you are placed in a material world of causes and effects and that your progress shall be arranged in accordance with the internal laws that govern this world and our body and soul or mind.

(२३) अनुवाद

तुम्हें पता नहीं है कि कितने बार तुम जन्म ले चुके हो। पिछले जन्मो में और अब इस जन्म में अनेक चाहें तुम्हारे मन में उठती रही हैं। मालिक चाहे तो एक छिन में सब चाहों को काट सकता है, लेकिन उससे कोई फ़ायदा नहीं होगा क्योंकि अभी तुम पर मन और इन्द्रियों और माद्दे के अनेक प्रकार के आवरण या गिलाफ़ चढ़े हुए हैं। उनमें से एक भी आवरण उतारा जाय तो तुम फ़ौरन बेहोश हो जाओगे और आगे की तरक़्क़ी बन्द हो जावेगी, उसी तरह से जिस तरह कि किसी पेड़ या पौधे से कच्चे फल को तोड़ लिया जावे या जबरन उसका छिलका या आवरण उतार दिया जावे तो उसको भारी जरर और नुक़सान पहुँचेगा और उसकी वृद्धि को भारी धक्का और चोट पहुँचेगी। तुम ठीक तौर से नहीं समझ सकते कि तुम कारण और काज के मायक देश में आ पड़े हो और तरक़्क़ी उन्हीं कायदों के मुताबिक होगी जो मालिक ने इस दुनिया और हमारे तन मन और सुरत के लिये बनाए हैं।

(24)

Depend upon the mercy of the Supreme Father, and He will arrange or settle everything to the real benefit and advantage of His children.

(२४) अनुवाद

मालिक की दया के आसरे रहो। अपने बच्चों के असली फ़ायदे के लिये जिस चीज़ की ज़रूरत है, उसका वह आप इंतज़ाम कर रहा है।

(25)

The Supreme Father is always looking with solicitous care on all His children and grants from time to time divine beatitude and internal happiness to the extent which He thinks conducive to their advantage. You should always be looking forward for it and pray for its inward realization, but do not slacken your efforts when you do not experience it, as He alone knows when it should be granted and when not.

(२५) अनुवाद

मालिक को हमेशा अपने बच्चों की फ़िक्र है। जितना ज़रुरी और फ़ायदेमंद होता है, उतना रस और आनन्द वह अंतर में बख्शता है। हमेशा इसके उम्मीदवार रहो और अंतर में परिचय प्राप्त करने के लिये प्रार्थना करो लेकिन जब कुछ न मिले तो अपनी कोशिशों में ढ़ीले न पड़ो क्योंकि केवल मालिक ही जानता है कि कब उसकी बख़्शिश करनी चाहिये।

(26)

Sadness is also one of the instruments of progress and almost all whose spiritual advancement has begun have to experience an alternation of such conditions. The Supreme Father is conscious of your resolve to resign yourself entirely to His will and will gradually grant you power to suffer your existence to be mended in accordance with it. He has also been pleased to accept your offer of yourself and your belongings and He now gives them back to you as His *parshadi*. You should now make a judicious use of them and with the consciousness that they are the gifts of your Heavenly Father.

(२६) अनुवाद

मन का उदास रहना भी तरक़्क़ी का एक ज़रिया है और जिन लोगों की रूहानी तरक़्क़ी शुरु हो गई है, उनको बराबर यह तजरुबे होते रहते हैं कि कभी मन में ख़ुशी होती है और कभी उदासी छाई रहती है। मालिक जानता है कि तुमने अपने आपको उसकी मौज पर छोड़ दिया है। मालिक तुमको धीरे धीरे ताक़त बख़्शेगा जिससे मौज अनुसार अपने जीवन की गढ़त को सह सको। तुमने अपने को और अपने माल असबाब को जो भेंट किया है उसे मालिक ने मंज़ूर कर लिया है और अब वह इन चीज़ों को प्रशादी करके तुम्हें वापस देता है। तुम्हें चाहिये कि इनको विवेक पूर्वक उपयोग में लाओ और याद रक्खो कि वे मालिक की बख़्शी हुई दात हैं।

(27)

As regards your occasionally succumbing to the temptation of indulging inordinately in richly prepared dishes, your desire of freeing yourself from it is a hopeful sign and the Supreme Father will gradually grant your request. You should only on such occasions try to exercise greater care than usual and ask inwardly the help of the Suprame Father with humble prayers.

It does not matter much if you take a little more of food when it consists of Radhasoami's *parshadi*, that is to say, after it is offered to the Supreme Father devoutly. But when you go to dine with a friend or relation holding only wordly relationship with you, you should not only make an offering of your dish to the Supreme Father before you commence eating but be also careful to avoid excessive indulgence as far as you possibly can.

(२७) अनुवाद

कभी २ बढ़िया और मज़ेदार चीज़ों को ज़्यादा खा लेने से अपने आप को न रोक सकने के विषय में तुम चाहते हो और प्रार्थना करते हो कि किसी प्रकार इस इल्लत से छुटकारा हो; यह आशा जनक चिन्ह है। मालिक दया करेगा और धीरे २ यह आदत छूट जावेगी। जब कभी ऐसा मौक़ा आवे तुमको अपनी तबियत पर क़ाबू रखने की कोशिश करनी चाहिये और अंतर में सम्हाल के लिये प्रार्थना करनी चाहिये।

यदि भोजन राधास्वामी की प्रसादी हो तो ज़रा ज़्यादा खा लेने में भी हर्ज नहीं है यानी भोजन को राधास्वामी दयाल के भोग में अर्पण करके खाना चाहिये। लेकिन जब कभी रिश्तेदारों या मित्रों के यहाँ खाने को जाना पड़े जिनसे केवल दुनियावी ताल्लुक़ हो तो खाने से पहले उसे राधास्वामी दयाल को भोग लगाना ही चाहिये पर यह अहतियात भी रखना चाहिये की जहाँ तक हो सके, ज़्यादा न खाया जावे।

(28)

The Supreme Father is, through His grace, regulating every thing according to the requirements of each person and you may rest assured that He will not withhold any favour when the time arrives for it. Eagerness and constant expectation impart motion to the wheels of progress and these should be constantly fostered and held as signs of sure advancement. You should incessantly knock at the door and at the same time have patience to wait till the call is answered, Secret grace is, however, working at all times although its palpable manifestations are not so often as you wish them to be. These will also gradually increase in frequency and the Supreme Father will grant you power to better perceive the workings of His secret grace.

(२८) अनुवाद

हर एक की जरूरियात के मुताबिक़, मालिक सब बातों का दया से इंतज़ाम कर रहा है और विश्वास रक्खो कि जिस वक़्त जिस चीज़ के देने की जरूरत होगी, वह उसे रोक नहीं रक्खेगा। उत्सुकता और उम्मीद बनाये रखने से तरक़्क़ी होने में मदद मिलती है। इसलिए उम्मीद कभी मत छोड़ो। यह तरक़्क़ी का निशान है। हमेशा मालिक का दरवाज़ा खटखटाते रहो लेकिन जब तक सुनवाई न हो तब तक सब्र और धीरज रक्खो। दया गुप्त रीति से बराबर अपना काम कर रही है यद्यपि उसका स्पष्ट प्रकटीकरण या इज़हार बार-बार नहीं होता जितना कि तुम चाहते हो। दया के परचे या इज़हार भी धीरे २ बढ़ते जावेंगे और मालिक ऐसी समझ बूझ देगा जिससे तुम उसकी गुप्त दया की कार्रवाई ज़्यादा परख सको।

(29)

It is not proper to force anyone against his will to join; but you can pray for them to the Supreme Father.

(२९) अनुवाद

किसी को ज़बरदस्ती मत में शरीक करना ठीक नहीं है। हां, उनके लिए मालिक से प्रार्थना कर सकते हो।

(30)

Remember the Supreme Father and depend entirely upon His grace and mercy wherever you are and exercise ordinary control on your mind and thoughts. But sometimes a little liberty should be given to the mind to discharge its over-loaded current in some direction little or not wholly opposed to your spiritual benefit, and the equilibrium restored thereby.

(३०) अनुवाद

जहां कहीं भी हो, मालिक की याद ताज़ा बनाए रहो और उसकी दया और मेहर के आसरे रहो। मन और मन में उठने वाले ख़्यालों पर साधारणतया उचित कंट्रोल या क़ाबू रखने की कोशिश करते रहो। लेकिन कभी कभी मन को थोड़ी आज़ादी भी देनी चाहिए कि जिससे वह उचित माप से ज़्यादा इकट्ठी हुई धार के बोझ को अमुक दिशा में बरत कर ख़ारिज कर सके और संतुलन अवस्था स्थापित हो जावे यानी ऐत-दाल क़ायम हो जावे। हां, यह सम्हाल रखनी चाहिये कि उस आज़ादी में बरतने से कोई ख़ास परमार्थी नुक़सान न होता हो।

(31)

Go on with your practice as best as you can without paying much attention to the non-ableness and disturbing influence of your mind. Have perfect faith in the Supreme Father's grace. It will one day enable you to overcome all difficulties and obstacles. When your efforts fail to put your mind in the right path, pray to the Supreme Father for help; and whether it is forthcoming immediately or later on, depend upon His mercy and grace to bring round the mind gradually. Give up all worldly loves and desires from your heart within or internally. Remember the Supreme Father and repeat His Holy Name as often as you can, day and night, whether it be for a minute or two only at a time, and then you will secure greater help and assistance from above. The Grace is sometimes hidden and concealed and there is some advantage in its non-appearance to you.

(३१) अनुवाद

मन लगे या न लगे, अथवा मन के गुनावनों या खयालों की कुछ परवाह न करते हुए, जितना बने अपना अभ्यास करते रहो। मालिक की दया में पूर्ण विश्वास रक्खो। दया से एक दिन सब विघ्नों और कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करोगे। जब कभी अपनी कोशिश से मन ठिकाने पर न आ सके, मदद के लिए मालिक से प्रार्थना करो, मदद चाहे उसी वक़्त मिले या कुछ देर बाद मिले। दया और मेहर का भरोसा रक्खो, दया और मेहर से ही धीरे २ मन सीधा होगा और ठीक रास्ते पर आवेगा। जो दुनियावी चाहें और मोह भरे हुए हों, सब को अंतर से निकाल दो। मालिक को याद रक्खो और मालिक के पवित्र नाम को रात दिन जितना ज़्यादा हो सके उतना ही बराबर जपते और याद करते रहो, एक-एक दो-दो मिनट के लिए ही सही, पर स्मरण करते रहो। इन सब जतनों से विशेष दया और सहायता प्राप्त होगी। कभी २ दया गुप्त रह कर छिपे २ काम करती है। इसमें तुम्हारा फायदा है।

(32)

Yes, you should endeavour to place your full rellance on the merciful grace of the Supreme Father who is always with you and watching your interest. Though His mercy and the reasons for His ordinances cannot always be observed or understood by human beings still He is all kind and in His kindness does what He thinks proper for His children elect. Don't, therefore, be disheartened, but be encouraged and go on trying your best to become His child and regard Him as your kind, merciful and loving Father, and love Him and His works accordingly. With such determined and persevering efforts you will gradually gain more and more ground and lose nothing at any time. If you suspect that mercy is withdrawn, this is a mere delusion.

Such a state of things never occurs, though at times when our feeble mind is not at rest it may appear so. When you are afflicted with worldly pain or anxieties, you are helped the more, but this help is not so apparent and, therefore, the mind thinks otherwise. Apply yourself to your practice and you will find more grace and blessing helping you in your course than heretofore.

(३२) अनुवाद

मालिक सदा तुम्हारे साथ है और तुम्हारे हितों को देख और सम्हाल रहा है। उसकी दया का भरोसा रक्खो। उसकी दया और उसके हुक्म से जो कुछ हो रहा है, उसे इनसान नहीं समझ सकता। लेकिन वह बड़ा मेहरबान है और अपने प्यारे बच्चों के लिए जो वह उचित समझता है वही करता है। इसलिए निराशता को मत आने दो, हिम्मत रक्खो और उसके बालक बनने की कोशिश करो और उसको अपना हितकारी और प्रिय और दयालु पिता समझो और उसके कामों को इसी निगाह से देखो। ऐसी दृढ़ता के साथ जतन करते रहने से धीरे २ तुम तरक़्क़ी करते जाओगे और कभी कोई हर्ज नहीं होगा। ऐसा ख़याल होना कि दया खिंच गई, केवल भ्रम है। ऐसा कभी भी नहीं होता है यद्यपि जब कभी मन बेचैन होता है तो ऐसा मालूम होने लगता है। जब दुनिया के दुख तकलीफ़ और चिंता की हालत आती है, तब मालिक की तरफ से और ज़्यादा मदद मिलती है लेकिन इसकी खबर नहीं पड़ती है, इसलिये मन ख़याल करता है कि दया खिंच गई। अभ्यास करते रहने से दया और मदद ज़्यादा आवेगी।

(33)

The state of your mind to leave all worldly things is very good, but you need not actually do so in practice. This state is all that is required and will prove very beneficial in your practice.

(३३) अनुवाद

दुनिया को छोड़ देने का भाव और ख़याल अच्छा है लेकिन वाक़ई दुनिया और दुनिया के सामान को त्याग कर देने की जरूरत नहीं है। इस भाव और रुख़ के मन में पैदा होने की जरूरत है और इससे अभ्यास में मदद मिलेगी।

(34)

All those who have taken the Supreme Father's protection should place their entire trust that He will not only appear to them at the time of death and help them on that occasion(that He will do in every case of His follower's

death), but He will even before that time through His mercy appear to them and help them who love Him.

(३४) अनुवाद

जिन जीवों ने राधास्वामी दयाल की सरन ली है उनको पूर्ण विश्वास रखना चाहिए कि मृत्यु के समय प्रत्येक को दर्शन मिलेंगे और न सिर्फ मृत्यु के समय बल्कि उससे पहले ही वह दया से दर्शन देंगे और मदद करेंगे।

(35)

Don't feel dejected or suspicious about your salvation in consequence of the irregular and unrestrained conduct of your mind. The Supreme Father ever forgives His children's faults when they sincerely repent of them.

(३५) अनुवाद

मन की कुचाल और अनियमित बरताव से उद्धार के विषय में ना-उम्मीदी या संदेह न लाओ। सच्चा पछतावा करने पर मालिक अपने बच्चों के सब गुनाह मुआफ़ कर देता है।

(36)

Don't despair, but place your full confidence in the mercy of the Supreme Father and leave everything to His Mauj; which whatever it be, will eventually prove beneficial to your interests. Do what you think proper to relieve your family of inconveniences as far as possible by employing servants and administering medicine. Your practice will in no way suffer from those awkward circumstances which will pass away soon.

(३६) अनुवाद

निराश मत हो। मालिक की दया में पूर्ण विश्वास रखते हुए सब को उसकी मौज पर छोड़ दो। मौज जो हो सो हो, अंत में लाभदायक ही सिद्ध होगी। बीमारी वगैरा में अगर जरूरत हो और मुमकिन हो तो नौकर रख लो एवं इलाज मालजा करो जिससे तकलीफ़ कम हो। मगर इन चिंता की हालतों से अभ्यास में कोई हर्ज या नुक़सान न होगा और यह हालतें भी जल्द निकल जावेंगी।

(37)

You should try as far as possible, invoking the help and grace of the Supreme Father, to abide by His will and pleasure.

(३७) अनुवाद

मालिक की दया और सहायता के लिए पुकार करो और उसकी मौज से मुआफ़क़त करो।

(38)

The Supreme Father is ever watchful over the spiritual and temporal interests of all His children and He alone knows what is most to the advantage of each. Man with his limited and corrupt wisdom cannot understand His mysterious ways. You should trust and fully believe that whatever He does is always the best.

(३८) अनुवाद

मालिक अपने बच्चों के स्वार्थ और परमार्थ दोनों का निगरां है और वही जानता है कि किसमें कितना लाभ है। मनुष्य की तुच्छ और भ्रष्ट बुद्धि मालिक की गुप्त कार्रवाई को नहीं समझ सकती। पूर्ण विश्वास और निश्चय रक्खो कि जो कुछ उसकी मौज से होता है उसी में बेहतरीन फ़ायदा मुतसव्वर है।

(39)

The only thing that is expected from you at present is that you should devote yourself to the practice for at least half an hour or three quarters twice a day and read one or two pieces or Shabds of the holy book (about a hage or two) daily carefully. This won't take more than two hours a day at the outset and so much time cannot be a strain upon your leisure. You are young and have just commenced work in this world and therefore some allowance appears necessary for your age and for the purpose of enabling you to acquire experience of the hot and cold, good and bad of this world and its lovers. If you attend to devotion with an humble and affectionate heart, the Supreme Father Radhasoami will through His mercy visit you now and then with His grace and thus gradually raise your spirit and mind above the common level and embellish your heart with firm belief in His mercy and grace. As time passes on and your age ripens your practice should increase to double the time by four hours distributed equally or as may suit best into three or four periods of day and night. With a firm and sincere belief in the Supreme Father's mercy and a loving heart you can do a great deal in half an hour than in two hours practice with distraction and disturbance caused by worldly influences and thoughts. If you mind the above advice, the Supreme Father will kindly show His mercy to you, now and then, so as to strengthen your belief and increase your love for His holy feet. Don't despair, for our Supreme Father is kind, liberal and forgiving.

(३९) अनुवाद

जो कुछ कि तुम फ़िलहाल कर सकते हो, वह यह है कि प्रतिदिन आध या पौन घंटा दिन में दो बार अभ्यास करो और एक या दो शब्द यानी क़रीब एक या दो पृष्ठ बानी के समझ २ कर पाठ करो। शुरू में इन कामों में दो घंटे से अधिक समय नहीं लगेगा और इतना वक़्त तो तुम निकाल ही सकते हो। अभी तुम जवान हो और दुनिया का काम शुरू ही किया है, इसलिए कुछ रिआयत की ज़रूरत है और दुनिया के ऊँच नीच और अच्छे बुरे और दुनियादारी का कुछ तजरूबा हासिल करने की ज़रूरत है। अगर तुम दीन अधीन होकर प्रेम से अभ्यास करते रहोगे तो परम पिता राधास्वामी की दया तुम पर बनी रहेगी और धीरे २ तुम्हारे मन और सुरत मामूली घाट से ऊपर उठते रहेंगे और दिल में उनकी मेहर और दया का विश्वास पक्का होता जावेगा। जैसे २ वक़्त बीतता जावे और तुम्हारी उम्र बढ़ती जावे, अभ्यास का समय दुगुना यानी चार घंटे तक कर देना चाहिए जो कि अपनी सहूलियत के लिहाज़ से तीन चार बार में कर लिया जावे। परम पिता की दया पर दृढ़ विश्वास और हृदय में प्रेम होने से आधे घंटे में इतनी कमाई की जा सकती है जितनी दो घंटे के अभ्यास में नहीं हो सकती, यदि दुनियावी गुनावनों और ख़यालों में मन न फँसा रहे। अगर तुम इस सलाह को मान कर इसके अनुसार काम करते रहोगे तो परम पिता तुम पर अकसर दया की वर्षा करेंगे, ताकि तुम्हारा विश्वास और दृढ़ हो और पवित्र चरणों में प्रेम बढ़े। निराश मत हो क्योंकि हमारे परम पिता मेहरबान, दयालु और माफ़ी बख़्शने वाले हैं।

(40)

The Supreme Father's mercy and grace (unbounded as they are) are distributed equally over all; but the difference lies in everyone's capacity to receive and enjoy the same. I cannot make myself believe that all of you are backward. There may be instances of that sort, but in all such cases the persons would be found to blame except when you ask for something more than you are at present capable of realising and enjoying and which is incompatible with your present circumstances.

(४०) अनुवाद

परम पिता की मेहर और दया सब पर बराबर है। फ़र्क़ अपने २ अधिकार का है यानी जिसमें जितनी योग्यता है उतनी ही दया उसे प्राप्त होगी और वह ग्रहण कर सकता है। यह बात मानने योग्य नहीं कि तुम सब सब के पिछड़े हुए हो। शायद इस क़िस्म की भी एक दो मिसालें निकल आवें, लेकिन इन मिसालों में भी, ग़ौर करने से मालूम होगा कि क़सूर उन लोगों का है। यदि कोई ऐसी दात मांगे जो उसकी

परिस्थितियों के अनुकूल न हो अथवा कोई अपनी क़ाबलियत या अधिकार से ज़्यादा मांगे तो वह और बात है, वरना सब पर दया बराबर है।

(41)

We must bear in mind that we are playing a double game, i. e., we have affections for this world as well as for our Supreme Father, and that our love of the world and its objects is, to a degree, stronger than that for the Supreme Father, although we are trying our best to raise it above all other affections. Time is, therefore, needed to enable us to relinquish our old habits and overcome our habitual desires and passions; and as they decrease or become weaker, and weaker we rise in our scale of love to our Father. This can be accomplished gradually and the All-merciful Father who has taken us under His protection is ever watchful over our interests and does not let slip a single opportunity to better our condition. But as we have become separated from Him and His abode for long ages and have undergone the vicissitudes of innumerable births and contracted a sort of affinity with, or attachment to, certain passions or desires peculiar to certain bodies, it will, as stated above, take so much time to clear our heart or mind of the rubbish it has gathered during the long sojourn in these spheres below. Do not, therefore, despair of success or be untrustful of the greatest affection and regard of the Merciful Father towards His children, but go on traversing the path before you as fast as you possibly can and you will one day reap the fruit of your labour by receiving more grace than you enjoy at present.

(४१) अनुवाद

याद रखना चाहिए कि हम दो नावों पर पांव रक्खे हुए हैं यानी हमें दुनिया से भी मोह है और मालिक से भी प्रेम और मोहब्बत है बल्कि दुनिया और दुनिया के सामान का मोह किसी क़दर मालिक के प्रेम से ज़्यादा है, यद्यपि मालिक का प्रेम अन्य सब प्रीतों से ज़्यादा बढ़ाने की कोशिश हम करते रहते हैं। इसलिए पुरानी आदतों और चाहों से छुटकारा पाने में समय लगेगा। ज्यों २ वे कम और कमज़ोर होती जावेंगी, उसी क़दर मालिक का प्रेम दृढ़ होता और बढ़ता जावेगा। यह धीरे २ होगा। परम दयालु पिता ने हमको अपनी सरन में ले लिया है और वह हमारे हितों की सम्हाल कर रहा है और हमारी तरक़्क़ी के किसी मौके को हाथ से न जाने देगा। लेकिन मालिक और मालिक के धाम से जुदा हुए हमको बहुत अर्सा हो गया है और हम अगणित जन्मों में अनेक योनियों और रूपों में भटकते रहे हैं और प्रत्येक जन्म या योनि या रूप में विशेष प्रकार की चाहों में बर्तते रहे हैं और उनसे बंधन पैदा होते रहे हैं। इसलिए इन नीचे के लोकों में इतने समय तक रहने से जो विकार और गंदगी पैदा हो गई है उसे ख़ारिज करने और सफ़ाई हासिल करने में इतना समय लगता है। इसलिए ना-उम्मीद मत हो

या यह न समझो कि मालिक को अपने बच्चों का ख़याल नहीं है। जितना जल्दी हो सके, जल्द रास्ता काटने की कोशिश करो और एक दिन मेहनत का फल अवश्य मिलेगा यानी जितनी दया का अनुभव इस समय कर रहे हो, उससे कहीं ज्यादा दया प्राप्त होगी।

(42)

Your progress is secret and on your onward march you are traversing the ground before you daily, but you know little of the progress you are making and therefore you suspect that you are not doing very well whereas the reverse is the case. I have prayed for you to the Supreme Father to show you more kindness than you have experienced hitherto and hope you will soon derive some sort of contentment and internal pleasure so as to satisfy your mind that your complaint is altogether incorrect and that it is owing to your not having fully known the ways and means adopted by the Supreme Father for your advancement.

(४२) अनुवाद

तरक़्क़ी गुप्त रीति से होती है। बराबर रास्ता काटा जा रहा है। लेकिन तुमको पता नहीं चलता, इसलिए तुम्हें ख़याल पैदा होता है कि कदाचित उन्नति नहीं हो रही है। मगर यह ग़लत ख़याल है। मालिक से प्रार्थना की गई है कि तुम पर विशेष यानी पहले से ज्यादा दया हो और आशा है कि शीघ्र ही तुमको कुछ संतुष्टि प्राप्त होगी और अंतर में कुछ रस और आनन्द का अनुभव होगा कि जिससे तुम्हारे मन को यकीन और विश्वास आवे कि तुम्हारी शिकायत में कुछ तथ्य नहीं है और इसका कारण यह है कि तुम्हें मालिक की कार्रवाई का कुछ पता नहीं है कि वह किस तरह तुम्हारी तरक़्क़ी का निगरां है।

(43)

Everything depends upon the purity of heart, or in other words, upon the degree of affection each one has for the Supreme Father and the extent to which he has cleared his mind of all other affections, or to be more clear, the extent to which one has waived away other or worldly affections and given preference to the most holy love of the Supreme Father.

(४३) अनुवाद

मन की निर्मलता पर सब कुछ निर्भर है यानी इस पर कि किस में कितना प्रेम मालिक के प्रति है और अन्य प्रीतों को किस क़दर दिल से निकाल दिया है यानी दुनिया की मोहब्बत को कम करके मालिक के प्रेम को अपने दिल में बसाया है।

(44)

Remember that any rapid advance in Prem and Bhakti will affect your attention to business, and this is not considered advisable at present. Get on with your practice as best as you can. The Supreme Father watches your progress closely and you should rest assured that every week and month takes you a step further; but the distance is so very great that like the movement of a large wheel the change is not easily perceptible. Compare your state of mind, etc., say six months back, with the result of six months' practice and you will surely find some improvement. You have to do double work and therefore your movement must necessarily be slow, but it is nevertheless sure and substantial. Place your full confidence in the Merciful Father's mercy and grace and strive to do what you can, leaving the rest to His will and pleasure; and you will see that grace and mercy will attend you in all your work.

(४४) अनुवाद

याद रक्खो कि प्रेम और भक्ति में बहुत जल्द और ज़्यादा तरक़्क़ी होने से तुम अपने कारोबार में उतनी तवज्जह न लगा सकोगे जितनी कि लगाना चाहिए, और यह फ़िलहाल मंजूर नहीं है। जिस क़दर उम्दगी से हो सके, अपना अभ्यास करते रहो। मालिक तुम्हारी तरक़्क़ी की सम्हाल कर रहा है और तुमको निश्चित रहना चाहिए कि एक एक सप्ताह और मास में तुम्हारी कुछ न कुछ चाल आगे बढ़ रही है। लेकिन सफ़र इतना लम्बा है कि किसी बड़े पहिये या चक्र की मानिंद पता नहीं चलता कि कितनी चाल चली गई। आज से छः महीने पहले जो तुम्हारे मन की दशा थी उसका छः महीने अभ्यास करने के बाद की हालत से मिलान करो तो तुमको ज़रुर मालूम होगा कि कुछ तरक़्क़ी हुई है। तुमको दो-तरफ़ा चाल चलनी पड़ती है, इसलिये चाल बहुत धीमी ही होगी लेकिन चाल ज़रुर अच्छी तरह चल रही है। मालिक की दया और मेहर का भरोसा रक्खो। जो कुछ जतन कर सको, वह करो। बाक़ी मालिक की मौज पर छोड़ दो। तुमको अनुभव होगा कि मेहर और दया सम्हाल कर रही है।

(45)

Yes, philosophical teachings and readings greatly retard, nay, seriously interfere with the feeling of love one might have for the Supreme Being, our Supreme Father and Mother, and thereby retard our spiritual progress by giving rise to various doubts about the existence of a Supreme Being and consequently the ways and means of approaching Him. These doubts cannot be removed without your consulting some of our learned and practised brothers.

(४५) अनुवाद

फ़िलासफ़ी की बातें सुनने और पढ़ने व मानने से मालिक के प्रेम और भक्ति में भारी विघ्न पड़ता है और मालिक की मौजूदगी और उससे मिलने के जतन के बारे में शक व शुबहा पैदा हो जाता है जिससे रूहानी तरक़्क़ी बन्द हो जाती है। इन शक और शुबहों को दूर करने के लिए तजरुबेकार और अभ्यासी सतसंगियों से चर्चा करनी और सुननी चाहिये।

(46)

The Supreme Father Radhasoami is our true guide. He is always with us, within us, sees us doing every little bit of internal and external work and helps us in everything good, while the evil spirit Kal whose agent the mind is also always with us, leads us in a quite different direction. All this depends upon our tendencies or inclinations. This tendency or inclination for good or bad grows with our company or associations.

(४६) अनुवाद

राधास्वामी दयाल हमारे सच्चे पथ प्रदर्शक हैं। वह सदा हमारे साथ और हमारे अंतर में हैं और अंदर बाहर जो कुछ हम करते हैं उसे वे देखते हैं और अच्छे कामों में मदद करते हैं। काल शैतान का प्यादा मन भी हमेशा हमारे साथ है और वह दूसरी दिशा में यानी विपरीत दिशा में हमें ले जाता है। यह सब हमारी प्रवृत्तियों और रुझान पर मुनहसर है। जैसा संग और सोहबत होगी वैसा ही रुझान और रुख पैदा होगा।

(47)

It is necessary for everyone who wishes to know anything of worldly science or art to have a teacher of that science or art; and so it is with the science of knowing ourselves and our God. Someone practised in this art must teach us. If he is not a perfect teacher, let him be a monitor. But no one unless practically acquainted with this knowledge could be of any use to us. Such a one might be called our guide or friend in this world; but the real Sat Guru is the Supreme Being Himself and He should be accepted and adored as Sat Guru and Supreme Father.

(४७) अनुवाद

दुनियावी इल्म या हुनर सीखने के लिए उस इल्म या हुनर के उस्ताद की जरूरत है। यही बात मालिक और जीव के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने के लिए भी

समझनी चाहिये। कोई अभ्यासी और नेष्ठावान गुरू मिलना चाहिये। अगर पूरा गुरू न हो तो साधक और अभ्यासी ही सही। लेकिन बिना अभ्यासी और साधना करने वाले के मिले यह ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता। ऐसे शख्स को पथ-प्रदर्शक या मित्र कहा जा सकता है। लेकिन सच्चे सतगुरु तो स्वयं कुल्ल-मालिक ही हैं और उन्हीं को सतगुरू और परम पिता मानना चाहिए।

(48)

I have prayed to the Supreme Father in your behalf; and please do the same internally yourself; and by and by you will observe Supreme Father's mercy and grace doing the needful work within you. Don't be disheartened by a little delay; but continue your devotion — concentration (Dhyan), if not devotion (Bhajan) — regularly, placing your full trust in the mercy of the Supreme Father.

(४८) अनुवाद

तुम्हारी तरफ़ से चरणों में प्रार्थना की गई है। तुम भी अंतर में प्रार्थना करो। तुम को मालूम होगा कि मालिक की दया अंतर में धीरे २ अपना काम कर रही है। थोड़ी देर होने से हिम्मत मत हारो। भजन न हो सके तो मालिक की दया का भरोसा रख कर ध्यान नियम से करते रहो।

(49)

There is only one way of approaching the Supreme Father, viz., Surat Shabd Yoga, which is the imperial highway to heaven. All other systems belongto lower regions; they have their origin in these and end there and never enter even the precincts of the Dayal Desh or the purely spiritual regions occupied by the Supreme Being

(४९) अनुवाद

मालिक से मिलने का एक ही उपाय है और वह है सुरत शब्द योग, मालिक तक पहुँचने का राज मार्ग। बाक़ी सब रास्ते बीच में ही कहीं न कहीं नीचे के लोकों में ख़तम हो जाते हैं। नीचे के लोकों से ही वह निकलते हैं और वहीं ख़तम भी हो जाते हैं, कुल-मालिक के धाम, दयाल देश, की हद तक भी नहीं पहुँचते।

(50)

The blessing you crave for will be conferred on you by the Supreme Father provided you trust in Him fully and think of Him or remember Him now

and then by repeating His Holy Name and thinking of His Holy Charans. Do not be disheartened. The affection or love (attraction) is reciprocal. The more you love the Supreme Father the more His mercy and grace will attend you in all your work.

(५०) अनुवाद

यदि नाम का सुमिरन और स्वरूप का ध्यान व मालिक की याद करते रहोगे और मालिक पर भरोसा रक्खोगे तो जो मेहर और दात मांगते हो वह मिलेगी। ना-उम्मीद न हो। प्रेम दोनों तरफ़ से होता है। जितना ज़्यादा तुम मालिक से प्रेम करोगे उतना ही ज़्यादा उसकी मेहर और दया तुमको तुम्हारे सब कामों में प्राप्त होगी।

(51)

I would advise you not to practise Pranayam. It may injure your health.

(५१) अनुवाद

प्राणायाम मत करो। इससे स्वास्थ्य को हानि पहुँचेगी।

(52)

The spiritual status of each and all differs widely from that of another and the circumstances in which one is placed are suited duly to the requirements of his case. It is not without some special object that the Supreme Father has allowed His children to be subjected to severe bodily ailments. Immense spiritual benefit will be their result. The Supreme and Merciful Father at the same time grants patience and courage to bear those sufferings.

(५२) अनुवाद

हर एक का रूहानी दरजा अलग २ है। जो जिस हालत या परिस्थिति में रक्खा गया है, वह उसकी विशेष आवश्यकताओं के अनुकूल है। रोग सोग की हालत जब मालिक ने रवा रक्खी है तो ज़रूर उसमें कोई मतलब और मसलहत होगी। इसमें भारी परमार्थी लाभ है। रोग सोग को बरदाश्त करने की ताक़त भी मालिक दया से बख़्शता है।

(53)

Sorry to hear of the complaints of your mind. The only remedy is to go on with your practice regularly, placing your trust in the mercy of the Supreme

Father who will gradually purify the mind by His grace. The evil influences are not rooted unless they have spent their force to a certain extent and therefore you need not be disheartened at the vagaries of the mind.

(५३) अनुवाद

मन की चंचलता और मलीनता का हाल सुन कर अफ़सोस हुआ। इसका एक मात्र उपाय यही है कि नियम से अपना अभ्यास करते रहो और मालिक की दया का भरोसा रक्खो। दया से धीरे २ मन की सफ़ाई होती जावेगी। जब तक बुरे कर्म अपना असर न दिखला चुकेंगे तब तक वह खारिज न होंगे। इसलिये मन की तरंगों से निराशता न आने दो।

(54)

It is true that those who are living with Beloved Father are the most fortunate beings on the face of the earth; but those who, having faith in His boundless mercy, are yearning for His company and ever praying for their internal reformation so as to be made fit for His mercy, are none the less fortunate. And one day at the proper time the Supreme Father will grant their prayers and bless them with His company either internally or in the shape of interview. You need not therefore be dejected if you feel yourself not so pure as to be fit for His mercy. He is ever merciful and His grace is being freely bestowed upon all who put their faith and trust in Him. But this mercy and grace are palpably felt within in the shape of love for Him and internal pleasure at the time of devotional practice when the mind becomes purified, and the first step towards the attainment of this purified condition of mind is to know one's impurities and to pray for their being removed.

(५४) अनुवाद

यह सच है कि जो लोग संत सतगुरु के संग रह रहे हैं वे संसार भर में बड़े भाग्यशाली हैं। लेकिन वे लोग भी कम भाग्यवान नहीं हैं जो उनकी अपार दया में विश्वास रखते हुए उनके संग यानी सतसंग की तीव्र अभिलाषा रखते हैं और अंतरी सुधार के लिये हमेशा प्रार्थना करते हैं कि जिससे दयापात्र बनें। और एक दिन उचित समय पर मालिक उनकी प्रार्थना को स्वीकार करेगा और चाहे अंतरी सतसंग बख़्शेगा, चाहे बाहर में बातचीत और दर्शन का मौक़ा देगा। इसलिये यदि ऐसा मालूम हो कि दया प्राप्त करने के लिये अभी ज़रूरी सफ़ाई हासिल नहीं हुई है तो मन में ना-उम्मीदी को जगह मत दो। वह सदा दयाल हैं और जिनको मालिक में विश्वास और भरोसा है उन पर दया की वर्षा होती ही है। लेकिन इस दया का यह रूप होता है कि मालिक के चरनों के प्रेम की वृद्धि हो और अभ्यास में अंतरी रस और आनन्द मिलें और मन की सफ़ाई

हो जिसके लिये यह ज़रूरी है कि पहले मन की मलीनता की ख़बर पड़े और फिर उसके दूर करने के लिये प्रार्थना करे ।

(55)

What you have stated about yourself is the case with almost everyone before his entry into this sublime Faith. But as soon as he joins it and watches his mind and its actions carefully so as to check the overgrowth of worldly desires and exerts himself to create and expand far and wide onward his affection for the Supreme Father, he is certain to receive in course of time the Most Merciful and Loving Father's grace to help in his task in view, i.e., to raise his mind and spirit gradually to a higher and higher sphere and status. Sacrifice internally and sincerely all your desire and esteem for this world and its objects and your mind will become tame and act according to your new affection in subduing all its passions and directing its course onward instead of downward as it used to do formerly.

(५५) अनुवाद

जो कुछ तुमने अपनी निस्बत बयान किया है, वह हाल, इस मत में शरीक होने से पहले, सभी का रहता है । लेकिन ज्योंही राधास्वामी मत धारण किया और मन व मन की कार्रवाइयों की चौकीदारी शुरू की और दुनियावी चाहों पर कंट्रोल या अंकुस लगाया और मालिक के प्रेम को बढ़ाने का जतन करना शुरू किया कि उसे अवश्य करके मालिक की दया प्राप्त होगी और अपने कार्य में मदद मिलेगी यानी उसके मन और सुरत धीरे धीरे ऊपर के घाट पर चढ़ना शुरु होंगे । अपनी सब चाहों और दुनिया व दुनिया के सामान की क़दर को अंतर में चरणों में अर्पण कर दो । मन ढीला पड़ कर तुम्हारे कहने में चलने लगेगा और बजाय नीचे के ऊपर की ओर रुख़ करके आगे बढ़ेगा ।

(56)

Have full belief in the Supreme Father and Surat Shabd Yoga (the only imperial highway to heaven) and full confidence in His mercy and grace and you will find yourself under the Father's protection at all times and your mind and spirit working their way easily, though slowly, propelled by love and eager desire to approach the Supreme Father. Don't be disheartened or discouraged. The Father's love is full of mercy, all your shortcomings will be forgiven if you reform your conduct at once. Strengthen your affection towards Him and you will then see that you will experience no obstacle or difficulty in your journey. Have what your mind through its habit of long ages and numerous

births may present but even these will be easily overcome and removed by redoubled grace and mercy if the Holy Name is mentally and spiritually repeated as often as possible not only at the time of devotion but at all hours also and the practice of hearing internal spiritual sound is carried on regularly.

(५६) अनुवाद

परत पिता और सुरत शब्द योग में (उद्धार के एक मात्र और सबसे बढ़कर उपाय में) विश्वास रक्खो। दया और मेहर का भरोसा रक्खो। हर मौके पर रक्षा और सम्हाल होगी। मन और सुरत, प्रेम के विहंग और मालिक से मिलने की विरह से बड़ी सहूलियत से, अगरचे धीरे धीरे, ऊपर चढ़ते जावेंगे। हिम्मत मत हारो, नाउम्मीद मत हो। मालिक के चरनों में प्रेम होने से दया आवेगी। अगर अपने चाल चलन में फ़ौरन सुधार शुरू कर दो तो सब क़सूर मुआफ़ हो जावेंगे। प्रेम को दृढ़ करो तो मालूम होगा कि कोई विघ्न और कठिनाई तुम्हारी चाल को नहीं रोक सकते। पुरानी आदत और जन्मान जन्म के संस्कार से मन जो चाहे सो करे, करने दो। यह भी आसानी से दया मेहर की वृद्धि से, दूर हो जावेंगे, यद्यपि मन और सुरत से राधास्वामी नाम का सुमिरन न सिर्फ अभ्यास के वक़्त ही बल्कि और वक़्तों में भी जितना ज़्यादा बने, करते रहो और शब्द के सुनने का अभ्यास नियम से करते रहो।

(57)

Any display of extraordinary powers, attendant to some extent on play of higher self, such as explained in your note, are extremely prejudicial and injurious to your spiritual progress, and as such you are strictly enjoined never to make use or a show of them, otherwise your progress will be stopped and your way to Chaurasi paved. You should not therefore let any body, although he may be your nearest kin, know anything that you may become aware of beforehand. Your chief object in performing our modes of devotion should be to raise your spirit to the higher regions for eventual attainment of the region of pure spirit and everlasting bliss and the consequent emancipation, and no possession of extraordinary powers of the regions in the way should therefore deviate you from your true path and goal.

(५७) अनुवाद

ग़ैर-मामूली ताक़तो का इज़हार करना जो कि ऊंचे घाट के आपे के जागने से पैदा होती हैं और जिनके बारे में कि तुमने अपनी चिट्ठी में लिखा है, तुम्हारी रूहानी तरक़्क़ी में हानिकारक होगा। इसलिये तुमको हिदायत की जाती है कि उन ग़ैर-मामूली ताक़तों को कभी जाहिर मत करो या दिखलाओ। वरना तुम्हारी तरक़्क़ी बन्द होजावेगी

और चौरासी का रास्ता खुल जावेगा । इसलिए तुमको किसी भी शख्स पर, चाहे वह तुम्हारा निकट संबंधी ही हो, यह बात जाहिर न होने देना चाहिए कि तुमको भविष्य की खबर पड़ जाती है । अपने मत का अभ्यास करने का मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि रूह यानी सुरत की ऊपर के मुक़ामात में चढ़ाई हो और निर्मल चैतन्य देश में पहुँच कर अविनाशी सुख और सत्य मुक्ति प्राप्त हो । इसलिए बीच के किसी स्थान की असाधारण शक्तियों को प्राप्त करके सत्य मार्ग और ध्येय से न हट जाना चाहिए ।

(58)

There is no harm in praying for the spiritual welfare of your relatives subject to the approval of the Supreme Father, but even such prayer should not be too frequent and pressing. As to others, the Supreme Father is Himself taking care of them in the manner He considers most proper and you have no business to interfere in His supreme ordainments.

(५८) अनुवाद

अपने सम्बन्धियों की आध्यात्मिक उन्नति के लिए परम पिता की मौज और मर्ज़ी के सहारे प्रार्थना करने में हर्ज नहीं है लेकिन इस तरह की प्रार्थना भी बार बार और ज़ोर देकर नहीं करनी चाहिए । अन्य जीवों की सम्हाल परम पिता, उस रीति से कि जिसको वह उचित समझते हैं, कर रहे हैं और तुमको कर्त्तार के हुक्म में दख़ल देने से कोई प्रयोजन नहीं ।

(59)

Too much reading without necessity is injurious for it creates too many bewildering thoughts in the mind which eventually interfere seriously with the practice. If you feel satisfied with the principles of Radhasoami Faith you can derive no further advantage by reading other books except in some few cases receiving testimony from them. I hope you will find that you can derive very little benefit from studying other books. I don't wish you to give up reading altogether as it might in many cases help you in your practice by giving you fresh evidence in support of your new Faith.

(५९) अनुवाद

बिना ज़रूरत के किताबों का बहुत ज़्यादा पढ़ना चित्त में भ्रम पैदा करने वाले ख़यालात उठाता है जो अंत में अभ्यास में सख़्त विघ्न उत्पन्न करते हैं । अगर तुम राधास्वामी मत के सिद्धान्तों से संतुष्ट हो तो अन्य पुस्तकों के पढ़ने से तुम कोई विशेष

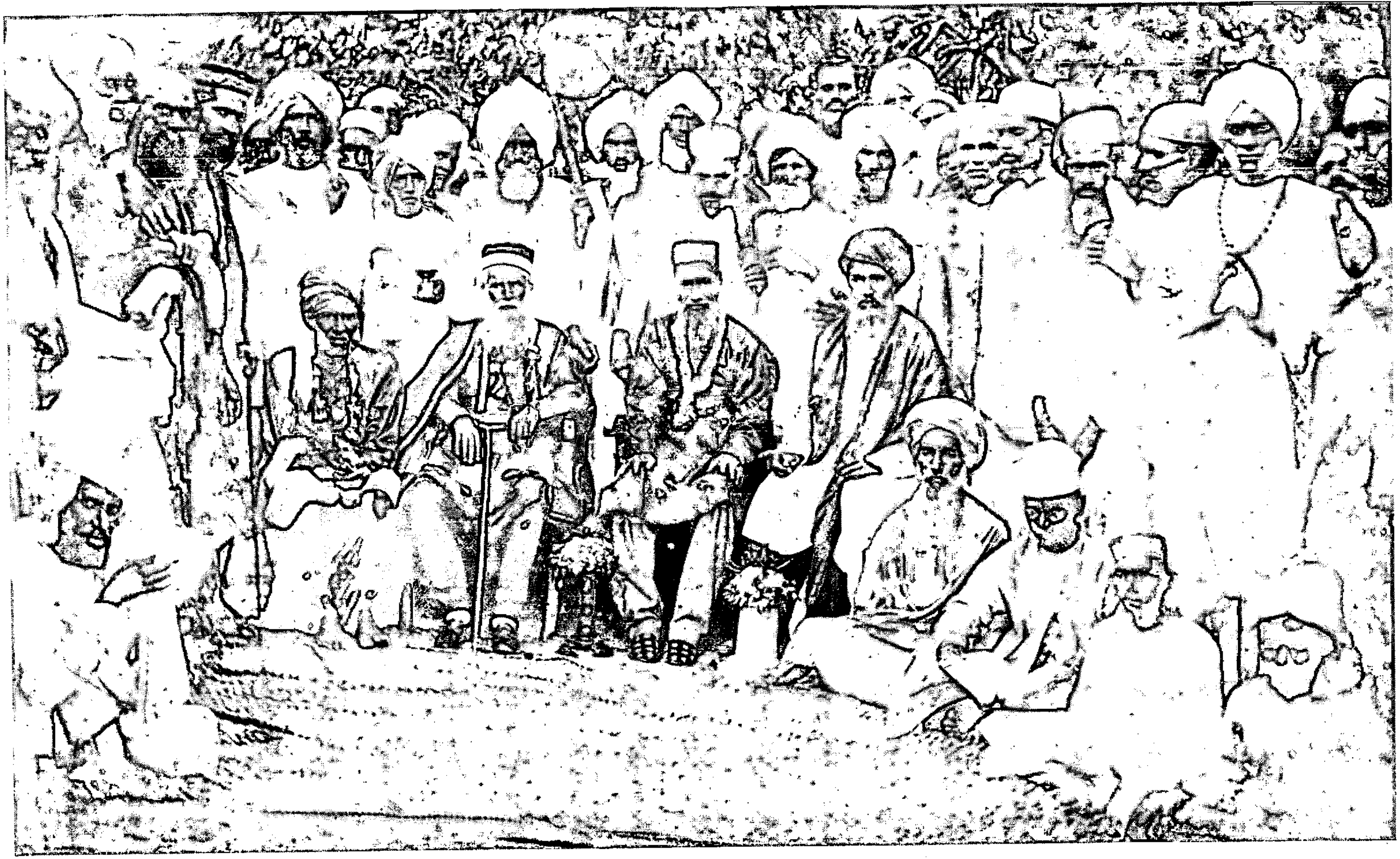

Huzur Maharaj with Chachaji Saheb and other Satsangis and Sadhus

हुज़ूर महाराज राधाबाग़ में व चाचाजी साहब और साधू मंडली

Huzur Maharaj with His Satsangis

हुजूर महाराज और सतसंगी

लाभ नहीं प्राप्त कर सकते, सिवा इसके कि किसी किसी से कुछ पुष्टता मिल जावे। लेकिन उम्मीद है कि तुम ख़ुद महसूस करोगे कि दूसरी किताबों के पढ़ने से तुम बहुत कम फ़ायदा उठा सकते हो। यह तो मैं नहीं चाहता कि तुम किताबें पढ़ना बिलकुल ही छोड़ दो क्योंकि बहुत मौक़ों पर तुम्हारे नए मत की पुष्टि में नए सबूत मिल सकते हैं कि जिनके मालूम होने पर तुम ज़्यादा शौक़ के साथ अपने अभ्यास में लग सकते हो।

(60)

You seem to have a very delicate constitution which is subject to ill-health so often. You cannot therefore practise devotion as usual on such occasions. But please let your thoughts be now and then turned towards the Supreme Father's Charan at the first or the second stage. This practice at such times will give you some relief as well as spiritual strength; and you will find it very nearly equal to Bhajan in its results or effects. Let your thoughts remain so fixed for at least 15 or 20 minutes or more when practicable and do so as often during day and night as you conveniently can. If you remember the Supreme Father by practising devotion and by sometimes repeating the Holy Name you will find that Grace won't forsake you, but on the other hand will always extend its protection to you in all matters.

(६०) अनुवाद

तुम्हारा शरीर बहुत नाज़ुक मालूम होता है जिससे बार बार बीमार पड़ जाते हो। बीमारी की हालत में तुम हस्ब मामूल भजन नहीं कर सकते। लेकिन वक़्तन फ़वक़्तन अपने चित्त को पहले या दूसरे स्थान की ओर फेर कर कुछ सुमरन ध्यान कर लिया करो। इससे तुमको तकलीफ़ भी कम व्यापेगी और आध्यात्मिक बल भी प्राप्त होगा। नतीजा या फल वही मिलेगा जो कि भजन करने से मिलता है। अपने चित्त को पन्द्रह बीस मिनट या मुमकिन हो तो ज़्यादा देर तक जमाए रहो और यह अभ्यास रात और दिन में जितनी ज़्यादा बार कर सको किया करो। अगर भजन और नाम के सुमिरन द्वारा मालिक को याद किया करोगे तो मालिक दयाल तुमको कभी नहीं छोड़ेगा बल्कि हमेशा तुम्हारी रक्षा और सम्हाल करेगा।

(61)

Go on with your practice as much as you can and the Supreme Father, through His mercy, will gradually help you in the purification of the mind; and the devotional practice will then become easy and pleasant; but this cannot be accomplished soon and therefore patience and trust should be adhered to.

(६१) अनुवाद

जिस क़दर बन सके अपना अभ्यास करते रहो। मालिक की दया और मदद से मन की सफ़ाई हासिल होगी। तब भजन सहूलियत से बनेगा और उसमें रस आवेगा। लेकिन सफ़ाई जल्दी हासिल नहीं होगी। इसलिये धीरज और विश्वास रक्खो।

(62)

The sound practice cannot be properly performed if you don't give up fish, which you should do gradually; otherwise there will not be much progress.

(६२) अनुवाद

अगर मछली खाना नहीं बंद करोगे तो भजन दुरुस्त नहीं बनेगा। धीरे धीरे मछली छोड़ दो, वरना तरक़्क़ी नहीं होगी।

(63)

Go on increasing and strengthening your trust in and love for the Supreme Father and keep your full belief and entire confidence in His mercy and grace. Nothing more is wanted from you. The rest of the work will be done by the Supreme Father Himself.

(६३) अनुवाद

मालिक के प्रेम और विश्वास को दृढ़ करे जाओ। दया और मेहर में पूरा विश्वास और भरोसा रक्खो। इससे ज़्यादा कुछ और करने को तुमसे नहीं कहा जाता है। बाक़ी सब मालिक आप कर लेगा।

(64)

In our religion practical means are taught for raising the spirit internally towards its source within the body as all the various spheres of creation are present on a small scale in our body, which is the microcosm of the macrocosm. This is done by means of the word or sound current which is present everywhere and by which the whole creation was manifested in the beginning, as is hinted in all extant religions. The sound current is also the spirit and life current; and as the spirit is raised by its help to the true spiritual source, greater spirituality, intelligence and pleasure are derived thereby at

each step. But if it is directed wholly to worldly things or to present religions which deal with outward forms only, the spiritual force will deteriorate and even the assumption of a human body will not be possible after death and the spirit will have to wander in trouble from one brute form to another.

(६४) अनुवाद

हमारे मत में सुरत को अंतर में अपने सोत की ओर चढ़ाने का अभ्यास सिखलाया जाता है। रचना के विभिन्न लोक या मंडल छोटे पैमाने पर इस नर शरीर में मौजूद हैं। इसी से नर शरीर को वृहद विश्व का लघु रूप कहा जाता है। सुरत की चढ़ाई शब्द-धार के वसीले से की जाती है। शब्द-धार सर्वत्र मौजूद है, उसी से आदि में रचना का ज़हूर हुआ था जैसा कि अनेक प्रचलित धर्मों में कहा गया है। शब्द-धार ही जान की धार और चैतन्य की धार है। चूँकि सुरत को इसी धार के सहारे चैतन्य भंडार की ओर चढ़ाया जाता है, इसलिये क़दम क़दम पर चैतन्यता, ज्ञान और आनंद बढ़ता जाता है। लेकिन यदि सुरत की कुल धार को दुनियावी पदार्थों या केवल बाहरमुखी कार्रवाई करने वाले धर्मों की ओर लगा दिया जावेगा तो चैतन्य शक्ति क्षीण होती जावेगी और मृत्यु के बाद शायद नर चोला भी न मिले और जीव को पशु योनियों में इधर उधर भटकना और दुःख उठाना पड़ेगा।

(65)

I am sorry that certain things have done serious injury in the matter of your spiritual progress; but you need not be apprehensive of any calamitous result. You have taken your residence in the kingdom of Kal and Maya and you will therefore be required to give a sort of taxes to those Beings. But on a little consideration you will find that you pay taxes not from your real property (Love and Bhakti) but from the properties of Kal and Maya; or in other words, you do away with the poisonous effects by the administration of poison itself. What is required of you is to see that your belief and confidence in the Supreme Father is not in the least shaken by the ill-advised insinuations of mind, the agent of Kal. In other words, you must not forget that you are not of this earth, earthly. You being a ray from Sat Purush, your real place is at the *Dhur Pad*, Radhasoami regions.

(६५) अनुवाद

यह मालूम करके अफ़सोस हुआ कि कई एक कारणों से तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति को आघात पहुँचा है। लेकिन इस बात का भय न करो कि कोई आपत्तिजनक या दुखपूर्ण परिणाम निकलेगा। काल और माया के राज्य में निवास करने के कारण

उनका कर और ऋण चुकाना पड़ेगा। लेकिन यदि विचारपूर्वक समझो तो मालूम होगा कि यह कर तुम्हारी वास्तविक सम्पत्ति (प्रेम और भक्ति) में से नहीं अदा किया जाता है बल्कि काल और माया के सामान से कर और ऋण चुकाया जाता है यानी ज़हर से ज़हर मारा जाता है। तुमको सिर्फ़ इतनी ही सम्हाल करना है कि काल के प्यादे मन की चौकीदारी करो कि कहीं उसके बहकाने में आकर मालिक के चरनों के विश्वास और भरोसे में ढीले न पड़ जाओ। दूसरे शब्दों में यह कि सदा याद रक्खो कि तुम माद्दी रचना के बासी नहीं हो और न माद्दे का रूप तुम्हारा असली रूप है। तुम सत्त पुरुष की किरन हो। तुम असलियत में धुर पद के, राधास्वामी धाम के, बासी हो।

(66)

Go on regularly with your practice, keeping your mind and senses undisturbed as far as possible; and trust to the mercy of the Supreme Father to grant you strength gradually as you advance. You progress inward daily; there is no such thing as retrograde movement.

(६६) अनुवाद

जहाँ तक हो सके मन और इन्द्रियों को क़ाबू में रखते हुए अपना अभ्यास किये जाओ। मालिक की दया में भरोसा रक्खो कि जैसे २ धीरे २ आगे बढ़ोगे तुम्हें शक्ति मिलती जावेगी। दिन प्रतिदिन अंतर में चाल चल रही है। पीछे हटने जैसी कोई बात नहीं है।

(67)

Yes, there are hellish regions where heat or fire predominates. They are a horror to the beings of this earth in their corporeal or astral body.

(६७) अनुवाद

नरक-सदृश लोक भी हैं जहाँ अग्नि और तपन की प्रधानता है। पृथ्वी के जीवों के लिये, चाहे स्थूल शरीर में हों चाहे सूक्ष्म में, वे लोक अत्यंत दुःखदायी हैं।

(68)

You should carefully control your passions and imagination. All past faults and shortcomings will be forgiven by the Supreme Father if you only take greater care for the future and avoid them.

(६८) अनुवाद

अपनी चाहों और ख़यालों पर कंट्रोल या क़ाबू रखने की कोशिश करो । अगर आगे के लिये सम्हाल करते रहो और फिर वही क़सूर न बनने दो तो पहले के क़सूरों और भूल चूक को मालिक मुआफ़ कर देगा ।

(69)

If you leave work, you won't be able to practise devotion as without some manual labour your mind and spirit will not be in a fit position to rise. It is owing to this want or absence of work that Sadhus or mendicants of all creeds are wandering about here and there without the least thought of their spiritual advancement. There is a certain stage up to which a man should work. After reaching it he can relinquish world and work easily. You should therefore stay at — and do some work and perform devotion. Your stay here will make you dull and eventually render you unfit for anything.

(६९) अनुवाद

अगर काम काज छोड़ दोगे तो भजन भी नहीं कर सकोगे क्योंकि बिना हाथ पाँव हिलाने की कुछ मेहनत किये हुए मन और सुरत ऊपर न चढ़ सकेंगे । काम काज न करने की वजह से ही तो बहुत सी संप्रदाओं के साधू और वैरागी इधर उधर भटकते फिरते हैं और जिन्हें अपने जीव के कल्याण का कुछ भी ख़याल नहीं है । किस ख़ास मंज़िल तक पहुँचने से पहले काम काज करने की ज़रूरत है, उस मंज़िल पर पहुँच जाने के बाद दुनिया और काम काज को आसानी से छोड़ा जा सकता है । इसलिये जहाँ हो वहीं रहो, भजन भी करो और अपना दुनिया का काम भी करो । यहाँ सतसंग में आकर पड़ जाने से तुम सुस्त आर आलसी बन जाओगे और तब दीन का या दुनिया का कोई काम न कर सकोगे ।

(70)

It is not an easy matter to subdue the mind and senses in a short time. Go on practising devotion and joining Satsang, reading the books, etc., and you will gradually secure salvation by the mercy of the Supreme Father, Radhasoami Dayal.

(७०) अनुवाद

थोड़े से वक़्त में मन और इन्द्रियों पर क़ाबू हासिल कर लेना सहल काम नहीं है । भजन, ध्यान, सतसंग, पोथी का पाठ, बचन पढ़ना, वग़ैरा २ करे जाओ । राधास्वामी दयाल की दया से धीरे धीरे उद्धार हो जावेगा ।

(71)

Your own nature is sometimes reflected in others. When you discover such a thing, try to root out evil from your own mind. If you are sincere in your determination and perseverance, Grace will help; but many prayers are not the outcome of a sincere heart and therefore the delay for the removal of the passion or desire complained of. But don't be discouraged. Go on practising and praying and Grace will help you when the time comes.

(७१) अनुवाद

कभी कभी अपनी प्रकृति की ही झलक दूसरों में दिखलाई देती है। जब कभी ऐसा नज़र आवे तो अपने ऐब को मन से निकाल डालने का जतन करो। अगर तुम्हारा इरादा पक्का और सच्चा होगा तो दया भी मदद करेगी। लेकिन अक्सर प्रार्थनाएँ सच्चे दिल से नहीं की जातीं, इसी से बुरी आदतों और ऐबों के निकलने में देर लगती है। लेकिन हिम्मत न हारो। अभ्यास और प्रार्थना करते रहो और वक़्त मुनासिब पर दया मदद करेगी।

(72)

When ill you should always place yourself under proper medical treatment and you should not imagine that you can do without medicine, much less should any one know that a thing of the kind is possible in your case under any circumstances. The only thing that is required of you is to take medicine after prayer or Dhyan and repetition mentally of the Holy Name. In fact in all your business you should pray and repeat the Name before actually doing anything. This will give you strength and peace of mind and prevent you at many a time from unconsciously doing wrong things.

(७२) अनुवाद

बीमारी की हालत में तुमको मुनासिब इलाज मालजा करना चाहिये और कभी ऐसा ख़याल तुमको अपने मन में नहीं लाना चाहिये और न कभी किसी को गुमान होने देना चाहिये कि किसी भी सूरत में तुम्हारे लिये यह मुमकिन है कि तुम बिना दवा के भी अच्छे हो सकते हो। तुम्हारे करने का काम यह है कि जब दवा लो, अंतर में प्रार्थना या ध्यान और राधास्वामी नाम मन ही मन में उच्चारण करके तब दवा लो। बात तो असल में यह है कि कोई भी काम करो, तुमको चाहिये कि उस काम को आरम्भ करने से पूर्व प्रार्थना और राधास्वामी नाम का उच्चारण कर लिया करो। ऐसा करने से तुमको शक्ति और चित्त की स्थिरता प्राप्त होगी। बहुत से मौक़ों पर अज्ञानता से से या अचेत अवस्था में जो ना-मुनासिब और बेजा काम हो जाते हैं, उनसे बचाव हो जावेगा।

(73)

Name is power but the power varies in strength and magnitude in accordance with the manner it is understood and uttered and the place whence it emanates. In the world in which we live all names as used and understood are fictitious, i. e., not real. But even fictitious names are full of powers. For all that we learn and understand we learn by names. Unless any object either subjective or objective, has a name assigned to it the object itself would never be understood. All classifications in nature are classified by names and it is only by name that anything and everything is understood. The first manifestation of Name is the first manifestation of Sound. This originally occurred in the Dayal Desh region and in process of changes it came down to Sat Lok up to which the Name according to *Sant Mat* is real, unchangeable, all powerful and indestructible. From Sat Lok the Name came to be of diverse character of which nothing is known except by Sants till the name or sound came to be known as Par Brahm. "Spiritual Effulgence" (the voice of silence) referred to by you means *Chit Akash*, the abode of the three sons of *Triloki Nath Jot Niranjan*, whereas the Name of RADHASOAMI in which you were initiated is the first Name belonging to the first Region and can have no comparison with the name Maya Brahm or "voice of silence" of any kind.

Name is Guru and Guru is Name. The Name cannot under any circumstances be obtained without Guru, and Guru is Sound, I mean purest possible Spiritual Sound personified. So Name is regarded as Guru and Guru is Name. But as Guru is the medium for obtaining Sound and as Guru assumes human form with a view to teaching the grades and shades of Name and Sound, it is absolutely necessary that Guru Swarup should under all circumstances be your real guide.

(७३) अनुवाद

नाम ही शक्ति है मगर शक्ति का ज़ोर या प्रभाव और शक्ति की मात्रा या मिक़दार इन बातों पर मुनहसर है कि किस भाँति और प्रकार से नाम की धारणा और नाम का उच्चारण किया जाता है और किस घाट से नाम लिया जाता है। इस दुनिया में जहाँ कि हम रहते हैं, जितने भी नाम लिये और इस्तेमाल किये जाते हैं, सब कृत्रिम और कल्पित यानी झूठे और असत्य हैं मगर यह कृत्रिम और झूठे नाम भी ताक़त से भरे हुए होते हैं क्योंकि जो कुछ भी हम जानते और समझते हैं, वह सब नामों के द्वारा ही जानते हैं। जब तक किसी पदार्थ का (जड़ या चेतन) कोई नाम न हो या कोई नाम न रक्खा जावे, उस पदार्थ का ज्ञान और अनुमान नहीं होगा। रचना में जो क्रम या श्रेणियां देखने में आती हैं, वह सब नामों के ही कारण हैं। यह नाम ही है जिससे कि कोई भी चीज़और हर एक चीज़ समझी जा सकती है यानी उसका ज्ञान हो सकता है।

नाम का प्रथम प्रकाश या ज़हूरा ही शब्द का प्रथम प्रकाश और ज़हूरा है जो कि सबसे पहले दयाल देश में हुआ और फिर दरजे ब-दरजे यानी क्रम क्रम से सत्तलोक और उससे नीचे हुआ। सत्तलोक तक संतमतानुसार नाम सत्य, नित्य, सर्व शक्तिमान और अविनाशी है। सत्तलोक के नीचे से नाम के कई रूप हो गए और नीचे उतर कर उस नाम या शब्द का ज़हूरा पार-ब्रह्म है। सत्तलोक से पार-ब्रह्म पद तक जो परिवर्तन नाम में हुए उन्हें सिवा संतों के कोई नहीं जानता। "रूहानी जलवे" का जिसके बारे में कि तुमने लिखा है, मतलब चिदाकाश से है जो कि त्रिलोकीनाथ ज्योति निरंजन के तीन पुत्रों का स्थान है मगर राधास्वामी नाम जिसका तुमने उपदेश लिया, प्रथम देश का प्रथम नाम है और जिसकी "माया ब्रह्म" वग़ैरा से कोई तुलना नहीं हो सकती।

नाम ही गुरू है और गुरू ही नाम है। किसी भी सूरत में बिना गुरू के, नाम नहीं मिल सकता और गुरू ही शब्द है यानी गुरू मुजस्सिम आवाज़, निहायत पाक और रूहानी है। इसलिये नाम को ही गुरू कहते हैं और गुरु ही नाम है। चूंकि गुरू, शब्द प्राप्ति का द्वारा है और चूंकि नाम और शब्द के दरजात और भेद बतलाने के लिये ही गुरू मनुष्य रूप धारण करते हैं, इसलिये यह नितांत आवश्यक है कि गुरू स्वरूप को ही हर हालत में तुम अपना रहनुमा और पथ-प्रदर्शक रक्खो।

(74)

You are quite right in assuming, that the pleader's line is not intended for you, indeed pleaders and barristers' lines are not often congenial to the tastes and instructions of practitioners of Surat Shabd Yoga.

(७४) अनुवाद

तुम्हारा यह विचार बिलकुल दुरूस्त है कि वकालत का पेशा तुम्हारे लायक़ नहीं है। सच बात तो यह है कि वकील और बैरिस्टर का काम सुरत शब्द योग के अभ्यासी की रुचि और उपदेश के अनुरूप नहीं है।

(75)

You are quite right in saying that true and sincere love and Bhakti are what is required of a practitioner like yourself. It is a stupendous idea and only idea by which true redemption can be effected but it cannot be the work of a day or a month or year. Since a very long time, i. e., for ages and ages the mind has, in a manner, become the slave of the senses and unless the turn of mind or rather the downward currents emanating from the mind be taken upward through the mercy and grace of the Sant Sat Guru Radhasoami, it would not be possible to create Bhakti or assimilate Surat with Shabd. You

need not be disappointed and you should not lose heart and further you should bear in mind that when you have been initiated in the Sublime Faith and when you had been at the head quarters station, be rest assured that you are under the protection of the Supreme Father.

(७५) अनुवाद

तुम्हारा यह कहना बिल्कुल ठीक है कि तुम्हारे जैसे अभ्यासी के लिये सच्चे प्रेम और भक्ति अनिवार्य्य हैं। यह बहुत बड़ी बात है और सिर्फ़ इसी से सच्चा उद्धार हो सकता है मगर यह एक दिन या एक महीने या वर्ष का काम नहीं है। बहुत अर्से से यानी जन्मानजन्म से मन एक प्रकार से इन्द्रियों का ग़ुलाम हो गया है और जब तक संत सतगुरू राधास्वामी दयाल की दया से मन का रुख़ यानी नीचे को बहने वाली धारों को उलटा कर ऊपर की ओर न किया जावे, भक्ति और प्रेम उत्पन्न नहीं हो सकते और न सुरत, शब्द में लग सकती है। तुम्हें ना-उम्मीद होने या हिम्मत हारने की ज़रूरत नहीं। तुमको याद रखना चाहिये कि तुम्हें उपदेश मिल चुका है और तुम सतसंग के सदर मुक़ाम पर हो आए हो। दृढ़ विश्वास रखना चाहिये कि परम पिता की रक्षा तुम्हारे साथ है।

(76)

The killing of the mind means the reversing of the currents emanating therefrom from the downward to the upward direction. With this process not only is the body mortified but the life or power or potentiality of the senses becomes extinct. When the mind and its several columns are turned away from the physical field of mutual or civil war, apathy and drowsiness must of themselves go away. You will thus see that what is required of you is to adopt such means as will gradually tend towards the reversal of the current of the mind from the downward or animal vitality to that of upward or heavenly or spiritual direction. Being merged in sensual or worldly gratifications where your mind in its connection with the senses and passions as well as the objective world is supreme, you are not powerful to get away from the clutches of mind or kill it in the manner indicated above. It becomes, therefore, essentially necessary for you to take the shelter of one who knows how to kill the mind or one who has already killed the mind or one who has descended from the highest region beyond the reaches of the higher mind with a view to showing to the world not by words but by deeds how to live and move in the physical body without being influenced by the mind, the senses, the passions, and the objective world. The latter personage is known by the name of Guru that one should associate with ; and it is therefore enjoined that with a view to bringing the mind and senses under subjection one should associate with the Guru. The image of the Guru is Sound and your real

image is sound also ; and therefore the point where the two (Guru and Chela) meet is the one where in reality there is the resounding and hence it has been said :—

गुरु के संग शब्द पुकारो

From the above it will, no doubt, be clear to you that all that is necessary is to merge one's self into the Guru. It is for this reason that Guru has had to assume two forms, viz, personal and impersonal formes, whereas (as a matter of fact), He is both beyond personality and impersonality. Human beings live and move in rotations in three regions, physical, mental, and spiritual, and to enable them to traverse from one to another the Sat Guru has had to assume all these forms. Your uppermost idea should, therefore, revolve into the Guru and nothing but the Guru. If this be done, everything required of you will of itself be regulated.

(७६) अनुवाद

मन को मारने से मतलब यह है कि मन से जितनी धारें निकलती है उनका मुख नीचे की तरफ़ से मोड़ कर ऊपर की तरफ़ कर दिया जावे। इससे न सिर्फ़ तन ही चूर होता है बल्कि इन्द्रियों का ज़ोर भी टूट जाता है। इस युद्ध में जब मन व मन की अनेक धारों को उलटा दिया जाता है तो मुर्दा-दिली और सुस्ती व काहिली अपने आप ही दूर हो जाती है। इसलिये जो कुछ करना है वह यह है कि धीरे धीरे मन की धारों का रुख़ बदल दिया जाय यानी इस वक़्त वे जो नीचे की ओर अथवा पशुवत कार्रवाइयों की ओर बह रही हैं उनको उलटा कर ऊपर की ओर यानी ऊपर के घाट या सुरत के घाट की ओर फेर दिया जावे। दुनिया के भोग विलासों में लिप्त होने के कारण तथा इन्द्रियों और चाहों और दुनियावी कार्रवाइयों में मन की प्रधानता होने के कारण इस वक़्त तुम्हारे में इतनी शक्ति नहीं है कि ऊपर बतलाई हुई रीति से मन का मर्दन कर सको या मन के फंदों से निकल सको। इसलिये किसी ऐसे पुरुष की सरन लेने की आवश्यकता है जो मन को मर्दन करने की रीति जानता है या जिसने अपने मन का मर्दन कर लिया है या जो ब्रह्मांडी मन के देश के परे से अवतार लेकर आया हो और इसलिये जो केवल बातों में ही नहीं बल्कि अपनी मिसाल और रहनी गहनी से बतला सके कि किस प्रकार दुनिया में रहते हुए दुनिया के व मन व इन्द्रियों के असर से बचे हुए रहा जा सकता है। ऐसे अवतारी पुरुष का नाम गुरू है। उनका संग करना चाहिए। इसलिये कहा गया है कि मन और इन्द्रियों को वश में करने का उपाय गुरू का संग है। गुरू का रूप शब्द है यानी गुरू शब्द स्वरूप है और तुम भी शब्द रूप हो। इसलिये दोनों के यानी गुरू और चेले के मिलने का जो स्थान है वहाँ शब्द की गाज हो रही है जैसा कि कहा गया है :—

"गुरु के संग शब्द पुकारो"

इसलिये केवल एक मात्र आवश्यकता अपने को पूरी तरहसे गुरू के सुपुर्द कर देने की है। इसी कारण से गुरू जुगल स्वरूप में पधारते हैं। एक स्वरूप उनक देहवान है, दूसरा स्वरूप विदेह है। वैसे हक़ीक़त में वह देह और विदेह दोनों से परे हैं। मनुष्य की सुरत यानी जोव तीन प्रदेशों में रहता और घूमता फिरता है यानी कायिक, मानसिक और आध्यात्मिक। इसलिये एक प्रदेश से दूसरे और दूसरे से तीसरे में ले जाने के लिये गुरू को भी ये सब रूप धारण करने पड़ते हैं। इसलिये तुम्हारी नज़र में या तुम्हारे ख़याल में हर वक़्त गुरू ही गुरू रहने चाहिये। अगर यह हो सके तो बाक़ी सब अपने आप हो जावेगा।

(77)

Taking only one meal a day is more applicable to Sadhus, but as regards the family man having had business all that is necessary is to take meals by one third less than the total quantity. If food is essentially necessary for you at night, you should not abstain from taking it say, by two-thirds only ; or take a little food and a certain quantity of milk.

(७७) अनुवाद

केवल एक वक़्त खाना खाकर रहना ज़्यादातर साधुओं से बन सकता है। लेकिन गृहस्थियों और काम काजी आदमियों के लिये सिर्फ़ इतना ही काफ़ी है कि जितना भोजन करते आये हैं उसका तीसरा हिस्सा कम कर दें। अगर रात को खाने की ज़रूरत महसूस हो तो ज़रूर खाओ। कम या दो तिहाई खाओ या थोड़ा खाना खा लो और कुछ दूध पी लो।

(78)

The Supreme Father is ready and willing to protect you ; but you must suffer the consequences of your past and present actions. Even after duly coming under His protection if you indulge yourself in such vices you cannot expect to receive His mercy with impunity. The Kal Purush will take his due, but with the sanction of the ever-merciful Supreme Father. Show yourself truly repentant and become sincere in at once giving up your sinful habits and you will find the ever-flowing mercy and grace of the Supreme Father to fall in torrents upon you. If you try to follow the instructions contained in the above, you will find that the tendencies of your mind and senses towards evil propensities will gradually decline and you will then experience much *ras* (pleasure) and *Anand* (bliss) in your devotional practices.

(७८) अनुवाद

मालिक तुम्हारी रक्षा और सम्हाल करने के लिये तैयार और राजी है। लेकिन अगले पिछले कर्मों का फल भोगना पड़ेगा। सरन लेने पर भी अगर तुम बुरे कर्मों में लिप्त रहो तो यह उम्मीद न करनी चाहिये कि दया से दंड न भोगना पड़ेगा। काल अपना क़र्ज़ा माँगेगा, लेकिन दयालु परम पिता की मंजूरी से अदा किया जावेगा। सच्चे दिल से पश्चात्ताप करो और बुरी आदत को छोड़ने व आइन्दा गुनाह न करने का इरादा करो। मालिक की मेहर और दया की मूसलाधार वर्षा होगी। सार उपदेश का सवाल नंबर १८ और उसका जवाब व उसके बाद वाला शब्द एवं निज उपदेश का सातवाँ भाग और आठवें भाग का आखिरी शब्द (नंबर ३) बड़े ग़ौर से पढ़ो और वैसी रहनी गहनी बनाने की कोशिश करो। ऊपर के बचनों और शब्दों में दी गई हिदायतों के मुआफ़िक़ काम करो तो मन की बुरी वासनाएं और कु-प्रवृत्तियां धीरे २ कम होती जावेंगी और अभ्यास में उसी क़दर रस और आनंद मिलेगा।

(79)

The morning time will be,the best for you to practise Bhajan. You may sit up in Bhajan as soon as you leave your bed or after answering the calls of nature and washing your hands, feet, etc. ; but practise devotion before you commence your day's work.

(७९) अनुवाद

भजन के लिये सुबह का वक़्त बहुत अच्छा है। बिस्तर से उठते ही भजन में बैठ जाओ या पेशाब पाखाने से निबट कर व हाथ मुँह धोकर अभ्यास करो। काम काज शुरू करने से पहले ज़रूर अभ्यास कर लो।

(80)

The disturbances you speak of are with everyone in the beginning for a few days only. They occur through the grace of the Supreme Father to purify our mind by removing accumulated evil thoughts from it. Don't be afraid. Go on with your devotional practice as prescribed with such care and attention that other thoughts may not come at the time and leave the rest to the mercy of Supreme Father. As you are accustomed to perform your school duties for certain hours in the day, leaving aside all other thoughts for time, so for the sake of spiritual advancement it is most necessary that you should determine in your mind immediately before commencing your devotional practice not to allow as far as possible any worldly thoughts to enter into

your mind as you are engaged in it. During the whole day as you perform all other worldly work you should direct and fix your attention for a minute or two or say four or five minutes on the first and second spheres thinking at the same time of the aspects of those spheres. Careful reading of at least two Shabds morning and evening from the holy books which may seem sweet to you and regular attendance at the Satsang nearest to your place will be of great help to remove the evil thoughts from your mind. You may also keep a photo of Supreme Father before you now and then to represent the features in Dhyan.

(८०) अनुवाद

जिन विक्षेपों और विघ्नों के बारे में तुमने लिखा है, वह शुरू में कुछ दिनों सबको सताते हैं। मन की सफ़ाई और उसमें जो फ़ासिद ख़यालात इकट्ठे हो रहे हैं, उनको दूर करने के लिये परम पिता की दया से वे विक्षेप और विघ्न आते हैं। डरने की ज़रूरत नहीं है। इतनी सावधानी और एकाग्रता के साथ अपना अभ्यास करते रहो कि जिससे दूसरे ख़याल उस वक़्त न उठें। और बाक़ी बातों को परम पिता की दया पर छोड़ दो। जिस प्रकार की तुमको यह आदत पड़ी हुई है कि दिन में कुछ घंटों के लिये स्कूल में काम करते हो और उस वक़्त दूसरे सब ख़यालों को बिसर जाते हो, उसी प्रकार अपनी रूहानी तरक़्क़ी के लिये यह बहुत ज़रूरी है कि अभ्यास शुरू करने से पहले मन में पक्का इरादा कर लो कि जितनी देर अभ्यास करोगे उतनी देर मन में कोई दुनियाबी ख़याल न आने दोगे। दिन भर जब कि दुनियावी काम करते रहते हो, तुमको मिनट दो मिनट या चार पाँच मिनट तक अपना ध्यान पहले या दूसरे मुक़ाम की तरफ़ फेर कर जमाना चाहिये और साथ २ उन मुक़ामों के स्वरूप का भी ख़याल करना चाहिए। पवित्र बानियों में से सुबह शाम कम से कम दो शब्दों का, जो तुमको प्यारे लगते हों, पाठ करना और अपने मकान के नज़दीक जहाँ कहीं सतसंग होता हो, वहाँ हाज़िरी देना, मन के फ़ासिद ख़यालों को दूर करने में बड़ी मदद देंगे। कभी २ परम पिता के फोटो को देखने से भी ध्यान में आकार का चितवन करने में मदद मिलेगी।

(81)

You should fully rely on the mercy and grace of the Supreme Father who guides, directs, watches and protects the interests of all who come sincerely and unhesitatingly under His benign rule and protection. Go on with your practice as much and as carefully as you can and at the same time exercise as much authority and influence over your mind and senses as you possibly can and leave the rest to be done and disposed of by the Supreme Father in the manner and at the time He thinks best.

(८१) अनुवाद

तुमको परम पिता की दया और मेहर पर पूरा भरोसा रखना चाहिए। जो कोई सच्चे दिल से और बिना किसी पसोपेश के उसकी सरन में आता है उसको वह पथ प्रदर्शन करता है, हिदायत देता है, उसकी निगरानी करता है और उसके उद्देश्यों की रक्षा करता है। जितना और जिस क़दर होशियारी से बन सके, अभ्यास करते रहो और साथ हो साथ अपने मन और इन्द्रियों पर जितना मुमकिन हो, क़ाबू रक्खो और बाक़ी परम पिता पर छोड़ दो कि जैसे और जिस रीति से और जिस वक़्त वह चाहे करे।

(82)

Sorry to hear of the disturbance of your mind. You need not however be disappointed by it. Such a state of mind is a necessary step in the course of our devotional practice, and it is fraught with much benefit although apparently it seems to the contrary. It is in this way that the mind becoming conscious of its thorough unworthiness and filthiness becomes truly meek and is thus gradually reformed. You should, accordingly, placing your trust in the mercy of the Supreme Father, and considering the present also as a special grace of His, go on with your practice and perusal of the holy book as much as you can. In this way after some time the mind will become gradually purified and fresh indications of fhe grace and mercy and consequent bliss will become apparent,

(८२) अनुवाद

तुम्हारे चित्त के विक्षेप विघ्नों का हाल मालूम करके अफ़सोस हुआ। लेकिन निराश होने की आवश्यकता नहीं। अभ्यासी के लिए चित्त की इस अवस्था की भी ज़रूरत है। इसमें बहुत फ़ायदा है यद्यपि ज़ाहिरा ऐसा मालूम नहीं होता। यही तरीक़ा है कि जिससे मन अपनी ना-लायक़ी और ना-पाकी का अहसास करके सच्चा दीन होता है, तब सुधार होता है। पस तुमको परम दयालु पिता की दया का भरोसा रखते हुए और इस हालत में भी उसकी ख़ास दया समझते हुए अपना अभ्यास और पाठ जिस क़दर बन सके करते रहना चाहिए। इस प्रकार कुछ समय पश्चात मन धीरे २ निर्मल हो जायगा और दया व मेहर के नए चिन्ह और कैफ़ियत व आनंद मालूम होंगे।

(83)

The entire war between the artillery of Kal and Dayal is to be a long one, but in the end the Kal must yield and Surat must reach its Nij Desh. Two, three or four lives may be the full period according to the degree of love you bear to the Supreme Father. Most part of this period is, however, to be passed in an ever increasing bliss and there is no reason for despondency.

The war has a great deal more of sweetness throughout about it than of bitterness under the benign protection of Sat Guru Dayal.

(८३) अनुवाद

काल की फ़ौज और मालिक की सरन वालों में जो लड़ाई लड़ी जायगी वह लंबी लड़ाई होगी लेकिन अंत में काल को अवश्य हार माननी पड़ेगी और सुरत अपने निज देश को लौट कर जावेगी। मालिक के चरनों में कितना प्रेम है, उसके हिसाब से इस युद्ध में दो या तीन या चार जन्मों का समय लगेगा। इस अवधि का ज़्यादा समय सदा बढ़ने वाले आनन्द में व्यतीत होगा और इसलिए निराश होने की कोई बात नहीं है। सतगुरू दयाल की सरन में रहने से इस युद्ध में ज़्यादातर सुख और मज़ा ही है, कड़वाहट कम है।

(84)

The Supreme Father is gradually every day delivering you of bondage; but because the ties are very many and very strong and you do not feel yourself free, you think that you are not progressing. Mind your sinfulness and weakness so far as is necessary to increase your dependence on tha Supreme Father and to make your will subordinate to His; but let not these torment you. In spite of all your faults He took you to His Charan; and in spite of those you daily grow dearer to Him. Your entrance into His region of mercy and enjoying the bliss of His lovely face is guaranteed to you. As you grow purer with His grace, so will you love Him the more, and recognise Him and His Mauj the more. With the power you possess try earnestly to carry on your devotion according to instructions, and whenever you fail, hold fast by His Charan in full faith that there alone lies your hope and help; and there is no wonder if you see His resplendent face in this life, nay, at no distant date hence.

(८४) अनुवाद

मालिक हर रोज़ कुछ न कुछ बन्धन काट रहा है। लेकिन चूँकि गाँठें बहुत और बहुत मज़बूत हैं, इसलिए तुमको पता नहीं चलता कि कितने बन्धनों से छुटकारा मिला। तुम ख़याल करते हो कि तरक़्क़ी नहीं हो रही है। अपने गुनाहों और कमज़ोरियों का ख़याल करके मालिक का आसरा और भरोसा बढ़ाओ और मौज के आधीन रहो, लेकिन दुखी न हो। सब क़सूरों के होते हुए भी मालिक ने तुमको अपने चरनों में लगाया और बा-वजूद इन गुनाहों के वह तुमसे अधिकाधिक प्यार कर रहा है। यह निश्चित है कि एक दिन तुम अवश्य दया के धाम में बासा पाओगे और उसके मनोहर दर्शनों के आनन्द

में आनंदित होंगे। उसकी दया से जैसे जैसे तुम सफ़ाई हासिल करते जाओगे, वैसे वैसे ही तुम्हारा प्रेम बढ़ता जावेगा और उसकी और उसकी मौज की पहचान आती जावेगी यथा शक्ति सच्चे दिल से हिदायत के मुआफ़िक़ या उपदेशानुसार अभ्यास में लगे रहो और जब कभी भूल चूक हो तो चरनों को और ज़्यादा मज़बूती से पकड़ो और ऐसा समझो कि इसी में मदद मिलेगी और इसी में कुछ आशा है। कोई ताज्जुब नहीं कि जीते जी बल्कि बहुत शीघ्र उसके प्रकाशमय दर्शन मिलें।

(85)

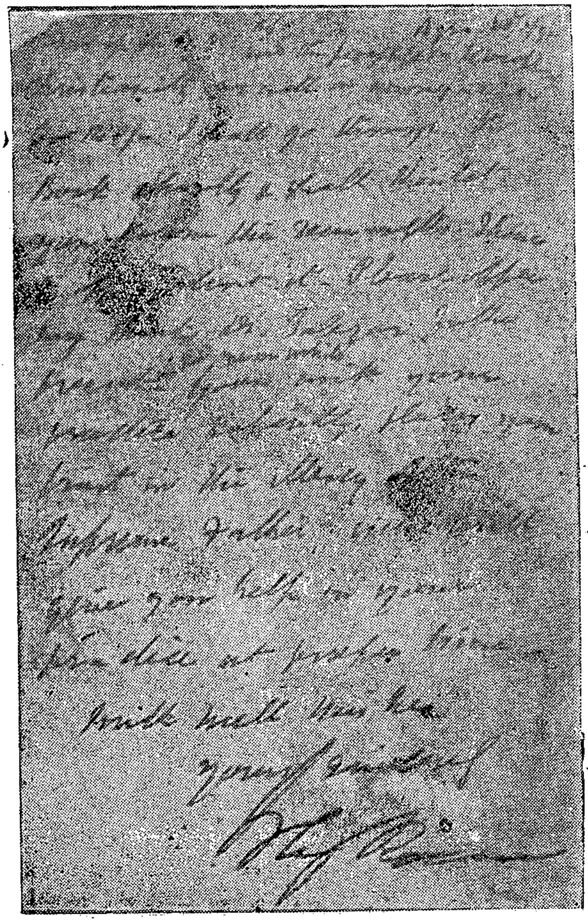

R. S.

Agra
28/3/1892

Yours of the 24th and the pamphlet Theosophical Christianity as well as money order for Rs. 8/-. I shall go through the book shortly and shall then let you know the remarks I have to offer about it. Please offer my thanks to Dr. Salazar for the present in the meanwhile. Go on with your practice patiently, placing your trust in the mercy of the Supreme Father, who will give you help in your practice at proper time.

With well wishes,

Yours sincerely,
Salig Ram

(८५) अनुवाद

राधास्वामी सहाय

आगरा २८-३-१८९२

तुम्हारा २४ तारीख़ का ख़त और थियासाफ़िकल क्रिश्चियानिटी पुस्तक तथा आठ रुपये का मनी आर्डर मिला। पुस्तक को पढ़ने पर जो कुछ मुझे कहना होगा, कहूँगा। इस उपहार के लिये डाक्टर सलाज़ार को मेरी ओर से धन्यवाद देना। कुल मालिक की दया में विश्वास और भरोसा रख कर अपना अभ्यास धीरज के साथ करते रहो। वे उचित समय पर अभ्यास में तरक्क़ी के लिये मदद देंगे।

ज़्यादा राधास्वामी।

तुम्हारा सच्चा हितकारी
सालिग राम

CHAPTER 5

EXTRACTS FROM

MAHARAJ SAHEB'S LETTERS

TO

SATSANGIS

अध्याय ५

महाराज साहब की चिट्ठियाँ

सतसंगियों के नाम

(1)

The sudden departure of Huzur Maharaj has no doubt been a great shock to all of us and taken away the apparent prop we were all resting on. But He has not totally severed His connection with us. On the other hand, He is now watching our spiritual welfare more keenly than before and giving us also greater help inwardly. The question of allegiance to another *Sadh* or *Sant* does not, therefore, arise for the present. In my opinion this is the time for internal devotion and whoever does so attentively and with fervour will receive palpable help from Huzur Maharaj within.

(१) अनुवाद

हुज़ूर महाराज के एकाएक अंतर्द्धान हो जाने से निस्संदेह हम सबको बड़ा धक्का पहुँचा है। इससे हम लोगों का ज़ाहिरा सहारा जिसका हमको आधार था, जाता रहा है। किंतु हुज़ूर महाराज ने पूर्ण रूप से हम लोगों से संबंध नहीं तोड़ दिया है। बल्कि वे पहले से ज़्यादा निगहबानी के साथ हम लोगों के परमार्थी हित की सँभाल कर रहे हैं और अंतर में ज़्यादा मदद दे रहे हैं। इसलिए, फ़िलहाल, दूसरे साध या संत में नेष्टा या भाव लाने का सवाल ही नहीं उठता। मेरी राय में, यह अंतरमुख अभ्यास का समय है और जो कोई चित्त लगा कर शौक़ के साथ यह काम करेगा उसको अंतर में स्पष्ट रूप से हुज़ूर महाराज की सहायता प्राप्त होगी।

(2)

I am sorry to hear of the slackness which has taken place in the Satsang at.........both in consequence of the departure of Huzur Maharaj to Supreme Abode, as also to the prevalence of plague but hope that sooner or later the Supreme Merciful Father Radhasoami will help His children and enable them to continue their devotion to His sacred feet as before. At present no doubt apparently great spiritual shock has been sustained by all Satsangis owing to Huzur Maharaj's departure, but I am sure He is internally showering mercy and grace on all of us as before, and even in this apparent loss, is developing our spiritual powers. We must, therefore, placing trust in His infinite mercy, continue our spiritual practice as much as possible and leave the rest to His *Mauj*.

(२) अनुवाद

हुज़ूर महाराज के धाम सिधार जाने के कारण, और भी प्लेग की मरी फैलने से, तुम्हारे यहाँ के सतसंग में जो शिथिलता आ गई है, उसका हाल सुन कर अफ़सोस

हुआ। मगर आशा है कि अबेर सबेर परम दयालु पिता राधास्वामी दयाल अपने बच्चों को मदद देंगे और पहले की तरह अपने पवित्र चरनों की भक्ति करने का बानक बनावेंगे। इसमें कोई शक नहीं कि इस वक्त हुज़ूर महाराज के अंतर्द्धान हो जाने से सतसंगियों को भारी चोट पहुँची है लेकिन मुझे विश्वास है कि वे पहले की भाँति हम सब पर अंतर में मेहर और दया की वर्षा कर रहे हैं और इस ज़ाहिरा नुक़सान में भी वे हमारी आध्यात्मिक शक्तियों को पुष्ट कर रहे हैं। इसलिए उनकी अपार दया में विश्वास रखते हुए हमको चाहिए कि जिस क़दर बन सके अंतरमुख अभ्यास करते रहें और बाक़ी सब मौज पर छोड़ दें।

(3)

If sleep is the main obstacle in the performance of your devotional practice, I would advise you that as soon as you begin to feel drowsy in your devotion, you should, leaving off *Bhajan*, commence to repeat internally the Holy Name RADHASOAMI, which may, if the drowsiness still does not go off, be uttered audibly and the repetition continued until you have shaken off all lethargy. This mode of practice will, I hope, through the mercy of Huzur Maharaj Radhasoami Dayal, enable you after some time, say a month or so, to overcome the obstacle you complain of, and it will also prove efficacious in removing unnecessary thoughts which crop up at the time of *Bhajan*.

(३) अनुवाद

यदि अंतरमुख अभ्यास में मुख्य विघ्न यह हो कि उस समय नींद आ जाती हो तो तुमको चाहिए कि ज्योंही सुस्ती तारी होने लगे, भजन छोड़ कर राधास्वामी नाम का अंतरमुख जाप करने लगो और अगर फिर भी सुस्ती न मिटे तो नाम का सुमिरन आवाज़ के साथ करो यानी ज़बान से बोल कर उच्चारण करो और जब तक पूरी सुस्ती न चली जाय तब तक इसी प्रकार करते रहो। ऐसा करने से उम्मीद है कि हुज़ूर महाराज राधास्वामी दयाल की दया से कुछ समय पश्चात, महीने दो महीने में, यह विघ्न दूर हो जावेगा और अभ्यास के समय जो व्यर्थ संकल्प विकल्प यानी गुनावन उठा करते हैं, उनको दूर करने में भी यह जुगत कारगर[१] होगी।

(4)

Although Huzur Maharaj has left the physical body, by sound current He is ever present, helping His children as before. You should, therefore, go on with your devotion with trust.

---

(१) प्रभावशाली।

(४) अनुवाद

यद्यपि हुजूर महाराज ने देह त्याग कर दी है, पर शब्द स्वरूप से वे सदा मौजूद हैं और अपने सेवकों को पहले की तरह मदद पहुँचा रहे हैं। इसलिए प्रीत प्रतीत के साथ अपना अभ्यास करते रहो।

(5)

Nothing definite can be said yet about Huzur Maharaj's successor. Eventually, no doubt the necessity of a Sant Sat Guru is indispensable for the continuance of Radhasoami Faith but some spiritual benefit is intended even until His appearance, the object being that all followers of Radhasoami Faith should exert themselves internally for spiritual advancement. As long as another Sat Guru does not appear there is no question of altering the contemplation of the last Sat Guru's image, who was the latest incarnation of the Supreme Being. Of course, when the Supreme Being Radhasoami again manifests Himself as Sant Sat Guru then His image should be contemplated in lieu of that of the former Sat Guru, provided the latter's form has not manifested itself internally within the devotee. But if there is such manifestation, then no change in contemplation is needed.

(५) अनुवाद

हुजूर महाराज के जा-नशीन[१] के बारे में अभी निश्चयात्मक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। राधास्वामी मत के जारी रहने के लिए निस्संदेह सदा संत सतगुरु के रहने की आवश्यकता तो अपरिहार्य[२] है। किंतु जब तक वे प्रकट न होवें तब तक भी कुछ परमार्थी लाभ इसमें निहित[३] है। वह यह है कि राधास्वामी मत के सब अनुयाई आध्यात्मिक उन्नति के लिए अपनी पूरी कोशिश करें। जब तक दूसरे संत सतगुरु प्रकट न हों तब तक पहले वाले संत सतगुरु—जो कि परम पिता के आखिरी अवतार थे—उनके रूप का ध्यान बदलने का कोई सवाल ही नहीं। अलबत्ता जब परम पुरुष राधास्वामी फिर अपने को संत सतगुरु रूप में प्रकट करें, तब पहले के संत सतगुरु के रूप के बजाय उन (संत सतगुरु) के रूप का ध्यान करना चाहिए, उस हालत में जब कि पहले वाले सतगुरु के रूप से अभ्यासी भक्त का अंतर में साक्षात्कार न हुआ हो। लेकिन अगर ऐसा साक्षात्कार हो गया हो तो फिर रूप बदलने की कोई ज़रूरत नहीं है।

---

(१) उत्तराधिकारी। (२) जिसके बिना काम न चले। (३) रक्खा हुआ।

(6)

Kal can never have redemption as being a cover. He can never enter *Sat Lok*. There are two streams in creation, the one ascending and the other descending—so along with the regeneration of spirits, others will enter into the material regions and these regions cannot altogether disappear.

(६) अनुवाद

काल का कभी उद्धार नहीं हो सकता क्योंकि वह तो केवल ग़िलाफ़ (आवरण) है। वह कभी सत्तलोक में नहीं जा सकता। रचना में दो धारें हैं, एक ऊर्ध्वगामिनी धार और दूसरी निम्नगामी धार। जैसे जैसे सुरतों का उद्धार होता जावेगा, दूसरी सुरतें नीचे के देशों में उतरती जावेंगी। इस प्रकार इन नीचे के देशों का बिल्कुल अभाव नहीं हो सकता।

(7)

Certainly we all have apparently suffered great shock in consequence of the sudden departure of Supreme Father to His exalted abode, but by *Nij Rup* He is internally present and helping on His children as before, and whatever prayers may be offered within are heard by Him, and at proper time and in proper form. He ordains whatever is spiritually most beneficial to us, although sometimes we may not apparently comprehend the benefit intended therein. With trust and confidence we should, therefore, continue devotion as much as it lies in our power and leave the rest to His exalted *Mauj*.

(७) अनुवाद

परम पिता के अकस्मात् अपने निज धाम में सिधार जाने से, प्रकट में, हम सब को अवश्य ही एक भारी धक्का लगा है। लेकिन निज रूप से वे अंतर में मौजूद हैं और अपने भक्तों की पहले की तरह बराबर मदद कर रहे हैं और अंतर में जो भी प्रार्थनाएँ की जावें, वे उन्हें उचित रूप में और उचित समय आने पर सुनते हैं। वे वही मौज फ़रमाते हैं जिसमें हमारा बेहतरीन परमार्थी फ़ायदा है, चाहे हम कभी कभी उसको ठीक ठीक न समझ सकें। इसलिये हमको चाहिए कि विश्वास और भरोसे के साथ, जितना बन सके अभ्यास करते रहें और बाक़ी उनकी परमौच्च मौज पर छोड़ दें।

(8)

Satsangis may, in accordance with their past *Karmas*, be sometimes attacked by plague or cholera and die in consequence, but generally they

will be protected from such dire diseases, and even in those cases in which such an event takes place, their spiritual welfare will be guarded and in the next birth they will come with greater store of spiritual wealth and succeed in the devotional practice without much effort.

(८) अनुवाद

अपने पिछले कर्मों के फल स्वरूप सतसंगियों को कभी प्लेग और हैज़ा हो सकता है और उसके कारण मृत्यु हो सकती है, लेकिन आम तौर पर उनकी इस क़िस्म की भयंकर बीमारियों से रक्षा की जावेगी और अगर कभी इस तरह की कोई घटना घटित भी हुई तो उनके परमार्थी हित की सँभाल की जावेगी और अगले जन्म में वे विशेष चैतन्यता ले कर आवेंगे और अंतरमुख अभ्यास में सफलता प्राप्त करने में उनको ज़्यादा परिश्रम न करना पड़ेगा।

(9)

The period of "interregnum, so to say", should be devoted to internal practice of *Sumiran, Bhajan* and *Dhyan,* the image of the past Sat Guru being contemplated as usual.

(९) अनुवाद

एक संत सतगुरु के गुप्त होने और दूसरे के प्रकट होने के बीच के समय को (जिसे इंटरेगनम कहते हैं) सुमिरन ध्यान और भजन में लगाना चाहिए। ध्यान ब-दस्तूर[1] अंतिम संत सतगुरु के रूप का ही करना चाहिए।

(10)

On the re-incarnation of next Sat Guru, His Satsang, etc., should be attended to as previously, and if the image of the Sat Guru has not manifested itself within, the form of the new Sat Guru should be contemplated. But care should be taken that the change in the contemplation is not hastily or prematurely made. When the re-incarnation of the next Sat Guru has been by internal and external proofs fully established and recognised, this may be done.

---

(१) नियमानुसार। जिस तरह होता आया है, उसी तरह।

(१०) अनुवाद

दूसरे संत सतगुरु जब प्रकट हो जायँ तब उनका सतसंग इत्यादि पहले की तरह करना चाहिए। और अगर अंतिम संत सतगुरु का रूप अंतर में प्रकट न हुआ हो तो नए संत सतगुरु के रूप का ध्यान करना चाहिए। मगर इतनी सावधानी रखनी चाहिए कि ध्यान के अभ्यास में रूप बदलने में जल्दी न की जावे और न वक़्त से पहले यह तबदीली[1] की जावे। जब, अंतर और बाहर, नए संत सतगुरु के प्रकट होने के प्रमाण पूरी तरह से मिल जावें और उनकी पहचान आ जावे तब ध्यान में रूप बदला जा सकता है।

(11)

Sound is said to have manifested itself within a Satsangi when it can be heard at pleasure, and its attraction is such that the mind and spirit are concentrated and drawn upwards by it. Such of the Satsangis as can get internal *darshan* of Huzur Maharaj and hear the sound as described above, do not stand in indispensable necessity of another Sat Guru. But if He does re-incarnate, they should also partake of the *bilas* of His Satsang when convenient.

(११) अनुवाद

यदि यह दशा प्राप्त हो जावे कि जब चाहे तब शब्द सुना जा सके तो यह कहा जाता है कि सतसंगी के अंतर में शब्द खुल गया है और इस (शब्द) का आकर्षण ऐसा है कि मन और सुरत का समूह बनने लगता है और वे ऊपर की ओर खिंचते हैं। जिन सतसंगियों को अंतर में हुज़ूर महाराज के दर्शन होते हों और जिनको ऊपर बयान की हुई रीति से शब्द सुनाई देता हो, उनके लिए दूसरे संत सतगुरु की ज़रूरत ऐसी नहीं है कि बिना उसके काम न चल सके। लेकिन इतना फिर भी है कि जब दूसरे सतगुरु प्रकट हो जावें तो जब जब सुभीता हो उनके सतसंग के बिलास में शरीक हों।

(12)

It cannot be said definitely where the next Sant Sat Guru will appear, but wherever He re-incarnates, of course, the Satsang will be held at His house and if He does not appear at Agra, He will nevertheless make occasional pilgrimages thereto for the continuity and consolidation of Radhasoami Faith, Agra being recognised as the original headquarters.

---

(१) बदलने की क्रिया, परिवर्त्तन।

(१२) अनुवाद

यह पक्के तौर से नहीं कहा जा सकता कि भविष्य में संत सतगुरु कहाँ प्रकट होंगे। मगर जहाँ कहीं भी वे प्रकट हों अवश्य सतसंग उनके निवास स्थान पर होगा और अगर वे आगरे में प्रकट न हों तो भी राधास्वामी मत को जारी रखने और उसे दृढ़ाने के लिए कभी कभी वे आगरा जो सतसंग का मूल स्थान समझा जाता है, पधारेंगे।

(13)

By His Spiritual Current, *viz,* Sound (and that is His *Nij Rup*) Huzur Maharaj is internally present as before. He Himself is in the Spiritual Regions.

(१३) अनुवाद

अपनी चैतन्य धार अर्थात् शब्द स्वरूप से जो उनका निज रूप है, हुज़ूर महाराज पहले की तरह अंतर में मौजूद हैं। वे स्वयं चैतन्य धाम में हैं।

(14)

It is not understood what has given rise to the belief that there will be a gap of 12 years in the advent of the new Sat Guru....We know nothing definite about this; it may be sooner or later.

(१४) अनुवाद

पता नहीं, लोग यह कैसे मानने लगे हैं कि आगामी संत सतगुरु के प्रकट होने में बारह वर्ष लगेंगे। हमको इस विषय में निश्चयात्मक रूप से कुछ मालूम नहीं है। वे जल्द प्रकट हो सकते हैं और अधिक देर बाद भी।

(15)

The main Spiritual Current being in the eyes and forehead, the proper internal vision of the image of Sant Sat Guru takes place only when those portions are clearly visible. These are the only parts which *Kal* cannot fully assume for the deception of a devotee, whereas the other parts of the Sat Guru's image or body he can assume. You should, therefore, try to contemplate the eyes and forehead of Huzur Maharaj in your devotion, just as you used to look at Him during the *Arti* ceremony, and need not pay special

attention to the lower part of the image; but I would remark here that be it the lower part of Huzur Maharaj's face, or His eyes or forehead or any other part of His holy body, if a true glimpse of any of them is caught internally it instantaneously produces great internal concentration of mind and spirit accompanied with feelings of ecstatic joy. This is the true test of the manifestation of Sat Guru's form within a Satsangi,

(१५) अनुवाद

मुख्य चैतन्य धार आँखों और माथे (ललाट) में होने से, संत सतगुरु के रूप का 'अंतर का दर्शन' तभी समझा जाता है जब कि ये दोनों भाग साफ साफ दिखाई दें। सिर्फ यही दो अंग हैं जिनकी नक़ल, अभ्यासियों को धोखा देने के लिये, काल पूरी तौर पर नहीं कर सकता। सतगुरु की देह के अन्य भागों की नक़ल वह (काल) कर सकता है। इसलिए अभ्यास में तुमको हुज़ूर महाराज की आँखों और माथे का ध्यान उस तरह करने की कोशिश करनी चाहिए, जिस तरह कि तुम आरती के समय उनके दर्शन किया करते थे। उनकी देह अथवा रूप के नीचे के भागों की तरफ़ कोई ख़ास तवज्जह ले जाने की जरूरत नहीं। लेकिन इस संबंध में इतना कहा जा सकता है कि चाहे हुज़ूर महाराज के चेहरे का निचला भाग हो या उनकी आँखें और माथा हो या उनकी पवित्र देह का कोई अन्य भाग हो, इनमें से किसी की भी, सचमुच, अंतरी झाँकी मिल जावे तो तुरंत मन और सुरत का अंतर में गहरा सिमटाव होगा और साथ में अत्यधिक आनंद का अनुभव होगा। सतसंगी के अंतर में सतगुरु के रूप के प्रकट होने की यह असली पहचान है।

(16)

In a Sant Sat Guru the manifestation is the resplendent form of Sat Purush Radhasoami as He is in purely spiritual regions–*Sat Lok* and *Radhasoami Dham*—and is in fact the *Nij Rup* of Sant Sat Guru also just as the *Nij Rup* of a Satsangi is his spirit.

(१६) अनुवाद

संत सतगुरु के अंदर सत्त पुरुष राधास्वामी का नूरानी और प्रकाशवान स्वरूप जैसाकि निर्मल चैतन्य देश—सत्तलोक और राधास्वामी धाम — में है, प्रकट है और वास्तव में यही संत सतगुरु का भी निज रूप है उसी तरह से जिस तरह कि सतसंगी का निज रूप उसकी सुरत है।

(17)

The sound of bell is the sound accompanying the spiritual current in the first sphere and it might in any way be said to be the *Nij Rup* of a Sat Guru in that sphere but His *Nij Rup*, more correctly speaking, has a form similar in outlines to the face of the Sat Guru, but very resplendent. In the highest spiritual regions this form and sound merge into "Anami Radhasoami"

(१७) अनुवाद

घंटे का शब्द पहले मुक़ाम की चैतन्य धार से होता है। उस मुक़ाम में यह शब्द सतगुरु का निज रूप कहा जा सकता है। दर असल निज रूप सतगुरु के चेहरे से मिलता जुलता है। यह बहुत प्रकाशवान् है। सब से ऊंचे चैतन्य धाम में यह स्वरूप और शब्द दोनों अनामी राधास्वामी में समा जाते हैं।

(18)

The sound of bell can be heard concomitantly with the vision of Sat Guru's form by a Satsangi at the time of devotional practice when, of course, he is awake, i e., has not lost all consciousness of the objective world, but at such times his spiritual altitude is high, viz, above sixth *Chakra*, close to *Sahasdal Kanwal*.

(१८) अनुवाद

अभ्यास के समय सतगुरु स्वरूप के दर्शन के साथ घंटे का शब्द भी सुना जा सकता है। अलबत्ता उस वक्त सतसंगी अभ्यासी बा-होश रहता है यानी बाहर की दुनिया का होश गँवा नहीं देता है। लेकिन ऐसे वक्तों में उसकी सुरत की बैठक का स्थान ऊँचा होता है, छठे चक्र से ऊपर और सहसदल कँवल के निकट।

(19)

The spirit can be elevated both by the sound current and the form of Sat Guru. The latter is, however, more efficacious specially because the disturbing influences of *Kal* and *Maya* are instantaneously removed by His image.

(१९) अनुवाद

शब्द की धार और सतगुरु के रूप के द्वारा, दोनों प्रकार से सुरत चढ़ाई जा सकती है। रूप द्वारा चढ़ाई करने की विधि अधिक फल दायक है क्योंकि रूप के प्रकट होते ही काल और माया के विघ्न तुरंत दूर हो जाते हैं।

(20)

Huzur Maharaj's image being the form last assumed by the Supreme Father, its efficacy in contemplation will continue as before until the Supreme Father manifests Himself in another form when the latter will carry on the work of salvation both internally and externally. The Supreme Father is the life and support of the whole creation and but for the presence of His Spiritual Current it will fall to pieces and dissolve into chaos. He is, therefore, as much present now as when He incarnated Himself as Sat Guru. The contemplation of His form is, therefore, certainly beneficial, and the remark that this practice is of no use, is, in my opinion, incorrect. The superiority, spiritually, of the contemplation of the form of the living Sat Guru (provided there is a Sat Guru) over that of the previous Sat Guru lies in the fact that the form of the living Sat Guru is the kinetic form of the Supreme Father, while the previous form in consequence of the withdrawal of the spiritual force has become non-active, excepting in those cases where its internal impression within the devotee has, by practice, been developed to such an extent that the spiritual force has made it a groove for internal action within the practitioner. But this internal form of the past Sat Guru will greatly resemble that of the future Guru.

(२०) अनुवाद

परम पिता का अंतिम रूप होने के कारण हुज़ूर महाराज की छवि का ध्यान पहले ही की तरह उस समय तक फलदायक रहेगा, जब तक कि परम पिता फिर दूसरे रूप में प्रगट न हों। और जब वे प्रकट हो जावेंगे तब इस रूप से अंतर और बाहर उद्धार की कार्रवाई जारी रहेगी। परम पिता ही सारी रचना की जान और आधार हैं। उनकी चैतन्य धार न मौजूद हो तो रचना का तोड़-फोड़ हो कर बिखेर हो जावे। इसलिये अब भी वे उसी तरह मौजूद हैं जैसे कि संत सतगुरु स्वरूप में मौजूद थे। इसलिए उनके रूप का ध्यान करना अवश्य लाभदायक है। यह कहना कि ध्यान की यह विधि निरर्थक है, ठीक नहीं है। अगर संत सतगुरु विराजमान हों तो आध्यात्मिक दृष्टि से, उनके रूप का ध्यान, पहले वाले सतगुरु के ध्यान से श्रेष्ठ है। इसका कारण यह है कि मौजूदा सतगुरु का रूप, परम पिता का क्रियाशील रूप है और पहले वाला रूप, चैतन्य शक्ति के खिंच जाने से क्रियाशील नहीं रहा। पर यदि अभ्यास द्वारा अभ्यासी भक्त के अंदर पहले वाले रूप का नक़्शा इस क़दर पक्का हो गया हो कि चैतन्य शक्ति उसके द्वारा अभ्यासी के अंदर आंतरिक क्रिया करने लगी हो तो अलबत्ता ऐसे अभ्यासी के लिये पहले गुरू का रूप क्रियाशील रहेगा। लेकिन पिछले सतगुरू का यह आंतरिक रूप आइन्दा होने वाले गुरु के रूप के बहुत सदृश होगा।

(21)

If you are sincerely repentent over your shortcomings, the Supreme Father will certainly overlook them, and also gradually bestow upon you strength to curb the vagaries of your mind to some extent. But reformation will be effected slowly and you must, therefore, patiently and trustfully go on with your practice.

(२१) अनुवाद

अगर अपने क़सूरों पर सच्चे दिल से पछतावा हो तो अवश्य परम पिता तुमको मुआफ़ी देंगे और धीरे धीरे तुमको ताक़त बख़्शेंगे कि किसी क़दर तुम अपने मन की तरंगों को दबा सको। लेकिन सुधार आहिस्ते २ होगा। इसलिए तुमको धीरज और विश्वास के साथ अपना अभ्यास जारी रखना चाहिये।

(22)

He, as before, is showering grace and mercy on all of us and the only course open for us is to continue our devotional practice with patience, trust and regularity. Gradually His mercy will become more manifest and we shall feel our efforts being crowned with success. This is the only advice that I can give you at present.

(२२) अनुवाद

पहले की तरह, हुज़ूर महाराज सब पर मेहर और दया की वर्षा कर रहे हैं। हमको जो कुछ करना चाहिए, वह सिर्फ़ यह है कि नियमपूर्वक धीरज और प्रीत प्रतीत के साथ अपना अभ्यास जारी रक्खें। धीरे २ उनकी दया अधिक स्पष्ट मालूम पड़ने लगेगी और हमारे प्रयत्न सफल होते नज़र आवेंगे। इस समय के लिये केवल यही सलाह है।

(23)

The state of your mind mentioned in your letter is due to the influences of past *Karmas* which cannot at once go off without producing more or less of their evil effects; but if you persist in your devotion, irrespective of the inclination of mind, and keep up trust in the mercy of the Supreme Father, He will help you in removing the influences of previous actions, and when their force has been spent, you will get sufficient tranquility to perform devotion for some time with undivided attention and bliss. Trust and sustained devotion are, therefore, the only means for the rectification of the evil tendencies now displayed by the mind.

(२३) अनुवाद

तुम्हारी चिट्ठी में बयान की हुई मन की हालत पुराने कर्मों के असर से है और वह थोड़ा बहुत बुरा फल दिए बिना एक बारगी नहीं चला जा सकता । लेकिन मन की प्रवृत्तियों का खयाल न करके अगर तुम अपना अभ्यास करते रहो और परम पिता की दया में विश्वास रक्खो तो वे पिछले कर्मों के असर को दूर करने में तुम्हारी सहायता करेंगे और जब उनका ज़ोर ख़तम हो जावेगा तब तुमको काफ़ी निश्चलता प्राप्त होगी जिससे कुछ समय के लिए तुम एकाग्र चित्त हो कर अभ्यास कर सकोगे और उसमें रस व आनन्द प्राप्त होगा । इसलिये इस समय मन में उठने वाली बुरी तरंगों के सुधार के लिए, विश्वास पूर्वक लग कर अभ्यास करना, केवल यही उपाय है ।

(24)

It is not necessary that the Sant Sat Guru should re-incarnate Himself immediately on His departure from this world. It all depends upon the *Mauj* of Sant Sat Guru, whether even after re-incarnation, He immediately manifests Himself or not. The object in such matters is not fully known to us, but we may surmise that this might be intended to arouse true yearning and love for Him.

(२४) अनुवाद

यह ज़रूरी नहीं कि संत सतगुरु के इस संसार से गुप्त होते ही फ़ौरन दूसरे संत सतगुरु का अवतार हो । यह सब उनकी मौज पर निर्भर है कि अवतार लेने पर भी वह तुरन्त प्रगट हों या नहीं । इन सब बातों का भेद हम लोगों को पूरी तौर पर मालूम नहीं हो सकता लेकिन हम अनुमान कर सकते हैं कि इसमें यह मसलहत रहती है कि उनके लिए सच्ची विरह और प्रेम जागे।

(25)

Satsangis will have, after death, *bilas* and *darshan* of Sant Sat Guru in the higher regions as usual. The Sant Sat Guru visits, off and on, the higher regions although His abode is in the Highest.

(२५) अनुवाद

मृत्यु के पश्चात् सतसंगियों को ऊँचे मुक़ामों में, ब-दस्तूर, संत सतगुरु का दर्शन और बिलास प्राप्त होगा । यद्यपि संत सतगुरु का निवास सबसे ऊँचे धाम में है, पर वे कभी कभी ऊँचे मुक़ामों में आते जाते रहते हैं ।

(26)

The *five births* referred to in your letter might be necessary for the perfect salvation of a spirit other than human, i. e., of beasts. In the first birth, they assume human shape, and then in the usual number of four births they are emancipated.

(२६) अनुवाद

पाँच जन्मों का जो हवाला दिया है वह मनुष्य को छोड़ कर पशुओं की सुरत के पूर्ण उद्धार के लिए ज़रूरी है। पहले जन्म में वह नर चोले में आवेंगे और तब साधारण रीति के अनुसार उनका उद्धार होने में चार जन्म का समय लगेगा।

(27)

Gradation in *Dayal Desh* is due to gradation (if it may be so called) in the spiritual cover there. It is not necessary that matter must indispensably be present for the purpose.

(२७) अनुवाद

ऐसा कह सकते हैं कि दयाल देश में दर्जात वहां के गिलाफ़ों में चैतन्यता की कमीबेशी के हिसाब से हैं। पर इसके लिये माद्दे का होना ज़रूरी नहीं है।

(28)

Huzur Maharaj's form and features should be contemplated in any way they easily come up before your mental vision. If His form etc. at any time struck you specially, and you can remember those best, preference should be given to them in contemplation and to the form observed during *Arti* ceremony, which need not forcibly be contemplated if it does not manifest itself so easily as the other one. But whatever form of Huzur Maharaj appears within, the attention and sight should be gradually fixed on the eyes thereof.

(२८) अनुवाद

तुम्हारी मानसिक दृष्टि के सामने जिस प्रकार भी आसानी से हुज़ूर महाराज का चेहरा, आकार, शक्ल सूरत सामने आवे उसी का चितवन करना चाहिए। यदि किसी समय भी उनके चेहरे, नाक नक़्शे, का खास तौर पर तुम पर असर पैदा हुआ हो और वह छबि सबसे अच्छी तरह तुम्हारे ख़याल में आ सके तो ध्यान के अभ्यास में उसी छवि को, और आरती के समय जिस स्वरूप के दर्शन किए हैं उस स्वरूप को,

तरजीह[1] देनी चाहिए। लेकिन यदि आरती के समय का स्वरूप, ब-मुक़ाबले उस ख़ास चेहरे, आकार और नाक नक़्शे के, आसानी से सामने न आवे तो ज़बरदस्ती उसका ध्यान करने की ज़रूरत नहीं है। चाहे जो रूप और आकृति, हुज़ूर महाराज की, अंतर में दिखाई दे, चित्त और दृष्टि को धीरे धीरे उनकी आँखों पर जमाना चाहिए।

(29)

A devotee should contemplate Huzur Maharaj's image before his mental eyes. It is not necessary that the Agra association should indispensably be kept in view. It may at times be resorted to, to help in the appearance of the image.

(२९) अनुवाद

अभ्यासी भक्त को अपने मन में हुज़ूर महाराज की छवि का ध्यान करना चाहिए। आगरा सम्बन्धी विचारों को दृष्टि में रखने की अनिवार्य रूप से आवश्यकता नहीं है। पर किसी २ समय स्वरूप की याद करने के लिए उन विचारों का आश्रय लिया जा सकता है।

(30)

The image should be contemplated at the focus of the eyes, which is midway between the two eyes, adjoining the sixth *Chakra*. It is called *Til* and is within the brain.

(३०) अनुवाद

स्वरूप का ध्यान चक्षु केन्द्र पर (तीसरे तिल पर) करना चाहिये। यह दोनों आंखों के बीच, मध्य बिन्दु पर, षटम् चक्र से लगा हुआ है। इसे तिल कहते हैं और यह मस्तिष्क के भीतर है।

(31)

It is better to contemplate with shut eyes in the beginning. When the image has manifested itself within, even with eyes open, it could be contemplated, But when concentration is great, the eyes will be closed of their own accord, without any desire to do so.

(३१) अनुवाद

शुरू में आँखें बन्द करके ध्यान करना ही बेहतर है। जब स्वरूप अन्तर में प्रकट हो जावे तब आँखें खुली रक्खे हुए भी ध्यान किया जा सकता है। लेकिन जब सिमटाव ज़्यादा होगा तो आँखें अपने आप, बिना अपनी इच्छा के, बन्द हो जावेंगी।

---

(१) किसी वस्तु को और वस्तुओं से अच्छा समझना, प्रधानता देना।

(32)

Whichever *Swarup* of Huzur Maharaj has impressed itself most and can most easily be brought before the mental vision, should be contemplated.

(३२) अनुवाद

हुज़ूर महाराज की जिस छबि ने भी सबसे अधिक असर किया हो और जो आसानी से मानसिक दृष्टि में लाई जा सके उसी का ध्यान करना चाहिए ।

(33)

The seat of spirit is already in the sixth *Chakra*. By contemplation of Huzur Maharaj's image and the repetition of the Holy Name RADHASOAMI, its diffused currents could be concentrated there.

(३३) अनुवाद

सुरत की बैठक छठे चक्र पर तो है ही । वहां हुज़ूर महाराज के स्वरूप का ध्यान और पवित्र नाम राधास्वामी का सुमिरन करने से बिखरी हुई धारें सिमट कर एक होंगी ।

(34)

Without some concentration at the sixth *Chakra* the sound of bell and internal vision of *Swarup* cannot be properly had. Of course, if the devotee's spirit is more or less concentrated at all times, he can have the above experiences with eyes open.

(३४) अनुवाद

छठे चक्र पर कुछ सिमटाव या समूह हुए बिना घंटे की आवाज़ या अंतरी स्वरूप के दर्शन भली प्रकार नहीं हो सकते । पर यदि अभ्यासी की सुरत कमोबेश हर समय सिमटी रहे तो वह खुली आँखों से भी शब्द सुन सकता है और अंतरी स्वरूप का दर्शन कर सकता है ।

(35)

Devotees who can neither hear sound nor get *darshan*, stand in need of another *Guru*, but they should patiently await His advent. Meanwhile the Supreme Father Radhasoami, in whom they should place implicit trust, will help them as much as proper.

(३५) अनुवाद

जिन सतसंगियों को न शब्द सुनाई देता है और न दर्शन होते हैं उनको दूसरे संत सतगुरु की आवश्यकता है। उनके आगमन की उनको धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए। तब तक राधास्वामी दयाल उनको जिस क़दर मुनासिब होगा मदद देंगे। उनमें पूर्ण विश्वास रखना चाहिए।

(36)

Spirits can ascend to the highest sphere by the contemplation of Huzur Maharaj's form.

(३६) अनुवाद

हुज़ूर महाराज का ध्यान करने से सबसे ऊँचे धाम तक सुरत की चढ़ाई हो सकती है।

(37)

The *Nij Rup* of Sadh Guru is the form of *Par Brahm* or the reigning spirit of *Sunn*. The *Nij Rup* of Sant Sat Guru has *Akar* upto *Sat Lok;* thereafter it becomes *Nirakar*. The *Nij Rup* of a Satsangi is that of *Hans*.

(३७) अनुवाद

साध गुरू का निज रूप पार-ब्रह्म अथवा सुन्न के धनी का स्वरूप है। संत सतगुरु के निज रूप का सत्तलोक तक आकार है, उसके बाद वह निराकार हो जाता है। सतसंगी का निज रूप हंस का है।

(38)

As all Sat Gurus are incarnations of the same Supreme Father, some resemblance in their physical forms, specially in their face, is natural and is traceable.

(३८) अनुवाद

चूँकि सब सतगुरु उसी एक ही परम पिता के अवतार हैं, इसलिए उनके दैहिक रूप में, विशेष कर उनके चेहरे में, सादृश्य होना स्वाभाविक है और वह देखने में भी आ सकता है।

(39)

A Sant Sat Guru or Sadh Guru, either can perform the functions of the president of Satsang and spiritual regeneration takes place under the presidency of either. Either of them can, therefore, succeed Huzur Maharaj.

(३९) अनुवाद

संत सतगुरु या साध गुरु, दोनों में से कोई भी सतसंग के अधिष्ठाता की कार्रवाई कर सकते हैं। दोनों में से किसी के भी तत्त्वावधान में आध्यात्मिक उन्नति हो सकती है। इसलिये उन दोनों में से कोई भी हुज़ूर महाराज के बाद आ सकते हैं।

(40)

Radhasoami Dayal does not manifest Himself in a devotee of a rank lower than Sant Sat Guru, but He can, through the medium of a Satsangi, perform, to some extent, the work of regeneration. Sooner or later Supreme Father Radhasoami will certainly manifest Himself. He Himself gave this out, but it cannot be said when manifestation will take place.

(४०) अनुवाद

संत सतगुरु से कम (या नीचे) दरजे के सतसंगी में राधास्वामी दयाल प्रकट नहीं होते (या अवतार नहीं लेते)। लेकिन किसी सतसंगी के ज़रिये भी वे किसी हद तक उद्धार की कार्रवाई कर सकते हैं। देर अबेर राधास्वामी दयाल अवश्य प्रकट होंगे। उन्होंने स्वयं ऐसा फ़रमाया है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि कब प्रकट होंगे।

(41)

A spirit is said to be elevated when its seat is changed from the sixth *Chakra* to a higher sphere. Relaxation of, and liberation from, bondages, acquirement and experience of higher bliss, and development to some extent of super-natural powers, are symptoms of spiritual elevation. But these symptoms will be understood by the devotee himself and not by others. To the latter, such a devotee would not present any extraordinary features outwardly but his company will clearly show that the greater portion of his time is devoted to practice and other religious observances enjoined by the *Sant Mat*, and that all his dealings bear unmistakeable stamp of sincerity, honesty, toleration and mildness. Such pure and upright conduct will not fail to impress all who come in contact with him, and in a short time only, he will be loved and respected by his friends, associates and relations.

(४१) अनुवाद

सुरत का चढ़ना तब कहा जाता है जब कि उसकी बैठक छठे चक्र से ऊपर के मुक़ाम में हो जावे। बंधनों का ढीला होना और उनसे मुक्त होना, ऊँचे घाट का आनंद मिलना और उसका अनुभव होना और कुछ अंश में अलौकिक शक्तियों का जागना, सुरत की चढ़ाई के चिन्ह हैं। लेकिन इन लक्षणों की पहचान स्वयं अभ्यासी ही को होगी, अन्य लोगों को नहीं। अन्य लोगों को बाहर से देखने में ऐसे अभ्यासी में कोई असाधारण बात नज़र न आवेगी लेकिन उसकी सोहबत में रहने से साफ़ मालूम पड़ेगा कि उसके समय का अधिक अंश अभ्यास और संतमतानुसार अन्य परमार्थी कार्यवाइयों में ख़र्च होता है और उसके कुल बर्ताव में खरापन (निष्कपटता), ईमानदारी बर्दाश्त और मुलायमियत की अचूक छाप रहती है। ऐसा शुद्ध और सरल बर्ताव, जो कोई उसके सम्पर्क में आवे, उस पर असर करे बिना नहीं रहेगा और थोड़े ही समय में उसके मित्र, मिलने जुलने वाले और सगे सम्बन्धी उससे प्रेम और उसकी इज़्ज़त करने लगेंगे।

(42)

The sound of bell coming from the right side is produced by the spiritual current flowing on that side from the third *Til* and is distinguished by its greater attractive force. The only means to hear it is to concentrate the spirit in third *Til*. When the attractive force of the sound increases and it is heard more internally the devotee should then consider that he is approaching that sound.

(४२) अनुवाद

दाहिनी तरफ़ घंटे का शब्द उस ओर तीसरे तिल से प्रवाहित होने वाली चैतन्य की धार के साथ होता है। उसकी पहचान यह है कि उसमें ज़्यादा आकर्षण होता है। उसका सुनने का केवल यही एक उपाय है कि तीसरे तिल पर सुरत का सिमटाव हो और समूह बने। जब शब्द का आकर्षण बढ़ने लगे और ज़्यादा अंतर में खिंचाव हो तो समझना चाहिए कि अभ्यासी असली शब्द के अधिकाधिक निकट पहुँच रहा है।

(43)

The *Swarup* may be contemplated at the time of sound practice. It all depends upon Huzur Maharaj's grace, when His eyes and forehead might clearly appear during contemplation. Prayers might be offered for this mercy and the rest left to His *Mauj*.

(४३) अनुवाद

शब्द अभ्यास के समय स्वरूप का ध्यान किया जा सकता है। यह हुज़ूर महाराज की दया पर मुनहसर है कि कब उनकी आँखें और माथा ध्यान के अभ्यास में स्पष्ट प्रकट हों। मगर ऐसी दया के लिए प्रार्थना की जा सकती है। बाक़ी उनकी मौज पर छोड़ देना चाहिए।

(44)

The most suitable time for sound practice is from 4 to 5.30 A.M. in the morning. At that time it will be heard more easily than at other times.

(४४) अनुवाद

भजन का सबसे अच्छा समय सबेरे चार से साढ़े पाँच बजे तक का है। और वक़्तों की ब-निस्बत उस वक़्त शब्द ज़्यादा आसानी से सुना जा सकता है।

(45)

Sometimes the sound of bell is heard without shutting the ears in the prescribed posture. Some help is derived in hearing the sound by it, but if the devotee finds that he can successfully listen to the sound while lying, he may do so. But for the daily practice the prescribed posture will be better, and in that posture daily practice should be performed.

(४५) अनुवाद

कभी कभी बतलाए हुए आसन से बैठ कर, बिना कान बन्द किए भी, घंटे का शब्द सुनाई देता है। इस आसन से शब्द सुनने में मदद मिलती है। लेकिन अगर लेटे लेटे ही अच्छी तरह शब्द सुनाई दे तो अभ्यासी ऐसा कर सकता है। लेकिन रोज़ नियम से किया जाने वाला अभ्यास आसन से ही बैठ कर करना बेहतर है और प्रतिदिन का नियमित अभ्यास उसी आसन से करना चाहिए।

(46)

Any form of Huzur Maharaj which appeared most attractive should be contemplated. It is preferable to gradual tracing of the lineaments by the devotee. But if the devotee is able to fix the image by this process, there is no objection to his doing so.

(४६) अनुवाद

हुज़ूर महाराज की जो छवि अत्यंत आकर्षक लगी हो, ध्यान में उसी का चितवन करना चाहिए। धीरे-धीरे चेहरे मोहरे का ख़याल करते करते स्वरूप का अनुमान करने की ब-निस्बत ऊपर वाली विधि बेहतर है। लेकिन इस रीति से भी अगर अभ्यासी स्वरूप प्रकट कर सके तो कोई हर्ज नहीं है।

(47)

The *Swarup* of Huzur Maharaj cannot be said to have manifested itself in a Satsangi, who does not get His *darshan* internally and does not hear the sound.

(४७) अनुवाद

यदि किसी सतसंगी को अंतर में हुज़ूर महाराज के दर्शन न होते हों और न शब्द सुनाई देता हो तो यह नहीं कहा जा सकता कि उसके अंदर हुज़ूर महाराज का स्वरूप प्रकट हो गया है।

(48)

At the time of death the spiritual currents are first withdrawn from the limbs, *i, e.,* hands and feet, reach *Guda Chakra* (*Mooladhar*), and are drawn up therefrom step by step to *Indri Kanwal, Nabhi Chakra, Hridaya Kanwal,* and sixth *Chakra* ; and as soon as after leaving the sixth *Chakra,* the spirit penetrates third *Til,* death ensues. After penetrating that aperture the spirit is drawn further upwards and brought before the *Jam,* the sight of whom at once awakens in the spirit its predominant desires whereby it is hurled downwards, and after passing some time in higher or lower regions, according to its actions, assumes another form, *i. e.,* is born again as animal, bird, plant, worm, etc., in accordance with the resultant of its predominant actions. When the spirit is hurled downwards from the presence of *Jyoti,* it forgets everything about its past life.

(४८) अनुवाद

मृत्यु के समय, पहले सुरत की धारें हाथ पाँवों से खिंच कर गुदा चक्र (मूलाधार) पर पहुँचती हैं और फिर वहाँ से क्रमानुसार इन्द्री कँवल, नाभि चक्र, हृदय कँवल और छठे चक्र पर खिंच कर आती हैं। ज्योंही छठे चक्र को छोड़ कर सुरत तीसरे तिल में

प्रवेश करती है कि मृत्यु हो जाती है। उस सूराख़ में धँसने पर सुरत ऊपर को खिंच कर जम के सामने जाती है। जम के सामने जाते ही सुरत में तुरंत उसकी प्रबल वासनाएं जाग जाती हैं, जिससे वह नीचे को फेंक दी जाती है और अपने कर्मानुसार ऊँच नीच लोकों में कुछ समय रहने के बाद दूसरा शरीर धारण करती है यानी अपने प्रबल कर्मों के फल स्वरूप पशु पक्षी बनस्पति कीड़े मकोड़े इत्यादि की योनि में जन्म लेती है। जोत के सामने से जब सुरत नीचे को गिरा (धकेल) दी जाती है तब वह अपने पिछले जीवन सम्बन्धी सब बातें भूल जाती है।

(49)

As long as a child is in womb its spirit is before *Jyoti.* At the time of delivery, it is forced down through third *Til,* but some affinity is established with the spirit of the would-be child as soon as conception takes place.

(४९) अनुवाद

जब तक बच्चा गर्भ में रहता है, उसकी सुरत ज्योति के सन्मुख रहती है। जन्म होने के समय वह तीसरे तिल में हो कर नीचे उतारी जाती है। गर्भ की स्थिति होते ही आने वाली सुरत का उससे सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

(50)

It is not necessary that transmigration should take place immediately after death. The spirit may, according to its actions, enjoy bliss in the higher regions or suffer tortures in hell for some time before it again assumes a new form, or it may immediately transmigrate.

The above explanation refers to a non-Satsangi. Satsangis are always located after death in a sphere not lower than *Sahasdal-Kanwal* and are never subjected to the tortures of hell or assume the form of a brute. At the time of death the Sat Guru always appears and takes them up in His lap.

(५०) अनुवाद

यह ज़रूरी नहीं कि मृत्यु के बाद फ़ौरन ही जन्म हो जावे। नया चोला धारण करने से पहले कुछ समय के लिए अपने कर्मानुसार सुरत को ऊँचे मुक़ामात में आनन्द प्राप्त हो सकता है या नर्क की यातनाएं भोगनी पड़ें।

यह बात उनके लिए कही गई है जो सतसंगी नहीं हैं। मृत्यु के पश्चात् सतसंगियों को सर्वदा सहसदल कँवल या उससे ऊपर ही ठहराया जाता है। उनको कभी नर्क के दुःख नहीं भोगने पड़ते और न पशु योनि में जाना पड़ता है। मृत्यु के समय सदा सतगुरु दर्शन देते और उनको अपनी गोद में बैठा कर ऊपर ले जाते हैं।

(51)

Huzur Maharaj is in Dayal Desh, but Sound or Spirit Current is everywhere, and for the help of the devotee, can assume His form anywhere needed. The *Nij* form of *Sat Purush Radhasoami* and of Huzur Maharaj were one and the same and they are one and the same within *Dayal Desh*. The spiritual current which was supporting Huzur Maharaj's physical body has been withdrawn, but the Sound Current is present as before, otherwise the whole creation would collapse.

(५१) अनुवाद

हुजूर महाराज तो दयाल देश में हैं लेकिन शब्द या चैतन्य की धार सर्वत्र मौजूद है और भक्तों की सहायता करने के लिए जहाँ कहीं भी जरूरत हो वह धार उनका रूप धारण कर सकती है। सत्त पुरुष राधास्वामी का निज रूप और हुजूर महाराज का निज रूप एक ही था और दयाल देश के अंदर एक ही है। चैतन्य अथवा सुरत की जो धार हुजूर महाराज के भौतिक शरीर का पोषण कर रही थी, वह खिच गई है। मगर शब्द की धार पहले की तरह मौजूद है। अगर वैसा न हो तो रचना ही न रहे।

(52)

The *Nij Rup* of Huzur Maharaj, *i. e.*, Sound. now helps in devotion.

(५२) अनुवाद

अब हुजूर महाराज का निज रूप यानी शब्द रूप अभ्यासियों की मदद कर रहा है।

(53)

The Supreme Father is always disposed to listen to the prayers of all His children, and your prayers would, therefore, be equally efficacious.

(५३) अनुवाद

अपने बच्चों की प्रार्थनाएं सुनने के लिए परम पिता हमेशा तैयार हैं। इसलिये तुम्हारी प्रार्थनाएं भी वैसी ही कार्य साधक होंगी।

(54)

Of course, for the present, everything looks in the worst light, and troubles and vexations appear to surround you all round, but I may venture to say that all these apparent disturbances cannot really hinder your spiritual progress and regeneration, which are as much taken care of now as before, if not more. The Supreme Merciful Father is watching His children from His abode on High and protecting them from the snares and temptations of this world. You may, therefore, with a firm trust in His great mercy, do whatever you can, whether satisfactory or not, in the way of devotional practice, and leave the rest to His supreme *Mauj* which cannot but tend to your welfare.

(५४) अनुवाद

इस समय तुमको प्रत्येक वस्तु अत्यंत कष्टदायक ही दिखलाई दे रही है और चारों ओर दुख और संताप मे घिरे हुए मालूम होते हो। लेकिन यह सब ज़ाहिरा विघ्न और उपद्रव वास्तव में तुम्हारी रूहानी तरक़्क़ी और आध्यात्मिक सुधार में कोई रुकावट नहीं डाल सकते। तुम्हारे पारमार्थिक हित की सम्हाल, अधिक नहीं तो पहले की सी, जारी है। परम पिता अपने उच्चतम धाम से अपने भक्तों की निगहबानी कर रहे हैं और उनको इस दुनिया के जाल और दिल लुभाने वाली चीज़ों और बातों से बचा रहे हैं। इसलिये उनकी महान दया में दृढ़ विश्वास रखते हुए जितना हो सके अभ्यास करते रहो, चाहे भली प्रकार बने या न बने। और बाक़ी सब उनकी मौज पर छोड़ दो और मौज में सिवा तुम्हारे हित के और कुछ नहीं है।

(55)

When the spiritual currents flowing through the body tend towards their focus, concentration may be said to have occurred. The symptoms of concentration are enjoyment of bliss in devotion and an experience of withdrawal of vitality from the limbs.

(५५) अनुवाद

सुरत की धारें जो सारे शरीर में फैल रही हैं, अपने केन्द्र की ओर रुख़ करें, तब 'सिमटाव' कहा जाता है। भजन में रस और आनन्द का मिलना और हाथ पैरों में से चेतनता का खिचना, यह सिमटाव के लक्षण हैं।

(56)

When the spirit currents converge into sixth *Chakra*, concentration has taken place. As in devotional practice the concentration in the beginning is not so intense as to result in the complete withdrawal of the spiritual currents, the stages of dream. deep slumber and *Turia* are not felt to have been passed through, but nonetheless bliss is experienced to some extent, its intensity increasing with the degree of intensity of concentration; and when the practice has advanced so far that the devotee can achieve complete withdrawal of the spirit currents, all the states mentioned above will be traversed during his devotional concentration.

(५६) अनुवाद

जब सुरत की धारें छठे चक्र पर केन्द्रीभूत हों तो समझना चाहिए कि सिमटाव हुआ। शुरू में चूँकि अभ्यास में सिमटाव इतना ज़्यादा गहरा नहीं होता कि जिससे सुरत की धारें पूर्णरूप से खिच जावें, इसलिये स्वप्न सुषुप्ति और तुरिया की अवस्थाओं में से पार हो जाना मालूम नहीं पड़ता, लेकिन किसी क़दर रस तो अभ्यास में आता है और जितना ज़्यादा सिमटाव होता जाता है उतना ही रस भी प्राप्त होता जाता है। जब अभ्यास इतना पक जाता है कि अभ्यासी की सुरत की धारों का पूर्ण रूप से खिचाव हो जावे तो ऊपर वर्णन की हुई सब अवस्थाएं अभ्यास में पार हो जावेंगी।

(57)

By the repetition of the most Holy Name RADHASOAMI and the contemplation of *Guru Swarup,* spirit can be easily concentrated in the third *Til.* There is no easier method for concentration.

(५७) अनुवाद

महा पवित्र राधास्वामी नाम के सुमिरन और गुरू स्वरूप के ध्यान से सुरत का आसानी से तीसरे तिल में समूह बन सकता है। इससे आसान तरीक़ा और कोई नहीं है।

(58)

The sound of bell can be properly heard only when satisfactory concentration has taken place.

(५८) अनुवाद

काफ़ी समूह बनने पर ही घंटे का शब्द भली प्रकार सुनाई दे सकता है ।

(59)

Elevation differs from the concentration of spirit in this, that there is an elevation of the seat of spirit in the former.

(५९) अनुवाद

सुरत की चढ़ाई और सुरत के समूह या सिमटाव में यह फ़र्क़ है कि चढ़ाई में सुरत की बैठक का स्थान ऊँचा हो जाता है ।

(60)

The spiritual currents in the pupil of the eyes are withdrawn in sleep and concentration, while in elevation, the seat of the spirit in six*th Chakra* is exalted.

(६०) अनुवाद

नींद और सिमटाव की हालतों में आँखों के अंदर की सुरत की धारों का खिंचाव होता है । बर-अक्स इसके चढ़ाई में सुरत की बैठक का स्थान छठें चक्र से ऊपर हो जाता है ।

(61)

During sound practice, *Swarup* is contemplated to remove mental and material disturbances, otherwise it is not necessary to contemplate *Swarup* at the time of sound practice.

(६१) अनुवाद

मन और माया के विघ्नों को दूर करने के लिए शब्द अभ्यास के साथ स्वरूप का ध्यान किया जाता है, वरना शब्द अभ्यास के समय स्वरूप का ध्यान करना ज़रूरी नहीं है ।

(62)

Mental currents excited by mental and material objects are *Tarangs*. They emerge from the mind, and are produced in consequence of the mind being imbued with mental and material desires.

(६२) अनुवाद

मन और माया के विषयों से उठने वाली मानसिक धारों को तरंगें कहते हैं। वे मन में से निकलती हैं और मन में मानसिक और मायिक इच्छाओं की प्रबलता से पैदा होती हैं।

(63)

Weakness of brain, which signifies the prostration of the chief nervous organ, is not the real cause of *Tarangs*. The best means to check *Tarangs* during devotion is to repeat the Holy Name RADHASOAMI as soon as the disturbance preceding their flow is felt, the repetition being continued until the disturbance has subsided.

(६३) अनुवाद

दिमाग़ की कमज़ोरी जो ज्ञान तंतुओं की मुख्य इन्द्रिय के ढीले पड़ जाने की सूचक है, 'तरंगों' का असली कारण नहीं है। अभ्यास में तरंगों को रोकने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि तरंगों के खड़े होने से पहले ज्योंही हिलोर उठे, राधास्वामी नाम का सुमिरन किया जावे और वह उस वक्त तक जारी रक्खा जावे जब तक कि हिलोर शांत न हो जावे।

(64)

A cool, clear and fresh head (as after sleep), being indicative of absence of mental disturbance, is, of course, the best condition for sound practice and sound is more clearly heard then than at other times.

(६४) अनुवाद

शब्द अभ्यास के लिए दिमाग़ का शांत, बा-होश और ताज़ा होना 'जैसा कि नींद से उठने पर होता है' जो यह सूचित करता है कि उस वक्त मन में हिलोर नहीं है, सबसे अच्छी हालत है और और वक्तों की ब-निस्बत उस वक्त शब्द ज़्यादा साफ़ सुनाई देता है।

(65)

The *Swarup*, which comes of its own accord, is manifested by the special mercy of the Supreme Father Radhasoami Dayal and it is, therefore, certainly more efficacious in imparting spiritual benefit and bliss than the *Swavup* which is fixed by the efforts of the devotee. With regard to the fixing of the latter, one has been endowed with some power to do so, while over the former no such control is possessed. A devotee should, therefore, always use his efforts to fix the image and leave the unsolicited visions to the *Mauj* of the Supreme Father.

(६५) अनुवाद

अभ्यासी अपनी कोशिश से जिस स्वरूप का अनुमान करता है, उसकी ब-निस्बत अभ्यास में जो स्वरूप अपने आप सामने आता है, वह परम पिता राधास्वामी दयाल की ख़ास दया से प्रकट होता है और इसलिए अवश्य आंतरिक लाभ और आनन्द देने में ज़्यादा मददगार साबित होता है । अपनी कोशिश से जो स्वरूप प्रकट होवे, उससे यह ज़ाहिर होता है कि ऐसा करने की कुछ शक्ति अभ्यासी को प्राप्त हो गई है, बर-अक्स इसके अपने आप जो स्वरूप प्रकट होता है, उस पर अभ्यासी का कोई क़ाबू नहीं । इसलिये स्वरूप को जमाने यानी सामने लाने की अभ्यासी को सदा कोशिश करनी चाहिए और बिना माँगे अपने आप स्वरूप प्रकट होने की दया को परम पिता की मौज पर छोड़ देना चाहिए ।

(66)

Sixth *Chakra* is the seat of the spirit, while the third *Til* above it, is the door which leads from *Pind* into *Brahmand*. As soon as the spirit penetrates into this orifice, death takes place.

(६६) अनुवाद

छठा चक्र सुरत की बैठक का स्थान है और उसके ऊपर तीसरा तिल पिंड से ब्रह्मांड में जाने का द्वार है । ज्योंही सुरत इस द्वार में प्रवेश करती है कि मृत्यु हो जाती है ।

(67)

The stages of *Brahmand* and *Dayal Desh* are outside the matter of the brain, but the places corresponding to them, pointed out at the time of *Updesh* are orifices in communication with them, like the pupil of the eye with regard to light.

(६७) अनुवाद

ब्रह्मांड और दयाल देश के स्थान दिमाग़ के माद्दे मे बाहर हैं। मगर उनसे ताल्लुक़ रखने वाले स्थान जो उपदेश के समय बतलाए जाते हैं, वह वे द्वारे हैं जिनसे उन स्थानों या लोकों से उसी प्रकार सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है जैसे कि आँख की पुतली का प्रकाश से।

(68)

Three currents flow from the spirit in the body, one on the right, the second in the middle and the third on the left side. The middle current which is a prolongation of the *Sukhamana*, has formed the sixth *Chakra*, and is the mainstay of the corporeal frame, the other two being the adjuncts for the performance of the various functions of the body and its organs.

These two currents have their respective ramifications in the two eyes, besides working the other senses attached to the two parts of the body, but the currents in the eyes are stronger than the other currents, and consequently the effects produced on them are responded to by the other currents also, and they, therefore, form an index, as it were, to the other currents, but these latter have not emanated from them. As a focus of a force does not become void on account of the force currents issuing therefrom, so the presence of the spirit current in the eyes and in the body does not deplete the sixth *Chakra* of the spirit.

(६८) अनुवाद

देह में जो सुरत विराजमान है उससे तीन धारें निकलती हैं, एक दाहिनी ओर, दूसरी मध्य में और तीसरी बाईं ओर। मध्य की धार ने, जो कि सुखमना का ही विस्तार है, छठा चक्र बनाया है और वह मध्य की धार ही स्थूल शरीर का मुख्य आधार है। अन्य दो धारें शरीर और इन्द्रियों की जुदा जुदा कार्रवाइयों के करने के लिये मध्य की धार की सहायक हैं।

शरीर के दोनों भागों में जो अन्य इन्द्रियाँ है, उनका कार्य चालित करने के अतिरिक्त इन दो धारों का शाखा विस्तार क्रमशः दोनों आँखों में है। लेकिन अन्य धारों की अपेक्षा आँखों वाली धारें अधिक बलवती हैं और यही कारण है कि आँखों वाली धारों पर जो असर पैदा किये जाते हैं उनकी प्रतिक्रिया अन्य धारों पर भी होती है और इसलिये वे, मानो, अन्य धारों की प्रदर्शक हैं लेकिन ये अन्य धारें उनसे (आखों से) नहीं निकली हैं। जिस प्रकार शक्ति-केन्द्र से शक्ति की धारों के निकलने से वह (शक्ति-केन्द्र) ख़ाली नहीं हो जाता, उसी प्रकार चैतन्य की धार के आँखों और शरीर में मोजूद होने से छठा चक्र चैतन्यता से ख़ाली नहीं हो जाता।

(69)

Total withdrawal of spirit from body and its entrance into third *Til* constitute death, but it is not an indispensable condition that there should be complete withdrawal of the currents into *Til* before sound could be heard. Some concentration is sufficient for the purpose, hence the great ease and efficacy of the sound practice, and from this it also follows that it is not necessary that devotee should be in the state of dream or deep slumber before the sound is heard. On the other hand, these two stages being more or less enshrouded by *Tam*, the astral senses are also more or less dormant and the spiritual sound is not hence heard in these states.

A devotee who has by his practice dispelled the internal darkness, traverses the states of dream and deep slumber in the full possession of the uses of his senses, whereas ordinary people recede to these in unconsciousness.

(६९) अनुवाद

सुरत के पूर्ण रूप से शरीर से खिंच जाने और तीसरे तिल में प्रवेश करने से मृत्यु होती है। लेकिन इसलिये कि शब्द सुनाई दे, धारों का तीसरे तिल में पूरा पूरा खिचाव हो जाना लाज़मी नहीं है। शब्द सुनाई देने के लिए कुछ सिमटाव का होना काफ़ी है। इसीलिये शब्द अभ्यास बड़ा आसान और कार्य-साधक है। इससे यह नतीजा भी निकलता है कि यह ज़रूरी नहीं है कि शब्द सुनाई देने से पहले अभ्यासी, स्वप्न या गहरी नींद की अवस्था में हो। बर-अक्स इसके, इन दोनों अवस्थाओं में कमोबेश तम छाया रहने के कारण सूक्ष्म शरीर की इन्द्रियाँ भी कमोबेश निद्रित सी रहती हैं और इसीलिए इन अवस्थाओं में आंतरिक शब्द नहीं सुनाई देता।

जिस अभ्यासी ने अभ्यास द्वारा अंतर का तम दूर कर दिया है, वह स्वप्न और सुषुप्ति की अवस्थाओं को पूरे होश हवास के साथ पार करता है और मामूली आदमी बे-होश होकर इन अवस्थाओं में जाते हैं।

(70)

Nij Rup is the means of help to devotees both when Sat Guru is bodily present and when He has left it. But when He is present in the physical world as incarnation, His physical body being surcharged with spirituality of the highest order, all coming in contact with Him are highly spiritualized, and thus great benefit can then be gained by all. Sant Sat Guru Himself in His own sphere is Sat Purush; as tide from Him, He incarnates in human form. Prayers offered inwardly are heard *by Nij Rup* and grace awarded by Him.

(७०) अनुवाद

जब सतगुरु देह में विराजमान होते हैं अथवा जब देह त्याग कर देते हैं, दोनों ही अवस्थाओं में निज रूप अभ्यासी को मदद देने का ज़रिया है। लेकिन जब वे भौतिक संसार में अवतार स्वरूप मौजूद होते हैं, तब उनका भौतिक शरीर उच्चतम कोटि की चैतन्यता से भरा हुआ होने के कारण जो कोई उनके सम्पर्क में आता है, उस पर गहरा आध्यात्मिक असर पड़ता है और इस प्रकार सब लोग उस समय भारी लाभ उठा सकते हैं। संत सतगुरु अपने धाम में सत्त पुरुष हैं। सत्त पुरुष की मौज अथवा लहर रूप से वह मनुष्य शरीर में अवतार लेते हैं। अंतर में जो प्रार्थनाएं की जाती, हैं वे निज रूप द्वारा सुनी जाती हैं और दया की जाती है।

(71)

The non-experience of internal spiritual help produces, no doubt, at times, great mental dejection and it appears as if emancipation will not be gained, but correctly observed, it is a step towards the attainment of that end, as these mental perturbations, represent the commotion concomitant with the process of internal purification. Without these, the effect of past actions cannot be eliminated (the removal of mental impurity is a necessary condition for the manifestation of spiritual bliss) and the regeneration and development of the latent force of spirit cannot take place. The refuse of mundane desires has accumulated from time immemorial through innumerable births, and an accusation of impatience may fairly be made if complete purification is expected or insisted upon within such a short time as 6 or 8 years. But assurance based on experience may be safely given that feelings of internal unrest and dissatisfaction are the precursors to showers of spiritual bliss and mercy, and as such their acrid results should not be made the ground of despair; on the other hand, the hope of brighter and happier days should give glimpses of the sweets which lie hidden in the present bitterness. Such adverse circumstances, like a venomous toad which carries a jewel in its head, have their own sweet uses, and in the hope of sure and certain reward, should be undergone with trust and patience.

(७१) अनुवाद

अंतर में पारमार्थिक सहायता का अनुभव न होने से बेशक कभी कभी मन में भारी रंज पैदा हो जाता है और ऐसा मालूम होता है मानो उद्धार नहीं हो सकेगा। लेकिन सही तौर पर देखा जाय तो उसी उद्देश्य की प्राप्ति में यह एक क़दम आगे बढ़ना

Maharaj Saheb with His Satsangis. Babuji Maharaj is second (sitting in the chair) to the right of Maharaj Saheb

महाराज साहब और उनका सतसंग

1902 Maharaj Saheb, in the centre, and Babuji Maharaj on the extreme right (sitting), looking at Maharaj Saheb

Maharaj Saheb with His Satsangis in 1906. Babuji Maharaj is second (sitting) to the left of Maharaj Saheb and is looking at Him.

(ऊपर) महाराज साहब बांकीपुर पटना में सन् १९०२

(नीचे) महाराज साहब सिंध में सन् १९०६

है क्योंकि यह मानसिक व्यग्रता अथवा घबराहट और बे-कली वह हलचल है जो अंतर में सफ़ाई की कार्रवाई के साथ पैदा होती है । बिना इन हलचलों के पैदा हुए पिछले कर्मों का असर नहीं हटाया जा सकता और सुरत की गुप्त शक्ति का जागना और सुधार होना नहीं बन सकता । आध्यात्मिक आनन्द प्राप्त होने के लिए मन की मलीनता का दूर होना ज़रूरी है । सांसारिक वासनाओं का मैल असंख्य जन्म जन्मांतरों से, अति प्राचीन काल से, इकट्ठा हो रहा है और छः सात वर्ष के अल्प समय में पूरी सफ़ाई हासिल करने की आशा रक्खी जावे या उस पर ज़ोर दिया जावे तो फिर बे-सबरी की तोहमत[1] तुम पर लगाना ग़ैर-वाजिब न होगा । बिला किसी ख़ौफ या डर के, यक़ीन दिलाया जा सकता है कि अंतर में बे-कली और घबराहट और अशांति का मालूम होना पारमार्थिक आनन्द और दया की वृष्टि का अगुआ है । इस हैसियत से उनके (बे-चैनी और अशांति के) कड़वे नतीजे, ना-उम्मीदी की वजह न होने चाहिए । इसके विरुद्ध, अधिक सुख और आनन्द के दिन आवेंगे, इस बात की आशा से मिठास की झाँकी दिखाई देनी चाहिए जो कि इन मौजूदा तकलीफ़ों में छिपी हुई है । इस तरह की उलटी हालतों में विशेष मधुर फल उसी प्रकार रक्खे हुए हैं जैसे कि ज़हरीला मेंडक अपने सिर में मणि धारण किए रहता है । इस आशा से कि इनका इनाम निश्चित और पक्का है, इन (उलटी हालतों) को धीरज और सब्र के साथ झेलना चाहिए ।

(72)

The Supreme Merciful Father will, it is hoped, kindly continue the work of salvation He has begun, and people will continue to receive the spiritual benefit as hitherto. He is, as before, taking care of the congregation of which He Himself laid the foundation, and proper steps will surely be taken at proper time for its expansion and development. But all members thereof should take warning that they should not drag in worldly feelings in their devotional relations and be blinded by the non-liberal ideas that have degenerated other religions. In a sincere and liberal spirit, the mercy and grace of the Supreme Father should be sought for within, and the progress of devotion should be carefully judged by its results, proper remedies being resorted to if they are not satisfactory.

(७२) अनुवाद

परम दयालु पिता ने उद्धार की जो कार्रवाई शुरू की है, उम्मीद है कि दया से उसे जारी रक्खेंगे और अब तक जिस प्रकार जीवों को परमार्थी लाभ मिला है, मिलता रहेगा । पहले की तरह उस सतसंग की जिसकी कि बुनियाद स्वयं उन्होंने डाली थी,

(१) दोष

आप सम्हाल कर रहे हैं। उसके प्रसार और वृद्धि के लिए निश्चय ही उचित समय पर उचित उपाय किये जावेंगे। लेकिन सतसंगियों को चेतावनी दी जाती है कि परमार्थ में दुनियादारी न मिलावें और पक्षपात की भावनाओं (विचारों) से जिनसे कि अन्य धर्मों का पतन हुआ है, अंधे न बनें। सच्चे और शुद्ध भाव से अंतर में परम पिता की मेहर और दया माँगनी चाहिए, और अभ्यास कैसा बन रहा है, इस बात का विचार उसके नतीजों से करना चाहिए। अगर नतीजे क़ाबिल इतमीनान न हों तो मुनासिब जतन करने चाहिए।

(73)

I know nothing about the rumour relating to the declaration of a Sant Sat Guru in the end of this or beginning of next year. But I do not suppose He will declare Himself in a formal way on some day appointed for the purpose. I believe His manifestation will be gradual.

(७३) अनुवाद

इस कथन के विषय में कि इस वर्ष के अंत में अथवा अगले वर्ष के आरंभ में संत सतगुरू प्रगट होंगे, कुछ नहीं कहा जा सकता। यह बात मानने योग्य नहीं कि इस काम के लिए कोई दिन मुक़र्रर किया जावेगा और उस दिन संत सतगुरु विधिवत् स्पष्ट रूप से अपने प्रकट होने की घोषणा करेंगे। बल्कि विश्वास करने योग्य तो यह है कि वह धीरे धीरे प्रकट होंगे।

(74)

The portion of my letter.........quoted by you refers to the unbecoming conduct of some Satsangis, not especially in any particular place, but which might manifest itself anywhere when worldly feelings actuate their relations with each other and with the Supreme Being. Broadly speaking, this consists in asking for or desiring any worldly object or sensual pleasure or name and fame, other than that necessary for carrying on ordinary avocation and livelihood, and mixing such thoughts, whether expressed or implied, with the devotional prayers. If such feelings are not guarded against carefully, they will constitute a mental habit and over-ride true devotion in which the only desire should be to approach the Supreme Being, for His sake only, and to love Him for Him alone. The mental evils are subtle and unperceived ; lulling religious vigilance with plausible justification, they divert the true devotional current in other directions, and thus frustrate the practice of true internal devotion. All motives of actions and thoughts should, therefore, be carefully examined constantly, and the various defects inherent in the mind, carefully noted. Such

vigilant analysis will, Supreme Father helping, gradually eradicate the evil tendencies of mind and develop true devotion with its attendant ineffable bliss. An absence of such watch has degenerated other religions, and this I referred to in my previous letter to be guarded against.

(७४) अनुवाद

सतसंगियों के ना- मुनासिब बर्ताव के बारे में जो कहा गया था, उससे मतलब किसी ख़ास जगह के सतसंगियों से नहीं है । अगर सतसंगियों का पारस्परिक सम्बन्ध, और भी उनका मालिक से सम्बन्ध, दुनियावी ग़रज़ और मतलब से क़ायम हुआ है तो ऐसा ना-मुनासिब बर्ताव कहीं भी देखने में आ सकता है । मोटे तौर पर कहा जावे तो मामूली काम काज और आजीविका के लिये जो ज़रूरी हो उसके अतिरिक्त सांसारिक पदार्थों को या इन्द्रियों के विषय भोगों को और नामवरी को माँगना या उनकी इच्छा रखना और इस प्रकार की भावनाओं को, स्पष्ट रूप से या किसी ओझले से, पारमार्थिक प्रार्थनाओं के साथ मिलाना, ना-मुनासिब बर्ताव में दाख़िल है । अगर इस तरह की वृत्तियों को होशियारी के साथ न दबाया या रोका जावेगा तो मन को उन्हीं की आदत पड़ जावेगी और वे सच्ची भक्ति को जो केवल मालिक के लिये मालिक से मिलने की और मालिक ही के लिये मालिक से प्रेम करने की अभिलाषा से होनी चाहिए, दबा देंगी । मन के अन्दर की बुराइयां झीनी होती हैं । उनका पता नहीं चलता । ऐसी समझौती दे कर कि अमुक कार्य सही और दुरुस्त है, वे पारमार्थिक जागरुकता को झूठी तसल्ली से शांत कर देती हैं और भक्ति की धारा को अन्य दिशाओं में मोड़ देती हैं और इस प्रकार सच्ची अन्तरमुख कार्रवाई को निष्फल कर देती हैं । कौन कार्रवाई किस ग़रज़ से की जाती है और किस ख़याल के पीछे क्या मतलब धरा हुआ है इसकी परख पहचान, इसलिए, होशियारी के साथ बराबर करते रहना चाहिये और अनेक प्रकार के विकार जो मन में रहते ही हैं, उनको ग़ौर से देखते रहना चाहिए । इस प्रकार ख़बरदारी के साथ चौकीदारी रखने से, मालिक की दया हुई तो, धीरे, २ मन की बुरी प्रवृत्तियां दूर होती जावेंगी और सच्ची भक्ति बढ़ती जावेगी और उसके साथ वह आनन्द प्राप्त होगा जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता । इस तरह की चौकसी न रहने या न रखने से अन्य धर्म और मज़हब ख़स्ता-हाल[१] हो गए हैं । इससे बचना चाहिए।

(75)

Hope the Supreme Father will take care of the children during the prevalence of famine and plague and bring them out spiritually benefited through the passage of these calamities.

---

(१) दुर्दशा-ग्रस्त ।

(७५) अनुवाद

उम्मीद है कि अकाल और प्लेग से परम पिता अपने सेवकों की रक्षा करेंगे और इन आपत्तियों के द्वारा उनको परमार्थी लाभ प्रदान करेंगे ।

(76)

Hope and pray to Supreme Father to help you in combating the evil desires. The past *Karmas* are not soon eradicated, without producing to some extent their evil effects, and only gradual disappearance, or rather for some time, subsidence only, takes place. However, if you go on with your devotion regularly to the best of your exertion and attend the Satsang, some help will be received thereby.

(७६) अनुवाद

नुक़सान पहुँचाने वाली इच्छाओं और वासनाओं से जूझने में, उम्मीद है और प्रार्थना की जाती है कि परम पिता तुम्हारी मदद करेंगे । कुछ अंश तक अपने बुरे असर पहुँचाये बिना पिछले कर्म जल्दी नहीं कट सकते । वह धीरे धीरे ही कटते हैं बल्कि कुछ समय के लिए ऐसा मालूम होता है मानो सिर्फ़ उनका ज़ोर हलका हुआ है । अगर तुम जितना बने उतना नियम से अभ्यास और सतसंग करते रहोगे तो उससे कुछ मदद मिलेगी ।

(77)

Eventually, of course, spiritual benefit is always accorded by the Gracious Supreme Father to all His children, whatever the outward difficulties and troubles they may be in; and in that consideration you may firmly rest assured that nothing but spiritual advantage would accrue from your present condition, but it is, of course, for the time being, very dejecting and in some instances unbearable. However, considering the mercy of Supreme Father witnessed in innumerable cases, you should prop up your failing courage and, abiding by His *Mauj*, patiently bear what He is pleased to ordain.

(७७) अनुवाद

बाहर में जीव कैसी ही दुख तकलीफ़ की अवस्था में हो, दयालु परम पिता हमेशा अपने बच्चों को आध्यात्मिक लाभ पहुँचाता है । इसलिये तुमको दृढ़ विश्वास और निश्चय रखना चाहिये कि तुम्हारी मौजूदा हालत से भी तुम्हें अंत में आध्यात्मिक लाभ

की ही प्राप्ति होगी। हां, जैसी हालत गुज़र रहीं है वह कभी २ बड़ी ना-उम्मीदी पैदा कर देती है और बर्दाश्त से बाहर हो जाती है। लेकिन परम पिता की दया के परचों को, जो समय २ पर अनेक भक्तों को मिले हैं, याद कर करके तुम्हें हिम्मत रखना चाहिये और मौज से जो कुछ हो, उसे धीरज के साथ बर्दाश्त करना चाहिये।

(78)

Sickness and other attendant difficulties or other troubles are no doubt the outcome of our past actions, but the Supreme Father's grace and mercy are present when they overtake His children and considerably mitigate their severity, and even in the event of the worst taking place, viz., death, the last moment is specially illumined by the grace of the Supreme Father, which leaves its perceptible traces on the countenance of the dying person. The sting of the plague would thus, as it were, be broken off, even, if a true case of it were to occur among Satsangis; but generally a disease so infernal as plague is not allowed to enter the family circle of a Satsangi, and if past *Karams* rendered its ingress inevitable, it is more or less transformed into some other disease. The only advice and sympathy that we can offer in the matter are, therefore, that we should abide by the *Mauj* of the Supreme Father Huzur Maharaj with trust and patience.

(७८) अनुवाद

बीमारी और उसके साथ पैदा होने वाली दूसरी मुशकिलें या तकलीफ़ें बे-शक पिछले कर्मों के फल से आती हैं। लेकिन जब वे भक्तों पर आती हैं तो परम पिता की मेहर और दया शामिल रहती है और उनकी सख़्ती को बहुत कुछ कम कर देती है और अगर बुरी से बुरी घटना भी घटित हो जावे यानी मौत हो जावे तो आख़िर वक़्त में परम पिता की दया मरने वाले की रूह (सुरत) को मुनव्वर (प्रकाशित) कर देती है जिसका दृष्टिगोचर चिन्ह उसके चेहरे पर दिखलाई देता है। अगर सतसंगियों में प्लेग आ भी जावे तो इस तरह उसका डंक तो मानो तोड़ ही डाला जावेगा। लेकिन साधारणतया प्लेग जैसी घातक बीमारी सतसंगी के कुटुम्ब में नहीं आने दी जाती है और अगर पिछले कर्मों से उसका आना अवश्यम्भावी ही हो तो वह कमोबेश दूसरी बीमारी में बदल दी जाती है। इसलिए इस विषय में जो सलाह या आश्वासन दिया जा सकता है वह केवल यही है कि विश्वास और धीरज के साथ परम पिता हुज़ूर महाराज की मौज से मुआफ़कत करना चाहिए।

(79)

Go on with your devotion regularly, leaving the rest to the *Mauj* of Supreme Father who will take care of your rectification.

(७९) अनुवाद

नियम से अपना अभ्यास करते रहो। बाक़ी परम पिता को मौज पर छोड़ दो। वे तुम्हारी दुरुस्ती के लिए देख भाल करेंगे।

(80)

The Supreme Father must have graced his spirit at the moment it was leaving the mortal frame, and showered great mercy upon him, but people do not often take this view of the matter and consider that the protecting hand of the Supreme Father was not intruded otherwise such an untimely occurrence would not have been allowed to take place. In the hour of calamity, grief naturally gives rise to such thoughts, but if reason is allowed to prevail it will soon appear that the cause of despondency is not well founded and that we cannot accuse the Supreme Father for want of protection of our welfare. The Radhasoami Faith certainly declares that the *Karams* of its devotees will be eradicated and that their effects will also be mitigated, but the Supreme Father would certainly render Himself liable to the accusation of inconsistency and partiality, if in the case of Satsangis, He suspended the action of *Karmic* laws which otherwise were allowed to have their free course. The past *Karams* will have, therefore, to be undergone before they are eliminated, but their effects, although it may not be apparent to us for the time being, will be mitigated.

(८०) अनुवाद

चोला छूटने के वक़्त परम पिता ने अवश्य उसकी सुरत की संभाल और उस पर महान दया की वर्षा की होगी। लेकिन लोग अक्सर इस पहलू पर ग़ौर नहीं करते और उलटा यह ख़याल करने लगते हैं कि मालिक ने रक्षा का हाथ नहीं बढ़ाया, वरना ऐसी अ-सामयिक घटना न होने पाती। संकट के समय दुख तकलीफ़ से क़ुदरती तौर पर इस तरह के ख़्याल उठते हैं, लेकिन अगर समझ बूझ को काम में लाया जावे तो जल्द मालूम होगा कि ना-उम्मीदी की वजह सही नहीं है और इस तरह का दोष मालिक पर नहीं लगाया जा सकता कि हमारे हित की रक्षा नहीं की गई। राधास्वामी मत बा-ज़ाब्ता[1] और वाज़ह[2] तौर पर आम ऐलान[3] करता है कि उसके अनुयाइयों के कर्मों का नाश होगा और कर्मों के असर में भी कमी की जावेगी। लेकिन कर्मों के भुगतान के क़ायदों के मुआफ़िक़ जो होना चाहिए उसे सतसंगियों के लिए बंद कर दे तो उस हालत में मालिक पर बे-उसूली और पक्षपात का इल्ज़ाम[4] निश्चय करके लगाया जा सकेगा। इसलिए कर्मों का नाश होने से पहले उनका फल भोगना पड़ेगा। लेकिन उनके भुगतान में जो दुख तकलीफ़ व्यापती है उसमें कमी कर दी जावेगी, चाहे उस वक़्त हमको ऐसा मालूम न पड़े।

---

(१) जो नियमानुकूल हो (२) स्पष्ट। (३) घोषणा। (४) दोष।

(81)

The sad occurrence which has taken place at Karachi is not exceptional, among other Satsangis also bereavements have taken place. In Allahabad several families have had cases of death, but considering them as the result of the pre-ordained command, they have been accepted with patience and trust in the mercy of Supreme Father, and a similar attitude should be adopted by Satsangis elsewhere. Just as Radhasoami Faith and the Sant Sat Guru do not promise affluence to persons who may accept that Faith, similarly it is a misapprehension to consider that all accidents and ups and downs of life will be prevented. They have also their necessity for good results, otherwise all animate beings who are also the particles of the Supreme Father would not have been subjected to them. For these considerations, the only sympthatic advice that I can offer under the circumstances, is to bear the affliction with patience and trust, otherwise, without any result, unnecessarily great pain and sorrow will have to be undergone.

(८१) अनुवाद

कराची में जो दुःखद घटना हुई है वह कोई ग़ैर-मामूली[१] नहीं है। अन्य सतसंगियों पर भी प्रिय जनों की मृत्यु से वियोग का दुख आया है। इलाहाबाद में कई कुटुम्बों में मौतें हुई हैं। लेकिन मालिक की यही मौज और हुकुम था, ऐसी समझ धारन करके परम पिता की दया में विश्वास रखते हुए उनको धीरज के साथ बर्दाश्त किया गया है। दूसरी जगहों पर भी सतसंगियों को ऐसी धारणा करनी चाहिए। जिस प्रकार राधास्वामी मत और संत सतगुरु उन लोगों को जो राधास्वामी मत में शामिल हों, धन दौलत का लालच नहीं दिलाते, उसी प्रकार यह ख़्याल करना ना-समझी है कि ना-गहानी[२] बलाएं[३] और ज़िंदगी की ऊँच नीच हालतों को आने से रोक दिया जावेगा। अच्छे नतीजों के निकलने के लिए उनकी भी जरूरत है. वरना कुल जीव धारियों के लिए, जो कि वे भी मालिक की अंश हैं, ऐसी हालतें क्यों रवा[४] रक्खी जातीं? इन सब बातों का विचार करते हुए दुःख तकलीफ़ को धीरज और विश्वास के साथ बर्दाश्त करना चाहिए, वरना बे-कार दुख तकलीफ़ झेलना पड़ेगा और कोई अच्छा नतीजा न निकलेगा।

(82)

The Supreme Merciful Father is watching the interests of us all and consistent with the laws which regulate the elimination of *Karmic* effects,

(१) असाधारण। (२) अचानक आने वाली। (३) दुःख। कष्ट। (४) उचित।

He is helping us in the attainment of purification, mitigating to the utmost limit the severity of their action. With trust and patience, go on with your practice as much as you can and leave the rest to His *Mauj.*

(८२) अनुवाद

परम पिता हम सबों के हित की सँभाल कर रहे हैं। कर्म कटने की व्यवस्था के जो नियम हैं उनको क़ायम रखते हुए कर्म फल की सख़्ती जहाँ तक हलकी और कम की जा सकती है, उतनी करते हुए परम पिता हम सबको निःकर्म अवस्था प्राप्त करने में मदद दे रहे हैं। धीरज और प्रीत प्रतीत के साथ जितना बने अभ्यास करते रहो और बाक़ी मौज पर छोड़ दो।

(83)

The position of a *Sadh* is no doubt very high, and He can do much towards the regeneration of humanity, but it is incorrect to say that henceforth He is to replace *Sants,* and that *Sants* and *Param Sants* will not make their advent on this earth. The final regeneration and emancipation can be only effected by a *Sant,* and with this object, He will certainly appear sooner or later.

(८३) अनुवाद

साध का दर्जा निस्संदेह बहुत ऊँचा है और जीवों की उद्धार की कार्रवाई के सिलसिले में वह बहुत कुछ कर सकते हैं। लेकिन यह कहना ग़लत है कि अब से आइन्दा वह संतों की जगह ले लेंगे और इस पृथ्वी पर संत और परम संत न आवेंगे। पूरी मुक्ति और उद्धार तो केवल संतों द्वारा ही हो सकता है और इस उदेश्य की पूर्ति के लिए देर अबेर संत अवश्य पधारेंगे।

(84)

The outward conduct of a *Sadh* is unimpeachable and without a single blemish. They are not implicated in unbecoming worldly affairs and do not directly or indirectly announce themselves to be *Sadh.* People who are quite willing to be worshipped, and in fact, are secretly courting this and are at once ready to assume the title of *Sadh,* are charlatans, and from what I have heard of—, and the way he has been behaving, I am constrained to say that he belongs to this class of pretenders, and is not even fit to be called a Satsangi.

(८४) अनुवाद

साध की ज़ाहिरा रहनी गहनी निर्दोष होती है, बिना एक भी दाग़ धब्बे के। वह दुनिया के नाक़िस रगड़ों झगड़ों में नहीं फँसते। चाहे साफ़ साफ़ सीधे सीधे और चाहे घुमाव फेर से, वह अपने को साध नहीं कहते और न ज़ाहिर करते। वे लोग जो साध कहला कर अपने को पुजवाने के लिए तैयार बैठे हैं बल्कि हक़ीक़त में गुप्त रीति से ऐसा कर रहे हैं, चांडाल और धूर्त हैं। वे सतसंगी कहलाने के लायक़ भी नहीं हैं।

(85)

Do not be dejected. The Merciful Supreme Father will gradually help you and purify your mind. It is a good sign although painful, that after going in bad ways, you feel contrition. Always do so. Sins are ever pardoned by sincere and true compunction.

(८५) अनुवाद

धीरज मत छोड़ो। परम दयालु पिता धीरे धीरे तुमको मदद देंगे और तुम्हारे मन को निरमल कर देंगे। ख़राब रास्ते जाने के बाद अफ़सोस और पछतावा होना, अगर्चे पुर दर्द[1] है मगर यह अच्छी निशानी है। हमेशा पश्चात्ताप करो। दिल से सच्चा पछतावा करने से गुनाह हमेशा मुआफ़ हो जाते हैं।

(86)

It appears that the old impressions—the prenatal ones—are still very strong in you, and the internal disturbances at the time of devotional practice, mentioned by you, are due to them. The only remedy for their eradication, which must necessarily be gradual, is the mental, or at times, articulate repetition of the Holy Name RADHASOAMI in the manner explained in *Prem Patra,* at times of devotion, and frequent repetition for short periods at other times when you are engaged in worldly affairs. If you follow this for about six months without intermission, I think, Supreme Father willing, you might feel internal benefit.

(८६) अनुवाद

ऐसा मालूम होता है कि तुम्हारे अंदर पुराने संस्कार, पिछले जन्मों के संस्कार, अभी बहुत गहरे और मज़बूत हैं। और भजन में जो अन्तर में विघ्न उपस्थित होते हैं

(१) दर्द से भरा हुआ।

जिनके बारे में तुमने लिखा है, वह उन्हीं संस्कारों के कारण हैं। उनके दूर करने का (और वह धीरे धीरे दूर होंगे) एक मात्र उपाय राधास्वामी नाम का मन में चुपचाप या कभी कभी ज़बान से बोल कर सुमिरन करना है जैसा कि अभ्यास के समय करने के लिये प्रेम पत्र में बतलाया है। और जब कि दुनियावी काम काज में लगे हो, अक्सर थोड़ी २ देर के लिये सुमिरन कर लेना चाहिये। अगर बराबर छः महीने तक इस प्रकार करते रहोगे तो मालिक की मौज से तुमको अंतर में कुछ लाभ होता मालूम पड़ेगा।

(87)

As to your worldly affairs, I would only observe that the life of a pleader is a very busy one and not suited to devotional practice. However, if you consider that you will be able to straighten and smooth temporal matters by the adoption of this profession, you may do so.

(८७) अनुवाद

तुम्हारी सांसारिक प्रवृत्तियों के संबंध में केवल इतना ही कहना काफ़ी है कि वकील का पेशा बड़ी धुनाधुनी[1] का है और हमारे मत के अभ्यास के लिये अनुपयुक्त[2] है। लेकिन अगर तुम्हारी यह धारणा है कि वकालत करके तुम दुनियावी मामलों में कुछ सहूलियत हासिल कर सकोगे तो तुम्हें अख़्तियार है, करो।

(88)

Sorry to hear of the illness you are suffering from, and the great pain you have to undergo in consequence, but, as you already remark, this is due to past *Karam*, which cannot be eliminated without giving some trouble. But you may rest assured that what would have been intolerable sufferings, and would have been spread over a protracted period, have been much mitigated and considerably reduced in duration, not to mention the great spiritual benefit that is resulting from concomitant purification. On these considerations, it seems desirable that you should patiently bear your sufferings with trust and hope, and also, if possible, with gratitude.

(८८) अनुवाद

बीमारी की वजह से जो भारी तकलीफ़ उठानी पड़ती है, उसका हाल मालूम कर के अफ़सोस हुआ। लेकिन, जैसा कि तुम कहते हो, यह सब

---

(१) हर समय काम में लगे रहना। (२) अयोग्य।

पिछले कर्मों की वजह से है जो कि बिना कुछ दुख दिए नहीं कट सकते। लेकिन तुमको इस बात का विश्वास रखना चाहिए कि जिन कर्मों के भुगतान में असह्य पीड़ा होती और बहुत लम्बा समय लगता उनको बहुत हल्का कर दिया गया है और उनके भुगतान की अवधि बहुत कम कर दी गई है। उसके साथ साथ निर्मलता प्राप्त होने से जो परमार्थी लाभ हो रहा है उसकी तो कोई बात ही नहीं। इन सब बातों का विचार करते हुए यही मुनासिब मालूम होता है कि तुमको विश्वास और शुकर गुज़ारी और बेहतरी की उम्मीद के साथ उनको बर्दाश्त करने की कोशिश करनी चाहिए।

(89)

The sound of thunder you hear is not the one resounding in *Trikuti*; that is so attractive and powerful that the most distant sound of it will concentrate and draw up the mind and spirit like iron particles attracted by a magnet. What you hear is a distant echo or image of that sound, and even as such, it is a sign of mercy and grace. You may continue to listen to it while it is coming but at the same time you should be seeking for the sounds of bell and conch which will, after some effort, gradually manifest themselves, and should, when heard, be paid greater attention to than the sound of thunder.

(८९) अनुवाद

बादल की गरज जो तुम सुनते हो, त्रिकुटी के स्थान की नहीं है। असली बादल की गरज में इस क़दर आकर्षण और शक्ति होती है कि बहुत दूर से भी सुनाई दे तो मन और सुरत का सिमटाव खिंचाव और चढ़ाई उसी प्रकार होने लगती है जिस तरह कि लोह कण चुंबक की ओर खिचते हैं। जो आवाज़ कि तुमको सुनाई देती है, वह असली शब्द की छाया है जो दूर से आती हुई मालूम होती है। पर इसे भी दया और मेहर का निशान समझना चाहिये। अगर यह आवाज़ सुनाई दे तो तुमको सुनना चाहिये। लेकिन घंटे और शंख की भी छांट और तलाश करनी चाहिये, जो कि कोशिश करने पर धीरे २ सुनाई देने लगेगी। और जब वह सुनाई दे तो बादल की गरज के मुक़ाबले, उसमें चित्त को ज्यादा लगाना और जोड़ना चाहिये।

(90)

You should try to attend Satsang as often as you conveniently can. If it is not possible to leave your house alone more often than twice a week, you may attend only twice as you propose, devoting yourself to the perusal of the holy books at home on other days.

(९०) अनुवाद

जब २ सहूलियत से सतसंग की हाज़िरी दे सको, दो। यदि सप्ताह में दो बार से अधिक घर छोड़ने में हर्ज हो तो सप्ताह में सिर्फ़ दो ही दिन सतसंग जाया करो बाक़ी और दिन अपने घर पर ख़ुद बानी और बचन का पाठ कर लिया करो।

(91)

I am really very sorry to hear of the declining state of your health which cannot but produce a depressing effect on your mind, and which certainly must be a cause of anxiety to your friends and relatives. But you may rest assured that whatever is happening, is to your eventual spiritual interest, and nothing will hinder your spiritual progress, although it may not be apparent to you. Do not exercise yourself, if, on account of delicate health, you cannot perform devotional practice or get spiritual pleasure. The Supreme Merciful Father will recompense you for this apparent loss.

(९१) अनुवाद

तुम्हारी गिरती हुई तन्दुरुस्ती का हाल मालूम करके मुझे बहुत अफ़सोस हुआ। इससे ज़रूर तुमको निराशा पैदा होती होगी और घरवालों व मित्रों को भी सोच फ़िकर होता होगा। लेकिन इस बात का निश्चय और विश्वास रक्खो कि जो कुछ अवस्था व्याप रही है, उसमें अंत में आध्यात्मिक लाभ की प्राप्ति कराने की मौज है। और आध्यात्मिक उन्नति में कोई विघ्न बाधा न आने दी जावेगी, यद्यपि इसकी तुमको ख़बर न पड़े। तबियत कमजोर होने के कारण अगर अभ्यास में न बैठ सको या अभ्यास का रस न ले सको तो कोई हर्ज नहीं, ज़्यादा ज़ोर मत दो। दयालु परम पिता तुम्हें अपनी ओर से दात बख़्शेंगे।

(92)

I am sorry to hear an account of —'s disturbed state of mind. Similar instances have occurred at other places too, and it appears that it is due to the perverted influences of *Kal*, coupled with some secret desire on the part of the person concerned for personal aggrandisement. Their conscience is at times pricked by their folly but they are not able to subdue their perverted ideas at once.

(९२) अनुवाद

मन की डावाँडोल हालत के बारे में जान कर अफ़सोस हुआ। दूसरी जगहों से भी ऐसी ख़बरें आई हैं। इसका कारण अपनी ताक़त, मर्तबा और दौलत बढ़ाने की गुप्त चाह है। सही रास्ते से हटा कर ग़लत रास्ते पर डालने की, यह काल की चालें हैं। अपनी बेवक़ूफ़ी का उनको कभी २ एहसास होता है, लेकिन वह अपने नाक़िस ख़यालात को फ़ौरन दबा नहीं सकते।

(93)

Radhasoami Dayal sees what is going on but He is too high and grand to interfere with the tendencies and desires of the parties concerned in an abrupt manner. Of course, correction will be applied to them in due course and they will be saved from ultimate loss. All persons should, therefore, take a warning from these sad instances and should entertain a genuine desire to be saved from the fate of these persons.

(९३) अनुवाद

जो कुछ हो रहा है, राधास्वामी दयाल सब देख रहे हैं। लेकिन वे इतने ऊँचे और महान हैं कि किसी की इच्छाओं और प्रवृत्तियों में एकाएकी दख़ल नही देते। उचित समय पर उनकी दुरुस्ती और गढ़त होगी और अंत में नुक़सान से बचा लिए जावेंगे। इसलिये इन दुःखपूर्ण उदाहरणों से सबको चेतावनी लेनी चाहिये और इन लोगों की सी हालत से बचा लिए जाने की सच्ची चाह उठानी चाहिए।

(94)

I am glad to hear that you can recall the image of Huzur Maharaj whenever you desire. This is a sign of mercy of Supreme Father and it will help at the time of devotion.

(९४) अनुवाद

यह ख़ुशी की बात है कि जब तुम चाहो तभी तुमको हुज़ूर महाराज के दर्शन हो सकते हैं। यह मालिक की दया का निशान है और इससे अभ्यास में मदद मिलेगी।

(95)

The sounds mentioned by you also indicate that your practice is being satisfactorily performed. The metallic sound will gradually change itself into

the sound of a bell. Meanwhile you should continue to listen to it, as also to the sound of a drum, if they come from the right side, or from the upper middle portion of your forehead. The awakening of internal spiritual forces or the opening of the spiritual eye, correctly speaking, can only be attained when the stage of death has been passed, a matter which should be considered to have been very expeditiously accomplished if it is attained even after a devotional practice of 30 years or of one or two births; but the concentration and exaltation of spirit during practice is no mean luck and if this has been bestowed. we should consider ourselves to be very fortunate, and should continue our practice with trust and patience.

(९५) अनुवाद

जो आवाजें तुमको सुनाई देती है उससे ज़ाहिर है कि तुम्हारा अभ्यास ठीक तौर से बन रहा है। धात के बर्तन पर चोट मारने से जैसी आवाज होती है वह धीरे२ घंटे की आवाज़ में बदल जावेगी। तब तक इसी आवाज़ को सुनते रहना चाहिये। ढोल की आवाज़ भी सुनना चाहिये। बशर्ते कि वे दाहिनी ओर से आती हों या ऊपर से मस्तक के मध्य से। अंतरमुख सुरत-चैतन्य की शक्तियों को जगाना अथवा अंतर की आंख खुलना, सही तौर पर प्राप्त हुआ केवल तभी समझा जा सकता है जब कि मृत्यु की अवस्था पार कर ली गई हो और यह अवस्था अगर ३० वर्ष अथवा एक दो जन्म के अभ्यास से भी प्राप्त हो जावे तो समझना चाहिये कि बहुत जल्द हो गया। लेकिन अभ्यास में सिमटाव और सुरत की चढ़ाई हो तो यह भी कोई कम सौभाग्य की बात नहीं है। अगर दया से ऐसा होता हो तो अपने को भाग्यवान समझना चाहिये और धीरज और विश्वास के साथ अभ्यास जारी रखना चाहिए।

(96)

The special reason of the advent of Supreme Father Radhasoami Dayal in this world was to reclaim humanity involved in endless troubles. He will surely help, therefore, those who earnestly desire to approach Him and to take His shelter. He will also manifest Himself in human form whenever it is in the interests of us all. Meanwhile, we should take His internal protection and go on with our practice.

(९६) अनुवाद

राधास्वामी दयाल के इस दुनिया में पधारने का ख़ास कारण कभी शेष न होने वाले दुःखों में पड़ी हुई मानव जाति का उद्धार करना था। इसलिये जो उनसे मिलना और उनकी सरन लेना चाहता है उसकी वे ज़रूर मदद करेंगे। जब २ हमारे हित के लिए ज़रूरी होगा तभी वे मनुष्य स्वरूप में प्रकट भी होंगे। बीच की अवधि में हमको चाहिये कि अपना अभ्यास और अंतर में उनका सहारा ढूँढ़ने की कोशिश करते रहें।

(९७)

आप किसी तरह पर अफ़सोस या फ़िक्र दिल में न लावें बल्कि राधास्वामी दयाल की दया को बराबर परखती रहें कि वह किस तरह अपने बच्चों की ख़बरगीरी और ख़याल फ़रमा रहे हैं और जहां तक बने उनके चरन कँवल में प्रीति और प्रतीत को बढ़ाती रहें और जो कुछ कार्रवाई अभ्यास की बने, वह किये जावें। राधास्वामी नाम का सुमिरन ज़्यादा करें क्योंकि इससे जल्द सफ़ाई मन और सुर्त की हासिल होगी और विघ्न दूर होंगे। घबराहट की हालत में धीरज रखना चाहिये और ख़यालात फ़ासिद दिल में न लाना चाहिये, इस क़िस्म के कि चोला छूट जावे वग़ैरा। और आपकी जो ख़्वाहिश यहाँ आकर सतसंग करने की है सो वह अच्छी है। मगर इसको राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ देना चाहिये। जिस वक्त मुनासिब होगा उस वक़्त आप से आप इस बात का बंदोबस्त हो जावेगा और वहां के सतसंग में अगर मौक़ा मुनासिब आपके शरीक होने का हो तो इख़्तयार है, वरना आप ख़ुद विचार २ कर बानी का पाठ नेम से किया करें कि इससे थोड़ा बहुत फ़ायदा सतसंग बाहरी का हासिल होता रहेगा और अंतर का सतसंग अभ्यास है। जो कुछ बने वह किया करें। राधास्वामी दयाल की सरन दिल में मज़बूत रक्खें।

(97) Translation

You need not, in any way, feel worried or sorry. You should perceive the grace of Radhasoami Dayal as to how He takes care of and protects His children. As far as you can, go on enhancing love for and faith in the Lotus Feet. Perform Abhyas as much as you can. Greatest emphasis should be laid on the Sumiran of the Holy Name RADHASOAMI, for it will effect purification of the mind and spirit quickly, and remove obstacles. Whenever you feel restless, you should try to compose yourself. Improper thoughts such as the desire for death etc. should not be entertained. Your desire to live here and attend Satsang is good. But its fulfilment should be left to the Mauj of Radhasoami Dayal. At the proper time this will be arranged of its own accord. Till then you may join Satsang there, if it is proper for you to do so. Otherwise, you should yourself read and recite regularly the holy books, fully comprehending their meaning. This will give you some benefit of Satsang. The internal Satsang refers to the performance of Abhyas. Do whatever is possible. Accept firmly the Saran of Radhasoami Dayal.

(९८)

ऐसे बिरले बड़भागी हैं जिनसे परमार्थ जैसा चाहिये कमाया जाता है और मालिक के चरनों में पूरी और दृढ़ प्रीत प्रतीत आगई हो लेकिन जिन लोगों ने राधास्वामी

दयाल की सच्चे जी से सरन ली है और जैसी तैसी भजन बंदगी जितनी बन सकती है, थोड़ी बहुत करते जाते हैं और अपनी ना-लायकी व निबलता पर झुरते और पछताते रहते हैं, उनका किसी तरह अकाज न होने पावेगा क्योंकि राधास्वामी दयाल ने ख़ुद ज़बान मुबारक से फ़र्माया है—

तुम्हरी चिंता में मन धारी । तुम अचिंत रह धरो पियारा ।।
संशय छोड़ करो दृढ़ प्रीती । और परतीत सँवारा ।।
यह करनी मैं आप कराऊँ । और पहुँचाऊँ धुर दरबारा ।।

इस दया से भरे हुए बचन को महज़ रोचक न समझना चाहिये बल्कि यह शाहंशाही पर्वाना जीव के उद्धार का है । अपना नित्य का अभ्यास सुमिरन ध्यान व भजन का जिस क़दर वक़्त मिले, सच्चे जी से किए जाओ और एक दिन पूरा काम बनने और सच्चा उद्धार होने की निस्बत ज़रा शुबहा मन में न रक्खो । वह जीव की निबलता और कसरों को ख़ूब जानते हैं और उसको धीरे २ ताक़त बख़्श कर और मन की सफ़ाई करके ख़ुद आहिस्ता २ काम बनावेंगे और बना रहे हैं ।

सतसंग का फ़ायदा बेशक बहुत बड़ा है सो उसकी चाह मन में रक्खो और जब डौल बने, करो । अगर मौज से मौक़ा न होगा, वह वहीं अंतरी सहारा बख़्शेंगे ।

(98) Translation

It is only some rare Jivas who apply themselves to Parmarth properly and have full and unshakable love and faith in the holy feet of the Supreme Being. But those too, who have sincerely adopted the Saran (protection) of Radhasoami Dayal and practise devotion and Abhyas to the extent they can, and are repentant and sorrowful at their worthlessness and weakness, will not suffer in any way. For, Radhasoami Dayal has Himself graciously said :-

तुम्हरी चिंता मैं मन धारी । तुम अचिंत रह धरो पियारा ।।
संशय छोड़ करो दृढ़ प्रीती । और परतीत सँवारा ।।
यह करनी मैं आप कराऊं । और पहुँचाऊं धुर दरबारा ।।

Tumhari chinta main man dhari, tum achint rah dharo piyara.
Sanshay chhor karo dradh priti, aur partit sanwara.
Yah karni main ap karaun, aur pahunchaun Dhur Darbara.

Translation :— I am mindful of your welfare. Do not worry. You only engender love in your heart. Dismiss all doubts. Strengthen your love. I will myself help you accomplish your task and take you to the highest mansion.

This Bachan (word) full of Daya, was not said just to give joy and gratification. It is, in fact, the royal command guaranteeing salvation of the Jiva. Go on performing your daily Abhyas of Sumiran, Dhyan and Bhajan with earnestness devoting as much time as you can get. Do not entertain the least doubt about the accomplishment of your task and attainment of true salvation one day. He is well aware of the weakness and shortcomings of the Jiva. Gradually granting him strength and effecting the purification of his mind, He is, by and by, advancing him towards the achievement of his object,

No doubt, the advantage of Satsang is immense. Therefore, cherish the desire for getting an opportunity of attending Satsang, and do so whenever you get an opportunity. If such is the Mauj that no opportunity presents itself, He will grant you internal help and support.

(99)

Allahabad
Ra. Sat Sang 6.6.04

Ra.

My dear ~~Narainji~~ Tej Singh

Your both letters to hand also P. Stamps worth annas 2/4. Your prayers for coming to Allahabad and remaining in the Sat Sang do not go unheeded — You should not lose heart, but should always cheer yourself up with the hope that one day all your prayers will become accomplished facts.

I am glad ~~to~~ learn of your success in the F. A. Examination. Cultivate Faith in and love for the Holy Charans and the Supreme Father will ordain as He deems

fit and proper.

Rs 5/- sent by M.O have been received this day.

With Rs.

Yours Sincerely

Brahm Sankar Misra

R. S.

Allahabad
R. S. Satsang 6. 6. 1904

My dear Tej Singh,

Your both letters to hand, also postal stamps worth annas two. Your prayers for coming to Allahabad and remaining in the Satsang, do not go unheeded. You should not lose heart, but should always cheer yourself up with the hope that one day all your prayers will become accomplished facts.

I am glad to learn of your success in the F. A. Examination. Cultivate faith in and love for the Holy Charans and the Supreme Father will ordain as He deems fit and proper.

Rs.5/- sent by Money Order have been received this day.

With Radhasoami,

Yours sincerely,
Brahm Sankar Misra

(९९) अनुवाद

इलाहाबाद
रा० स्वा० सतसंग ६-६-१९०४

प्रिय तेज सिंह !

तुम्हारे दोनों पत्र मिले। दो आने के टिकट भी मिले। इलाहाबाद आकर सतसंग में रहने के लिये तुम्हारी प्रार्थना की सुनवाई हो रही है। हिम्मत हारने की ज़रूरत नहीं इस उम्मीद में सदा प्रसन्न चित्त रहो कि एक दिन अवश्य ऐसा आवेगा जब तुम देखोगे कि तुम्हारी प्रार्थना मंज़ूर होगई।

तुम एफ०ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण होगए, यह समाचार ज्ञात करके ख़ुशी हुई। चरनों में प्रीत प्रतीत बढ़ाए जाओ। परम पिता जैसा तुम्हारे लिये मुनासिब समझेंगे, वैसी ही मौज फ़रमावेंगे।

पाँच रुपये का मनी आर्डर आज मिला है।

ज़्यादा राधास्वामी।

तुम्हारा सच्चा हितकारी
ब्रह्म शंकर मिश्र

(100)

R. S.

Radhasoami Satsang,
Allahabad 11-7-1905

My dear B. Tulsi Ram,

Your letter with its enclosures to hand. The amount rupees 15 sent by you have also been received. Your prayer is a very laudable one. Lay it internally at the Holy Feet of the Supreme Father and He will grant it when He deems it proper.

With Radhasoami to you all,

I am,
Yours sincerely,
Brahm Sankar Misra

Radhasoami Satsang

Allahabad, 11.7. 1905

My dear B. Tulsi Ram,

Your letter with its enclosures to hand. The amount Rs 15/- sent by you have also been received. Your prayer is a very laudable one. Lay it internally at the Holy Feet of the Supreme Father & He will grant it when He deems it proper.

With R.S. to you all I am

Yours Sincerely

Brahm Sankar Misra

(१००) अनुवाद

रा० स्वा०

राधास्वामी सतसंग

इलाहाबाद ११-७-१६०५

प्रिय बाबू तुलसीराम।

तुम्हारा पत्र और अन्य कागज़ मिले। १५) रुपये भी जो तुमने भेजे, मिल गए हैं। तुम्हारी प्रार्थना बहुत सराहनीय है। अन्तर में परम पिता के चरनों में यह प्रार्थना करो और वह जब मुनासिब समझेंगे, मंजूर करेंगे।

ज़्यादा तुम सबको रा० स्वा०।

तुम्हरा सच्चा हितकारी

ब्रह्म शंकर मिश्र

CHAPTER 6

EXTRACTS FROM

BABUJI MAHARAJ'S LETTERS

TO

SATSANGIS

अध्याय ६

बाबूजी महाराज की चिट्ठियाँ

सतसंगियों के नाम

(१)

RADHASOAMI SATSANG
Allahabad २८-४-२४

बाबू तुलसीराम जी ।

आप सब को हाथ जोड़ राधास्वामी । आपका पत्र ता० १८-४-२४ का बाबू गुरुमौज सरन जी के नाम आया, मिला, जिसका हाल मालूम हुआ । उस पर महाराज दाता बाबूजी साहब ने फ़रमाया कि जिन्दगी में दुख सुख आते ही रहते हैं। पर जो दुख में घबराता नहीं और सुख में सुखी भी नहीं होता, वही मालिक का प्यारा होता है। इसलिये मालिक को हमेशा याद करना चाहिए। वह हमेशा अपने भक्त के अंगसंग रहते हैं और तुम सब विधि पूर्वक मालिक के नाम का सुमिरन करोगे तो वह हमेशा दया करते हैं और करेंगे ।

बाबूजी साहब महाराज दाता, परम पुरुष पूरन धनी स्वामीजी महाराज के सालाना भंडारे पर आगरे पधारेंगे। पर क़रीब १५ पन्द्रह दिन से ज़ियादा वहां न रुकेंगे क्योंकि एक तो वहां तकलीफ़ बहुत दूसरे यहां भी बहुत काम हैं। तुम सब को हाथ जोड़ कर राधास्वामी ।

दास
गुरुदेवदास

आपकी तकलीफ़ का हाल पढ़ कर बहुत अफ़सोस हुआ । राधास्वामी दयाल जरूर सहूलियत बख्शेंगे । राधास्वामी ।

दास
गुरुमौज सरन

(1) Translation

R. S.

Radhasoami Satsang,
Allahabad 28-4-1924

My dear Babu Tulsi Ram Ji,

Radhasoami with folded hands to all of you. Your letter of 18-4-1924, addressed to Babu Guru Mauj Saran Ji, was duly received. Having perused it, His Gracious Benevolence Babuji Maharaj was pleased to observe that pain and pleasure are the concomitants of life in this world. But he who is not upset by pain, nor feels delighted with pleasure, is the beloved of the Supreme Father. Therefore, He should always be remembered. He is always with His devotees. If you all perform Sumiran of the Holy Name of the Supreme Father methodically, He will surely shower His grace upon you as He is always doing.

His Grace Babuji Maharaj will visit Agra on the occasion of the coming annual Bhandara of Param Purush Puran Dhani Soamiji Maharaj. But He will not stay there more than fifteen days. It is very inconvenient to stay there. Also there are many important engagements here.

With hearty Radhasoami to all of you with folded hands,

Your servant,
Guru Deo Das

I was sorry to learn about your trouble. Radhasoami Dayal will certainly grant you ease and facility.

With hearty Radhasoami,

Your servant,
Guru Mauj Saran

The afflicted are dear to the Lord, and are the recipients of His special Grace. They are nearer to the Lord than those who are in affluent circumstances and are free from cares.

Madhav Prasad Sinha

(२)

ऐसा ख़याल करना ग़लत है कि दुख तकलीफ़ का आना, राधास्वामी मत में शरीक होने की वजह से है । यह सब कर्मानुसार होता है । राधास्वामी मत में शरीक

होने का असर तो यह है कि कर्म जल्द और सहूलियत से और जितना मुमकिन हो कम से कम तकलीफ़ व्याप कर कट जायँ। जिसको राधास्वामी नाम पर दृढ़ विश्वास और प्रीत प्रतीत है, उस पर भूत प्रेत देवता इत्यादि का कोई असर नहीं होता है।

(हस्ताक्षर करने से पहले जवाब पढ़ते हुए महाराज ने फ़रमाया, "तंग तो करते हैं।")

(2) Translation

It is wrong to think that afflictions and calamities are due to one's joining the Radhasoami Faith. They are the consequences of Karams. By joining the Radhasoami Faith, Karams are eradicated quickly and easily with the minimum of suffering. Ghosts and goblins, gods, etc., cannot have any influence on one who has unflinching faith and love in the Holy Name RADHASOAMI.

(Before signing this reply Babuji Maharaj observed, "but they do harass".)

(३)

ध्यान के समय रोशनी का दिखाई देना और शब्द का सुनाई देना, ठीक है। इसी प्रकार क्रम २ से होगा। धीरे २ तरक़्क़ी होती है। एक दम शब्द नहीं सुनाई देता है। राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रेम और भक्ति का जागना तथा सरन का दृढ़ होना, यह शब्द सुनाई देने से भी बढ़ कर तरक़्क़ी का निशान है। सुमरन ध्यान ज़्यादा करो। जब उँगली में दर्द हो तब कान में कूँची डाल कर अभ्यास करना चाहिये।

(3) Translation

It is good if light is seen and Shabd is heard occasionally in the practice of Dhyan. Shabd does not become audible all at once. The awakening of love and devotion in the holy feet of Radhasoami Dayal and Saran being firm are signs of greater progress than Shabd becoming audible. Perform Sumiran and Dhyan longer. When fingers begin to ache Abhyas may be performed by plugging the ear (with cotton pad).

(४)

तुमने लिखा कि सुमरन ध्यान करते समय पाँवों में झनझनाहट सी होती है, सो यह किसी क़दर सुरत यानी चैतन्य धार के सिमटने के कारण है। रफ़्ता २ इसे बर्दाश्त करने की ताक़त शरीर में आ जायगी तो फिर तकलीफ़ नहीं होगी। और जिस वक़्त ज़्यादा तकलीफ़ हो, उस वक्त इस काम को मुल्तवी कर दो।

(4) Translation

The numbness and tingling sensation in the legs are due to the withdrawal of the spirit-current, to some extent. Gradually one would be able to endure them. Then there will be no trouble. When pain becomes unbearable the Abhyas should be stopped.

(५)

शरीर की साधारण तन्दुरुस्ती के लिए थोड़ी कसरत करने में कोई हर्ज नहीं है। परन्तु शरीर को हृष्ट पुष्ट और बलवान बनाने के लिए अधिक व्यायाम करना सतसंगी अभ्यासी को मुनासिब नहीं है।

(5) Translation

There is no harm if some physical exercises are taken for the maintenance of normal health of body. But it is not proper for a Satsangi Abhyasi to perform them excessively for making the body very strong.

(६)

कर्मों का भार काटने में ज़रूर राधास्वामी दयाल सहूलियत फ़रमावेंगे और धीरे२ कट जावेगा। इस बात की एहतियात रखनी चाहिए कि आइन्दा ऐसे काम सरज़द न हों जिनसे मालिक नाख़ुश होता है।

(6) Translation

Radhasoami Dayal will surely facilitate the destruction of Karams. Gradually they will be eradicated. Care should be taken not to do what would displease Him.

(७)

इस बात की दृढ़ प्रतीत और निश्चय रखना चाहिए कि राधास्वामी दयाल जीव का हर तरह से निर्वाह फ़रमावेंगे। इसमें कोई संदेह करना ही नहीं चाहिए।

(7) Translation

Have firm faith that Radhasoami Dayal will help the Jiva in every way. No doubt should ever be entertained in this regard.

(८)

भजन में कभी आनन्द, और रस आता है, और कभी बिल्कुल नहीं आता या कम आता है, यही उचित है। जो बराबर एक समान रस हर रोज मिलता रहेगा तो विरह और तड़प नहीं उठेगी। इस सबब से तरक्क़ी बंद हो जावेगी। जब रस कम आवे या बिल्कुल न आवे, उस वक्त सुमरन पर ज़्यादा ज़ोर देना चाहिए।

(8) Translation

Sometimes bliss is experienced in Bhajan, at other times it is not felt at all, or it is felt in a very little measure. This is but proper. For, if bliss and joy are had regularly every day, there will be no yearning and longing. In consequence, the progress will come to a stand still. When there is very little or no bliss and joy, Sumiran should be performed vigorously.

(९)

अगर शब्द अभ्यास करने में छाती में दर्द होता है और शरीर बर्दाश्त नहीं कर सक्ता तो तुम अभी सिर्फ़ सुमरन ध्यान ही करो। सुमरन ध्यान में उम्मीद है, यह अवस्था नहीं होगी। कभी २ शब्द अभ्यास भी कर सक्ते हो। जब दर्द होने लगे और बर्दाश्त न हो सके तब इस अभ्यास को छोड़ दो और सुमरन ध्यान करने लगो। ऐसा करते करते शरीर में बर्दाश्त की ताक़त आ जावेगी और फिर कोई तकलीफ़ नहीं होगी।

(9) Translation

If while performing Shabd Abhyas, pain is felt in the chest, which you cannot bear, you should perform Sumiran and Dhyan only for the time being. It is hoped there will be no such pain in Sumiran and Dhyan. But sometimes Shabd Abhyas may also be practised. Leave it when there is pain which you cannot bear. Then apply yourself to Sumiran and Dhyan. Gradually you will be able to endure. Thereafter there will be no pain.

(१०)

ज़रूरत इस बात की है कि रगड़ के साथ अभ्यास किया जाय। चाहे मन लगे या न लगे, सुमरन ध्यान करते रहना चाहिए। अगर और न बने तो केवल सुमरन ही घंटे घंटे पौन पौन घंटे करना चाहिए।

(10) Translation

What is required is that Abhyas should be performed vigorously, Whether the mind applies or not, Sumiran and Dhyan must be performed regularly. If nothing else can be done, Sumiran alone may be performed for an hour or a little less at a time.

(११)

अक्सर ऐसा होता है कि अभ्यासियों को बिना आसन से बैठे ही शब्द सुनाई देता है। इस तरह् शब्द आने में कोई हर्ज नहीं है। अच्छा है। जब तुम्हारा जी चाहे सुनो और अगर काम काज में लगे हुए हो और उस तरफ़ तवज्जह् न जावे तो न सुनो।

(11) Translation

Sometimes Abhyasis hear Shabd without sitting in the posture of Bhajan. There is no harm in hearing Shabd in this way, rather it is good. If you feel inclined, you should listen to it. And if you are engaged in any worldly work you may not listen to it.

(१२)

जब कभी शब्द बंद हो जावे या गुप्त हो जावे, तब शब्द अभ्यास के ही आसन में बैठे २ नाम का सुमरन करो तो इससे सुरत मन सिमटेंगे और फिर शब्द आने लगेगा।

(12) Translation

Whenever Shabd stops or becomes inaudible, perform Sumiran, sitting in the same posture (of the Shabd Abhyas). By this there would be some abstraction and withdrawal of the mind and spirit, and the Shabd would again become audible.

(१३)

नाम का सुमिरन इस क़दर बढ़ा लेना चाहिए कि जब ख़राब सुपना दिखाई दे, फ़ौरन नाम याद आ जावे और ख़राब सुपना दिखाई देना बंद हो जावे। नाम के सुमिरन पर ज़्यादा जोर देना चाहिए। इसके प्रताप से सब विघ्न रफ्ता २ दूर हो जावेंगे।

(13) Translation

The practice of Sumiran should be increased to such an extent that whenever one has a bad dream, one comes to remember the Holy Name

instantly so that the bad dream vanishes. Great emphasis should be laid on the Sumiran of the Holy Name. All obstacles will gradually be removed by it.

(१४)

संगीत में भोग रस में आसक्ति होने का डर रहता है । अगर इस बात की एहतियात और होशियारी रक्खी जावे कि भोग रस में आसक्ति न होने पावे तो सिर्फ़ थोड़ा सा संगीत सीख लेने में ऐसा चंदां हर्ज नहीं है ।

अगर Music (संगीत) और नाटक, विद्या और रोज़गार के लिए लाज़मी हों तो इनको सीखने में लाचारी है । वरना यह हम पसंद नहीं करते, ख़ास कर नाटक में acting part (पात्र बन कर हिस्सा) लेना ।

(14) Translation

Music is likely to lead to sensual pleasures. If due care is taken against this, there would not be much harm in merely learning a little bit of it.

If one has to learn music, dancing and acting in drama as an art or as a means of livelihood, one has perforce to do so. Otherwise, I do not approve of these, particularly acting.

(१५)

ये तजरुबे ख़ास दया के निशान हैं । एक मर्तबा ऐसे तजरुबे हुए और फिर बंद हो गए, इससे मायूस नहीं होना चाहिए । सुमरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ प्रीत प्रतीत सहित नियम से करते रहना चाहिए । शुरू में प्रीत प्रतीत लाने और बढ़ाने के लिए दया से ऐसे तजरुबे होते हैं जो कि बाद में अभ्यास करने से क़ायम होंगे । इस तरह के मामूली तजरुबात औरत मर्द आपस में एक दूसरे को कह सकते हैं । इसमें चंदां हर्ज नहीं है । लेकिन अगर कभी दया से ग़ैर मामूली तजरुबात हों तो किसी से नहीं कहना चाहिए ।

(15) Translation

These experiences are indications of special grace. One should not be dejected if these experiences do not recur. One must regularly apply oneself to Sumiran, Dhyan, Bhajan and the recitation and reading of holy books with love and faith. For enhancing love and faith, such experiences are granted in the beginning. Later on, these are consolidated by continued application to Abhyas. The ordinary experiences of this kind may be exchanged between wife and husband. There would be no appreciable harm. But, if, by grace, one has extraordinary experiences, one should not disclose them.

(१६)

बाईं तरफ़ काल और माया की धार है। बाईं तरफ़ अगर कुछ सुनाई या दिखाई दे तो बाईं तरफ़ से तवज्जह् हटा लेनी चाहिए। अगर बाईं तरफ़ का विघ्न न बंद हो तो सुमरन या ध्यान करना चाहिए जिससे विघ्न हट जावेगा।

(16) Translation

The curtent of Kal and Maya is on the left. If anything is seen or heard on the left side, attention should be diverted from that side. If the disturbance in the left side does not stop, one should perform Sumiran and Dhyan, and the disturbance will be removed.

(१७)

रोज़ दोनों वक्त जितना बने सुमरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ करते रहो। सुमरन में ज़्यादा ज़ोर दो। मन के गुनावन और उत्पात एक दम नहीं बन्द हो सकते हैं। मगर यह कारंवाई करते रहोगे तो धीरे २ मन ढीला पड़ेगा और पहले की ब-निस्बत परमार्थी कारंवाई ज़्यादा सहूलियत और आसानी से बनेगी।

(17) Translation

Perform Sumiran, Dhyan, Bhajan and the recitation of the holy books, as much as possible, daily in the morning and evening. Greater emphasis should be laid on Sumiran. Thoughts and reveries and disturbances of the mind cannot be stopped all at once. But if one continues to apply oneself to the aforesaid practices, the mind will, by and by, be vanquished and Parmarthi (devotional) activities performed with greater ease and facility.

(१८)

रज पानी में डाल कर उस पानी को चरनामृत की जगह इस्तेमाल कर सकते हैं। इसमें कोई हर्ज नहीं है। मृत्यु के उपरांत किसी की चिता में रज डालने की जरूरत नहीं।

(18) Translation

There is no objection to putting the sacred ashes of Sant Sat Gurus in water for use as Charnamrit. It is not necessary to put them on the funeral pyre.

(१९)

अभ्यास में घट बढ़ हालत हुआ करती है । इससे ज़्यादा घबराना नहीं चाहिये । रीति व्यवहार खान पान वग़ैरा के असर से और अपने अगले पिछले करमों की वजह से इस तरह की हालत हुआ करती है । अपनी तरफ़ से कोशिश और जतन करते रहो, चाहे कुछ दिखाई और सुनाई दे या नहीं । सुमरन पर ज़ोर दो । रोशनी वग़ैरा दिखाई देने से ज़्यादा ज़्यादा अच्छा शब्द का सुनाई देना, सिमटाव का होना और उसमें रस व आनंद का प्राप्त होना है । इसलिये कुछ दिखाई न दे तो कोई हर्ज नहीं है । अपना परमार्थी काम करते रहो और राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रक्खो । भनभनाहट वग़ैरा जो मालूम होती है उसमें ग़ौर से घंटे के शब्द की तलाश करो तो मुमकिन है, वह सुनाई दे और अपने दिल से बीमारी का वहम निकाल देना चाहिये ।

(19) Translation

Advancement and retardation are the concomitants of Abhyas. Do not feel disturbed by them. They are due to indulgence in eating, drinking, etc., and the past Karams. Continue your efforts whether anything is seen and heard or not. Lay greater emphasis on Sumiran. The hearing of Shabd, withdrawal of the spirit current and the experiencing of bliss and joy are preferable to visions of light etc. If, therefore, nothing is visible, there is no harm. Go on performing your Parmarthi activities, with faith in Radhasoami Dayal's Daya. Amidst buzzing and humming noise you hear, you should seek for the sound of bell. It is possible you may hear it. Cast off the false fear of disease.

(२०)

अभ्यास में रोशनी, तारे, आकाश वग़ैरा का दिखाई देना अच्छा है और क़ाबिल क़द्र है और उनको शौक़ से देखना चाहिये । कुछ हर्ज नहीं है । लेकिन इस बात को समझ लेना चाहिये कि इनकी ब-निस्बत शब्द का साफ़ २ सुनाई देना, कभी २ स्वरूप का दरसना, सिमटाव का होना और उसमें रस व आनन्द का प्राप्त होना, अधिक अच्छा है और बढ़ कर तरक़्क़ी का निशान है ।

अगर विलक्षण रूप दिखाई दें तो उनको देख कर डरना नहीं चाहिए । उस समय राधास्वामी नाम का सुमरन करना चाहिए, जिससे वह लोप हो जावेंगे और नहीं दिखाई देंगे । यदि राधास्वामी नाम में दृढ़ विश्वास और प्रीत प्रतीत है तो वह तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं कर सकते हैं । इस बात का भरोसा रखना चाहिए । दख तकलीफ़ मुसीबत वग़ैरा ये सब कर्मानुसार आते हैं ।

(20) Translation

The vision of light, stars, sky, etc., in Abhyas is good and should be valued. These should be seen with interest. But it is far better if Shabd becomes audible, the Swarup (Holy Form) is seen off and on, and the spirit current withdraws and experiences bliss and joy. These are more tangible proofs of progress.

You should not get frightened on seeing monstrous forms. You should, at that time, perform Sumiran of the Holy Name. The forms will disappear. If you have strong faith and love in Radhasoami Nam, they can do you no harm. Have trust in it. Afflictions and calamities are all due to Karams.

(२१)

इस बात का विश्वास रक्खो कि राधास्वामी दयाल तुम्हारी प्रार्थना सुनते हैं और ज़रूर दया फरमावेंगे और ज़रूर अंतर में मदद मिलेगी।

(21) Translation

Trust that Radhasoami Dayal hears your prayers and supplications. He will surely shower His grace upon you. You will certainly receive help internally.

(२२)

हमने सुना है कि आजकल तुम्हारे मिज़ाज में बहुत गरमी आ गई है और बहुत ग़ुस्सा और मार पीट करते हो, यहाँ तक कि अपनी बीबी और बच्चों को बहुत जिस्मानी तकलीफ़ पहुँचाते हो, यह बात, ख़ास कर सतसंगी के लिए, निहायत ना-पसंदीदा और ना-मुनासिब है। इस तरह का दोष दूर होने के लिए और अपने बर्ताव में सम्हाल रखने के लिए राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रार्थना करनी चाहिए और जिस वक्त तबियत में ग़ुस्सा आवे, अपने चित्त को चरनों की जानिब करना चाहिए और राधास्वामी नाम की याद करना चाहिए कि जिससे ग़ुस्सा इस क़दर ग़ालिब न होने पावे और ऐसी ख़राब नौबत न पहुँचे।

(22) Translation

I have heard that you have now-a-days become very hot tempered. You have recourse to anger and assault, so much so that you beat even your wife and children. This is quite improper and unbecoming specially for a Satsangi. You should pray at the Holy Feet of Radhasoami Dayal for eradicating this

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1916. Seth Saheb is on the immediate left of Babuji Maharaj.

बाबूजी महाराज शिकोहाबाद में सन् १९१६

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1920

evil and granting you equanimity. Whenever you feel the onslaught of anger you should immediately turn your attention towards the Holy Feet, and bring Radhasoami Nam to your mind. This will save you from getting inordinately angry and from being dragged into this state.

(२३)

अभी तुमने सुमरन ध्यान का उपदेश लिया ही है। कुछ दिन चित्त लगा कर सुमरन ध्यान करो और जब किसी क़दर चित्त लगने लगेगा, तब भजन का उपदेश भी दिया जावेगा और तब वह अभ्यास भी करना। तरक़्क़ी धीरे २ होती है। मन के गुनावन और संसारी वासनाओं का उठना एक बारगी बन्द नहीं हो जाता है (हस्ताक्षर करने से पहले जबाब पढ़ते हुए महाराज ने फ़रमाया "कभी बन्द होगा ही नहीं।") सुमरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ वग़ैरा परमार्थी कार्रवाई करते रहोगे, तो धीरे २ तरक़्क़ी होती जावेगी। संसार में रह कर घर गृहस्थी का सब काम करते हुए जो परमार्थी कार्रवाई करोगे, वह फलदायक होगी। घर बार छोड़ देने से परमार्थ नहीं बनता है और इससे यह उम्मीद करना कि परमार्थ ज़्यादा बनेगा, ग़लत है। अगर शादी का इन्तज़ाम हो तो शादी करने में कोई हर्ज नहीं है। अगर मौक़ा और सहूलियत हो तो दस पाँच दिन के लिये यहाँ सतसंग में आने की मुमानियत नहीं है लेकिन घर बार छोड़ कर क़तई यहाँ आन कर रहने की इजाज़त नहीं दी जा सकती है। कुछ दिनों के बाद तबियत सतसंग से भी उचाट हो जावेगी जो कि हानिकारक होगा। इसलिये राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रखते हुए, वहीं जितनी बने परमार्थी कार्रवाई करते रहो और जब मौक़ा मिले, कुछ दिन के लिये सतसंग कर जाया करो।

(23) Translation

You have been initiated in Sumiran and Dhyan only. For some time, perform Sumiran and Dhyan attentively. When you are able to fix your attention to some extent, you will be initiated in Bhajan as well. Then you will practise it. Progress is made slowly and gradually. Thoughts and fancies of the mind and worldly desires cannot be curbed all at once. (Before signing the reply, Babuji Maharaj observed, "Never shall they stop altogether.") If you go on performing Sumiran, Dhyan and Bhajan, and the recitation and reading of the holy books, progress will be made gradually. Whatever Parmarthi activities you perform while leading a family life and discharging your temporal obligations, will bear fruit. Parmarth cannot be gained by renouncing household. It is wrong to think that the life of a recluse is more conducive to Parmarth. If you have prospects of marriage, there is no harm in marrying. There is no objection to your visiting Satsang for five or ten days whenever

convenient. But permission cannot be given for living permanently in Satsang after renouncing household. After some time you will begin to lose interest in Satsang as well. This will be very injurious. Therefore, while continuing to stay there, go on performing Parmarthi activities as much as you can, with reliance on Radhasoami Dayal's Daya. You may visit Satsang, off and on, for a few days, whenever you get an opportunity to do so.

(२४)

सुरत के मुक़ाम यानी तीसरे तिल पर अंतर की धार आती है और वहाँ ठेका लेती है। यही धार जान की धार है, शब्द की धार है और नूर की धार है। अपनी तवज्जह को बार बार सुरत के मुकाम पर ले जाना, यही उस अंतर की धार से मेला करना है। उस मुक़ाम पर अपनी तवज्जह जमा कर राधास्वामी नाम का सुमरन और स्वरूप का ध्यान करना चाहिये। यही कार्रवाई अन्तर्मुख कार्रवाई है। सहसदल कँवल पर तवज्जह जमा कर शब्द सुनना भी अन्तरमुख कार्रवाई है।

(24) Translation

The internal current descends to, and takes its location at the seat of the Surat (spirit), viz., the third Til. This current is the current of life, Shabd and light To turn one's attention and to fix it at the seat of the spirit again and again, is to come in contact with the internal current. Fix your attention at that centre and perform Sumiran of Radhasoami Nam and Dhyan of Swarup. This is Antarmukh Kar-rawai (internal application). To listen to the Shabd by fixing attention at Sahas-dal-Kanwal is also Antarmukh Kar-rawai.

(२५)

शुरू में राधास्वामी दयाल कभी २ अभ्यास में रस व आनन्द की कैफ़ियत और दया के परचे बख़्शते हैं कि जिससे चरनों में प्रीत प्रतीत दृढ़ हो। वह कैफ़ियत हमेशा क़ायम नहीं रह सकती है। अभ्यास करने के बाद में क़ायम होगी। कभी अभ्यास में विशेष रस और आनन्द प्राप्त हुआ और फिर बन्द हो गया, इससे निराश नहीं होना चाहिए। गहरी प्रीति प्रतीत के साथ और सरन दृढ़ करके परमार्थी कार्रवाई यानी सुमरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ नियम और शौक़ से करते रहना चाहिए।

संसार में हमेशा कोई न कोई झगड़ा और तरद्दुद लगा ही रहता है। इसकी ज़्यादा चिन्ता नहीं करनी चाहिए। कभी २ जब तकलीफ़ ज़्यादा हो और बर्दाश्त के बाहर हो तो अभ्यास के शुरू या बाद में प्रार्थना करने में कोई हर्ज नहीं है मगर उसका जवाब नहीं माँगना चाहिए। राधास्वामी दयाल जो मुनासिब समझेंगे, करेंगे। और जो मौज से हो उसे ख़ुशी से मन्ज़ूर करना चाहिये।

(25) Translation

In the beginning, Radhasoami Dayal sometimes grants bliss and joy in Abhyas and experiences of His Daya, so that love and faith may be strengthened. This condition cannot last for ever. After performing Abhyas it will become stable. You should not be dejected if sometimes you receive special bliss and joy in Abhyas and then no bliss and joy at all. With deep love, faith and Saran you should go on applying yourself to Parmarthi Kar-rawai, i. e., Sumiran, Dhyan and Bhajan, and the reading and recitation of the holy books, with avidity and regularity.

There will always be some difficulty and trouble in the world. One should not mind them much. If the trouble is excessive and unbearable, there is no objection to praying at the commencement or termination of the Abhyas. But no response should be expected. Radhasoami Dayal will do what He thinks fit and proper. One should cheerfully accept whatever comes to pass by Mauj.

(२६)

अपनी तरफ़ से चित्त तीसरे तिल या सहसदल कँवल पर ही जमा कर शब्द सुनना चाहिये। लेकिन अगर शब्द ऊपर से आवे तो कोई हर्ज नहीं है। कहीं से आवे, सुनना चाहिये। सिर्फ़ इस बात का ध्यान रहे कि शब्द दाहिनी तरफ़ या मध्य से हो। बाईं तरफ़ का शब्द नहीं सुनना चाहिए।

(26) Translation

You should try to hear Shabd by fixing your attention at the third Til or Sahas-dal Kanwal. But there is no harm if Shabd comes from a higher region. If it comes from any higher region you should listen to it. Care should, however, be taken that it comes from the right or the middle. Shabd coming from the left side, should not be attended to.

(२७)

अगर कोई सच्चा ख्वाहिशमन्द हो और सतसंग में आता हो और वह कोई बात पूछे तो उसको समझाने बुझाने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन हर एक को इस ग़रज से समझाना बुझाना कि वह उपदेश ले और राधास्वामी मत में शामिल हो, ठीक नहीं है। तुम्हारे इस काम के करने की ज़रूरत नहीं है।

(27) Translation

There is no objection to explaining the principles of the Faith to a person who appears to be a true seeker and attends Satsang. But it is not proper to explain the R. S. Faith to all and sundry with a view to converting them. You are not to do this.

(२८)

चाहे दर्शन हों चाहे न हों और चाहे शब्द सुनाई दे और रस व आनन्द आवे या न आवे, तुम अपनी तरफ़ से जितना बने प्रीति प्रतीत सहित सुमिरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ नियम और शौक़ से करते रहो और सुमरन में ज़्यादा ज़ोर दो । दया से धीरे २ तरक़्क़ी होती जावेगी । दया के उम्मीदवार रहो ।

(28) Translation

Whether you get Darshan, hear Shabd and experience bliss and joy or not, you should apply yourself, with avidity and regularity to Sumiran, Dhyan and Bhajan and the reading and recitation of the holy books. Pay greater attention to Sumiran. By Daya, progress will be made gradually. Always look for Grace.

(२९)

शुरू में राधास्वामी दयाल दया के परचे बख़्शते हैं कि जिससे चरनों में प्रीत प्रतीत दृढ़ हो । वैसी दया रोज़ २ हो, यह तुम्हारे इख़्तियार की बात नहीं है । प्रीत प्रतीत सहित परमार्थी कार्रवाई करते रहो और सुमरन ज़्यादा करो और दया के उम्मीदवार रहो ।

(29) Translation

In the beginning, Radhasoami Dayal grants experiences of His Daya (grace) so that love for and faith in the Holy Feet may be strengthened. But you cannot expect it every day. Go on doing your Parmarthi (devotional) exercises with love and faith. Perform Sumiran the most. Be sanguine of receiving His Daya.

(३०)

दुनिया के कारोबार राधास्वामी दयाल की मौज के आसरे करने चाहिए । इस क़दर हद से ज़्यादा चिन्ता नहीं करनी चाहिये कि जिससे स्वार्थ और परमार्थ दोनों में हर्ज हो । मेहनत और मुनासिब जतन कर के नतीजा राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ देना चाहिए । यह सतसंगी का धर्म है । दया के उम्मीदवार रहो ।

(30) Translation

The worldly activities should be performed with reliance on Radhasoami Dayal's Mauj. Do not be so much worried that both your temporal and spiritual affairs may suffer. Work hard, and make proper and legitimate efforts to gain your object, but leave the result to the Mauj of Radhasoami Dayal. This is obligatory for a Satsangi. Look for His Daya.

(३१)

चोट पर मलने के लिए शराब इस्तेमाल करने में हर्ज नहीं है। जिसमें किसी जानवर की चरबी या तेल हो, वह मरहम भी इस्तेमाल कर सकते हो, अगर बना बनाया तैयार मिल जाय। मगर ऐसा मरहम ख़ुद तैयार करना और उसके लिए किसी जानवर की जान लेना निहायत ना-मुनासिब है।

(31) Translation

There is no harm in using wine for rubbing on an injury. An ointment containing animal fat or oil may also be used, provided it is ready made. But it is highly undesirable for a Satsangi to kill an animal and prepare ointment.

(३२)

चाहे मन लगे या न लगे, सुमरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ जितना बने, नियम और शौक़ से करते रहना चाहिए, ख़ास कर सुमरन में ज़्यादा ज़ोर देना चाहिए। यह काम न करना गोया राधास्वामी दयाल से अपना रिश्ता हलका करना है। इसलिये प्रीत प्रतीत सहित दया का भरोसा रखते हुए यह काम करते रहो। धीरे २ मन की चंचलता कम होती जावेगी और अभ्यास में मन लगने लगेगा। यह काम बिल्कुल छोड़ कर चुप न हो बैठे रहना चाहिए।

(32) Translation

Whether the mind applies or not, Sumiran, Dhyan and Bhajan, and the reading and recitation of the holy books, must be performed regularly and with avidity as much as possible. Greater emphasis should be laid on Sumiran. Not to perform these acts is, so to say, weakening one's connection with Radhasoami Dayal. Therefore, continue performing them with love and faith, and reliance on Daya. Gradually the wantonness of the mind will be reduced, and it will begin to apply to Abhyas. It is not proper to give up the practices altogether.

(३३)

यह तो दुनिया का क़ायदा ही है कि बहुत से गुरू बन बैठते हैं। इससे चित्त में कोई भरम लाने की ज़रूरत नहीं है। जहाँ निरमल सतसंग और परमार्थ की कार्रवाई होती मालूम हो वहाँ से सम्बन्ध जोड़ कर अपनी परमार्थी कार्रवाई करते रहना चाहिए।

(33) Translation

It is but usual with the world that there would be many people posing as gurus. But one need not be confused on that account. One should join that quarter where one finds unalloyed Satsang and Parmarth and should go on performing one's Parmarthi activities.

(३४)

अधिक चिंतित रहने के कारण अभ्यास में रस नहीं आता है। जहाँ तक मुमकिन हो, कुल कारोबार को राधास्वामी दयाल की मौज के हवाले करके किसी क़दर निश्चिन्त होकर अभ्यास करो तो धीरे २ अभ्यास में रस आने लगेगा और सब अभ्यासों में नाम का सुमरन ज़्यादा करो।

(34) Translation

If you are beset with anxieties, you will not get bliss in Abhyas. As far as possible, leave all your worldly affairs to the Mauj of Radhasoami Dayal, and free yourself to some extent from cares and anxieties. Then you will gradually begin to get bliss in Abhyas. Of all the practices, devote mostly to Sumiran.

(३५)

फ़िलहाल खाना कम करने की ज़रूरत नहीं है, बल्कि ठस कर नहीं खाना चाहिए। किसी क़दर हलके पेट रहना चाहिए। रात को सुमरन करते २ ही सो जाओ तो इससे जो बुरे स्वप्न आते हैं, बन्द हो जावेंगे।

(35) Translation

At present it is not necessary to reduce the quantity of food you take. But do not stuff yourself. Keep yourself a little light. If you go to sleep at night while performing Sumiran, this will dispel bad dreams.

(३६)

चाहे मन लगे या न लगे नियम और शौक़ के साथ दोनों वक़्त अभ्यास करते रहना चाहिए यानी रगड़ और मेहनत से अगर अभ्यास किया जावेगा तो धीरे २ मन लगने लगेगा और सुस्ती व आलस्य कम होते जावेंगे और किसी क़दर रस आने लगेगा। सब अभ्यासों में नाम के सुमरन पर ज़्यादा ज़ोर दो।

(36) Translation

Whether the mind applies or not, you must perform Abhyas both morning and evening regularly and with zeal. In other words, if Abhyas is performed diligently and vigorously,the mind would gradually begin to take interest in it. Sloth and laziness will be reduced. Some bliss will be realized. Of all the practices perform Sumiran the most.

(३७)

ख्वामख्वाह किसी जानवर को सताना या मारना नहीं चाहिए। लेकिन अगर किसी से, मसलन साँप या बिच्छू से, अपने को नुक़सान पहुँचने का डर हो और ऐसी हालत में मारना पड़े तो इसमें कोई हर्ज नहीं। सफ़ाई रखने की ग़रज़ से अगर किसी काम में खटमल मर जावें तो इसमें भी कोई हर्ज नहीं है।

(37) Translation

Do not unnecessarily injure or kill animal. But if there is danger to life, as in the case of a snake or scorpion, there is no harm if one has to kill it. If in the act of cleansing, bugs get killed, there is no harm.

(३८)

राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रखते हुए अपना काम करते रहो, दया से निर्वाह होता जावेगा। दुनियावी काम मसलन रीति रस्म बहुत बढ़ा कर करने की ज़रूरत नहीं है। जहाँ तक हो सके मुख़्तसिर तौर पर करना चाहिए।

(38) Translation

Go on performing your duties with trust in the Daya of Radhasoami Dayal. You will get through. It is not necessary to perform worldly acts such as festivities and ceremonies on an elaborate scale. Minimise them as far as possible.

(३९)

तुम्हारा नौ जवान लड़का जाता रहा, यह मालूम करके बड़ा अफ़सोस हुआ। मालिक की मौज में किसी का चारा नहीं है। दुनियादार रो पीट कर चुप हो रहते हैं मगर सतसंगी और भक्तजन को चाहिए कि मालिक की मौज समझ कर धीरज के साथ बर्दाश्त करे और अपना चित्त अंतर में चरनों की तरफ़ जोड़े। इससे सीतलता प्राप्त होगी। इस बात का विश्वास रखना चाहिए कि दुनिया में निर्वाह के लिए मालिक कोई न कोई ज़रिया निकाल देगा।

(39) Translation

I am very sorry to learn that your son has died. No one has a say in the Mauj of the Supreme Father. The worldly people weep, wail and then keep quiet. But a Satsangi and devotee ought to bear with patience, taking it to be His Mauj. He should divert his attention inward to the Holy Feet. This will bring about peace. Rest assured that the Supreme Father will provide some means of sustenance.

(४०)

वाक़ई हालत सतसंग की जैसा आप बयान करते हैं, हो रही है और क़ाबिल अफ़सोस है। मगर हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने जो यह मौज रवा रक्खी है, इसमें ज़रूर मसलहत होगी। ख़ुसूसन उस वक्त में जब कि संत सतगुरु प्रकट तौर पर कारकुन होकर इस देश में मौजूद नहीं रहते, तब जीवों की अंतरी चाह और कर्मों के प्रकट होने से अनेक इस क़िस्म की सूरतें ज़हूर में आती हैं और जा-ब-जा जहाँ कि आपे का ज़ोर और धन माल स्त्री की चाह का वेग ज़बर होता है, मन अपने बरताव और हुसूल[1] मुद्दआ की सूरत निकाल लेता है और अपने से मुआफ़िक़त रखने वाले जीवों का अलेहदा २ गिरोह बना लेता है। परमार्थ की कार्रवाई गो बहुत कम बाक़ी रह जाती है मगर अंतरी कर्मों के वेग का ख़ारिज होना उसी सूरत में मुमकिन है। अजीब ख़वास इन्सानी है कि काठ का गुरु भी अगर मुहय्या हो जावे और परमार्थ का ज़र्रा भी क़रीब २ नदारद हो जावे तो अपनी मनमानी कार्रवाई से परमार्थी लाभ के भरम में ख़ुश होकर असली मतलब को भूल जाता है। असल में मनोरंजन का मौक़ा मिलता है और उसी को परमार्थ तसव्वुर[2] करता है। इसमें शक नहीं कि ऐसे गुरु होने में भोले भाले जीव भी भेड़ों की तरह गिर पड़ते हैं। मगर इसमें भी कुछ अगले पिछले कर्मों का हिसाब रहता है। इस बात को राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ देना चाहिये कि जब वह ज़रूरी और मुनासिब समझेंगे, इसकी इस्लाह[3] कर लेंगे। असली हर्ज और नुक़सान उन लोगों का भी जिन्होंने किसी हीले से राधास्वामी नाम की धारना और सरन चाहे जिस दर्जे की हो, हासिल की है, न होने पावेगा।

(१) हासिल। प्राप्ति। (२) ख़याल। (३) सुधार।

जब उपाधि नाक़िस[१] कर्मो की क़दरें[२] दूर होवेगी, तब राधास्वामी दयाल फिर प्रकट होकर सँभाल फ़रमावेंगे और ब-दस्तूर अधिकारी जीवों के विशेष लाभ और कम अधिकारी जीवो के लिये बीजा डालने की कार्रवाई जारी फ़रमावेंगे। रफ्ता २ इस तरह अवाम में भी बीजा इस मत का फैलता जावेगा और रूहानियत इस देश की में भी तरक़्क़ी होती जावेगी और आम तौर पर इस असली परमार्थ के जारी होने का अधिकार बढ़ता जावेगा। यह हालत आम तौर पर कही जा सकती है। अलेहदा २ जीवों के अलेहदा २ कर्म इस क़िस्म की सूरत में ज़हूर में आते हैं जो ज़ाहिरा इस आम उसूल से साफ़ तौर पर मुआफ़क़त रखते हुए नहीं मालूम होते, मगर वह भी दर असल कमोबेश मबनी[३] इन्हीं उसूलों पर है। परमार्थ के मुआमले में ज़ोर और ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती और मैं सिवाय इसके कि जो शख़्स मोहब्बत और प्यार भाव से रुजूअ[४] लावें, उनको हत्तुल वसअ[५] अपनी समझ के मुआफ़िक़ सलाह दूँ, और कुछ दख़ल नहीं दे सकता। जो अपना अलेहदा फ़िरक़ा क़ायम करके रुपया फ़राहम करें, उनमें कौन्सिल और ट्रस्ट, क़ायम कर्दा महाराज साहब, दख़्ल अंदाज़ नहीं हो सकती। दुनिया में बेशक इस मौजूदा हालत से इस मत की बहुत नामूसी[६] और निन्दा हो रही है मगर जिन जीवों ने कि अपना ताल्लुक़ इस मत से महज़ परमार्थ की ग़र्ज़ से पैदा किया है, उनको दुनिया की वाह २ और निन्दा से कुछ ताल्लुक़ नही होना चाहिए।

(40) Translation

Indeed, the condition of the Satsang is just as you describe. It is deplorable. But when it has been so ordained by the Mauj of Huzur Radhasoami Dayal, it must surely be fraught with some good. It is particularly during the period when the Sant Sat Guru does not function openly in the manifested form that the hidden desires and Karams of Jivas unfold themselves and all sorts of activities like this appear. Wherever ego predominates and the desire for wealth, property and woman is strong the mind devises means for fulfilling it. Persons of like nature form their own groups. Of course, spirituality goes to the background, but the momentum of inner Karams can be exhausted in this way only. Man is so constituted that, if he adopts an idiot as a guru who is totally devoid of Parmarth, he forgets his real object, under the delusion that his haphazard activities would result in Parmarthi gain, he is complacent. In fact, he has an opportunity of indulging in recreation there, which he considers to be Parmarth. No doubt artless and unsophisticated persons fall into the trap of such gurus. But even this is due to their past Karams. It is upto the Mauj of Radhasoami Dayal to mend them whenever He thinks proper to do so. No real harm will be caused even to those persons who have adopted Radhasoami Nam with some ulterior motive but have taken His Saran to some extent.

(१) बुरे। (२) थोड़ी। (३) आधार पर ठहरा हुआ। आश्रित। (४) प्रवृत्त हो। (५) यथाशक्ति। (६) बदनामी।

When the evil Karams are exhausted to some extent, Radhasoami Dayal will again manifest Himself. He will set things right, and afford special benefit to the Adhikari (fitted) Jivas. As regards those who are not yet quite fit, He will sow the seed of Parmarth in them. Thus, gradually the seed of R. S. Faith will be sown in all. The spirituality of this region will also be enhanced. The Adhikar (fitness) for the propagation of real Parmarth will be augmented. This is the general principle. Individual Karams manifest in such a way, that they do not seem to conform to this general rule. But they also are more or less based on this very principle. There can be no coercion in the matter of Parmarth. I cannot interfere in anybody's affairs except tendering advice according to my understanding to those who are affectionately inclined towards me. The Council and the Trust, established by Maharaj Saheb, would have nothing to do with those who form their own separate groups and collect funds. Due to the prevalence of such a situation, this religion, of course, is getting a bad name in the world. But those who have adopted this religion for their spiritual welfare only, should not concern themselves with the applause of or calumny by worldly people.

(४१)

अक्सर लोगों को ध्यान की हालत में अपनी सूरत दिखलाई पड़ती है। यह उन्हीं का द्वितीय या सूक्ष्म रूप है। इस वजह से तवज्जह हटा कर गुरू या मुक़ामी स्वरूप में लगाना चाहिये।

(41) Translation

People often see their own forms in Dhyan. These forms are their subtle or astral forms. They should divert their attention to the form of the Guru or the presiding Deity.

(४२)

अंतर में अनगिनत सूरज और चाँद और तारे मौजूद हैं जिनकी कभी २ दूर से शुआई[1] झलक मालूम होती है। ब्रह्म रूपी सूरज का दर्शन बड़े दूर का मुआमला है। जोति के रूप की झलक भी आना बड़ी बड़भाग्यता है। उसकी बर्दाश्त भी जब तक कि रूहानी ताक़त बहुत कुछ न जाग उठे न हो सकेगी। उसकी झलक अगर ज़रा देर को भी ठहरी, तो जान जिस्म में क़ायम न रह सकेगी। उमूमन मरने के बाद जोति के दर्शन हुआ करते हैं। कभी २ दूर से झलक सी अभ्यास के वक्त मालूम हो सकती है। इसी को बड़े भाग समझना चाहिए।

(१) शुआअ = सूर्य की किरण। किरण।

(42) Translation

There are innumerable suns, moons and stars within. Their radiance is seen sometimes. The Darshan of Brahm-Sun is far far away. It is a piece of good luck if even the reflection of Jyoti (flame) is had. Even this sight cannot be endured unless spiritual faculties have been awakened appreciably. If that refulgence stays even for a while, life will be extinct. Generally, the Darshan of the Jyoti is had after death. Sometimes just a distant glitter is seen during Abhyas. This should be regarded as an indication of good fortune.

(४३)

लेटे २ अगर ख़ुद आवाज़ दाहिनी तरफ़ से आवे तो उसके सुनने में हर्ज नहीं है। मगर वक्त मुक़र्ररा पर अभ्यास के आसन से बैठ कर शब्द सुनना चाहिये।

(43) Translation

If, while lying down, you hear the sound coming from the right side, you may hear it. But the daily Abhyas of hearing Shabd should be performed at appointed times in the sitting posture of Abhyas.

(४४)

जो कार्रवाई अभ्यास आपको बतलाई गई है और जिसके मुताबिक़ आप अमल कर रहे हैं वह ठीक है। धीरज से किये जाइये। इज़्तराबी[1] और शिताबज़दगी[2] नहीं होनी चाहिये। दया अपना काम कर रही है और बराबर करती रहेगी। रूहानी बेहबूदी[3] की बेहतरीन[4] सूरत क्या है, यह ख़याल राधास्वामी दयाल की दया और मौज पर छोड़ देना चाहिये।

(44) Translation

The Abhyas which has been taught to you and which you are accordingly practising is all right. Go on doing it with patience. Do not be impatient and hasty. Daya (grace) is working and will go on working. How best the spiritual welfare is to be effected, should be left to the Mauj and Daya of Radhasoami Dayal.

---

(१) घबराहट। (२) जल्दीबाज़ी। (३) भलाई (४) सबसे अच्छी।

(४५)

'राधास्वामी' नाम के टुकड़े नाभि चक्र से शुरू करके सहसदल कँवल या त्रिकुटी तक लेजा कर सुमरन करना निहायत मुफ़ीद है मगर जो दुरुस्ती से किया जावे। और वक़्त फ़वक़्त उसका करना ज़रूरी व मुनासिब है, ख़ुसूसन मन के बाज़ ज़बरदस्त अंग तोड़ने के लिये। उससे जिस्म किसी क़दर नहीफ़ और कमज़ोर हो जाता है और कभी २ सख़्त झटका लगता है। अब आपका आलमे-ज़ईफ़ी[1] है। इस अभ्यास को उमूमन नहीं करना चाहिए, बिला ख़ास ज़रूरत के और फिर भी दो एक रोज़ से ज़्यादा नहीं।

'राधास्वामी' नाम का सुमरन टुकड़े २ करके, ऊपर से शुरू करके नीचे तक लाने की कार्रवाई पहले तरीक़ के बिल्कुल बर-अक्स और ज़िद्दन[2] है और तरक़्क़ी में मुज़िर है। यह कभी नहीं करना चाहिए।

(45) Translation

Sumiran (repetition) of the Radhasoami Nam beginning syllable-wise from the centre at the naval and ending at Sahas-dal-Kanwal or Trikuti, is very efficacious, provided it is performed methodically. It is necessary and proper to resort to this method, off and on, specially for eradicating certain strong tendencies of the mind. The body would become weak and feeble by adopting this method, and sometimes severe jolts would also be experienced. You are now old. You should not, as a rule, practise this method, unless there is a special necessity for it; and that too for not more than a day or two.

The Sumiran of Radhasoami Nam, beginning syllable-wise from a higher centre and ending at a lower centre, is just the reverse of the above, and is harmful. It should never be done.

(४६)

जो काम शुरू किया जावे, ख़्वाह खाना पीना हो ख़्वाह कोई और काम हो, राधास्वामी नाम लेकर शुरू करना दुरुस्त और मुनासिब है।

(46) Translation

Whatever is done, be it eating or drinking or any other work, should be begun with the remembrance of the Radhasoami Nam.

---

(१) बुढ़ापा। (२) उलटी। (३) हानिकारक। नुकसान देह।

(४७)

संत सतगुरू वक्त, गुप्त होने से पेश्तर अपने जा-नशीन के बारे में इशारा फ़रमा देते हैं। अगर शाज़ ऐसी मौज न हो तो उनके गुप्त होने के बाद उनके सतसंग में से जिस प्रेमी सतसंगी के यहाँ सबसे निर्मल परमार्थ नज़र आवे, वहाँ शरीक रह कर संत सतगुरू वक्त की खोज करते रहना चाहिये।

(47) Translation

The Sant Sat Guru, before His departure, indicates His successor, If ever such be not the Mauj, one should, after His departure, join the Satsang of a Premi Satsangi, from amongst His followers, which appears to be the most Nirmal (pure). One should, however, keep on seeking the Sant Sat Guru of the time.

(४८)

सिवाय "जुगत प्रकाश" के और किताबें ग़ैर-सतसंगी को दिखलाई जा सकती हैं। लेकिन इब्तदा में ज़ैल की चार किताबें ज्यादा मुफ़ीद हैं। (१) सार उपदेश। (२) सार बचन बार्तिक। (३) राधास्वामी मत संदेश और (४) प्रश्नोत्तर संत मत।

(48) Translation

Except "Jugat Prakash," all other books can be shown to a non-Satsangi. But the following four books will be very useful in the beginning : (1) Sar Updesh, (2) Sar Bachan Prose, (3) Radhasoami Mat Sandesh (Bachan 15 of Prem Patra Part 2) and (4) Prashnottar Sant Mat (Catechism).*

(४९)

अगर श्रद्धा और भाव संत सतगुरू वक्त और नाम में हैं तो किता नज़र इसके कि सतसंगी ज्यादा कमाई नहीं कर पाया, सिर्फ़ उपदेश ही लिया है, उसकी सुरत की सँभाल आखिर वक्त पर हो जावेगी।

(49) Translation

If a Satsangi has faith in and love for the Sant Sat Guru of the time and the Holy Name, his Surat (spirit) will be taken care of at the time of his death,

* For non-Hindi knowing persons, the following four books are recommended, in the beginning ; (1)Radhasoami Mat Prakash, (2) Discourses on Radhasoami Faith, (3) Phelp's Notes and (4) Sar Bachan Prose.

irrespective of the fact that he has not been able to perform Abhyas substantially and that he has simply received intitiation in the Faith.

(५०)

हर एक का अपने २ कर्मों और प्रारब्ध की अवस्था का हिसाब अलग २ रहता है और जीवन और मरन का वक्त मुक़र्रर रहता है कि जिसमें रद्दोबदल नहीं हो सकता। राधास्वामी मत में आने से विशेष दुःख हो, यह असम्भव है। इस भरम को चित्त में न आने देना चाहिये। अलबत्ता कर्मों के कटने में किसी क़दर मामूली तौर के ब-निस्बत जल्दी की जाती है, वरना चार जन्म में कुल कर्मों का उतरना ना-मुमकिन हो और साथ २ उसके जिस क़दर सहूलियत और आसानी मुमकिन हो, काम में लाई जाती है और अन्त में प्रारब्ध कर्म का बग़ैर फल दिए हुए अन्तर ही अन्तर भक्ति सरन और प्रेम के द्वारा काट दिए जाते हैं और बहुत कर्मों के काटने में सूली का काँटा कर दिया जाता है। इस बात की ख़बर ठीक ठीक बग़ैर अन्तर में धसे और चढ़े हुए नहीं मालूम हो सकती। जो कुछ अन्तर में खिचने और सिमटने लगे तो थोड़ी २ ख़बर मालूम हो सकती है। कर्मों का बे-शुमार और बे-इन्तहा ढेर है जिसकी पूरी तौर पर सफ़ाई होने की रीति सिर्फ़ राधास्वामी मत में है।

(50) Translation

Karams and Prarabadh[1] of each individual have their peculiar influences on him. The span of life and the time of death are fixed, they cannot be altered. It is impossible that one would get into greater afflictions and calamities on joining the Radhasoami Faith. Do not let such loose thoughts enter your mind. Of course, the Karams are eradicated quickly ; otherwise the load of all the Karams could not be exhausted in four lives. At the same time all possible ease and facility are afforded. Ultimately, by Bhakti, Sewa and Prem, the Prarabdh Karams are eradicated and exhausted internally. They do not have to fructify. In the case of many a Karam, its effect is reduced to a thorn prick from impaling. This cannot be realized without inner progress. One would know it to some extent, if withdrawal and concentration of one's spirit-current take place, There is no limit and bound to the load of Karams. They can be completely eradicated in Radhasoami Faith alone.

(५१)

अन धन और संतान भोग रस देने की ज्यादातर मौज उस हालत में होती है जब कि मोह न व्यापे, जग नहिं फँसई। सो ऊँचे दर्जे के भक्तों को कभी २ ऐसी मौज

(1) fate, lot.

सिर्फ़ कुछ दर्जे तक दिखाई जाती है। सो इस बात का भी नियम नहीं है। जैसी मुसीबतें भक्तों ने धीरज के साथ उठाई हैं, उसके एक किनके में संसारियों का पटड़ा हो जावे। और साध संत महात्माओं ने भी अपने ऊपर दुनिया के दुःख आने बन्द नहीं कर दिये हैं।

(51) Translation

Prosperity, affluence, progeny and pleasures of senses are granted generally in a case in which there is no possibility of the individual being attached to them and engrossed in the world. And such a Mauj is sometimes made to some extent, in the case of certain high class devotees. But there is no hard and fast rule. Only a fraction of troubles endured by Bhakts (devotees) with patience and equanimity, is sufficient to unhinge the worldly people. Sadhs, Sants and Mahatmas have not refused to take upon themselves worldly hardships, difficulties and troubles.

(५२)

महिमा इस बात की नहीं है कि संसार में दुःख न आवे, बल्कि इस बात की महिमा है कि दुख सुख आवें और अपना असर अन्तर में न कर सकें या बहुत कम कर सकें। सो यह बात भक्ति और प्रेम के जगाने से होगी और कुल मालिक की सच्चे मन से सरन लेने से जिसमें कि कोई गिला या शिकायत की गुंजायश नहीं।

(52) Translation

It is of no moment if one is free from worldly troubles. What is of importance that they do come, but cannot affect the devotee internally or they produce very little effect on him. This will be acquired by Bhakti and Prem, and by taking Saran (protection) of the Supreme Father with sincerity in such a way that there is no room for complaint.

(५३)

शीतलता और शान्ति अन्तर में प्राप्त होगी। बाहर तो संसार में आग लग रही है और लगी रहेगी। इसलिये जिस क़दर बन सके, चरनों में चित्त जोड़ कर नाम रूप और शब्द के द्वारा राधास्वामी दयाल की दया जो शान्ति रूप है, हासिल करनी चाहिये।

(53) Translation

Serenity and peace will be had on getting inwards. The world is on fire and will be on fire. Therefore fix your mind and attention at the Holy Feet

as much as you can, and, by applying to Nam (Name), Rup (Form) and Shabd. receive Radhasoami Dayal's grace which is serenity itself.

(५४)

स्वामीजी महाराज के ख़ानदान में अब कौन और कहां है, इस बात के जानने की परमार्थ के लिए ज़रूरत नहीं है। रिश्तेदार और कुटुम्बियों का लिहाज़ और ख़याल ज़रूर रक्खा जाता है मगर राधास्वामी दयाल की भक्ति जो असल चीज़ है, उसकी अज़मत और बुज़ुर्गी है। चाहे कोई हो, भक्ति की मुख्यता है।

(54) Translation

It is not necessary for the purposes of Parmarth to know who are the survivors in Soamiji Maharaj's family and where they live. Relations and members of the holy family are of course, accorded due respect. But what is of importance is Bhakti (devotion) to Radhasoami Dayal. This is the real thing. Whoever he may be, must give precedence to devotion.

(५५)

सार उपदेश और सार बचन बार्तिक और प्रश्नोत्तर के मुलाहिज़े से आपको मालूम होना चाहिये था कि राधाकृष्ण और राधास्वामी एक नाम नहीं हैं। राधाकृष्ण पार-ब्रह्म पद के धनी का नाम है। और संतों का देश वहां से शुरू होता है और बहुत परे और ऊँचा है और उस देश के ध्वन्यात्मक नाम 'सत्तनाम' और 'राधास्वामी' हैं। 'राधास्वामी' सबसे ऊंचा और निज नाम है। और हम लोगों का इष्ट सत्तपुरुष राधास्वामी है। जब तक इष्ट ठीक नहीं हो लेगा और पुरानी टेक व पक्ष और कार्रवाइयों की पकड़ दिल से कमोबेश क़तई नहीं दूर हो लेगी, हमारे यहां का उपदेश नहीं दिया जा सकता।

(55) Translation

From the perusal of Sar Bachan Prose, Sar Updesh and Prashnottar (Catechism), You ought to have seen that Radha Krishna and Radhasoami are not one and the same. Radha Krishna is the name of deity of Par-Brahm region. As regards the region of Sants, it begins from there onwards and is far, far beyond and higher up. The Dhwanyatmak Names of that region are "Satnam" and "Radhasoami". RADHASOAMI is the highest of all and

is the Nij Nam (Real Name). Our Isht (goal), is Sat Purush Radhasoami. Initiation in our Faith cannot be sanctioned unless Sat Purush Radhasoami is adopted as Isht (goal), and the old prejudices, beliefs and activities are given up almost altogether.

(५६)

जो मिसाल आपने जमना के जाने वाले की दी है, वह मौज़ूं और दुरुस्त नहीं है। इस देश में जो शख़्स किसी ख़ास जगह जाने का इरादा ज़ाहिर करता है वह कमोबेश वाक़ई उस वक़्त में उसका इरादा और ख़्वाहिश रखता है। मगर जो कोई जीव कि मालिक से मिलने का इरादा मामूली तौर पर ज़ाहिर करता है, वह उमूमन ख़्वाब की बड़बड़ाहट है और कहने वाले को यह ख़बर नहीं कि मैं माँगता क्या हूँ और चाहता क्या हूँ। अगर कोई शख़्स वाक़ई मालिक से सिर्फ़ मालिक को चाहता हो तो मालिक ख़ुद उसको अपनी गोद में बिठा कर ले जावेगा। ऐसी निर्मल और पवित्र चाह महा दुलर्भ है और बड़े भाग उसके जिसके हृदय में यह चाह पैदा हो।

(56) Translation

The instance cited by you of those who go to the Yamuna for bathing, is not proper and appropriate. In this world, one who expresses his intention to go anywhere, does really intend and desire to go there, at that time. But the desire for meeting the Supreme Creator, as expressed generally by people, is like talking incoherently in sleep. These people do not know what they ask for and what they desire. If a man really seeks nothing but the Supreme Creator, He will Himself take him, in His lap, to His Abode. Such an unalloyed and holy wish is very rare; and he who has it is very fortunate indeed.

(५७)

तन मन और इन्द्रियों और पाँच तत्त्व और तीन गुण और पच्चीस प्रकृतियों और पाँच शत्रुओं काम क्रोध लोभ मोह अहंकार और माया के इस क़दर गाढ़े और कड़े बंधन हैं कि उनसे ज़रा भी सरकना मात का आलम पैदा करना है। जब तक कि वह बंधन धीरे २ अभ्यास करके ढीले और कमज़ोर न किए जावें, ज़रा सा भी उस घाट से हटाया जाना जहाँ कि जाग्रत अवस्था में यह जीव बाहोश कारवाई करता है, मौत का सामना है और एक क़दम उठाने को राज़ी न होगा। अलावा इसके पुराने कर्मों का अंबार चुकाना इस क़दर दुशवार काम है कि बहुत अरसे तक अभ्यास राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की सरन लेकर अत्यंत दीनता पूर्वक किया जावे तो कुछ चाल

का चलना शुरू हो सकता है । इन सब बातों को दुरुस्ती से समझने के लिए अंतर और बाहर सतसंग दरकार है । बाहर के सतसंग का ब-वजह अपने पेशे और अलालत तबा[1] के आपको बहुत कम मौक़ा मिल सकता है । और अगर मिले तो जनाब बाबूजी महाराज की तबियत इस क़दर कमज़ोर रहती है कि अकसर सतसंग में चरचा[2] कम फ़रमाते हैं । इसके बदले आपके लिये सिर्फ़ इसी क़दर हो सकता है कि जो पुस्तक आपके पास मौजूद हैं और अलावा उसके और भी हैं, ख़ुसूसन प्रेम पत्र, उनका ब-ग़ौर बारंबार पाठ किया जावे तो कुछ मतलब बाहर के सतसंग का बरामद होगा और फिर भी सही तौर पर समझने के लिये अंतर अभ्यास थोड़ा बहुत जारी रहना चाहिए । ऐसी सूरत में सिर्फ़ यह हो सकता है कि रफ़्ता २ और किताबें, ख़ुसूसन प्रेम पत्र और जो किताबें आपके पास मौजूद हैं, ब-ग़ौर पढ़ना शुरू कीजिये । मगर यह ज़ाहिर करना ज़रूरी है कि एक दो छोटी किताबों के अलावा और बाक़ी किताबें हिन्दी यानी देव नागरी हरफ़ में हैं । मालूम नहीं कि आपको उनके पढ़ने की महारत है या नहीं । अगर न हो तो हिन्दी का सीखना इसी क़दर काफ़ी हो सकता है कि बाद हरफ़ शनासी[3] उन्हीं किताबों का पढ़ना हिन्दी सिखला दे ।

(57) Translation

So strong and deep-rooted are the bondages and attachments of the body, mind and senses, and the five elements, three Gunas (qualities), twentyfive Prakritis (properties), the five enemies, viz., Kam, Krodh, Lobh, Moh and Ahankar, and Maya, that even the slightest detachment from them brings about the rigours of death. Unless these attachments are by and by slackened and weakened by Abhyas, the slightest withdrawal of the Jiva from the plane of conscious and wakeful condition, is like facing death ; and nobody would take even one step forward. Moreover, to pay off the toll of heavy load of past Karams is so difficult a task that it is only by performing Abhyas, for a long time, with humility, and under the protection of Radhasoami Dayal and Sant Sat Guru that some progress can be made. For a proper understanding of these matters, Satsang and internal Abhyas are very necessary. Due to illness and avocation you can hardly get opportunities of attending Satsang. And even if you do come here, Babuji Maharaj's health is so delicate and weak that He seldom delivers Bachans (discourses) in Satsang. This deficiency can be made up by reading attentively the books you have got and other books as well, specially 'Prem Patras'. If these books are read over and over again, the object of attending Satsang can be achieved to some extent. But even then, for their correct understanding some internal

---

(१) तबियत बीमार होने के कारण । (२) बचन । (३) अक्षर पहचानने के बाद ।

Abhyas has to be performed regularly. Hence, in these circumstances, you should commence reading attentively Prem Patras and the other books you have got. But you must know that except one or two tracts, all the rest of the books are in Hindi, i.e, in Deo-nagri script. I do not know whether you are used to reading Hindi. If not, you may, after learning the alphabets, begin reading the books, and you will learn Hindi.

(५८)

जब तक कि मत किसी क़दर दुरुस्ती से समझ में न आवे और इष्ट ठीक तौर पर सिद्ध न कर लिया जावे, अंतर का अभ्यास फ़ायदा नहीं कर सकता ।

(58) Translation

Unless the tenets of the Faith are somewhat correctly understood, and the Isht is properly and firmly accepted, the internal Abhyas (practice) cannot do any good.

(५९)

जो रोशनी कि पेश्तर नज़र आती थी, वह महज़ मायक थी, कमोबेश वैसी ही जैसी कि इन आँखों के अंदर से होकर आती है और वही किसी क़दर उलट कर अंदर में ज़्यादा तेज़ी के साथ रोशन होकर दिखलाई देती थी ।

असल रोशनी सहसदल कँवल की तो बहुत दूर है और उसके देखने की बर्दाश्त अभी इन आँखों में नहीं है । रफ्ता २ मन और सुरत उस घाट की तरफ़ चलने लगें तो कभी २ उसकी झलक नज़र आ सकती है । वह भी असली नूरानी देश की रोशनी के मुक़ाबले में कुछ हैसियत नहीं रखती ।

(59) Translation

The light which was formerly coming to be seen, was merely Mayak and more or less similar to that which comes through these eyes, and the same on turning inward to some extent, appeared somewhat more lustrous and came to be sighted.

The real light of Sahas-dal Kanwal is very distant, and eyes are not yet fit to see it. If the mind and Surat (spirit) gradually move on towards that region, the glimpse of its light can be seen off and on. But this light can bear no comparison with the refulgent light of the spiritual regions.

(६०)

मैं उमूनन ऐसे ख़तों का कि जिनमें फ़िज़ूल व लग़ो बातों पर महज़ बहस मुबाहसा हो, जवाब नहीं दिया करता। मगर ब-लिहाज़ आप के असली वाक़आत से आपको मुत्तला करता हूँ। मुझको इससे कुछ ग़रज नहीं कि कोई माने या न माने । और आइन्दा को कोई ख़तो किताबत इस बारे में बहस मुबाहिसे के लिए करना मुझको मंजूर नहीं है।

स्वामीजी महाराज परम स्वतः संत थे और उन्होंने कभी गृहस्थी त्याग नहीं की और उनकी शादी हस्ब रवाज वक्त अवायल उम्र में हुई थी। और उनकी बीबी राधा जी महाराज क़रीब १६ वर्ष स्वामीजी महाराज के वक़्त के बाद मौजूद थीं। स्वामीजी महाराज का कोई गुरू नहीं था। मर्य्यादानुसार बाबा गिरधारीदासजी के साथ जोकि साहबजी यानी तुलसी साहब हाथरस वाले के ख़ास चेलों में से थे और आगरा में क़याम रक्खा करते थे, गुरु भाव का बर्ताव स्वामीजी महाराज करते थे, कमोबेश इसी तौर पर जैसे कि कबीर साहब का रामानंदजी के साथ ताल्लुक़ था। गिरधारीदासजी को खुद इब्तदाई अभ्यास सुरत शब्द के और कुछ ज्यादा वाक़फ़ियत न थी। परम संत सतगुरु स्वामीजी महाराज को क्या उपदेश और हिदायत कर सक्ते थे? बल्कि कुछ दिनों के बाद जब कि स्वामीजी महाराज गिरधारीदासजी के पास जाया करते थे, अर्थ ग्रन्थों का और उसके साथ उपदेश स्वामीजी महाराज खुद किया करते थे। इस सिलसिले में उस रवायत को जो कि गिरधारीदासजी के अखीर वक़्त से ताल्लुक़ रखती है, लिखता हूँ।

जब कि गिरधारीदासजी का अख़ीर वक़्त आया, वह लखनऊ में थे और स्वामीजी महाराज वहाँ मौजूद थे। गिरधारीदासजी के साथ दो चेलियां उनकी ख़िदमत के लिए रहा करती थीं। जबकि गिरधारीदासजी का अख़ीर वक़्त क़रीब हुआ, जो शब्द कि जिस घाट का उनको आया करता था, दफ़तन[1] बन्द हो गया। दोनों चेलियां उनकी दौड़ी हुईं स्वामीजी महाराज के पास आईं और स्वामीजी महाराज से कहने लगीं कि चलो अपने गुरु को सम्हालो, उनका शब्द बन्द हो गया है। स्वामीजी महाराज गिरधारीदासजी के पास गए और दया फ़रमाई और शब्द जारी हो गया और शाँत होकर गिरधारीदासजी का चोला छूट गया। जिनका कि यह वाक़आ चश्मदीद था, वे लोग तो अब मौजूद नहीं हैं मगर उनके घर के लोग जिनको वाक़फ़ियत इस वाक़आ की अपने बुज़ुर्गों से मालूम हुई, मौजूद हैं।

यह बात सही है कि स्वामीजी महाराज के भानजे बाबू हरप्रसाद एक ज़माने में उन्नाव में पोस्ट मास्टर थे। उनके लड़के और भतीजे यहाँ मौजूद हैं। यह नहीं मालूम कि उनसे और आपके दोस्त साहब से क्या गुफ़्तगू हुई। यह मुमकिन है कि बाबू

(१) एकाएक।

हरप्रसाद ने आपके दोस्त से कहा हो कि स्वामीजी महाराज गिरधारीदासजी के साथ गुरु भाव बरतते थे । अलावा उसके उन्होने क्या बात की और आपके दोस्त साहब ने क्या समझा, यह नहीं कहा जा सकता । बाबू हरप्रसाद साहब की ख़ुद वाक़फ़ियत[1] स्वामीजी महाराज के हालात से चंदां वसीअ[2] न थी ।

स्वामीजी महाराज की बानी, ज़बान मुबारक से फ़रमाई हुई सार बचन छन्द बन्द, आपके पास ख़ुद मौजूद है और उसका टाइटिल पेज आप मुलाहिज़ा कर सकते हैं । यह कहना कि स्वामीजी महाराज ने कोई बानी तसनीफ़ नहीं की, महज़ लग़ो और ग़लत है ।

तुलसी साहब की बानी स्वामीजी महाराज के यहाँ मौजूद रहती थी । स्वामीजी महाराज के वालदैन उन्हीं के सेवक थे । मगर सतसंग में ज़्यादातर ग्रंथ साहब का पाठ हुआ करता था और तुलसीसाहब की बानी का भी और बाद सार बचन तसनीफ़ होने के सार बचन का भी । मगर सार बचन तसनीफ़ होने पर भी ग्रंथ साहब का पाठ बंद नहीं किया था ।

तुलसीसाहब हाथरस वाले भी स्वतः संत थे । इनका अलेहदा अवतार गोस्वामी तुलसीदासजी के बहुत अर्से बाद हुआ था । गोस्वामी तुलसीदासजी वे थे जिन्होंने राम चरित मानस जिसको कि रामायण कहते हैं, रचा था । अलबत्ता तुलसी साहब हाथरस वालों ने अपने ग्रन्थ घट रामायण में फ़रमाया है कि वे ख़ुद तुलसीदासजी रामायण वाले थे । मगर मसलहत वक़्त समझ कर संत मत उस वक़्त में प्रकट नहीं किया और सिर्फ़ बमूजिब अधिकार जीवों के रामावतार की उपासना बतलाई, गो अपनी बानी में इशारा बुज़ुर्गी संत मत का कहीं २ किया है जैसा कि कड़ी ज़ैल से ज़ाहिर होता है ।

कहउँ कहाँ लगि नाम बड़ाई ।
राम न सकहिं नाम गुन गाई ।।

तुलसी साहब हाथरस वाले अकसर आगरे आया करते थे और स्वामीजी महाराज के वालदैन के पास आकर ठहरा करते थे और बाज़ २ औक़ात दूसरी जगह भी कि जिनकी औलाद से लोग आगरे में अब भी मौजूद हैं । स्वामीजी महाराज के पैदा होने के कुछ दिनों बाद जब तुलसी साहब स्वामीजी महाराज के वालदैन के पास आए, ख़ुद ज़बान मुबारक से उनके वालदैन से जो कि तुलसी साहब के सेवक थे, फ़रमाया कि तुम्हारे घर में परम संत प्रकट हुए हैं, अब मेरे पास तुम्हारे हाथरस आने की चंदां ज़रूरत नहीं रहा करेगी ।

तुलसी साहब ने पूना में जन्म लिया और कहा जाता है कि बाजीराव पेशवा के भाई थे । ख़ासी जवानी की उम्र तक वहाँ रहे और बाद को घर बार छोड़ कर

(१) जानकारी । (२) कुछ ज्यादा न थी ।

हाथरस में आकर क़याम-पज़ीर हुए। इसके निसबत और भी बहुत सी तफ़सीलात हैं कि जिनका तज़करा करना यहाँ ज़रूरी नहीं समझा गया। अय्याम क़याम हाथरस में बारहा बाजीराव पेशवा ने तुलसी साहब से मिलने की ख्वाहिश ज़ाहिर की और बुलाया मगर वे नहीं गए। जब बाजीराव पेशवा को खुद मौक़ा बिठूर आने का हुआ, तब ब-इसरार तुलसी साहब को बुलाया। तुलसी साहब उनकी ख़ातिर एक मर्तबा बिठूर मिलने को गए थे।

(60) Translation

I generally do not answer such letters as contain discussions on irrelevant and false allegations. However, for your behoof, I am hereby supplying you with correct information. I do not care whether one accepts it or not. I do not like to be addressed on this subject in future with a view to prolonging the discussion.

Soamiji Maharaj was a Swatah Param Sant. He never renounced family life. In accordance with the custom prevailing at the time, He was married at an early age. His consort Radhaji Maharaj, survived Him by about sixteen years. Soamiji Maharaj had no guru. In conformity with the established convention, He used to treat Baba Girdhari Das Ji who was one of the chief disciples of Sahebji or Tulsi Saheb of Hathras, and who used to reside in Agra, as a guru, more or less in the same way as Kabir Saheb had treated Ramanand Ji. Excepting the elementary principles of Surat Shabd Yoga, Girdhari Das Ji himself did not know much. How could he then instruct and teach Soamiji Maharaj, Param Sant ? On the contrary, after some time, when Soamiji Maharaj went to Girdhari Das Ji, He Himself explained and elucidated the spiritual tracts and gave discourses. In this connection, I relate below the incident connected with the death of Girdhari Das Ji.

When the time of his death drew near, Girdhari Das Ji was in Lucknow, and Soamiji Maharaj happened to be there. Two female disciples used to attend on Girdhari Das Ji. Just before his death, the Shabd, which he used to hear, stopped all of a sudden. Both the female disciples came running to Soamiji Maharaj, and requested him to save His Guru, as his Shabd had stopped. Soamiji Maharaj went to Girdhari Das Ji, and showered Daya (grace) on him. The Shabd again became audible and he died in peace. Those who had witnessed this incident, are no more ; but there are members of their families, who had heard it from their elders.

It is correct that Soamiji Maharaj's sister's son Babu Har Prashad was at one time, Post Master at Unnao. His sons and nephew are here. We do not know about the conversation between him (Babu Har Prashad) and your friend. It is possible that Babu Har Prashad told your friend that Soamiji

Maharaj used to treat Girdhari Das Ji as guru. Besides this, nothing can be said about what he (Babu Har Prashad) said and what your friend understood. Babu Har Prashad Saheb himself had not sufficiently wide acquaintance with the life history of Soamiji Maharaj.

Soamiji Maharaj's Bani (composition), Sar Bachan Poetry, delivered by His own gracious tongue, is with you. Please look at the title page carefully. It is absolutely wrong and misleading to say that Soamiji Maharaj composed no Bani.

Tulsi Saheb's Bani was with Soamiji Maharaj. Soamiji Maharaj's parents were Tulsi Saheb's disciples. But, in Satsang, mostly the Granth Saheb was recited. The Bani of Tulsi Saheb and Sar Bachan, after it was composed, were also read. But even after the composition of Sar Bachan, the recitation of Granth Saheb was not discontinued.

Tulsi Saheb of Hathras was also a Swatah Sant. He incarnated long after Goswami Tulsi Das Ji. Goswami Tulsi Das Ji was the author of Ram Charit Manas, popularly known as Ramayan. Of course, Tulsi Saheb of Hathras has in his book "Ghat Ramayan" said that He Himself was Tulsi Das Ji, the composer of the Ramayan. But having due regard to those times, He did not promulgate the Sant Mat then. He preached the worship of the Incarnation of Ram, according to the Adhikar (fitness) of the Jivas of the time. Nevertheless, at places in His composition, He had alluded to the supremacy of the Sant Mat as appears from the following couplet :

कहउँ कहाँ लगि नाम बड़ाई ।
राम न सकहिं नाम गुन गाई ।।

Kahun kahan lag Nam barai.
Ram na sake Nam gun gai.

Translation—How can I describe the eminence of Nam ? Even Ram could not do full justice to Its glory.

Tulsi Saheb of Hathras often used to come to Agra, and mostly put up with Soamiji Maharaj's parents. Sometimes He stayed with others also. Their descendants are even now living in Agra. Some time after the birth of Soamiji Maharaj, Tulsi Saheb came to the parents of Soamiji Maharaj. He Himself said to Soamiji Maharaj's parents who were His disciples that as a Param Sant had incarnated in their house, they did no more stand in need of going to Him to Hathras.

Tulsi Saheb was born in Poona. It is said that He was the brother of Baji Rao Peshwa. He was there long after attaining young age. Afterwards He left His home and settled in Hathras (1150 miles or 1900 kilometres from Poona). There are many other particulars about this incident, which need not be related here. During His stay at Hathras, Baji Rao Peshwa repeatedly desired to see Him (Tulsi Saheb) and called Him. But He did not go. When Baji Rao Peshwa himself came to Bithoor (in the district of Kanpur, and at a distance of 140 miles or 300 kilometres from Hathras), he insistently called Tulsi Saheb to Bithoor. Tulsi Saheb obliged him once and went to Bithoor.

(६१)

बतने मादर[१] से न पैदा होने की अज़मत व बुज़ुर्गी नादान आदमियों के ख़याल में हुआ करती है। संतों की अज़मत ब बुज़ुर्गी ऐसी पोच बातों पर मुनहसर नहीं है। उनकी अज़मत अंदरूनी है और उनकी करामात भी अंदरूनी हुआ करती है जिसका कि इज़हार बेरूनी, संतों ने उमूमन जायज नहीं रक्खा।

(61) Translation

It is only the ignorant who attach importance to birth taking place otherwise than from the mother's womb. But the superiority of Sants does not rest on such absurd motives. Their superiority lies in their possessing internal powers which they do not generally express outwardly.

---

(१) माँ के पेट से।

(62)

R. S.

Radhasoami Satsang
Soami Bagh
Agra
7—12—1938

राधास्वामी -

चिट्ठी तुम्हारी आई, हाल मालूम करके अफ़सोस हुआ कि तुमको अपने खाविंद की जानिब से बहुत तकलीफ़ रहती है। तुम्हारे खाविंद भी तुम्हारी निस्बत शिकायतें किया करते हैं। जो कुछ तकलीफ़ की हालत बीत रही है उसको अपने लिये राधास्वामी दयाल की मौज समझ कर धीरज के साथ बर्दाश्त करना चाहिये। अगर वास्तव में तुम्हारा दोष नहीं है मगर फिर भी तुम पर दोषारोपण किया जाता है तो समझना चाहिये कि यह कोई अगले पिछले कर्मों का असर है और कर्म कट रहे हैं। तुम अपना चित्त अंतर में, जहाँ तक हो सके, चरनों की जानिब रक्खो और नाम का सुमरन जितना बन सके ज्यादा करो। अंतर में राधास्वामी दयाल से प्रार्थना करो, वे बर्दाश्त की ताक़त अता करेंगे।

आत्मघात से बढ़कर अपने लिये कोई गुनाह नहीं है। इसका तो कभी ख्याल भी नहीं करना चाहिये क्योंकि इसमें कोई फ़ायदा नहीं है। यों तो कर्म कटते हैं और जिस क़दर कर्मों का बोझ हल्का होता जायगा

उसी कदर
सहूलियत पैदा होती जायगी और वैसे जिस तकलीफ़ और
नाउम्मीदी की हालत में इन्सान आत्मघात करता है वही
हालत एक मुद्दत दराज़ तक जारी रहती है और बड़ी
तकलीफ़ होती है। आत्मघात से तकलीफ़ कम या दूर
नहीं होजाती है बल्कि बहुत बढ़ जाती है। जैसी भी
हालत बीते उसको राधास्वामी दयाल की दया का
भरोसा रखते हुए बर्दाश्त करना चाहिये।

जिस हालत में कि तुम्हारे खाविंद तुमसे
परखाश रखते हैं, तुम्हारे लिये यहाँ आना मसलहत
नहीं है। यहीं रहो और जितनी बने परमार्थी कार्रवाई यानी सुमरन
ध्यान भजन और पोथी का पाठ नियम और शौक़ से
रोज़मर्रा करती रहो और राधास्वामी दयाल की दया
की उम्मीदवार रहो। प्यारा राधास्वामी—

माधवप्रसाद

(62) Translation

R. S.

Radhasoami Satsang
Soami Bagh
Agra
7—12—1938

Radhasoami

Received your letter. I am sorry to learn that you are much distressed due to your husband's treatment. Your husband too complains about you. Whatever trouble you are undergoing, consider it to be the ordainment of Radhasoami Dayal and put up with it with patience. If the fault actually does not lie with you, but still you are blamed you should take it to be due to your past Karams which are thus being eradicated. Direct your atten tioninward, towards the Holy Feet, as much as you can, and perform Sumiran of the Holy

Name to the greatest possible extent. Pray internally to Radhasoami Dayal. He will grant the power of endurance.

There is no sin greater than suicide. Never think of it the least. It will do you no good. Karams are, of course, being exhausted and eradicated. As their burden is lightened, greater facility will be obtained. The state of suffering and helplessness, in which one commits suicide, continues for a long, long time. This causes great pain. The trouble is not mitigated or removed by suicide. On the other hand, it is very much aggravated. Whatever condition may supervene, should be borne with patience and reliance on the mercy of Radhasoami Dayal.

As your husband is opposed to your coming here, it is not advisable for you to do so. Stay there and go on performing Parmarthi acts, i. e., Sumiran, Dhyan and Bhajan and the recitation of the Bani, regularly and with zeal, as much as you can. Always expect the grace of Radhasoami Dayal.

Radhasoami. Madhav Prasad

(63)

R. S.

Radhasoami Satsang
Soami Bagh
Agra
26—7—1939

राधास्वामी-

उपदेश के दोनों परचे भेजे जाते हैं, इनको तुम अपने पास रक्खो। जिसके लिये जिस उपदेश की हम इजाजत दे उसको वह समझा दिया करो और छपे हुए फार्म की कुछ फर्दें भी तुम्हारे पास भेजी जाती हैं, उपदेश लेनेवाले का नाम पता वगैरा उनमें लिखकर यहां भेज दिया करो।

बच्चू कहार नाम का एक शख्स जो यूनीवर्सिटी हिन्दू बोर्डिंग हाउस में नौकर है, तुम्हारे पास आवेगा उसको सुमरन ध्यान की विधि अच्छी तरह समझा देना।

प्यारा राधास्वामी-

माधवप्रसाद

(63) Translation

R. S.

Radhasoami Satsang
Soami Bagh
Agra
26—7—1939

Radhasoami,

Printed leaflets of initiation for both modes of devotion are sent herewith. You should keep them with you. You are to explain the particular mode of deovotion when so directed by me. Some printed forms for noting the particulars of an initiate, such as his name, address, etc., are also sent. Whenever anyone is initiated, the form should be properly filled in and sent here.

There is one Bachchu Kahar employed in the University Hindu Boarding House. He will go to you. Explain to him the practice of Sumiran and Dhyan fully well.

Radhasoami.

Madhav Prasad

(64)

R. S.

RADHASOAMI SATSANG
SOAMI BAGH
AGRA
4-8-41

राधास्वामी!

चिट्ठी तुम्हारी आई हाल मालूम हुआ। जितना बने नियम और शौक़ से सुमरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ करते रहो। राधास्वामी दयाल की दया से अंतर में धीरे २ तरक्की होती चलेगी। और जब २ तुमको मौका मिले यहां सतसंग में भी आया जाया करो। ज्यादा राधास्वामी।

माधव प्रसाद

(64) Translation

R. S.

Radhasoami Satsang
Soami Bagh
Agra
4—8—41

Radhasoami.

Yours to hand. I learnt its contents. Go on performing Sumiran, Dhyan and Bhajan and the recitation of the holy books regularly and with zeal, as much as you can. By Radhasoami Dayal's Daya, internal progress will be made gradually. Whenever you get an opportunity, you may also visit the Satsang here.

Radhasoami.

Madhav Prasad

(65)

Evil and impure thoughts referred to by you indicate the working out of *Sanchit Karmas**in the case of the followers of the sublime R. S. Faith. The Almighty Father is showing His Grace even while you are under their attack but you should continue to pray to the ever Merciful R. S. to get you rid of them. The only sure though slow remedy is regular and trustful running to the lotus feet of R. S. internally, i. e,. performing Dhyan and Bhajan daily both morning and evening and at other times while haunted by such thoughts.

(६५) अनुवाद

यदि मन में बुरे और अपवित्र ख़याल व गुनावन उठते हों तो राधास्वामी मत के अनुयाइयों को समझना चाहिये कि उनके संचित कर्म कट रहे हैं । उन कर्मों के उदय होने और उनका असर व्यापने में भी राधास्वामी दयाल की दया शामिल है । लेकिन उनसे जल्द छुटकारा पाने के लिये राधास्वामी दयाल के चरन कंवलों में सदा प्रार्थना करते रहना चाहिये । भक्ति भाव के साथ अंतर में राधास्वामी के चरनों की ओर तवज्जह और चित्त को फेरना चाहिये यानी नित्य नेम से सुबह और शाम तथा अन्य वक्तों में भी

(1) The accumulated Karams or acts done in the past and present lives, the result of which is to be experienced in future lives.

जब कि ऐसे गुनावनों और ख़यालों का ज़ोर हो, ध्यान भजन करना चाहिये। यही एक इलाज और उपाय है जिससे निश्चय करके लाभ प्राप्त होगा, अगर्चे धीरे धीरे।

(66)

In the matter of regulating one's conduct it is found by experience that intellectual faculty is of little avail: the secret of it is to be found in the fact that all the impressions gained through the medium of the senses, and all the actions performed, gradually lead to produce an impression on the spirit, and in short all the influences are, so to say, being ingrained in it, which when ripe and sufficiently strong produce the result of what are called *Prarabdh Karmas**. It will then be seen that all we do and feel here is not calculated to result in anything which will ultimately bring about our emancipation. The only hope lies in the grace and mercy of the Supreme Father. Contact with Him or with the current from His Holy Charans[2] is the only means of our salvation, as with the lower currents, the higher ones too are being gradually assimilated into our entities and when they become ripe for action the process of our emancipation and elevation into the higher regions will manifest itself and will go on until the Supreme Father clasps His fallen children in His August and Blissful Charans.

(६६) अनुवाद

यह अनुभव की बात है कि अपना आचरण ठीक रखने के लिए बुद्धि से ज़्यादा लाभ नहीं होता। इसका भेद यह है कि जिन बातों का इन्द्रियों द्वारा अहसास किया जाता है और जो काम किये जाते हैं उन सबसे सुरत पर नक्श पैदा होते हैं यानी संक्षेप में यों कहो कि वह कुल असर उसमें समा जाते हैं और काफ़ी बलवान होकर और पक कर प्रारब्ध करम का फल पैदा करते हैं। इससे ज़ाहिर या स्पष्ट है कि जो कुछ भी हम यहाँ करते हैं या महसूस करते हैं, उससे वह नतीजा नहीं निकलता है जिससे अंत में हमारी मुक्ति और छुटकारा हो। सारी आशा केवल परम पिता की मेहर और दया में ही है। उनसे या उनके पवित्र चरनों से जो धार आती है, उससे संबंध जोड़ना ही हमारे उद्धार का एक मात्र ज़रिया है। नीचे रुख़ वाली धार के साथ ऊपर रुख़वाली धारें भी हमारी व्यक्ति में धीरे २ जज्ब होती हैं और जब वह पक कर कार्रवाई करने के लिए तैयार हो जावेंगी तब हमारे छुटकारे और ऊँचे देशों में चढ़ाई करने की कार्रवाई अपना इज़हार करेगी और जब तक परम पिता अपने पामाल* बच्चों को अपने विशाल और आनंद-मय चरनों में न लेंगे तब तक जारी रहेगी।

(1) The acts performed in the past or present life, the fruit of which is to be reaped in the present life (2) Feet.

(१) पैरों से रौंदा या कुचला हुआ। दुर्दशा-ग्रस्त।

(67)

The Supreme Father has in His infinite grace ordained a unique means of locomotion from here to His high abode, viz., the current of His own spirit unmixed with anything else. Herein lies the immense superiority of Radhasoami Faith over others, which are employed as the means of ascent as a medium more or less intermixed with matter. How beautiful is the idea, you lay yourself in the lap of the Supreme Mother, the original current from the Supreme Father, and are carried to His august presence never to wander into any foreign regions dominated upon by the arch enemy of humanity, Kal. The means and the end (the goal) are in essence the same (*Bhakti*,[1] *Bhakt*[2] and *Bhagwant* (*Guru*) are in essence one and the same).

(६७) अनुवाद

परम पिता ने यहाँ से अपने ऊँचे धाम को ले जाने के लिए अपनी अपार दया से एक अद्‌भुत साधन का प्रबन्ध कर दिया है। वह साधन ख़ुद उसकी चैतन्य धार, बिना किसी अन्य चीज़ की मिलावट के, है। इसी में राधास्वामी मत की बड़ी भारी श्रेष्ठता है, ब-मुक़ाबले अन्य मतों के जिनमें चढ़ाई के साधन कमोबेश माया की मिलौनी के हैं। यह कितनी सुन्दर कल्पना या विचार है कि तुम परम माता की जो कि परम पिता से निकली हुई आदि धार है, गोद में अपने तईं सौंप दो और वह तुम्हें परम पिता के बिशाल रूप के सामने ले जावे जहाँ से मनुष्य मात्र के शत्रु काल के देश में जो कि विदेश है, फिर न आना पड़े। निशाना और उसका साधन दोनों सार रूप से एक हैं। भक्ति, भक्त और भगवन्त यानी गुरु का जौहर एक ही है।

(68)

You need not brood too much on your present conditions. Let matters slide as they are, trustful of the eventual rectification by the Grace and Mercy of the Supreme Father. Of course be vigilant as far as possible, but if your efforts are not successful, don't fall into a condition of despair. You ought to pray as often as you can internally, this is all that you can do and leave the rest to Mauj. Purity of thought is not easily attainable, but any delay in action should, of course, be very carefully and zealously guarded against. I am sure that the Supreme Father Radhasoami will help you.

(1) Devotion. (2) Devotee.

(६८) अनुवाद

तुम्हें अपनी वर्तमान अवस्था पर बहुत ज्यादा चिन्तित रहने की ज़रूरत नहीं। परम पिता की मेहर और दया से अन्त में सब ठीक हो जावेगा, ऐसा भरोसा रखते हुए इस वक्त जो अवस्था बीत रही है, उसे बीतने दो। हाँ, जहाँ तक बने चौकस जरूर रहो। अगर तुम्हारी कोशिश कारगर न हो, तो निराशता की अवस्था में मत पड़ो। जितनी दफ़ा हो सके, अंतर में प्रार्थना करनी चाहिए। इतना ही तुम कर सकते हो, बाकी मौज पर छोड़ दो। अपने विचारों में शुद्धता प्राप्त करना, सहज नहीं है। मगर इस कार्य में बिलम्ब न हो, इस बात की बहुत होशियारी और तत्परता से अहतियात रखनी चाहिए। मुझे विश्वास है कि परम पिता राधास्वामी तुम्हारी सहायता करेंगे।

(69)

I do not profess to be able to make a declaration either way, but in my opinion, the best course seems to be to wait till one receives within one's self unmistakable proofs of the manifestation of Sant Sat Guru in the person of anybody. The Sant Sat Guru when He chooses to manifest Himself in human form, will, I believe, attract, by some means or other, all who are desirous of availing themselves of His protection.

(६९) अनुवाद

मैं कोई निर्णय इधर या उधर देने के योग्य होने का दावा तो नहीं करता, मगर फिर भी मेरी राय में सर्वोत्तम बात यह है कि जब तक किसी को अपने अन्तर में संत सतगुरु के किसी व्यक्ति की देह में प्रकट होने के अचूक प्रमाण न मिल जावें, उस समय तक उसे चाहिए कि इन्तज़ार करे। मुझे यक़ीन है कि जब संत सतगुरू अपने आपको मनुष्य चोले में प्रकट करेंगे तो उन लोगों को जो उनकी सरन में आने के अभिलाषी होंगे, किसी न किसी प्रकार अपनी ओर आकर्षित करेंगे।

(70)

That happy days will come back to us, there is not the slightest doubt. Of this I am certain that the protecting hand of Maharaj Saheb is with us, more watchful than ever, and these hard times we are undergoing will nof only be attended by their compensating advantages, but will bring in their turn something very substantial, abiding and highly precious... .....something which will make us forget our privations and immerse us in overflowing stream of bliss and love.

Vague, though these expectations appear, but their reality and eventual realization are beyond doubt.

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1925

बाबूजी महाराज इलाहाबाद में सन् १९२५

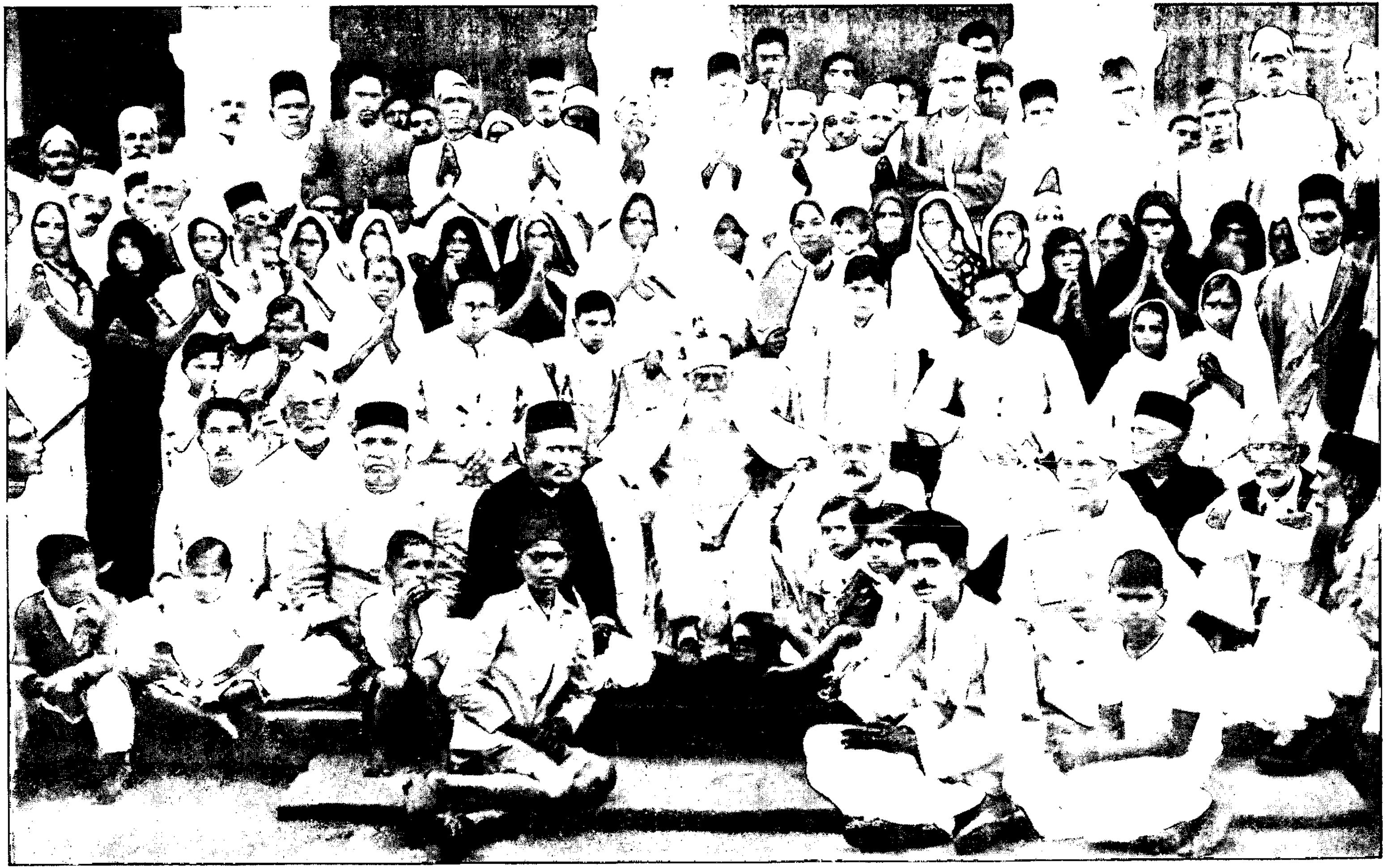

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1932

(७०) अनुवाद

इसमें रत्ती भर सन्देह नहीं कि हमारे लिए ख़ुशी के दिन फिर आवेंगे। इस बात का मुझे पूर्ण विश्वास है कि महाराज साहब की रक्षा और सम्हाल हमारे अंग संग है, वह पहले से अधिक हमारे निगरां हैं और यह सख़्ती का ज़माना जो हम पर गुज़र रहा है, उसके बदले में न सिर्फ़ हमें कुछ लाभ होगा बल्कि इसके कारण कुछ ऐसी भारी, स्थायी और बहुमूल्य वस्तु हमें मिलेगी कि जिससे हम अपनी तक़लीफ़ें भूल जावेंगे। और आनन्द व प्रेम की भरपूर और छलकती हुई धारा में ग़र्क़ हो जावेंगे।

ये आशाएँ अभी अनिश्चित मालूम होती हैं, परन्तु उनकी सत्यता और अंत में उनके पूरा होने में कोई संदेह नहीं है।

(71)

You have now been thrown on the broad world, and you will have to bear with patience. fortitude and courage, relying on the gracious and merciful help of the Supreme Father Radhasoami Dayal, any difficulty that may cross your way. But rest assured that the benign protection of the Supreme Father will always be with you. Always attend Satsang, and devote half an hour in the morning and evening to Sumiran and Dhyan. In any difficulty that faces you, turn to Radhasoami Dayal for help. Repeat the holy name internally, and you will find consolation and guidance.

(७१) अनुवाद

अब तुम दुनिया के विस्तृत क्षेत्र में आ खड़े हुए हो। परम पिता राधास्वामी दयाल की दयापूर्ण सहायता पर भरोसा रखते हुए जो कुछ कठिनाइयाँ तुम्हारे मार्ग में आवें, उनको सब्र, हिम्मत और इस्तक़लाल[१] से झेलना पड़ेगा। मगर विश्वास रक्खो कि परम पिता की हितकर रक्षा सदैव तुम्हारे साथ रहेगी। नित्य सतसंग की हाज़िरी दो और सुबह शाम आध २ घंटे सुमरन ध्यान करो। जो कठिनाई भी तुम्हारे सामने आवे, उसके लिए राधास्वामी दयाल से सहायता माँगो। अंतर में पवित्र नाम, राधास्वामी नाम लो, तुमको धीरज और हिदायत मिलेगी।

(72)

Your case is a peculiar one. You continued performing the contemplation of Huzur Maharaj's form during the lifetime of Maharaj Saheb and now that

(१) धीरज।

the latter has departed you enquire whether you should not contemplate His form. Not that there is no objection to this course, but this is also the right one; but for the successful performance of Dhyan, it is necessary that love and regard of some degree be generated in the mind of the devotee, and if you find that these are not lacking to an extent to render the practice wholly unsuccessful, you make the change in the form proposed. If, however, you find that the contemplation of Huzur Maharaj's form is attended with greater ease and success, then in that case you might continue to contemplate Huzur Maharaj's form as you have hitherto done, till the next advent of Sant Sat Guru in human form.

(७२) अनुवाद

तुम्हारा मामला निराला है । महाराज साहब के जीवन काल में तुम हुज़ूर महाराज के स्वरूप का ध्यान करते रहे और अब जब महाराज साहब धाम सिधार गए हैं, तुम पूछते हो कि तुम्हें उनके स्वरूप का ध्यान करना चाहिए या नहीं । ऐसा करने में कोई एतराज़ नहीं है और यह ठीक भी है, परन्तु ध्यान सफलता से बनने के लिए यह आवश्यक है कि अभ्यासी के मन में किसी क़दर प्रेम और भाव उत्पन्न हो और अगर तुमको यह मालूम हो कि ये चीज़ें तुम में इस दर्जे कम नहीं हैं कि जिसमे अभ्यास बिल्कुल न बन सके तो तुमको स्वरूप के बदलने का इख़्तियार है । लेकिन अगर तुमको हुज़ूर महाराज के स्वरूप का ध्यान करने में ज़्यादा सहूलियत और सफलता मालूम हो तो उस हालत में जब तक भावी[1] संत सतगुरु मनुष्य चोले में प्रकट हों, तुम हुज़ूर महाराज का ही ध्यान करते रहो जैसा कि अब तक करते आये हो ।

(73)

The successful performance of contemplation does not necessarily lie in the manifestation of the Form. This is a measure of success which falls to the lot of a few, but it is an unmistakable sign of grace attending the performance of the practice, if the concentration of mind and spirit takes place at one of the higher centres and bliss of contact with the higher spiritual current is experienced. If this measure of success is achieved and the progress is steady, the result of the contemplated Form must contribute materially to the spiritual advancement of the devotee.

(७३) अनुवाद

ध्यान का अभ्यास अच्छी तरह से बनने के लिए यह ज़रूरी नहीं है कि स्वरूप प्रकट होवे । अभ्यास में इतनी सफलता का प्राप्त होना तो बहुत कम लोगों को नसीब

(१) आइंदा होने वाले ।

होता है। लेकिन ऊँचे घाटों में से किसी घाट पर मन और सुरत का समूह बने और ऊँचे देश से जो चैतन्य धार आ रही है, उससे मेला होने पर जो रस और आनन्द मिलता है, वह मिले तो समझना चाहिए कि यह अभ्यास में दया नाज़िल होने का बिल्कुल साफ़ निशान है। अभ्यास में अगर इतने दर्जे की कामयाबी हासिल हो और चाल बराबर चलती रहे तो यह समझना चाहिए कि जिस स्वरूप का ध्यान किया जा रहा है उससे अभ्यासी की परमार्थी तरक़्क़ी होने में काफ़ी मदद मिलेगी।

(74)

Our prayers continue to be responded to; if this were to cease then there will be an end to all spiritual progress. The response is, of course, internal and the concentration of mind and spirit and experience of internal bliss are the more common forms of contact with the higher spiritual current or the manifestation of the grace of the Supreme Father Radhasoami Dayal.

(७४) अनुवाद

हमारी प्रार्थनाएँ ब-दस्तूर सुनी जा रही हैं। अगर यह बन्द हो जावे तो कुल आध्यात्मिक उन्नति यानी रूहानी तरक़्क़ी भी बन्द हो जावेगी। हाँ, प्रार्थनाओं का जवाब अन्तर में मिलता है। मन और सुरत का समूह बनना और अंतर में आनन्द का अनुभव होना, वह आम तरीक़े हैं जिनसे जाना जा सकता है कि ऊँचे देश से जो चैतन्य धार आती है, उससे मेला हो रहा है और परम पिता राधास्वामी की दया नमूदार हो रही है।

(75)

The delay that occurs in the ascension of the spirit is due mainly to the want of power to bear and retain the spiritual beatitude, which the Supreme Father is ready to pour upon His devotees. Devotion in particular and various practices enjoined in the Radhasoami Faith, all gradually act towards the evolution of spirituality confined in the human frame and its mental machinery, and as it is being evolved the Bhakt[2] becomes spiritualized (Suratwant) and fitted for admission in the higher regions. The process is necessarily slow but the devotee should not lose heart and gratefully and cheerfully conform to what the Mauj of the Sant Sat Guru does for him. The more he becomes amenable and subservient to the action of Mauj the more he will find how admirably suited it is for his development. The Suratwant will engender a feeling cognate with love and add great impetus to his progress and upward journey.

---

(१) प्रकट। (2) *Devotee.*

(७५) अनुवाद

सुरत की चढ़ाई में जो देर होती है, उसका ख़ास कारण यह है कि परम पिता अपने भक्तों के लिए रूहानी मसर्रत यानी आध्यात्मिक आनन्द का जो प्रवाह करने को तैयार है, उसे झेलने और रखने की हम में ताक़त नहीं है । भक्ति और विशेषकर राधास्वामी मत में जो अन्य अभ्यास बतलाए गये हैं, वह सब मिल कर मनुष्य की देह और मन में जो सुरत का अंग दबा हुआ है उसको निकालने की आहिस्ता २ कार्रवाई करते हैं और ज्यों ज्यों सुरत निकलती जाती है, भक्त सुरतवंत और ऊँचे देशों में जाने के योग्य होता जाता है । इस विधि में लाज़मी तौर पर देर तो होती है, मगर अभ्यासी भक्त को हिम्मत नहीं हारनी चाहिए और जो कुछ संत सतगुरु की मौज से उसके लिए हो, उससे शुकरगुजारी और ख़ुशी के साथ मुआफ़क़त करनी चाहिये । मौज की कार्रवाई की जिस क़दर ज़्यादा मातहती और ताबेदारी क़बूल करेगा यानी जितना मौज के अनुसार अपना बर्ताव रक्खेगा उतना ही ज़्यादा उसको मालूम पड़ेगा कि उसकी तरक़्क़ी के लिए वह (मौज) किस क़दर काबिल-तारीफ़ और मौज़ूं है । सुरतवंत में प्रेम की ऐसी भावना पैदा हो जावेगी जिससे उसकी उन्नति और चढ़ाई की गति में बहुत तेज़ी आ जावेगी ।

(76)

It is a custom amongst us which has also been enunciated as an article of faith universally recognised by the followers of our religion that a Sant Sat Guru during His lifetime and more usually at the time of His approaching departure from this world nominates His successor and we hold this as a belief that the successor continues the work of salvation.

(७६) अनुवाद

हम लोगों में यह प्रथा चली आरही है, बल्कि हमारे मातावलम्बियों का यह विश्वास है कि संत सतगुरु अपने जीवन काल में ही, और विशेष कर अंतर्द्धान होने से पहले, अपने उत्तराधिकारी संत सतगुरु का नाम बतला जाते हैं । हमारा यह भी विश्वास है कि उद्धार की कार्रवाई आगामी संत सतगुरु द्वारा ब-दस्तूर जारी रहती है ।

(77)

Maharaj Saheb, our last departed Spiritual Guide, very shortly bofore His departure, in one of His last discourses or public utterances in open Satsang, declared in the presence of a large number of people that the *"Nij Ansh"* or a direct emanation from the Supreme Source endowed with full spiritual powers, existed at the time in the body of a female and further exhorted that all should direct their devotion to Her instead of trying to find a successor in one or other of the Satsangis. He added that though

She, owing to Her being in a female garb, would not be able to discharge the functions, in full, of an Acharya of the Mat, yet She would accord internal assistance necessary for the spiritual advancement of Her devotees, and also give external assistance to some extent much in the same way as the female adepts of old, viz, Mira Bai and Sahjo Bai did.

In addition to above, Maharaj Saheb, about a month before this declaration in Satsang, gave out in the presence of myself, Babu Baleswar Prasad, Gurumouj Saran, Cooper Saheb and Mehtaji that the *Nij Ansha* existed in His sister Buaji Saheba.

(७७) अनुवाद

हमारे अंतिम संत सतगुरु महाराज साहब ने, अंतर्द्धान होने से कुछ दिन समय पूर्व, अंतिम दिनों के एक प्रवचन में, यानी आम सतसंग में, अनेक सतसंगियों की मौजूदगी में, यह फ़रमाया था कि "निज अंश" यानी कुल्ल-मालिक की धार, सर्व आध्यात्मिक शक्तियों से सम्पन्न, इस समय स्त्री चोले में विराजमान है और हिदायत फ़रमाई कि सब लोगों को अपनी भाव भक्ति उनके चरनों में लानी चाहिए और इधर उधर किसी सतसंगी में सतगुरु भाव न लाना चाहिए। महाराज साहब ने यह भी फ़रमाया कि स्त्री चोले में होने की वजह से वह पूरी तौर पर आचार्य्य की कार्रवाई न कर सकेंगी, लेकिन अपने भक्तों की आध्यात्मिक उन्नति में, वह अंतर में आवश्यक सहायता प्रदान करती रहेंगी, और बाहर में भी थोड़ी बहुत मदद, पिछले समय के स्त्री संतों मीराबाई और सहजो बाई की तरह, देती रहेंगी।

इसके अलावा सतसंग में इस घोषणा के लगभग एक मास पूर्व महाराज साहब ने मेरी, बाबू बालेश्वर प्रसाद, गुरुमौज सरन, कूपर साहब और मेहताजी की मौजूदगी में कहा था कि "निज अंश" उनकी बहन बुआजी साहबा में मौजूद है,

(78)

It is not true that I ever said that Nij Dhar has been withdrawn on the departure of Maharaj Saheb. It never recedes or the work of salvation will stop. What I meant was that it was not visible to us in human form.

(७८) अनुवाद

यह ग़लत है कि मैंने कभी ऐसा कहा हो कि महाराज साहब के धाम सिधार जाने पर निज धार खिंच गई है। वह कभी नहीं लौटती है, वरना उद्धार की कार्रवाई बन्द हो जावेगी। मेरे कहने का मतलब तो यह था कि वह हमें मनुष्य चोले में दिखाई नहीं दे रही है।

(79)

Several of your questions are more or less of academical interest and I doubt if their discussion will lead to healthy furtherance of Parmarthi advantage at the present state. The main point is about 'Nij Dhar' in Buaji Saheba and the best answer that I can give to the question relating to it and those connected with the subject is to give as close a reproduction as I can of the statement made by Maharaj Saheb in that connection a little more than a month before His departure :- "Log kiyon idhar udhar tatolte phirte hain, koi ispar bhao lata hai koi uspar bhao lata hai. Yeh sab vahiyat hai, agar bhao lana hai to vahan kiyon nahin late jahan Nij Ans mojood hai, woh Nij Ans istri chole main hai, bavajah istri chola hone ke puri tarah par karravai hone ki ummid nahin ki ja sakti, agar mauj ho to thori bahot karravai jese ki Mirabai Sahjobai ne ki us tor par ho sakti hai, aur ainda vahi Nij Ans purush chole main akar puri tor par acharya ki karravai karegi."

This declaration in open Satsang does not specify the 'Istri Chola' but a few days prior to the day on which this declaration was made, Maharaj Saheb informed in camera four or five Satsangis including B. Prem Prasad that the Nij Dhar was in His sister. This fact was also communicated to me, in strict confidence by Maharaj Saheb some time in 1887. Maharaj Saheb told me at that time that this was what Soamiji Maharaj communicated to Huzur Maharaj, and Huzur Maharaj in His turn communicated it to Maharaj Saheb.

This testamentary declaration, an extract of which is given above, most solemnly made in open Satsang as a warning to erring Satsangis, cannot count on a par with any other complimentary expression made in the family circle, about any other female member of the family.

This is what I hold we have for our guidance and people are at liberty to accept it or not. I was never unmindful of these directions and from time to time elicited information, through a friend of mine who had constant access to Buaji Saheba as to what Her Mauj was in the matter and the reply till some time before the last Bhandara of Maharaj Saheb was that She was not prepared to take action in response to the directions of Maharaj Saheb.

It was on the occasion of the last Bhandara that She, of Her own accord, expressed Her gracious desire to see me, and on the occasion of the interview granted to me by Her, She gave me certain directions which I try, through Her grace and assistance, to follow.

In regard to the questions relating to certain statements attributed to me, I do not feel myself bound to answer questions arising out of incorrect

and incomplete statements of facts. The main statement is inaccurate and suppresses a clear expression of my ideas on the subject made within a couple of days or so of Maharaj Saheb's departure that "Nij Dhar has never ceased to exist, and does exist in human form".

When we happen to meet together we shall discuss these matters in greater detail and till then a statement of my belief given above will, I trust, satisfy your desire to know what my views are in the matter.

(७६) अनुवाद

तुम्हारे बहुत से प्रश्न केवल इल्मी दलील से ताल्लुक़ रखते हैं। उन पर बहस करने से, मौजूदा हालत में, कोई ख़ास परमार्थी लाभ प्राप्त होने की आशा नहीं है। ख़ास प्रश्न बुआजी साहबा में "निज धार" मौजूद होने के विषय में है। इस संबंध में केवल इतना ही काफ़ी है कि महाराज साहब ने अंतर्द्धान होने से एक मास से कुछ अधिक पहले जो फ़रमाया था, उसे, जहां तक हो सके, उन्हीं के शब्दों में लिख दिया जावे। वह यह है:—

> लोग क्यों इधर उधर टटोलते फिरते हैं, कोई इस पर भाव लाता है, कोई उस पर भाव लाता है। यह सब वाहियात है। अगर भाव लाना है तो वहां क्यों नहीं लाते जहाँ निज अंश मौजूद है। वह निज अंश स्त्री चोले में है। ब-वजह स्त्री चोला होने के पूरी तरह पर कार्रवाई होने की उम्मीद नहीं की जा सकती। अगर मौज हो तो थोड़ी बहुत कार्रवाई जैसी कि मीराबाई सहजोबाई ने की, उस तौर पर हो सकती है और आइन्दा वही निज अंश पुरुष चोले में आकर पूरी तौर पर आचार्य्य की कार्रवाई करेगी।

आम सतसंग में की गई इस घोषणा में यह नहीं बतलाया कि कौन से स्त्री चोले में निज अंश है। लेकिन उससे कुछ दिनों पहले महाराज साहब ने चार पाँच सतसंगियों से जिनमें बा० प्रेम प्रसाद भी मौजूद थे, तख़लिये[1] में फ़रमाया था कि निज धार उनकी बहन में विराजमान है। यही बात महाराज साहब ने गुप्त तौर पर मुझसे सन् १८८७ ईसवी में भी बतलाई थी। उन्होंने कहा कि ऐसा स्वामीजी महाराज ने हुज़ूर महाराज से फ़रमाया था और हुज़ूर महाराज ने उनसे कहा।

ऊपर उद्धृत की हुई यह उत्तराधिकार की घोषणा जो पथभ्रष्ट होने वाले सतसंगियों के लिये चेतावनी के रूप में आम सतसंग में गंभीरतापूर्वक की गई थी, अपने परिवार की किसी अन्य महिला के प्रति परिवारजनों के बीच में कहे जाने वाले प्रशंसापूर्ण अभिवचन में शुमार नहीं की जा सक्ती।

---

(१) अकेले में।

हमारे पथ प्रदर्शन के लिये यही घोषणा है। लोग चाहे मानें या न मानें। इसको मैं कभी भी नही भूला। और समय २ पर अपने एक मित्र के ज़रिये जो बुआजी साहबा के पास बिना रोक टोक आते जाते थे, दरियाफ्त करता रहा कि उनकी इस विषय में क्या मौज है। महाराज साहब के पिछले भंडारे से पहले बराबर यही जवाब मिला कि अभी कार्रवाई करने की मौज नहीं है।

पिछले भंडारे के अवसर पर बुआजी साहबा ने स्वयं मुझे बुलाया और कुछ हिदायतें कीं जिन पर, उनकी दया मेहर से, अमल दरामद करने की कोशिश करता हूँ।

यह मान कर कि मैंने चंद बातें कहीं हैं, कुछ प्रश्न उनकी निसबत किये गये हैं। ऐसी ग़लत और बे-बुनियाद बातों का उत्तर देने के लिये मैं बाध्य नहीं हूँ। ख़ास बात जो महाराज साहब के अंतर्द्धान होने के दो तीन दिन बाद मैंने कही थी वह यह है कि "निज धार लौट नहीं गई है, बल्कि मनुष्य चोले में मौजूद है।" इसे ठीक तौर से नहीं बयान किया जाता बल्कि मेरे इन स्पष्ट विचारों के प्रतिकूल किया जाता है।

आइन्दा मिलने पर हम लोग इस विषय पर ज़्यादा विस्तार के साथ बात चीत करेंगे। फिलहाल जो कुछ मैंने ऊपर लिखा है, उससे आपको इतमीनान हो जावेगा कि इस मामले में मेरे क्या ख़यालत हैं।

(80)

Your letter does not clearly say what exactly your enquiry is, but if you want to know what my belief is, I may tell you that I am guided by the parting declaration which Maharaj Saheb made in open Satsang, a little over a month before His departure, viz., that the Nij Dhar is in His sister and that any spiritual assistance that we can get will be from Her. In fact He spoke to me about this some 20 years ago before His departure, but its true and real significance dawned upon me when His external assistance was withdrawn. Buaji Saheba did not countenance any approach to Her with this object till the last Bhandara of Maharaj Saheb when She graciously condescended to grant Her darshan and external assistance to a limited extent; with this belief which I firmly hold, you can naturally conclude that I have not absolutely the slightest belief (to confess it in the mildest possible form) in any other cult.

(८०) अनुवाद

आपके ख़त से पता ही नहीं लगता कि आप क्या पूछते हैं। लेकिन अगर आप मेरे विचार जानना चाहते हैं तो मैं यह कह दूं कि मेरे लिये पथप्रदर्शक महाराज साहब की

वह अंतिम घोषणा है जो अंतर्द्धान होने से एक महीने से कुछ ज़्यादा पहले उन्होंने खुले आम सतसंग में की थी। वह यह है कि निज धार उनकी बहन में विराजमान है और जो कुछ कि आध्यात्मिक सहायता हम लोगों को मिल सकती है वह उन्हीं से (बुआजी साहबा से) मिलेगी। वैसे यह बात महाराज साहब ने अंतर्द्धान होने से लगभग बीस वर्ष पहले ही मुझसे कही थी। मगर उसका ठीक मतलब और महत्त्व मुझे तब समझ में आया जब कि बाहर में उनका सहारा जाता रहा। महाराज साहब के पिछले भंडारे तक बुआजी साहबा ने इस विषय में कोई बात करना मंजूर ही नहीं किया। पिछले भंडारे से उन्होंने दया से थोड़ा बहुत दर्शन देना और बाहर में आध्यात्मिक मदद पहुँचाना शुरू किया है। मेरे इस दृढ़ विश्वास को जानने के बाद आप ख़ुद ख़याल कर सकते हैं कि मुझे अन्य किसी बात में ज़र्रा बराबर भी विश्वास और एतक़ाद नहीं हो सकता।

(81)

There are a number of Satsangis who have attained considerable progress in their practice and have developed within themselves, deep and intense love (of course in varying degrees) for the Lotus Feet of the Supreme Father and enjoy unceasingly the special grace and mercy and experience ecstatic bliss of communion with the internal spiritual current. Beyond this no definite statement can be made as to the stage attained by them, nor is this of any practical value for others.

(८१) अनुवाद

ऐसे बहुत से सतसंगी हैं जिन्होंने अभ्यास में काफ़ी तरक़्क़ी की है और मालिक के चरन कँवल में अपने अपने दरजे का गहरा प्रेम भी रखते हैं और अंतर में चैतन्य धार के स्पर्श से बराबर दया मेहर और आनन्द प्राप्त करते हैं। इससे ज़्यादा और कुछ नहीं कहा जा सकता कि किसने कहां तक की गति प्राप्त की है और न दूसरों को इस बात के जानने से कोई फ़ायदा ही हो सकता है।

(82)

The *Radhasoami Mat** is essentially *Guru Mat*and nopart of the practice enjoined can be dissociated from the constant and life giving assistance accorded by the Sant Sat Guru. Repetition of the Holy Name Radhasoami will result in a certain degree of concentration but its successful performance presuppose the acceptance by the devotee of the protection of the Sant Sat Guru. Even though contemplation of the Swarup* be not performed for a time, any success achieved in the repetitionof theHoly Name is dependent upon a trustful reliance upon the Sant Sat Guru. Guru is all in all in the

* Faith. Religon. * Form of Guru.

Radhasoami Mat and while it is necessary to devote greater attention in the beginning to the repetition of the Holy Name, contemplation of Guru Swarup should also be performed daily even though the Form of Guru may not be visible. As the purification and concentration of mind are secured, the contemplation of Guru Swarup would be rendered easier, and by and by when a feeling of love is generated for the Sant Sat Guru, His Form will become visible in practice, or at any rate, glimpses will be had occasionally of His intensively attractive and adorable Form.

(८२) अनुवाद

राधास्वामी मत असलियत में गुरु मत है और इसमें जो अभ्यास बतलाया जाता है उसका कोई भी अंग बिना संत सतगुरु की निरंतर जीवन प्रदान करने वाली सहायता के नहीं बन सकता है। राधास्वामी नाम के सुमरन से किसी दरजे तक चित्त की एकाग्रता हासिल होगी परन्तु इसका सफलता पूर्वक बनना इस बात पर निर्भर है कि अभ्यासी ने संत सतगुरु की शरण ली है। चाहे कुछ समय तक संत सतगुरु के स्वरूप का ध्यान न भी किया जावे, तो भी नाम के सुमरन में कुछ भी सफलता प्राप्त होना संत सतगुरु पर भाव सहित भरोसा करने पर मुनहसर है। राधास्वामी मत में गुरू ही सर्वे-सर्वा हैं और गो शुरू में नाम के सुमरन में ज़्यादा ज़ोर देने की ज़रूरत है, गुरू स्वरूप का ध्यान भी रोजाना करना चाहिए, चाहे स्वरूप न दिखाई दे। जैसे २ मन की सफ़ाई और एकाग्रता हासिल होती जावेगी, गुरू स्वरूप का ध्यान आसान होता जावेगा। होते होते जब संत सतगुरु के प्रति प्रेम भाव पैदा होगा, उनका स्वरूप ध्यान में दरसने लगेगा या कम से कम कभी २ उनके अत्यन्त मनमोहन पूज्यनीय स्वरूप की झलक दिखाई देगी।

(83)

Even though Maharaj Saheb has departed, He will continue to render spiritual assistance through His form, till He actually assumes the function of regeneration in another Form. His sister in whom the Nij Dhar exists is gradually becoming more and more accessible and has now graciously consented to preside in Satsang held at Her house; but contemplation need not be resorted to, until She grants internal direction of an unmistakable character to that effect, or people by associating with Her become cognizant by self-experience of Her exalted position. and find a feeling of love and devotion generated for Her. Love and faith are essential in the performance of contemplation of Guru Swarup and until they are spontaneously generated no change should be made in the practice of contemplation of Form. Mauj will gradually bring about the change required. I am confident that those who are located at such a great distance from Her will receive internal directions

of an unusual character, and I shall be glad to know of any experiences which you and your associates may receive there.

(८३) अनुवाद

अगर्चे महाराज साहब गुप्त हो गये हैं पर अपने अंतरी स्वरूप से बराबर आध्यात्मिक सहारा देते रहेंगे। जब मौज होगी, दूसरे चोले से उद्धार का यही काम करेंगे। उनकी बहन जिनमें निज धार विराजमान है, शनैः शनैः अधिकाधिक प्रकट हो रही हैं और अब सतसंग में जो उनके निवास स्थान पर होता है, अधिष्ठाता का आसन ग्रहण करने लगी हैं। लेकिन ध्यान में स्वरूप बदलने की आवश्यकता उस वक़्त तक नहीं है जब तक कि वह अंतर में कोई अचूक और निःसंदिग्ध रूप से ऐसा परचा या आदेश न दें अथवा सतसंगियों को, उनका सतसंग करके, उनकी ऊँची गति का आभास या परचा अंतर में न मिले और उनके प्रति भाव भक्ति और प्रेम न पैदा हो। गुरू स्वरूप का ध्यान सफलता पूर्वक बनने के लिये प्रीत प्रतीत नितान्त आवश्यक हैं और जब तक यह अपने आप स्वतः न पैदा हो तब तक ध्यान के अभ्यास में स्वरूप नहीं बदलना चाहिये। मौज से धीरे २ यह सब होगा। मुझे विश्वास है कि दूरवर्ती सतसंगियों को उनकी तरफ से असाधारण आंतरिक परचा या आदेश मिलेगा। यदि आप और आपके साथियों में से किसी को ऐसी दया का अनुभव हो तो मुझे भी लिखियेगा।

(84)

RA

Allahabad, 16th Dec. 11.

My dear Tej Singh,

I enclose a draft resignation which you might copy & send to the Accountant General, if possible, before the Xmas holidays. The resignation should proceed from you & from the place where you are; I doubt whether its submission in the hand-writing of any body else does.

In regard to the rest of the subject matter of your letter I can only repeat what I have already said that there is not the slightest foundation for your assumption that I am in any way displeased with you. You should absolutely dispel this idea from your mind as your present mood is harmful both for your spiritual & temporal

within, & you should exercise some self control & make room for better thoughts, banishing your present ones from your mind for ever. Time will help you in bringing about the change, & I trust you will receive the gracious assistance of the Supreme Father too in your efforts.

Trusting you are all right & with hearty Radhasoami

Yours sincerely
Madhav Prasad.

P.S. I am going this evening to Benares to see Braj Lal. The operation has been successfully performed, & their condition is satisfactory.

R. S.

Allahabad. 16th Dec. 1911

My dear Tej Singh,

I enclose a draft resignation which you might copy and send to the Acctt. General, if possible, before the Xmas holidays. The resignation should proceed from you and from the place where you are; I do not approve of its submission in the hand writing of any body else here. In regard to the rest of the subject matter of your letter I can only repeat what I have already said that there is not the slightest foundation for your assumption that I am in any way displeased with you. You should absolutely dispel this idea from your mind, and your present mood is harmful both to your spiritual and temporal interests, and you should exercise some self control and make room for better thoughts, banishing your present ones from your mind for ever. Time will help you in bringing about the change, and I trust you will receive the precious assistance of the Supreme Father too in your efforts.

Trusting you are all right and with hearty Radhasoami,

Yours sincerely,
Madhavprasad

P. S. I am going this evening to Benares to see Buaji Saheba. The operation has been successfully performed, and Her* condition is satisfactory.

(८४) अनुवाद

रा० स्वा०

प्रिय तेजसिंह । इलाहाबाद १६ दिसम्बर १९११

इस्तीफ़े का मसौदा भेज रहा हूँ जिसे नक़ल करके बड़े दिनों की छुट्टियों से पहले अकाउंटेंट जनरल के पास भेज दो । इस्तीफ़े की चिट्ठी वहीं से तुमको भेजना चाहिये । और किसी से लिखवा कर भेजना ठीक नहीं । तुम्हारी चिट्ठी की अन्य बातों के विषय में जो मैं कह चुका हूँ, वही फिर कहता हूँ कि मैं तुम से बिल्कुल नाराज़ नहीं हूँ । इस खयाल को अपने दिल से क़तई निकाल दो । इस समय जैसी तुम्हारी मानसिक दशा हो रही है वह परमार्थ और स्वार्थ दोनों में हानिकारक है । तुम्हें अपनी तबियत पर किसी क़दर क़ाबू रखने की ज़रूरत है । मौजूदा खयालात को हमेशा के लिए दिल से

* Mark "Her" with a capital H.

निकाल कर अच्छे ख़यालात लाओ। जैसे २ समय बीतता जावेगा, यह परिवर्तन होता जायगा और मालिक भी मदद करेगा।

उम्मीद है तुम सब अच्छी तरह होगे।

ज़्यादा राधास्वामी।

तुम्हारा सच्चा हितकारी
माधव प्रसाद

पुनः—बुआजी साहब के दर्शनों के लिए आज शाम को बनारस जा रहा हूँ। ऑपरेशन ठीक हो गया है। और उनकी तबियत अच्छी है।

(85)

But I must tell you, that a more real and abiding relief lies in not allowing your mind to feel so distressed as it seems it does, by trying to accept dutifully, and if possible cheerfully, the Mauj of the Supreme Father as the course of Karams of a number of individuals, separate for each, cannot be so altered as to be free from all bitterness. If you withdraw the intensity of your attention from the miseries around you the greater part of the venom, which infests you at present, will disappear and you will be drawn more towards the Charans of the Supreme Father, and feel His protection and help. It will be far easier for you then to bear your troubles and these too will not continue for ever. In short, resign as much as you can, your lot to the direction of the Supreme Father and accept what He thinks proper to ordain. This will have the two-fold effect of gradually eradicating Karams and eventually bringing about a healthful change in them, conducive to your rapid spiritual progress.

(८५) अनवाद

परम पिता की मौज से मुआफ़क़त करने की कोशिश करते हुए अपने मन को दुखित न होने देने में, ज़्यादा सच्ची और पायदार[1] राहत[2] और आराम है क्योंकि बहुत से व्यक्तियों का कर्म चक्कर जो कि हर एक के लिए जुदा होता है, इस तौर से नहीं बदला जा सकता कि उसमें से मुसीबत का कुल हिस्सा निकल जावे। जो आपदाएँ तुमको घेरे हुए हैं उनमें अगर अपनी तवज्जह कम करो तो विष का ज़्यादातर हिस्सा निकल जावेगा और परम पिता के चरनों की ओर तुम ज़्यादा खिंचोगे और उनकी सहायता तथा रक्षा का अनुभव करोगे और तब मुसीबतों को बर्दाश्त करना तुम्हारे लिए बहुत आसान हो जावेगा और वह मुसीबतें भी हमेशा नहीं रहेंगी। संक्षेप में यह कि अपनी तक़दीर को परम पिता के हुक्म पर छोड़ दो और जो कुछ वह तुम्हारे लिए

(१) दृढ़। (२) सुख

मुनासिब समझ कर करें, उसे मंजूर करो। इसके दो फ़ायदे होंगे। एक तो धीरे २ कर्मों का कटना और दूसरा उनमें ऐसा लाभदायक उलट पलट होना जिससे जल्दी तुम्हारी परमार्थी तरक़्क़ी हो।

(86)

The effect of past Karams cannot be washed off except by patient submission to the Will of the Supreme Father, and all that I can advise you is to bow to the Mauj of the Supreme Father Radhasoami Dayal with respect and gratitude.

(८६) अनुवाद

पिछले कर्मों के असर को, सिवा परम पिता की मौज को धैर्य्य पूर्वक स्वीकार करने के, नहीं धोया जा सकता। मैं तुमको सिर्फ़ यही सलाह दे सकता हूँ कि परम पिता राधास्वामी दयाल की मौज के आगे अदब और शुकर गुज़ारी के साथ अपना सिर झुकाओ।

(87)

I may at the outset inform you that our Faith does not recognise that the maintenance of health, or the cure of any malady, is dependent upon the use of flesh diet or intoxicants, hence there is absolutely no justification for a Satsangi to resort to the use of these prohibited articles. In fact, under the rules framed by Maharaj Saheb for the Radhasoami Satsang Central Administrative Council established during His time, the persistent and continuous use, after due warning, of these articles renders a Satsangi liable to exclusion from the Satsang. What I would advise you to do is that you should give up the use of meat diet. If you cannot do it at once, do it gradually, but with the firm intention of accomplishing your object with the grace and help of the Supreme Father R.S. Dayal. In the meantime the practice of Sumiran and Dhyan (specially Sumiran) will be very helpful to you and you can also practise Bhajan if you like; but the successful practice of Bhajan demands greater purity in all the details of life, diet included.

(८७) अनुवाद

हमारा मत यह बात नहीं तसलीम करता कि स्वास्थ्य रक्षा अथवा किसी रोग को दूर करना माँस और नशे की चीज़ों पर निर्भर है। इसलिए सत्संगियों के इन वर्जित पदार्थों को इस्तेमाल करने के लिए हरगिज़ कोई माक़ूल वजह नहीं है। बल्कि उन

कायदों के अनुसार जो महाराज साहब ने राधास्वामी सतसंग सेन्ट्रल एडमिनिस्ट्रेटिव कौन्सिल के लिए, जिसकी स्थापना उनके समय में हुई थी, मुरत्तब किए थे, मुनासिब तंबीह के बाद भी इन चीज़ों के मुसलसिल और मुतवातिर इस्तेमाल किए जाने पर सतसंगी को सतसंग से निकाला जा सकता है। अगर तुम तत्काल ऐसा न कर सको तो परम पिता राधास्वामी दयाल की दया और सहायता से अपने उद्देश्य को पूरा करने का दृढ़ संकल्प करते हुए इन चीज़ों को धीरे २ छोड़ दो। तब तक सुमरन ध्यान, ख़ास कर सुमरन का अभ्यास, तुम्हारे लिए बहुत लाभदायक होगा और अगर चाहो तो भजन भी कर सकते हो, परन्तु भजन अच्छी तरह बनने के लिए रहनी गहनी की सब बातों में जिनमें खान पान शामिल है, बहुत सफ़ाई और शुद्धता की ज़रूरत है।

(88)

The special grace that you enjoyed during the few days when your mind was disturbed by grief, was accorded to you to strengthen your faith, and to enable you to bear your troubles with fortitude and resignation. You need not expect the continuance of that grace on all occasions, but if you continue your practice with devotion and zeal, the manifestation of grace will be more frequent and abiding.

(८८) अनुवाद

ख़ास दया जिसका तुमने थोड़े दिनों अनुभव किया जब कि तुम्हारा मन रंज व अलम से परेशान था, इसलिए की गई थी कि तुम्हारा विश्वास दृढ़ हो और अपनी मुसीबतों को हिम्मत और तसलीम[1] व रज़ा[2] के साथ झेल सको। वह दया सभी वक़्तों पर बनी रहे, इस बात की आशा नहीं करनी चाहिए। लेकिन अगर तुम अपना अभ्यास उत्साह और भाव सहित करते रहोगे तो दया अपना ज़हूरा जल्द २ करेगी और क़ायम भी रहेगी।

(89)

You may, at the commencement or termination of your practice, unburden your mind in the 'Charans' of the Supreme Father Radhasoami Dayal and you are sure to receive succour or assistance from Him, either in the way of mitigation of your troubles or the grant of power to bear them with greater resignation or patience. The result in all cases should be left to the Mauj.

---

(१) किसी बात को स्वीकार करना। हामी। (२) स्वीकृति।

(८६) अनुवाद

अभ्यास शुरू करने से पहले या खतम करने के बाद परम पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रार्थना करके अपने दिल का बोझ हलका कर सकते हो। तुमको अवश्य उनकी तरफ़ से सहारा और मदद, चाहे तुम्हारी मुसीवतें कम हो जाने के रूप में, चाहे उनको ज्यादा सब्र और तसलीम व रज़ा से बर्दाश्त करने की शक्ति के रूप में, मिलेगी। हर हालत में नतीजा मौज पर छोड़ देना चाहिए।

(90)

The effect of past actions connot be washed off except by patient submission to what the Supreme Father ordains, but if the devotee turns at every juncture to Him for assistance or rather constantly depends upon Him for it, and trustfully resigns himself to His Mauj, the evil effects will be immediately minimised and never will he find himself deserted and lost in the sorrows of the world.

(६०) अनुवाद

जो कुछ परम पिता करें उसे धैर्य्य मे मंज़ूर करने के सिवा किसी और चीज से पिछले कर्मों का कर्मफल नहीं धोया जा सकता। लेकिन अगर भक्त हर मौके पर मदद के लिए उनकी तरफ़ रूख करे या यों कहो कि इसके लिए निरंतर उनका आधार रक्खे और विश्वास सहित अपने को मौज के सुपुर्द कर दे तो कर्मों को बुरे असर तत्काल कम से कम हो जावेंगे और वह कभी भी अपने को इस दुनिया में अकेला अथवा दुखों में डूबा हुआ न पावेगा।

(91)

A Bhent* associated with desire for the fulfilment of a worldly object cannot be accepted. A Bhent should be an offering in the Holy Charans of the Supreme Father Radhasoami Dayal as a mark of devotion and unless, it is of this character it cannot be accepted as a Bhent.

(६१) अनुवाद

किसी दुनियावी ख्वाहिश को पूरा करने के निमित्त जो भेंट होती है वह मंज़ूर नहींकी जा सकती। भेंट तो परम पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में भाव भक्ति और उमंग से पेश करनी चाहिए। अगर इस प्रकार न की हो तो वह भेंट नहीं समझी जा सकती।

*Offering, present.

(92)

You should not let despondency take hold of you; whatever the internal state of affairs, you should always look to your Supreme Father, R.S.Dayal, for help and assistance. If this is not entirely neglected, He will surely grant you some internal signs of grace which will enable you to bear your troubles with gratitude and resignation. No solace or help can be had from anywhere else; the door from which nothing but grace and mercy flow should be constantly knocked at and it is impossible that anybody who does knock at it should have to turn back in despondency or despair.

(९२) अनुवाद

अंतर में चाहे जैसी अवस्था व्याप रही हो तुमको चाहिए कि ना-उम्मीदी को अपने ऊपर ग़ालिब न होने दो। तुम्हें सदैव परम पिता राधास्वामी दयाल की ओर सहायता और सहारे के लिए रुख़ करना चाहिए। अगर इसमें ज़रा सी भी बे-तवज्जही न की जावे तो वे अवश्य तुमको दया के परचे देंगे जिससे तुम अपनी मुसीबतों को शुकर गुज़ारी और तसलीम व रज़ा के साथ बर्दाश्त कर सकोगे। और कहीं से कोई ढ़ारस या मदद नहीं मिल सकती। जिस द्वार से सिवा मेहर और दया के निरंतर प्रवाह के और कुछ नहीं आता, उसी को बार २ खटखटाना चाहिए और यह ना-मुमकिन है कि जो उस दरवाज़े की कुंडी खटखटावे, वह वहाँ से ना-उम्मीद होकर लौटे।

(93)

The one necessary condition which we invariably insist on is, that the supreme name RADHASOAMI should be accepted as the only true and real name of the Supreme Creator before initiation is permitted and also that the Surat Shabd Yoga is the only method of attaining true salvation. These conditions are not insisted on in a spirit of intolerance, but because plurality of faith is an absolute bar for achieving real progress in spiritual practice. The propositions involved in the conditions referred to, are not based on blind faith, but are demonstrable on lines of scientific study and research. An explanation of the true import of the supreme name and of its character as also of the Surat Shabd Yoga cannot be satisfactorily given in a letter, and I would recommend a careful study of the book named "Discourses on Radhasoami Faith" in English written by Maharaj Saheb.

(९३) अनुवाद

उपदेश देने से पहले जिस एक ज़रूरी शर्त पर हम हमेशा ज़ोर देते हैं, वह यह है कि परम मंत्र 'राधास्वामी' नाम को कुल करतार और मालिक का ज़ाती और

सच्चा नाम होना मंज़ूर किया जावे और नीज़ यह कि सच्चे उद्धार की प्राप्ति के लिए केवल एक मात्र उपाय सुरत शब्द योग है। यह शरतें धार्मिक असहिष्णुता[1] से नहीं मंज़ूर कराई जाती हैं बल्कि इसलिए कि एक से अधिक इष्टों का होना अंतरमुख अभ्यास की सच्ची तरक़्क़ी में बहुत भारी रुकावट है। उपर्युक्त शर्तों में जो सिद्धान्त निहित[2] हैं, उनका आधार कोई अंध विश्वास नहीं है, बल्कि वह साइंस की रीति के अनुसार तथा साइंस की तहक़ीक़ के मुताबिक़ समझाए जा सकते हैं। परम मंत्र 'राधास्वामी' नाम और सुरत शब्द योग के असली मानी और उनकी ख़ासियत चिट्ठी के ज़रिये भली प्रकार नहीं समझाई जा सकती। महाराज साहब द्वारा रचित पुस्तक के अनुवाद "राधास्वामी मत पर प्रवचन" को समझ २ कर पढ़िये।

(94)

R.S.

Allahabad
22—6—1912

My dear Mr. Rochi Ram,

Your letter of 18th to hand. The vision your daughter had, as described in your letter, is an indication of special grace of Supreme Father Radhasoami Dayal. Buaji Maharaj is, at present, residing with Her son in Fatehpur District where She is gone for a change of climate. She is expected to pass Allahabad on or about the 3rd of July, when I shall lay the request of your daughter before Her and pray for special grace and mitigation of her troubles.

With hearty Radhasoami,

Yours sincerely
Madhav Prasad

(१) सहन करने की शक्ति का न होना। (२) स्थापित। रक्खे हुए।

R.

Allahabad
22.6.12

My dear Mr. Rochman

Your letter of 18th to hand. The vision your daughter had, as described in your letter is an indication of special grace of Supreme Father Radha Swami Dayal. Buaji Maharaj is at present residing with her son in Fatehpore District, where she is gone for a change of climate. She is expected to pass Allahabad

on or about the 3rd of July.
When I shall lay the request
of your daughter before Her
special grace and
and pray for, the mitigation
of her troubles.

With hearty Radhasoami

Yours sincerely
Madhoprasad

(९४) अनुवाद

प्रिय मिस्टर रोचीराम ।

इलाहाबाद
२२-६-१९१२

आपका १८ तारीख का पत्र मिला । आपने लिखा है कि आपकी लड़की को दर्शन हुए । यह कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की ख़ास दया का निशान है । इस समय बुआजी महाराज फ़तहपुर ज़िले में अपने लड़के के पास हैं, जहाँ वह आबोहवा बदलने के ख़याल से गई हुई हैं । तारीख़ तीन जुलाई के आस पास उनके इलाहाबाद आने की संभावना है । उस समय उनके चरनों में आपकी लड़की की दरख़्वास्त पेश करूँगा और ख़ास दया के लिए एवं तकलीफ़ दूर होने के लिए प्रार्थना करूँगा ।

ज्यादा राधास्वामी

आपका सच्चा हितकारी
माधव प्रसाद

(95)

The only remedy that I know is that you should prayerfully apply yourself internally to devotion and there is no trouble which will not eventually yield to the sweet ambrosial effects of the repetition of the holy name

RADHASOAMI. Don't expect that your troubles will immediately cease, but you will, at any rate, be able to bear them more resignedly and cheerfully. It is quite possible that perceptible mitigation may soon follow your application to the practice, if properly performed in a spirit of attachment and love for the holy name; and if the time is ripe for it, the treatment too will bear favourable results.

(६५) अनुवाद

एक मात्र उपाय जो मैं जानता हूँ, यह है कि तुमको दीनतापूर्वक अंतर अभ्यास में लगना चाहिए। ऐसी कोई मुसीबत नहीं है जो राधास्वामी नाम के सुमरन के मधुर और अमृतमय प्रभाव से अंत में न दूर हो जावे। यह आशा तो मत करो कि सब मुसीबतें तुरन्त दूर हो जावेंगी, लेकिन कम से कम इतना तो ज़रूर होगा कि तुम उन्हें ज़्यादा तसलीम व रज़ा और ख़ुशी से झेल सकोगे। यह बहुत मुमकिन है कि तुम्हारे अभ्यास में लग जाने पर, अगर वह राधास्वामी नाम में प्रीति प्रतीत के साथ उचित रीति से किया जावे, तुम्हारी मुसीबतों में ऐसी जल्द कमी आ जावे जिसे तुम महसूस कर सको और अगर वक्त आ गया है तो इलाज से भी फ़ायदा होगा।

(96)

You have of course read the Discourses in English sent to you by Mr. Phelps and are familiar to a certain extent with the theory on which the practices enjoined by our Faith are based. I would, however, like to supplement it with a few observations as success in the practices will greatly depend upon a sympathetic appreciation of the principles underlying the theory.

All our actions of which we are conscious at our present level of wakeful condition (in a normal state) are the results of the exercise of the functions of the physical body, the senses attached to it, and the mind. and our entire consciousness is confined to the knowledge coming in the wake of the exercise of these functions. The spirit which is the fountain head of force and which supplies all the energy for the exercise of these functions, remains practically an unknown entity and all the knowledge that one possesses of it, if knowledge it could be called, is derived indirectly through the manifestation of its energy at lower levels. What is really required is the awakening of the spirit power and its conservation and eventual concentration at its centre in the body which would result in a conscious knowledge of its nature independently of the vehicles through which it acts in its present condition of bondage. This is the first part of the practice, while the second part consists in elevating the spirit with a view to its ultimate admission into the supreme mansion of love and bliss.

It is manifest that a continuance of the exercise of the functions of the mind and the body alone will not produce this result, and a change, though very gradual, will have to be introduced which will enable us to awaken the powers of spirit by holding intercourse, however feeble in the beginning it may be, with the Supreme Head of Spirituality, the life of all lives, the sustainer of the individual spirit entity.

Such an intercourse is rendered practicable by (1) the repetition of the real name of the Supreme Being or the imitation in articulate sound of the all-intelligent, all-refulgent and all-blissful sound which accompanied the first manifestation of the Supreme Being, (2) the contemplation of the Form of the Supreme Being, (3) listening attentively to the sounds, one after another, proceeding from the various intermediate spheres and eventually leading to the Highest.

The real essence of the spirit carries the impress of the real name or original sound, hence the repetition of the holy name at the centre of the spirit in the body has the effect of gradually awakening the spirit.

No conception can be formed of the Form of the Supreme Being (the real or the original Form being, as in the case of the Name, the first visible manifestation of the Supreme Being) and the only possible way of contemplating the Form of the Supreme Being is to contemplate the form (the physical form) of a Being, who has assumed form under the direct impulse of the Supreme Father for the sake of reclaiming fallen humanity, or of the One who has attained communion with the Supreme Being and whose existence thenceforward is a result of a direct impulse from the Supreme Father, unalloyed by individual desire or motive.

For those, however, who cannot avail themselves of this specially efficacious form of devotion, the contemplation of the form of the Presiding Deity of the first sphere of Brahmand is prescribed. This, too, will have the effect of loosening the hold, which the forms of the region in which we are located have upon us and will create an attachment for the forms of the higher regions, and thus eventually lead the way to the spirit gaining access into those regions.

With these preliminary remarks, I recommend your following the method of devotion described in the paper enclosed. When you begin to realise to some extent the efficacy of this method of devotion, say after practising it for a month or two, I shall be glad to send instructions for the more

advanced method of devotion called "Bhajan" i, e., listening intently to the sound of the higher spheres.

The only undertaking that I would require of you is that you would not disclose this method of devotion to anybody else except with my permission and that you would treat the communications that you receive from me as personal. If our Faith and the methods of devotion prescribed by it don't suit you, you are at liberty to sever your connection with our Faith, but no improper use should thereafter be made of anything disclosed to you in confidence.

(६६) अनुवाद

तुमने मिस्टर फेल्प्स के भेजे हुए अँग्रेज़ी के बचन ज़रूर पढ़े हैं और किसी क़दर हमारे मत के अभ्यास जिस उसूल पर रक्खे गए हैं, उससे भी वाक़िफ़ हो। लेकिन मैं चन्द और बातें इस विषय पर तुम्हारी वाक़फ़ियत के लिए लिखना चाहता हूँ क्योंकि उसूलों और सिद्धान्तों को अच्छी तरह समझने पर ही अभ्यास की कामियाबी मुनहसर है।

हमारे सब काम जिनका हमको जाग्रत अवस्था प्रकृत अवस्था में होश रहता है, स्थूल शरीर, इन्द्रियों और मन की कार्रवाई से सरज़द[1] होते हैं और इन्हीं कार्रवाइयों से जो ज्ञान होता है, वहीं तक हमारा पूरा होश महदूद[2] है। सुरत जो कि ताक़त का भंडार है और इन कामों के लिये ताक़त देती है, उससे क़रीब २ ला-इल्मी[3] रहती है और जो कुछ कि उसके बारे में किसी को ज्ञान है, अगर उसे ज्ञान कहा जा सके, वह सिर्फ़ वह है जो नीचे घाट और द्वारों पर उसकी ताक़त के इज़हार से ब-तौर अनुमान प्राप्त है। ज़रूरत इस बात की है कि सुरत के घाट और सुरत की ताक़त को जगाया जावे ताकि मौजूदा बंधन की हालत में जिन औज़ारों और इन्द्रियों से वह कार्रवाई करती है, उनके अन्तरगत उसके ख़वास का बाहोश ज्ञान प्राप्त हो। यह अभ्यास का पहला हिस्सा है और अंत में प्रेम और आनन्द के परम धाम में प्राप्ति के निमित्त सुरत की चढ़ाई करना दूसरा हिस्सा है।

यह ज़ाहिर है कि सिर्फ़ तन और मन की ही कार्रवाइयां करते रहने से यह नतीजा नहीं पैदा होगा और चैतन्यता के महा भंडार, सब जानों की जान और प्रत्येक सुरत को सहारा देने वाले के साथ अंतर में मेल करते हुए चाहे शुरू में वह मेल कितना ही कमज़ोर क्यों न हो, धीरे धीरे वह परिवर्तन[4] करना पड़ेगा जिससे सुरत की शक्तियां जाग्रत हों।

---

(१) प्रकट। (२) जिस की हद बाँध दी गई हो। सीमित। परिमित। (३) अज्ञान या अनजान होने की अवस्था। (४) तबदीली। हेरफेर।

इस तरह का संबंध या मेल इन बातों से मुमकिन है कि (१) कुल मालिक के ज़ाती नाम का सुमरन या सर्व ज्ञानमय सर्व प्रकाशमय और सर्व आन्दमय शब्द की जो कि कुल मालिक के प्रथम प्रकटन (इज़्हार) के साथ हुआ, यहाँ की बोली में नक़ल की जावे, (२) कुल मालिक के रूप का ध्यान किया जावे (३) तवज्जह के साथ उन शब्दों को यके बाद दीगरे[1] सुना जावे जो मध्य देश के मुक़ामों से आ रहे है और जो अंत में सबसे ऊँचे देश में पहुँचा देंगे।

सुरत के जौहर और ज़ात में मालिक के ज़ाती नाम या आदि शब्द की छाप है। इसलिये जिस्म में सुरत के घाट पर उस पवित्र नाम का सुमरन करने से धीरे २ सुरत जागने लगती है।

कुल मालिक के रूप का कोई अनुमान नहीं किया जा सक्ता। ज़ाती या आदि रूप, नाम की तरह, वही है जो कि कुल मालिक ने प्रथम धारण किया था। कुल मालिक के रूप के ध्यान का मुमकिन तरीक़ा सिर्फ़ यही है कि ऐसे पुरुष के स्थूल रूप का ध्यान किया जावे जिसने पतित मनुष्य जाति को उबारने के लिये ख़ुद कुल मालिक की प्रेरणा से रूप धारण किया हो या जिसने कुल मालिक से अपना ऐसा संबंध स्थापित कर लिया हो कि अब उसका जीवन, बिला अपनी किसी इच्छा या ग़रज की मिलौनी के, सिर्फ़ ख़ुद मालिक की प्रेरणा से चल रहा हो।

जो शख़्स इस विशेष रूप से लाभदायक अभ्यास अथवा भक्ति की रीति से फ़ायदा नहीं उठा सकते, उनको ब्रह्मांड के पहले स्थान के धनी के रूप का ध्यान बतलाया जाता है। इससे भी जिस लोक में कि हम मौजूद हैं वहां के रूपों की जो हम पर गिरफ्त और पकड़ है, वह ढीली होने लगेगी और ऊपर के देशों के रूपों में प्रेम पैदा होगा और इस तरह अंत में उन देशों में सुरत के पहुँचने का रास्ता खुल जावेगा।

इस प्राक्कथन के साथ, मैं उपदेश पत्र में बतलाई हुई जुगत का अभ्यास करने की सिफ़ारिश करता हूँ। महीने दो महीने इस अभ्यास को करने के बाद जब तुम्हें इसके असर का कुछ २ भान होने लगे तब मैं तुमको और ऊँचे दरजे के अभ्यास की जुगत का परचा भेजूंगा जिसको भजन कहते हैं यानी ऊँचे देशों के शब्दों को ग़ौर से सुनने का अभ्यास।

मैं तुमसे सिर्फ़ यह वायदा चाहता हूँ कि बिला मेरी इजाज़त के तुम इन अभ्यासों की रीति को किसी को नहीं बतलाओगे और मेरे पत्रों का तुम सिर्फ़ अपने लिये ही उपयोग करोगे। अगर हमारा मत और उसमें बतलाए हूए अभ्यास तुमको मुआफ़िक़

(१) एक के बाद दूसरा।

न आवें तो तुमको इख़्तियार है कि हमारे मत से ताल्लुक़ क़िता[1] कर दो, लेकिन जो भेद तुमको ख़ुफ़िया तरीक़े से बतलाया गया है, उसका बाद में ना-मुनासिब इस्तेमाल न किया जावे।

(97)

You can think and act mentally. When you think mentally, you use a language and there is mental articulation of the words used. In the same way you ought to pronounce mentally the holy name RADHASOAMI without using your tongue: this would be mental repetition. The only peculiarity about the method of "Sumiran" enjoined by the R. S. Faith is that the repetition should be performed at the seat or the focus of the spirit in the body. This you can secure by directing your attention, and concentrating it at the spot indicated to you, as the focus of the spirit by imagining that you are performing the repetition at that spot. This will gradually secure the accumulation to a certain extent of the spiritual and mental forces, diffused through the body, at that spot and eventually endow you with a capacity to create an ascending current from that spot into the region of Brahmand.

(९७) अनुवाद

तुम मन में ख़याल और कार्रवाई कर सकते हो। जब तुम मन में सोचते हो तो तुम कोई भाषा भी प्रयोग करते हो और जो शब्द प्रयोग किये जाते हैं, उनकी मन में आवाज़ भी होती है। उसी तरह बिना जीभ हिलाये मन ही मन में पवित्र नाम राधास्वामी का उच्चारण करना चाहिये। यह मानसिक सुमरन है। राधास्वामी मत में बतलाए हुए सुमरन की विधि की ख़ुसूसियत सिर्फ़ यह है कि देह में जिस जगह सुरत की ख़ास बैठक है, उस जगह पर सुमरन करना चाहिये। जिस जगह तुमको सुरत की बैठक बतलाई गई है, उस तरफ़ चित्त का रुख़ करने और उसको वहां एकाग्र करने से और यह ख़याल करने से कि तुम उस जगह पर बैठ कर सुमरन कर रहे हो, यह बन सकता है। जिस्म में मन और सुरत की शक्तियां जो फैली हुई हैं, वह ऐसा करने से किसी कदर उस जगह पर धीरे धीरे एकत्रित होंगी और अन्त में उस जगह से ब्रह्मांड में चढ़ाई करने वाली धार पैदा करने की योग्यता तुमको प्राप्त हो जावेगी।

(98)

The one essential thing for successful performance of Sumiran according to the methods enjoined by the Radhasoami Faith is that the devotee should have unquestioning faith in the holy name RADHASOAMI being the only true and real name of the Supreme Being. By faith I do not mean blind adherence to dogma but the engendering of the belief in the truth above enunciated by a

(१) काट दो।

thorough and careful conception of the theory on which it is based. Thus fortified, the devotee will receive in practice confirmatory experiences, and the belief will be converted into a living faith assimilated into his very existence.

All previous 'Ishtas'* to be renounced, as plurality of 'Ishtas' is an absurdity.

(९८) अनुवाद

राधास्वामी मत में बतलाई हुई रीति के अनुसार सुमरन का अभ्यास अच्छी तरह बनने के लिए एक ज़रूरी बात यह है कि अभ्यासी को यह पक्का विश्वास होना चाहिये कि पवित्र नाम राधास्वामी ही कुल मालिक का सच्चा और ज़ाती नाम है। विश्वास से मेरा मतलब किसी मज़्हबी अक़ीदे को अंधा बन कर पकड़ने से नहीं है बल्कि उसयक़ीन से मुराद है जो इस हक़ीक़त के बुनियादी सिद्धान्त कोपूरी तरह और होशियारी से समझने से पैदा हो। इस तरह दृढ़ता प्राप्त हो जाने पर अभ्यासी को अभ्यास में ऐसे अनुभव होंगे जिनसे कि उसकी ताईद हो और वही यकीन एक ज़िन्दा अक़ीदा और मत बन कर उसके जीवन का अंग बन जावेगा।

पहले के सब इष्टों को त्याग करना पड़ेगा क्योंकि एक से अधिक इष्ट होना बे-मानी और बे-सूद है।

(99)

The worship of photos, in the form of idol worship, cannot be too strongly denounced, but at the same time I must tell you that reverential kneeling before the photos of Gurus and other acts of veneration performed before such photos are not regarded by us in that light. If a person has a reverential regard or rather deep veneration for another whom he holds as Guru, he must naturally bow down before His photo or any other relic of his Guru (in fact his mind bows down before it, whether he bows his head or not) and any expression of such regard is not only not prohibited, but is actually regarded as being not devoid of spirituai benefit. If the form of worship, or the ritual accompanying it, is regarded as the means of salvation and takes the place of spiritual practices whereby spiritual development is acquired, the form and the ritual degrade themselves to idol worship and intervene as a serious bar to any spiritual progress. The mind being an emanation of Kal jumps to the idea of confining itself to form in preference to substance. This has, of course, to be guarded against, but on the other hand, the denunciation of idol worship need not sweep away all expressions of veneration for those who are rightly

* Wished, desired, longed for, wished for, (2) Beloved, dear. (3) Worshipped, reverenced. (4) Respected. (5) Desirable.

held as Gurus, Mahatmas or superior spiritual beings, for whom nothing but deep veneration would arise in the mind of a devoted disciple.

(९९) अनुवाद

मूर्ति पूजन की तरह फोटो को पूजने को जितना बुरा कहा जावे कम है। लेकिन साथ ही साथ गुरु के फोटो के सामने अदब और ताज़ीम से झुकना या मत्था टेकना और ऐसी फोटो के सामने अदब और ताज़ीम दिखलाने के लिये जो कुछ किया जावे, वह सब हम लोगों की निगाह में मूर्ति पूजन नहीं है। अगर कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के प्रति जिसे वह अपना गुरु मानता है, आदर और सन्मान के भाव अपने हृदय में रखता है तो स्वभाव से ही उसकी फोटो या उसकी अन्य कोई यादगार के सम्मुख वह झुकेगा। वास्तविक बात तो यह है कि उसका सिर चाहे झुके या न झुके, उसका मन तो झुक ही जाता है। इस तरह अदब और ताज़ीम दिखलाना न सिर्फ़ मनै नहीं है बल्कि वाक़ई यह समझा जाता है कि वह रूहानी फ़ायदे से ख़ाली नहीं है। अगर फोटो की पूजा अथवा पूजा संबंधी कार्रवाइयां उद्धार का हेतु समझी जावें और उनको अंतरमुख अभ्यास की, जिससे रूहानी तरक़्क़ी होती है, जगह दे दी जावे तो वह मूर्ति पूजन पर उतर आता है और रूहानी तरक़्क़ी में भारी रुकावट बन जाता है। मन जो कि काल का बच्चा है, फ़ौरन तत्व वस्तु को छोड़ कर बाहरी सूरत और शक्ल पर कूद पड़ता है। इससे अलबत्ता ज़रूर बचना चाहिए। लेकिन मूर्ति पूजन के खंडन का यह मतलब नहीं है कि जो पुरुष वाक़ई गुरु, महात्मा या ऊँचे दरजे के रूहानी ताक़त रखने वाले माने जाते हैं और जिनके लिये एक भाव भक्ति रखने वाले शिष्य के मन में सिवा गहरे अदब और ताज़ीम के कोई दूसरा ख़याल नहीं उठता, उनके प्रति आदर सन्मान के भावों पर झाड़ू लगा दी जावे।

(100)

I shall be glad to render any assistance I can to you, but I must tell you at the outset that any consolation you can derive will be through the medium of earnest application to the various modes of devotion, prescribed by the Radhasoami Faith. Peace comes from above, and it is idle to expect that peace will be found in the world here before peace is secured in one's own internal existence.

(१००) अनुवाद

जो कुछ मदद मैं तुमको दे सकता हूँ, ख़ुशी से दूंगा। मगर पहली बात यह है कि जो कुछ ढ़ारस या धीरज तुमको मिल सकता है, वह राधास्वामी मत में बतलाई हुई जुक्तियों को सच्चे दिल से करने से मिलेगा। चैन और शाँति ऊपर से आतीं है और यह

उम्मीद करना फ़िज़ूल है कि इस दुनिया में शाँति और सुख मिल जावेगा पेश्तर इसके कि अपने अंतर में शाँति प्राप्त हो।

(101)

It is a pleasure to me to find that earnest souls in the West are devoting themselves to seek the Truth, and are turning to the cradle of spirituality to find a satisfaction of their cravings; unguided, of course, their research must be attended with serious difficulties, and they are apt to often misdirect their energies. As a step towards clearing the ground and preparing themselves for a sympathetic reception of the Truth from the quarter in which it can be found, the study of ancient lore and the sacred writings of the various extant religions is not without its use and advantages. The real study is the study of the unexplored love lying hidden within one's own self, but a study of this character requires the guidance of a master spirit or a person who has received instructions at the feet of such an adept.

(१०१) अनुवाद

यह बात मालूम करके खुशी होती है कि पश्चिमी देश में भी कुछ शौक़ीन जीव हैं जो 'सत्य' की खोज में लगे हैं, और अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए उस देश की ओर रूख कर रहे हैं जहाँ जीवात्मा के संबंध की बातों का हमेशा आरंभ और पालन पोषण होता रहा है। अलबत्ता रहनुमा या पथ प्रदर्शक की सहायता के बिना उनकी खोज में भारी दिक़्क़तों और मुशकिलों का पेश आना लाज़मी है और अपनी शक्तियों को अक्सर ग़लत रास्ते पर लगा देने का अंदेशा है। ज़मीन तैयार करने के और 'सत्य' को जहाँ से कि वह मिल सकता है वहाँ से शौक़ के साथ ग्रहण करने की तैयारी के लिये प्राचीन विद्या और अनेक मौजूदा मतों के धर्म ग्रंथों को पढ़ना बिना लाभ और उपयोग के नहीं है। सच्ची पढ़ाई तो अपने अंतर में जो अज्ञात (ला-तलाश) 'प्रेम' मौजूदा है, उसकी है। लेकिन इस क़िस्म की पढ़ाई के लिये पूरे गुरु की रहनुमाई की या ऐसे व्यक्ति की रहनुमाई की ज़रूरत है जिसने ऐसे गुरु के चरनों में रह कर शिक्षा पाई हो।

(102)

I would strongly advise you to apply yourself to the development of the latent spiritual potentialities lying within you, not with the object of applying the knowledge and power thus acquired to improving the material prosperity of the world, but with the object of obtaining true emancipation from the bonds of mind and matter which tie the human spirit to its visible plane of existence and of eventually going into the regions of the Supreme Source. Thus freed, the spirit will not only achieve the greatest good for

itself, but will also be in a position to help others who are so minded in securing the highest benefit for themselves.

(१०२) अनुवाद

मैं तुमको ज़ोर देकर सलाह दूँगा कि अपने अंतर में जो सुरत चैतन्य की शक्तियां सोई हुई पड़ी हैं, उनको बढ़ाने की कार्रवाई में अपने को लगाओ, इस गरज़ से नहीं कि इस प्रकार जो शक्ति और ज्ञान प्राप्त हो उनको सांसारिक और मायक उन्नति में खर्च किया जावे बल्कि इसलिये कि मन और माया के बंधनों से जो मनुष्य की आत्मा या सुरत को देह के घाट पर बाँधे हुए है, छुटकारा मिले और वह अंत में दयाल देश में बासा पावे । इस तरह बंधनों से आज़ाद होने पर सुरत न सिर्फ़ अपने ही लिये बढ़ से बढ़कर लाभ प्राप्त करेगी बल्कि दूसरों को भी जो इस बढ़ से बढ़कर लाभ प्राप्त करने के इच्छुक हैं, सहायता दे सकेगी ।

(103)

The practice of Sumiran is essential for success in Bhajan. The value of Sumiran is often under-rated by people, but concentration and purification of mind are impossible, if Sumiran (and also Dhyan, if practicable) is not frequently resorted to. I would therefore advise you to perform Sumiran twice a day, for at least half an hour at each time, but care should be taken that attention is concentrated at the seat of the spirit, when Sumiran is performed. This will bring about concentration and will be very helpful in catching the spiritual sound. Bhajan too should be performed twice a day immediately after Sumiran, if possible. The devotion too should be increased from 15 to 20 minutes each time. If you feel the prescribed posture tiresome you can place your elbows on a bedstead or a *Bairagin* and stretch your legs.

(१०३) अनुवाद

भजन अच्छी तरह बनने के लिये सुमरन ज़रूरी है । लोग अकसर सुमरन की, जैसी चाहिये, क़दर नहीं करते । लेकिन अगर सुमरन, और हो सके तो ध्यान भी, बार२ और ज़्यादा न किया जावे तो मन की सफ़ाई और एकाग्रता हासिल करना ना-मुमकिन है । इसलिये दोनों वक्त कम से कम आध आध घंटे सुमरन करना चाहिये । लेकिन जब सुमरन किया जावे तब इस बात की होशियारी रक्खी जावे कि चित्त सुरत की बैठक के मुक़ाम पर जमाया जावे । इससे चित्त जमने लगेगा और रूहानी आवाज़ या शब्द को पकड़ने में बहुत मदद मिलेगी । अगर हो सके तो सुमरन के बाद फ़ौरन ही दिन में दो बार भजन भी कर लेना चाहिये । अभ्यास भी हर वक्त, पन्द्रह से बढ़ा कर बीस मिनट

कर देना चाहिये । अगर आसन से, जो बतलाया गया है, बैठने में थकान मालूम हो तो हाथों को पलंग या बैरागिन पर रख कर टाँगों को फैला सकते हो ।

(104)

I trust you will try in future with the help of R. S. Dayal to control your temper, and not to allow yourself to be led away by the heat of passion in the way you did. Try to perform your Abhyas* every day, and attend Satsang as far as possible. There is no more potent remedy than the repetition of the holy name for overcoming the onslaughts of passion of whatever description they may be.

(१०४) अनुवाद

मुझे यक़ीन है कि आइन्दा तुम राधास्वामी दयाल की मदद से अपने मिज़ाज पर क़ाबू रखने की कोशिश करोगे और ग़ुस्से के जोश में बे-बस न हो जाओगे, जिस तरह कि हो गए । हर रोज़ अभ्यास करो और जहाँ तक हो सके, सतसंग की हाज़िरी दो । काम क्रोध के चाहे जिस क़िस्म के हमले तुम पर हों, उनको दबाने का ज़बरदस्त उपाय सिवा राधास्वामी नाम के सुमरन के और कुछ नहीं है ।

(105)

These are hard times — times of sore trial requiring us to call forth all the reserve of unquestioning reliance on the unerring and benevolent Mauj of the Supreme Father Radhasoami Dayal. It does not behove us to turn tail and show the white feather at this juncture. If you find your heart fails you at times run inwardly to the Charans of the Supreme Father and cry for help and succour. Cling fast to the Supreme Charans and this is the supreme remedy for all the short-comings of the mind. Try with the help of the Supreme Father to live up to the precept, "Do all your good sense dictates and leave the result to the Mauj of Radhasoami Dayal". This is what we ought to do to the last breath of life.

(१०५) अनुवाद

बहुत कठिन समय व्यतीत हो रहा है । कठिन इस मानी में कि यह कठिन परीक्षा का समय है जब कि परम पिता राधास्वामी दयाल की मौज पर (जो कि सबको

---

* Practice.

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1932

बाबूजी महाराज आगरे में सन् १९३२

Babuji Maharaj smoking Huqqa

बाबूजी महाराज को जीजीबाई हुक्का पेश कर रही हैं

Babuji Maharaj with Prashad placed before Him for distribution

इन्दोर सन् १९३५

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1935

राजपीपला सन् १९३५

फ़ायदा पहुँचाने वाली और अचूक है) हत्तुल इमकान[1] बे चूं व चिरा[2] विश्वास रखने की जरूरत है। यह मुनासिब नहीं है कि इस नाज़ुक मौक़े पर हम बुज़दिली[3] जाहिर करें और दुम दबा कर भाग जावें यानी पीठ दिखादें। अगर तुमको अपना दिल बैठता हुआ मालूम पड़े तो परम पिता के चरनों में अन्तर में रुख़ करो और सहारे और सहायता के लिए पुकार करो। श्रेष्ठ चरनों से लिपट जाओ। मन की ख़ामियों का यही सबसे उत्तम इलाज है। परम पिता की मदद से इस उपदेश के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने की कोशिश करो। "जो तुम्हारी सुबुद्धि से समझ में आवे वह करो और नतीजा राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ दो।" आख़िरी दम तक सच्चाई के साथ हमें ऐसा करते रहना चाहिये ।

(106)

At the time of Abhyas attention must of course be directed towards the third Til, or the first mansion in Brahmand, but any forced inversion of the eye-balls, or employment of undue pressure resulting in the forcing up of Vayu* or blood should be avoided as this will give rise to pain, and might result in more serious consequences. If you conform to these directions, I trust the pain, or the feeling of inconvenience that you at present have, will gradually disappear. Some subtle concentration accompanied by a sensation of something creeping upwards, is a healthy sign of progress in Abhyas. But this will not be accompanied by pain. On the other hand it will have a pleasurable sensation with it. Some little uneasiness is felt by some in the beginning, but this should be disregarded.

(१०६) अनुवाद

अभ्यास करते समय तवज्जह को तीसरे तिल या ब्रह्मांड के पहले मुक़ाम की तरफ़ फेरना चाहिये। लेकिन ज़बरदस्ती आँखों को उलटना या ना-मुनासिब ज़ोर लगाना जिससे वायु या ख़ून ऊपर चढ़ जावे, नहीं चाहिये। क्योंकि इससे दर्द और उससे भी ज़्यादा चिंताजनक हालत पैदा हो सकती है। अगर तुम इन हिदायतों का पालन करो तो मुझे यक़ीन है कि दर्द या तकलीफ़ जो इस वक्त तुमको मालूम हो रही है, धीरे धीरे ग़ायब हो जावेगी। चित्त की झीनी एकाग्रता जिसमें कोई चीज़ ऊपर रेंगती सी मालूम हो, अभ्यास में तरक़्क़ी होने का चिन्ह है। लेकिन इसमें दर्द नहीं होगा। बर-अक्स इसके इसमें आनंदमय अहसास होगा। किसी किसी को शुरू में थोड़ी सी तकलीफ़ मालूम होती है मगर इसका कुछ ख़याल नहीं करना चाहिये।

(१) जहाँ तक हो सके। (२) चूं व चिरा करना = हुज्जत या बहस करना।
(३) डरपोकपन। कायरता।
* Air, wind,

(107)

It is imperative that the inclinations and wanderings of the mind must be checked to certain extent before any concentration, which would encourage the devotee and result in a feeling of bliss, can be attained. It is true that this cannot be done without the helping hand of the Supreme Father, but it is essential to gain assistance to make an earnest effort for it. I do not mean to blame you. I know man has been reduced to a state of almost utter helplessness, and is more or less a toy in the hands of Kal and Maya but a time ought to come when he should feel tired of being made a plaything, as he is, and such a time is the auspicious moment for getting one's prayer heard for assistance from High. The state of mind combined with earnest effort for approaching the Feet of the Supreme Father is bound to lead to success. I can only repeat what, I believe, you have already been told on previous occasions, that in the battle of Kal and Maya no instrument is more efficacious than the repetition of the Holy Name Radhasoami at the seat of the spirit in the body. This is bound to, if done regularly, result in the purification of the mind and the uplifting of the spirit and the mind currents to the centre of the spirit. If this goes on for some time and concentration at the spirit centre ensues, a feeling of bliss and with it of thankfulness and humility, will arise and make the path for further spiritual advancement easier from day to day.

(१०७) अनुवाद

यह ज़रूरी है कि मन के रुझान और भटकने को किसी क़दर रोका जावे पेश्तर इसके कि कुछ चित्त की ऐसी एकाग्रता प्राप्त हो सके जो कि अभ्यासी को हिम्मत दिलावे और आनन्द का अनुभव करावे। यह सच है कि बिना परम पिता की सहायता के यह नहीं हो सक्ता, लेकिन यह ज़रूरी है कि सहायता प्राप्त करने के लिये सच्चे दिल से कोशिश की जावे। मैं तुमको दोष नहीं देता। मैं जानता हूँ कि मनुष्य बिल्कुल बे-चारगी की हालत में पहुँच गया है और काल व माया के हाथों में कमोबेश खिलौना मालूम हो रहा है। लेकिन एक वक्त ज़रूर आवेगा जब कि वह इस तरह, जैसा कि अब है, खिलौना बने रहने से बेज़ार हो जावेगा और ऐसा समय मालिक से सहायता पाने की प्रार्थना सुने जाने के लिये शुभ घड़ी है। मन की यह अवस्था और साथ में परम पिता के चरनों का सामीप्य प्राप्त करने की सच्चे मन से कोशिश, ज़रूर सफलता प्राप्त करावेगी। जो तुमको कई मौक़ों पर ग़ालिबन पहले कहा जा चुका है, उसी को फिर दोहराया जाता है कि काल और माया की लड़ाई में सुरत के घाट पर राधास्वामी नाम का सुमरन करने से ज़्यादा कारगर दूसरा कोई हथियार नहीं है। अगर यह नियम से किया जावे तो ज़रूर मन की सफ़ाई होगी और मन व सुरत की धारें सुरत के घाट की ओर उठेंगी। अगर यह कुछ समय तक होता रहे और सुरत के घाट पर चित्त एकाग्र

हो तो आनन्द का अनुभव होगा और उसके साथ शुकरगुज़ारी और दीनता पैदा होगी और दिन ब दिन आइन्दा परमार्थी तरक़्क़ी का रास्ता आसान होता जावेगा ।

(108)

Attendance in Satsang and service of the Sant Sat Guru are no doubt essential factors in spiritual progress, but when these are not available the devotee can maintain his usual progress by performing his Abhyas regularly with earnestness and zeal and reading the sacred books regularly every day for an hour or so.

(१०८) अनुवाद

सतसंग की हाज़िरी और संत सतगुरु की सेवा निस्संदेह परमार्थी तरक़्क़ी में ज़रूरी चीज़ें हैं। लेकिन जब कि इनका मौक़ा न मिले तो अभ्यासी नियम और शौक़ और सच्चे मन से अभ्यास करने और प्रति दिन घंटे भर या उससे अधिक नियम पूर्वक पोथियों का पाठ करने से अपनी मामूली तरक़्क़ी क़ायम रख सकता है ।

(109)

Perseverance in the various modes of devotion prescribed by the Radhasoami Faith will eventually lead to gradual but steady progress. You should not lose heart and ought to place your reliance on the grace of Radhasoami Dayal who will always vouchsafe to extend His helping hand to all those who sincerely seek His assistance. As a partial remedy for the wandering of the mind at the time of Abhyas, I would recommend that attention (Chitta) may be devoted to each of the heavenly spheres from Sahasdal Kanwal to Sat Lok with the aid of Sumiran or Dhyan and fixed at each sphere for a minute or two. This Abhyas will take 5 or 10 minutes on each occasion and may be performed 5 or 6 times (or even more) in the course of the day. As the duration at each time of the Abhyas will be small and the attention will be fully occupied in its passage from one sphere to another,the chances of distraction and wandering are few, unless the devotee himself is heedless or apathetic.

(१०९) अनुवाद

राधास्वामी मत में बतलाए हुए अभ्यासों को दृढ़ता से करते रहने से धीरे २ मगर मुतवातिर और लगातार चाल ज़रूर चलने लगेगी । तुमको हिम्मत नहीं हारनी चाहिये । राधास्वामी दयाल की दया पर भरोसा रखना चाहिये जो उन सबको अपनी मदद का हाथ ज़रूर पकड़ावेंगे जो सच्चे मन से उनकी मदद के ख्वास्तगार हैं। अभ्यास

के समय मन की गुनावनों को रोकने का कुछ अंश में उपाय यह है कि सुमरन या ध्यान की मदद से सहसदल कँवल से सत्तलोक तक के स्थानों की ओर चित्त को फेर कर हर स्थान पर मिनट मिनट दो दो मिनट चित्त को ठहराया जावे। यह अभ्यास हर मरतबा पाँच दस मिनट लेगा और दिन भर में पाँच छ: दफ़ा बल्कि ज़्यादा किया जा सकता है। चूँकि हर दफ़ा अभ्यास का समय थोड़ा ही होगा और चित्त भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर जमाने में पूरी तौर से मशग़ूल रहेगा, मन के इधर उधर भटक जाने और गुनावन उठाने के मौक़े कम होंगे, अगर अभ्यासी स्वयं ला-परवाही न करे।

(110)

The practice enjoined by R. S. Faith can be successfully performed by a Grihasthi* and all the duties incumbent upon a Grihasthi can be fully attended to without detriment to Abhyasϕ; of course moderation should be used in all matters and any action which would result in pain or loss to another should be avoided; also such actions as involve an extravagant use of one's spirituality.

(११०) अनुवाद

राधास्वामी मत का अभ्यास गृहस्थ से भली प्रकार बन सकता है और गृहस्थी के सब ज़रूरी फ़रायज़ और काम बिना अभ्यास की हानि के अच्छी तरह किए जा सकते हैं। अलबत्ता हर काम में ऐतदाल से बरता जावे और हर वह काम जिससे दूसरे को तकलीफ़ या नुक़सान पहुँचे, न किया जावे और वह काम भी जिनमें चैतन्य का फ़िज़ूल ख़र्च हो, न किए जावें।

(111)

The third Til as you have been already told is located about ¾ of an inch inside from the root of the nose and Sahas-dal-Kanwal is located behind it, facing upwards. It is not necessary to exactly localise the spot it will be enough if you roughly imagine the spot, and concentrate your attention upon it. When listening to the sounds Sumiran and Dhyan should be suspended. If your mind begins to wander, you should resort to Sumiran and Dhyan and restore concentration.

(१११) अनुवाद

जैसा कि तुमको बतलाया जा चुका है, तीसरा तिल नाक की जड़ से पौन इंच अंदर की तरफ़ है और सहसदल कँवल उसके पीछे मगर ऊपर की ओर रुख़ किए हुए

---

* House holder. Family man. ϕ Devotional practices.

है। उस स्थान का ठीक पता लगाने की ज़रूरत नहीं है। उसका अनुमान करके उस पर चित्त को जमाना काफ़ी है। शब्द का श्रवण करते समय सुमरन ध्यान बंद कर देना चाहिये। अगर मन हट जावे तो सुमरन ध्यान करने लगना चाहिये और फिर एकाग्रता प्राप्त कर लेनी चाहिये।

(112)

Despondency bordering upon despair should be carefully guarded against. It is one of the numerous shafts upon whose success Kal greatly relies. No matter however untoward the circumstances may be, they do not affect the Omnipotence and the all-embracing Mercy of the Supreme Father Radhasoami Dayal. Whoever leans upon the Supreme Name of R. S. Dayal for his salvation, is safe in the matter of his eventual redemption wherever he may be.

(११२) अनुवाद

इस तरह की उदासी से जो क़रीब २ ना-उम्मीदी के दरजे पर पहुँच जावे, होशियारी से बचना चाहिए। यह उन बहुत से तीरों में से एक है जिसकी कामयाबी पर काल को बहुत भरोसा है। चाहे कैसी ही विरुद्ध अवस्थाएं हों, उनका परम पिता राधास्वामी दयाल की सर्व शक्तिमानता और सर्वव्यापकता पर कोई असर नहीं पड़ता। जो कोई भी अपने उद्धार के लिए राधास्वामी दयाल के नाम का आसरा लेगा, वह जहाँ कहीं भी हो, देर अबेर उसकी मुक्ति होने में कोई अंदेशा नहीं है।

(113)

Any phenomenal change and ascension of spirit to the higher regions should not be looked for within a short time of the commencement of Abhyas. The subjugation of mind and Maya is not the work of a day and patience and trustful application to the various practices prescribed by R. S. Faith, and cultivation of love for Supreme Father, are indispensable for steady spiritual progress which alone is the sure path leading to spiritual emancipation and eventual attainment of Supreme Bliss in the highest regions, the regions of Radhasoami Dayal.

(११३) अनुवाद

अभ्यास शुरू करते ही किसी असाधारण परिवर्तन और ऊँचे देशों में सुरत की चढ़ाई की उम्मीद नहीं करना चाहिए। मन और माया का दमन करना एक रोज़ का काम नहीं है। धीरज और विश्वास के साथ राधास्वामी मत के अभ्यासों को करते रहना और परम पिता के प्रति प्रेम पैदा करना मुतवातिर और लगातार रूहानी तरक़्क़ी

के लिये निहायत ज़रूरी है और सुरत के छुटकारे तथा अंत में सबसे ऊँचे देश में, राधास्वामी दयाल के धाम में, परम आनन्द प्राप्त करने का केवल यही निश्चित मार्ग है।

(114)

The difficulties you experience in your practice are things of common occurrence with the devotees of R. S. Faith and what you have principally to keep in mind is that perseverance and patience with unshaken faith in the Grace and Mauj of R. S. Dayal will eventually conquer them. Before you sit in Bhajan, and occasionally at other times too, it will prove beneficial to read with undivided and rapt attention the Shabds beginning with "धुन में अब सुरत लगाओ" and "सुन रे मन अनहद बैन" and other Shabds of Virah[1] and Prem[2] in the Holy and Exalted Charans of R. S. Dayal which should be an object of primary importance with every Satsangi and to this eventually everything in the shape of set-backs which Kal and Karams strive for, will yield and the onward path of the devotee rendered smooth and charming. Before the feeling of Laya[3] asserts itself to an extent as to render you helpless you should stretch your limbs and shake off the sense of drowsiness and easy resignation coming on but even when you don't succeed in doing it the rapturous absorption will at least keep you at level of spirituality much higher than the ordinary one. But this applies only to the condition when slumber pure and simple does not overtake the devotee.

(११४) अनुवाद

मुशकिलें जो तुमको अभ्यास में पेश आ रही हैं, राधास्वामी मत के अभ्यासियों के लिये मामूली बातें हैं। तुमको ख़ास तौर से यह बात याद रखनी चाहिये कि राधास्वामी दयाल की दया और मौज में दृढ़ विश्वास रखते हुए मेहनत और धीरज के साथ अभ्यास करने से अंत में तुम उन मुशकिलों पर फ़तह पाओगे। भजन में बैठने से पहले और और वक्तों में भी "धुन में अब सुरत लगाओ" और "सुन रे मन अनहद बैन" और राधास्वामी दयाल के पवित्र चरनों में विरह और प्रेम के अन्य शब्दों को सब तरफ़ से चित्त को हटा कर अत्यंत एकाग्रता के साथ पाठ करना बहुत लाभदायक सिद्ध होगा। राधास्वामी दयाल के चरनों में विरह और प्रेम पैदा करना हर सतसंगी का मुख्य उद्देश्य होना चाहिये और इसी के सामने काल और माया की विघ्न करने वाली कोशिशें हार मानेंगी और अभ्यासी की चाल आसान और रसदायक हो जावेगी।

(1) Pangs of separation from Beloved. The feeling or sentiment of love in separation. (2) Love. (3) Absorption. Drowsiness.

पेश्तर इसके कि ऐसी लय अवस्था आ जावे जिसमे तुम मजबूर हो जाओ, तुमको हाथ पाँव फैला कर सुस्ती और ओंघ हटा देना चाहिए और जल्दी हिम्मत नहीं हारना चाहिए । लेकिन अगर इसमें कामयाब न हो तो भी मामूली घाट से किसी क़दर ऊँचे घाट पर लीन होना बेहतर है । लेकिन यह उस हालत के बारे में कहा गया है जबकि अभ्यासी पर खालिस नींद का ग़लबा न हो ।

(115)

You do not worry yourself over trifles. These ups and downs are incidental to life, and more so in the case of a Satsangi. You should habituate yourself to keep your equanimity of mind in the midst of ripples that disturb its surface. When the storm comes, and it is beyond you to look after yourself, Radhasoami will do it for you.

गुरु बिन कौन सम्हारे मन को ।
सुरत उमँग अब शब्द गही ।।

(Translation : Who but Guru can maintain the equilibrium of the mind ? By His grace, my Surat (spirit) has now united lovingly with Shabd ?)

Even if you fail to preserve your equanimity, the result would be the pulverisation of the mind--a result beyond all value, if submitted to in the right spirit. So you need not lose heart, and should go on as you are, sticking fast, so far as you can, to the rock of safety within yourself.

(११५) अनुवाद

छोटी २ बातों से परेशान मत हो । ज़िन्दगी में ये ऊँच नीच तो आया ही करते हैं और ख़ास कर सतसंगी को ज्यादा आते हैं । ऐसी लहरों से जिनसे जिन्दगी की ऊपरी सतह पर हलचल पैदा हो, तुमको अशाँत न होने की आदत डालनी चाहिये । जब तूफ़ान और आँधी आवे और तुम अपने को न सँभाल सको तो राधास्वामी दयाल तुम्हारी सँभाल करेंगे ।

गुरु बिन कौन सम्हारे मन को ।
सुरत उमँग अब शब्द गही ।।

अगर तुम सम अवस्था यानी ऐतदाल न भी रख सको तो उनसे मन तो चूर होवेगा ही और यह ऐसा फायदा है कि इसकी क़ीमत नहीं आँकी

जा सकती बशर्ते कि ठीक भाव से सहा जावे। पस तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिये और अपना काम जैसा कर रहे हो, अपने अन्तर में रक्षा रूपी चट्टान को जहां तक हो सके मजबूती से पकड़े हुए, करते रहना चाहिये।

(116)

I fully appreciate your motive which prompts you to cut off your connection with the world and to devote the rest of your life in the service of Radhasoami Dayal. Your intention, while good in itself and commendable, if effectuated, will, however, give rise to serious difficulties which ought to be provided for before you carry out your resolve. The most serious difficulty is to find an engagement which would not leave such a gap as to make your mind turn again to the old haunts and pursuits. It is idle to think that you can keep yourself always engaged in Parmarthi pursuits, however, strongly you might resolve to do so.

(११६) अनुवाद

मैं तुम्हारे इरादे और मन्शा की सराहना करता हूँ जिसकी उत्तेजना से तुम दुनिया के ताल्लुक़ात को तोड़ कर अपनी बाक़ी ज़िन्दगी राधास्वामी दयाल की सेवा में लगाना चाहते हो। तुम्हारा इरादा गो ब-ज़ाते-ख़ुद नेक और सराहनीय है, मगर उसके पूरा करने में भारी मुश्किलात पेश आवेंगी जिनके लिए इन्तज़ाम कर लेना चाहिए, पेश्तर इसके कि अपने निश्चय को कार्य रूप में परिणत करो। सबसे बड़ी भारी दिक़्क़त तो ऐसा शग़ल,[१] तलाश करने की होगी कि जिसमें लग जाने पर इतना वक़्त बाक़ी न बचे कि तुम्हारा मन फिर पुराने कामों और आदतों को तरफ़ दौड़े। यह ख़याल करना फ़िज़ूल है कि चाहे कितना ही पक्का इरादा हो, तुम अपने को हर वक़्त परमार्थी कामों में लगाए रख सकते हो।

(117)

A healthy development of spiritual instinct also requires that the devotee should have side by side with his Abhyas, some engagement for his mind and body apart from his daily devotional practices.

(११७) अनुवाद

परमार्थी रुझान दुरुस्ती के साथ पैदा करने के लिये भी यह जरूरी है कि अभ्यासी अभ्यास के साथ साथ तन और मन को किसी तरह लगाए रखने के लिये अलावा परमार्थी कार्रवाइयों के दूसरा भी कोई काम करता रहे।

---

(१) काम।

(118)

The Satsang, as at present constituted here, does not provide for a sufficient scope for such engagement while Abhyas and Abhyas alone, with Satsang at appointed times and any little engagement that you might create for yourself, will eventually cause a reaction and may be productive of more mischief than you count for at present. There are various other circumstances which cannot be all detailed here—but are still factors, which must be taken into account. Considering all matters, I am of opinion that the best course, as a preliminary, if you like, to your eventually carrying out your intention, will be to try to pass a few months here in Satsang at intervals. This will give you a full opportunity of judging how you pass your days here and how far you can ignore the interests which bind you down at present to your family. You can leave the management of your affairs to your grown up children and see how the scheme works.

(११८) अनुवाद

सतसंग की मौजूदा हालत में इस तरह के काम काज की काफ़ी गुँजाइश नहीं है। वक्त मुक़र्ररा पर सतसंग करके सिर्फ़ अभ्यास ही अभ्यास करने और अपने लिये सिर्फ़ थोड़ा सा काम काज जो तुम निकाल सको, निकाल लेने से आख़िर में उल्टा असर पड़ेगा और तुम जो इस वक्त अंदाज़ा करते हो उससे ज़्यादा बुरा नतीजा पैदा हो सकता है। और भी बहुत सी बातें हैं जिनकी तफ़सील यहाँ नहीं दी जा सकती लेकिन वह ऐसी हैं कि उनका विचार भी कर लेना चाहिये। इन सब बातों पर गौर करके, मेरी राय में, अगर तुम उसको पसंद करो, अपने विचार को एक दिन कार्य रूप में परिणत करने की शुरूआत के तौर पर वक्तन फ़वक्तन कुछ महीने यहाँ सतसंग में रहो, तो ऐसा करने से तुम्हें इस बात के समझने का पूरा मौक़ा मिलेगा कि यहाँ तुम किस तरह अपना वक्त बिताते हो और इस वक्त तुम्हारे कुटुम्ब के सम्बन्ध में जो बातें तुमको बाँधे हुए हैं, उनको किस क़दर बिसर सकते हो। अपना काम काज बड़े लड़कों पर छोड़ कर देख सकते हो कि यह तजवीज़ किस तरह काम करती है।

(119)

In regard to your proposal to take furlough and to retire after its expiry, I must say that I consider it a rather hasty and ill formed intention. I am, of course, not aware of your family affairs in detail, but I would advise you, generally speaking, to serve out the usual period and earn your full pension. You may say you are a widower but possibly you may have children to educate

and settle in life. Of course when the time comes in maturity for your retirement, and in the interval during periods of your leave of absence you will be welcome to pass as much of your time in the Satsang as you usefully can. There will be enough of engagement for you if you are so needed and you can prove yourself useful in a thousand and one ways in the service of Satsang. People are apt to act in their first enthusiasm and to retire from the world to devote all their time to the service of the Supreme Father. But experience has taught us that both in the furtherance of spiritual and temporal interest it is best to have side by side with spiritual engagement, something to occupy the mind in the innocent pursuits of the world, and some occupation to earn an honest living.

(११६) अनुवाद

लंबी छुट्टी लेने और उसके खतम होने पर रिटायर हो जाने का जो तुम्हारा इरादा है, वह जल्दबाज़ी और ना-समझी का इरादा है। मैं तुम्हारे कुटुम्ब के हालात से ज्यादा वाक़िफ़ नहीं हूँ। लेकिन आम तौर से मेरी सलाह यह होगी कि पूरे वक्त नौकरी करके पूरी पेन्शन हासिल करो। अगर तुम कहो कि तुम्हारी बीबी मर चुकी है तो तुम्हारे बच्चे तो होंगे जिनको पढ़ाना और फिर काम धंधे से लगा देना है। जब पूरी नौकरी करके अलग होने का वक्त आवे और उससे पहले बीच २ में जब छुट्टी मिले तुम सतसंग में आकर जितना हो सके लाभ उठा सकते हो। अगर तुम कोई काम चाहो तो काफ़ी मिल सकता है और हज़ारों तरीक़े ऐसे निकल सकते हैं कि तुम सतसंग की सेवा कर सको। अकसर लोगों को देखा है कि शुरू जोश में दुनिया के काम छोड़ कर सारा वक्त परम पिता की सेवा में लगा देने को आमादा हो जाते हैं। लेकिन हमारा तजरुबा यह है कि स्वार्थ और परमार्थ दोनों के लिये बेहतरीन तरीक़ा यह है कि परमार्थी काम के साथ २ दुनिया का कोई निर्दोष काम भी होना चाहिये जिसमें मन लग सके और ईमानदारी से अपनी रोज़ी मिल सके।

(120)

The loss of your only child is indeed a great shock to you and to your wife, but the Mauj of Radhasoami Dayal should be patiently and resignedly submitted to. In such a case the only consolation that one can derive is from running internally to the Feet of the Supreme Father. By so doing, contact with the higher spiritual current will undoubtedly bring consolation and enable the devotee to receive such mishaps in their true perspective. I can only recommend you to apply yourself devotedly and prayerfully to the Holy Charans at third Til or Sahas-dal-Kanwal. If you can do nothing else in your present perturbed state of mind, repetition of the Holy Name in a meek and humble spirit at the spot indicated will undoubtedly bring relief and resigned acceptance of the Supreme Mauj.

(१२०) अनुवाद

तुम्हारे इकलौते बच्चे का जाता रहना वाक़ई तुम्हारे और तुम्हारी घरवाली के लिए भारी चोट और धक्का है लेकिन राधास्वामी दयाल की मौज के साथ सब्र से मुआफ़क़त करना चाहिये। ऐसी हालतों में अंतर में परम पिता के चरनों की ओर रुख करने से ही ढ़ारस और तसल्ली मिल सकती है। ऐसा करने से ऊँचे देश से जो चैतन्य धार आ रही है उससे मेल होकर निस्संदेह तसल्ली मिलेगी और ऐसी दुर्घटनाओं को उनके असली रूप में देखने और झेलने की क़ाबलियत हासिल होगी। मैं सिर्फ़ यही कह सकता हूँ कि तीसरे तिल या सहसदल कँवल पर पवित्र चरनों में भाव भक्ति और दीनता से लगना चाहिये। अगर मौजूदा घबराहट की हालत में और कुछ न कर सको तो जो स्थान बतलाया गया है उस पर दीन अधीन होकर पवित्र नाम का सुमरन करने से जरूर चैन मिलेगा और मौज को दीनता से मंजूर कर सकोगे।

(121)

It very often happens that the Shabd disappears after a time and reappears again. You should not feel discouraged if such fluctuations occur. They are due to a variety of causes and are incidental to the varying phases of the devotee's life. Perseverance and trustful dependence upon the Mauj and Grace of the Supreme Father, will overcome all difficulties. In your present stage of life, however, study should be your principal objective and any undue exertion to achieve success in spiritual practices would be undesirable and might prove detrimental to health.

(१२१) अनुवाद

यह अकसर होता है कि कुछ समय बाद शब्द गुम हो जाता है और फिर आने लगता है। अगर इस तरह की ऊँच नीच हालत हो तो तुमको हिम्मत नहीं हारनी चाहिये। उसके कई कारण होते हैं और वह अभ्यासी के जीवन के रद्दोबदल के साथ लगे हुए हैं। मेहनत के साथ अभ्यास करते रहने और परम पिता की दया और मौज पर विश्वास पूर्वक भरोसा रखने से सब मुशकिलों पर फ़तह पाओगे। तुम्हारी जिन्दगी की मौजूदा मंज़िल में, पढ़ाई ही मुख्य उद्देश्य और काम रहना चाहिये और अभ्यास में कामयाबी हासिल करने के लिए ज़्यादा ज़ोर लगाना मुनासिब नहीं। तुम्हारी तन्दुरुस्ती के लिए नुक़सान-दह साबित हो सकता है।

(122)

In order to ensure an even flow of Daya sufficient to keep up the spiritual strength of a devotee, it is necessary that three hours at least should be

devoted every day to the service of the Supreme Father Radhasoami Dayal. This is the minimum required and in the case of ardent followers seeking more rapid advancement in the spiritual programme, the period ought to be extended to six hours. Out of the three minimum mentioned above, one and a half to two hours should be devoted to Abhyas and about an hour to the daily पाठ "Path", of the Holy Books. This time should not be curtailed on the ground that the mind does not derive sufficient pleasurable engagement to keep it up. The work, specially in the beginning, is an uphill one and earnest and persistent application is indispensable to overcome the ingrained indifference and indolence of the mind. Once if earnestness of purpose is established with the higher mind, the work will grow easy and pleasurable while the grace and helping hand of the Supreme Father will become more distinctly visible and will be thankfully appreciated by the devotee. Till then the grace of the Supreme Father, in the case of those who have come under His supreme protection, continues to work, but in a hidden and less tangible form, more especially in cleaning the thorny brush wood of Karams which deter a more even course of spiritual advancement. The one assistance that a devotee should value more than his own life is the absolute unshakable confidence in the grace and mercy of the Supreme Father. This will be a constant and unfailing incentive to sustained spiritual work and under no circumstances should the mind be allowed to be clouded by the remotest suspicion of withdrawal of Daya. This is how Kal often works to discourage the devotee and to keep him off from sustained efforts. Always be sanguinely expectant of the continual grace of R. S. Dayal and try to keep up your programme of spiritual engagement. This is bound eventually to lead to a frequent expression of the Supreme Father's grace in granting internal bliss and spiritual experiences of a higher order. Once this stage is reached the spade work will practically be over and the path rendered smooth for further progress.

(१२२) अनुवाद

अभ्यासी को रूहानी ताक़त को बनाए रखने के लिए दया का यकसां बहाव होता रहे, इस बात के लिए जरूरी है कि कम से कम तीन घंटे हर रोज़ परम पिता राधास्वामी दयाल की सेवा में लगाए जावें। यह कम से कम है और उत्साही अनुयाइयों को जो रूहानी तरक़्क़ी के बड़ी तेजी से होने के ख्वास्तगार हों, इस वक्त को बढ़ा कर छः घंटे कर देना चाहिये। उपर्युक्त तीन घंटों में से डेढ़ दो घंटे अभ्यास में लगाने चाहिये और क़रीब घंटा भर पोथियों के पाठ में। इस वक्त में कोई कमी न करनी चाहिये, इस बिना पर कि इस में काफी रस और आनन्द नहीं मिलता। शुरू में खास तौर से यह काम ऊँचे पहाड़ की चढ़ाई के मानिन्द है और मन में घुसी हुई काहिली और बे-परवाही

को जीतने के लिए शौक़ और इस्तक़लाल[1] के साथ अभ्यास में लगना जरूरी है। अगर निज मन में अपने मक़सद को पूरा करने का शौक़ और चिंता बस जावे तो अभ्यास सुखाला और रसदायक हो जावेगा और परम पिता की दया और रक्षा का हाथ साफ़ नज़राई पड़ेगा और अभ्यासी शुकर-गुज़ारी के साथ उसकी क़दर करेगा। तब तक परम पिता की दया उन लोगों के लिए जो सरन में आ गए हैं, अपना काम ज़्यादातर कर्मों की झाड़ियाँ साफ़ करने का जो यकसाँ रूहानी तरक्क़ी में सद्दे-राह[2] होती हैं करती रहती है मगर गुप्त और कम नुमायां तौर पर। एक सहारा जिसकी अभ्यासी को अपनी ज़िन्दगी से भी ज़्यादा क़दर करनी चाहिये, यह है कि परम पिता की मेहर और दया पर अडिग्ग और पूर्ण विश्वास करे। रूहानी कारवाई को सम्हाले रखने के लिये मुतवातिर और यक़ीनी जोश मिलता रहेगा और किसी हालत में भी दया के खिच जाने के रत्ती भर शुबहे से मन पर उदासी न छाने देना चाहिये। यही ना-उम्मीदी है जिससे काल अक्सर अभ्यासी की हिम्मत तोड़ देता है और लगातार कोशिश करने से बाज़ रखता है। राधास्वामी दयाल की निरंतर दया पाते रहने और परमार्थी करनी को नियम से निभाए रखने के लिए राधास्वामी दयाल की निरंतर दया के लिये हमेशा तहे दिल से उम्मीदवार रहो। इससे जरूर अंतर में आनन्द और उच्च कोटि के रूहानी तजरुबात की शक्ल में परम पिता की दया अक्सर अपना इज़हार करेगी। एक दफा यह दरजा हासिल हो जाने पर कठिन परिश्रम क़रीब क़रीब ख़तम हो जावेगा और आगे की तरक़्क़ी के लिये रास्ता सुगम हो जावेगा।

(123)

Rest assured that Radhasoami Dayal will ever be watchful of your true interests both spiritual and temporal, but priority in His estimation is always given to spiritual interest. You may also depend upon it that He will be both lenient and indulgent in granting the request of His true and sinscere devotees. There is no harm in asking and persistently asking for Daya but one should not set one's mind unbendingly in the attainment of one's object.in one particular manner. His resources and methods are boundless and to Him should be left the choice of the means to the particular end which He considers beneficial in the interests of His devotees.

(१२३) अनुवाद

यक़ीन रक्खो कि राधास्वामी दयाल तुम्हारे स्वार्थ और परमार्थ दोनों के असली हितों के हमेशा निगरां रहेंगे लेकिन परमार्थी हित को वह हमेशा पहला मौक़ा देते हैं। इस बात का भी भरोसा रख सकते हो कि अपने सच्चे भक्तों की प्रार्थना मंज़ूर करने में वह कोमलता और दयालुता से काम लेंगे। बार २ दया माँगने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन किसी उद्देश्य की पूर्त्ति में इस बात पर हठ नहीं करनी चाहिये कि वह किसी ख़ास रीति से हो। उनके पास अनंत साधन और रीतियां हैं और किसी ख़ास काम के

(१) धीरज। (२) किसी के मार्ग में कंटक या बाधा होना।

लिए जो रीति प्रयोग की जावे और जो वह अपने भक्तों के लिए लाभदायक समझें, वह उन्हीं पर छोड़ देनी चाहिए ।

(124)

The process of spiritual evolution as fixed by R. S. Faith is in operation and the result that you crave for will undoubtedly be eventually attained. It is, of course, natural that you should desire its attainment speedily but you must leave the various stages of spiritual advancement to the divine wisdom and Mauj of Radhasoami Dayal which alone can bring about the desired result in its perfection. Any deviation from that sketched out by Mauj would be detrimental to your interests and also delay the eventual attainment of perfect salvation.

(१२४) अनुवाद

आध्यात्मिक उन्नति यानी रूहानी तरक़्क़ी के लिए राधास्वामी मत में जो रीति मुक़र्रर की गई है, वह अपना काम कर रही है और जिस फल की आप याचना कर रहे हैं, वह निस्संदेह अंत में प्राप्त होगा । उसे जल्द से जल्द प्राप्त करने की आपकी चाह स्वाभाविक ही है । लेकिन परमार्थी तरक़्की की भिन्न २ मंजिलों पर पहुँचने का सवाल राधास्वामी दयाल की मौज और मसलहत पर छोड़ देना चाहिये । केवल वही उस नतीजे को जो हम चाहते हैं, पूर्ण अंग में प्राप्त करा सकती है । मौज ने जो कुछ मुक़र्रर कर दिया है, उससे तनिक भी हटना आपके लिए अकल्याणकारी होगा और अंत में पूर्ण उद्धार होने में भी विलंब हो जावेगा ।

(125)

A married life is not only not detrimental to the interests of a devotee but helpful to him to a certain extent. The life of a house holder is best suited for a Satsangi but inordinate indulgence should not be allowed.

(१२५) अनुवाद

शादी कर लेना न केवल भक्त के हितों के लिये मुज़िर[1] नहीं है बल्कि किसी अंश तक उसका उपकारक है । गार्हस्थ्य जीवन सतसंगी के लिये बहुत ही अनुकूल है, किंतु भोगों में बहुत अधिक आसक्ति नहीं होने देनी चाहिये ।

(126)

Dependence upon the Mauj of Radhasoami Dayal does not mean relinquishing all efforts for the maintenance of one's wife and children. All ordinary and legitimate methods should be employed for gaining legitimate objects and the result should be left to the Mauj of Radhasoami Dayal, i. e.. whatever the results, the Satsangi should be prepared to accept as the Mauj of R. S. Dayal. If an attitude like this could be adopted, cares and anxieties will greatly diminish and practically disappear.

(१) हानिकारक । बुरा ।

(१२६) अनुवाद

राधास्वामी दयाल की मौज पर भरोसा रखने का यह मतलब नहीं है कि अपनी स्त्री और बाल बच्चों के पालन पोषण के लिए जो जतन करने चाहियें, वह सब त्याग दिये जावें। बाजिबी और जायज़ मक़सद हासिल करने के लिये साधारण और मुनासिब तदबीरें काम में लानी चाहिये। उन तदबीरों और जतनों का नतीजा राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ देना चाहिए यानी जो कुछ भी हो, उसे राधास्वामी दयाल की मौज से हुआ समझ कर उसको मंजूर करने के लिए तैयार रहना चाहिये। यदि इस प्रकार का चित्त में भाव और रुख़ आ सके तो चिंताएँ और परेशानियां बहुत कुछ कम और क़रीब २ ग़ायब हो जावेंगी।

(127)

Without the help and co-operation of the mind the spirit cannot be emancipated from these regions and elevated to the higher ones. This process will go on upto Trikuti and from there the spirit will be free from the influence of the mind.

(१२७) अनुवाद

बिना मन के साथ और मदद लिये सुरत नीचे के स्थानों से निकल कर ऊँचे देशों में नहीं चढ़ सकती। त्रिकुटी तक इस रीति से चाल चलेगी। वहाँ सुरत, मन के दबाव और असर से आज़ाद हो जावेगी।

(128)

If a devotee has attained such spirituality that he can accept the dictates of the Sant Sat Guru without question he can certainly attain salvation and does not stand much in need of extraneous assistance offered by the sacred scriptures etc. But it must be remembered that such devotion will result in a marked development of true intelligence and "Anubhava" of a very high order and he would be best able to understand the inner meaning of the Holy Books.

(१२८) अनुवाद

अगर सेवक ने इतनी रूहानियत और चैतन्य शक्ति प्राप्त करली है कि वह बिना चूँ व चरा के संत सतगुरू के आदेशों को स्वीकार कर सके तो वह अवश्य उद्धार प्राप्त कर सकता है और इसको धर्म पुस्तक इत्यादि बाहरी मदद की ज्यादा ज़रूरत नहीं रहती लेकिन यह याद रखना चाहिये कि ऐसी भक्ति से बहुत उच्च कोटि की सच्ची समझ और अनुभव विशेष रूप से जाग जावेगा और ऊँचे दरजे की बानी के अंतरी अर्थ समझने में वह बहुत अधिक समर्थ होगा।

(129)

It is not necessary for a devotee to learn science to help him in his spiritual progress ; on the other hand, it may be necessary to unlearn a good

deal of book learning specially in the case of those who are a slave of it. Without "Bhakti", Vidya[1] and Avidya[2] are equally detrimental.

(१२९) अनुवाद

भक्त के लिये इस मतबल से साइंस का पढ़ना आवश्यक नहीं है कि वह परमार्थ में मददगार होगी। बर अक्स इसके पुस्तकों से जो विद्या सीखी है, उसको अधिकांश भूल जाने की जरूरत होगी, विशेष कर इन लोगों को जो महज़ उसके ग़ुलाम है। "भक्ति" के बग़ैर विद्या और अविद्या दोनों समान रूप से हानिकारक हैं।

(130)

Ro

Allahabad
12/6/25

My dear Sant Das

Your letter to hand.
We are very anxious about your father's illness. Please let us know how he is doing now. We hope with the grace of Radhasoami Dayal he is progressing & will soon come round.

With best love to you all, specially to your father

Yours sincerely
Mathur Prasad

---

(1) Knowledge. (2) Ignorance.

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1935

बाबूजी महाराज इन्दोर में सन् १९३५

Babuji Maharaj with His Satsangis in 1938 बाबूजी महाराज आगरे में १९३८

बाबूजी महाराज आगरे में सन १९३८

R. S.

Allahabad
12–6–1929

My dear Sant Das,

Your letter to hand. We are very anxious about your father's illness. Please let us know how he is doing now. We hope with the grace of Radhasoami Dayal he is progressing and will soon come round.

With hearty R. S. to you all, specially to your father,

Yours sincerely,
Madhavprasad

(१३०) अनुवाद

राधास्वामी सहाय

इलाहाबाद
१२-६-१९२९

प्रिय संतदास !

चिट्ठी तुम्हारी आई। तुम्हारे पिता की बीमारी का हाल मालूम करके बहुत चिंता हुई। अब उनकी तबियत कैसी है, लिखना। उम्मीद है कि राधास्वामी दयाल की दया से सम्हल रही होगी और वह जल्द अच्छे हो जावेंगे।

तुम सब लोगों को, खास कर तुम्हारे पिता को, राधास्वामी।

तुम्हारा सच्चा हितकारी
माधव प्रसाद

(131)

R. S.

Radhasoami Satsang,
Allahabad the 3rd Oct. 1921

My dear Ghasitu,

Your letter has just reached me. We are passing through a run of seasonal cold and fever and few are escaping an attack. Myself, my wife and daughter-in-law have had heavy cold accompanied by fever. We are progressing fairly well but are not yet free from the effects of the attack.

What I am anxious about is the avoidance of exposure which might bring on a relapse, and I have accordingly decided to start on the morning of the 6th by the Punjab Mail via Partapgarh reaching Benares in the afternoon at about 2,30 P. M.

Tauji Saheb's family has suffered very badly from fever. Runjhun has been bed ridden for over 2 months and is still subject to relapses, while Madan Mohan, his wife, his younger son, and one of his daughters have had within the past few days very violent attacks of fever, temperature rising In most cases to 106 and over. They are all improving, but have not fully recovered yet. This state of affairs in Tauji's family is also a source of concern to me and I have to visit them almost every day except when prevented from my own illness.

Bhai Saheb is expected here in a day or two. He accompanies me.

With hearty R. S.,

Yours affectionately,
Madhavprasad

(१३१) अनुवाद
राधास्वामी सहाय

राधास्वामी सतसंग
इलाहाबाद
३ अक्टोबर १९२१

प्रिय घसीटू !

तुम्हारी चिट्ठी अभी मिली। मौसमी जुकाम और बुख़ार इस वक्त यहां बड़े ज़ोरों से चल रहा है और शायद ही कोई इससे बचा हो। मुझे, मेरी धर्म पत्नी और पतोहू को बहुत ज़ोर का ज़ुकाम बुख़ार हो गया था। सब लोग ठीक हो रहे हैं लेकिन अभी असर बाकी है। हवा और ठंडक से बचने की जरूरत है, वरना दुबारा ज़ुकाम बुख़ार हो जाने का अंदेशा है। इसलिये मैंने निश्चय किया है कि ६ तारीख को सुबह पंजाब मेल (वाया परताप गढ़) से रवाना होकर बनारस दोपहर बाद ढाई बजे पहुँचूँगा।

ताऊजी के घर में बुख़ार का बड़ा ज़ोर रहा। रुनझुन ज़ायद दो महीने से बीमार है और अब भी बुख़ार लौट लौट कर आ जाता है। मदन मोहन, उनकी घरवाली, छोटे लड़के और एक लड़की को बहुत ज़ोर का बुख़ार आया। टेम्परेचर १०६ डिगरी से ऊपर पहुँचा। सब लोग अच्छे हो रहे हैं पर अभी तबीयत बिल्कुल साफ़ नहीं हुई है। ताऊजी के घर में बीमारी की वजह से भी चंदां परेशानी रहती है। सिवा उस दिन के कि जब मैं ख़ुद अपनी तबियत नरम होने की वजह से न जा सकूं, करीब २ हर रोज़ उन्हें देखने जाना पड़ता है।

भाई साहब एक दो दिन में यहां आने वाले हैं। वह मेरे साथ आवेंगे।

ज़्यादा राधास्वामी।

तुम्हारा सच्चा हितकारी
माधव प्रसाद

R. S. **Radhasoami Satsang.**

Allahabad the 3rd Feb *192*1.

My dear Phulki,

Your letter has just reached me. We are passing through a run of seasonal cold & fever & few are escaping an attack. Myself, my wife & daughter-in-law have had heavy cold accompanied by fever. We are progressing fairly well but are not yet free from the effects of the attack. What I am anxious about is the avoidance of exposure which might bring on a relapse, & I have accordingly decided to start on the morning of the 6th by the Punjab Mail via Partabgarh

reaching Banaras in the afternoon at about 2.30 P. M.

Tayji Sahib's family has suffered very badly from fever. Rumpham has been bed ridden for over 2 months & is still subject to relapses, while Madan Mohan, his wife, his younger son, & one of his daughters have had within the last few days very violent attacks of fever, temperature rising in most cases to 106° or over. They are all improving, but have not fully recovered yet. This state of affairs in Tayji family is also a source of concern to me & I have to visit them almost every day except when prevented from my own illness.

Bhai Sahib is expected here in a day or two. He accompanied me. With hearty R.S. Yours affectionately

Madhav Prasad

N. B. 'Ghasitu' was the pet name of Maharaj Saheb's elder son, Pandit Guru Charan Niwas Misra. Tauji Saheb was the first Secretary of the Central Administrative Council. Runjhun was Tauji Saheb's younger daughter, and Madan Mohan, his elder son. Seth Sudarshan Singh Saheb was addressed as Bhai Saheb.

(132)

In your old age and the very infirm condition in which you are, it is out of question that you could come to visit me, and it is enough for you if you keep the memories of the Satsang fresh in your mind and devote as much time as you can to the silent repetition of the Holy Name RADHASOAMI within yourself and the cultivation, with a deep and fervent desire, of Prit[1] and Pratit[2] in the August Charans[3] of Radhasoami Dayal to the exclusion, as far as possible, of all other thoughts.

(१३२) अनुवाद

इस वृद्धावस्था और बहुत कमज़ोरी की हालत में यहां मेरे पास तुम्हारे आने का कोई सवाल ही नहीं है। तुम्हारे लिये यह काफ़ी है कि तुम अपने मन में सतसंग की याद ताज़ा बनाए रहो और जितना कर सको उतना अपने मन में बिना आवाज़ किए हुए राधास्वामी नाम का सुमरन करते रहो। जहां तक हो सके दूसरे सब ख़यालों को अलग रखते हुए राधास्वामी दयाल के चरनों में बहुत तीव्र शौक़ के साथ प्रीत प्रतीत बढ़ाते रहो।

(133)

It is idle to expect good health unless you sincerely determine to avoid pitfalls and act up to the advice I gave you at Benares. The grace of Radhasoami Dayal will not forsake you but then it will take a different shape and bring you round after you have undergone serious difficulties. It is never too late to mend and if you earnestly resolve to leave off your old habits, you may depend upon receiving the grace and assistance of Radhasoami Dayal.

(१३३) अनुवाद

जब तक कि तुम लग़ज़िशों और भूलों से बचने और वाराणसी में जो मैंने तुमको सलाह दी थी, उसके अनुसार काम करने का सच्चे दिल से इरादा न करलो, तब तक तन्दुरुस्ती अच्छी होने की उम्मीद करना फ़िज़ूल है। राधास्वामी दयाल की दया

(1) Love, affection. (2) Faith, belief, confidence. (3) Feet.

तुमको नहीं छोड़ेंगी लेकिन उस हालत में उसकी दूसरी सूरत होगी। भारी मुसीबतों को झेलने के बाद तुमको होश आवेगा। तन्दुरुस्ती सुधारने का उपाय चाहे कितना ही देर से किया जावे, बुरा नहीं। अगर पुरानी आदतों के छोड़ने का तुम सच्चे मन से इरादा करो तो तुमको राधास्वामी दयाल की दया और मदद जरूर मिलेगी।

(134)

From the spiritual standpoint service is the best, as it will keep him aloof from such circumstances as are unfavourable to spiritual advancement. If the prospects of getting a decent job are poor, then he should select that professional line which would expose him least to temptations of deviating from the path of rectitude and honesty.

(१३४) अनुवाद

परमार्थ के दृष्टि कोण से नौकरी सबसे अच्छी है क्योंकि परमार्थी उन्नति में जो चीज़ें उलटी पड़ती हैं, उनसे वह अलग रहेगा। अगर अच्छी नौकरी मिलने की उम्मीद कम हो या न हो तो ऐसा काम या रोज़गार धंधा अपने लिए पसंद करना चाहिये जिसमें सदाचार, सच्चाई और ईमानदारी के मार्ग से हट जाने की कम से कम ललचाहट हो।

(135)

If you are prepared to accept the Holy Name RADHASOAMI as the only true and real name of the Supreme Creator, I would recommend the repetition of this Holy Name at the spirit centre. What I mean by real is that the Name has not been invented by any human being to conventionally indicate the Supreme Being. It is real in the sense that it is the vocal representation of the Name or the Sound resounding in the highest spiritual sphere. In the same sense "OM" too is the real name of the presiding deity of Brahmand.

(१३५) अनुवाद

अगर तुम इस बात का मंज़ूर करने के लिए तैयार हो कि कुल्ल मालिक का सच्चा और ज़ाती नाम केवल "राधास्वामी" है तो मैं तुमको सुरत के मुक़ाम पर इस पवित्र नाम का सुमरन करने के लिए कहूँगा। "ज़ाती" कहने से मेरा मतलब यह है कि जैसे दुनिया में चीज़ें बतलाने के लिए नाम रक्खे जाते हैं, उस तरह से कुल मालिक को संकेत करने के लिए यह किसी मनुष्य का ईजाद किया हुआ नाम नहीं है। "ज़ाती" इस मानी में है कि सबसे ऊँचे रूहानी देश में जो शब्द हो रहा है उसका मुँह से

उच्चारण किये जा सकने वाला बेहतरीन नमूना यह नाम है। उसी मानी में "ओं" भी ब्रह्मान्ड के धनी का ज़ाती नाम है।

(136)

There are three grand divisions of creation — the highest being the purely spiritual region,is called Dayal Desh, while the middle representing the spiritual-material region (*i, e.* the region where there is an admixture of matter but the spirit predominates) is called Brahmand and the third or the lowest, in which we and our earth are located, is called the Pind or the material-spiritual region, where matter predominates over spirit. Each of these grand divisions, is divided into six sub-divisions, those relating to Pind being represented by the six nervous centres commencing with the lowest at the rectum and ending with the pineal gland situated behind the eyes which is known amongst us as the spirit centre. Each of these centres in the Pind, Brahmand and Dayal Desh has a "Mantra" peculiar to itself and the Mantra is the real name of the presiding deity of that centre. In these series of Mantras, Radhasoami is Param* Mantra, being the Mantra of the highest spiritual sphere. The initial labour involved in the repetition of the Mantras is almost the same in all cases but the eventual benefit varies according to the altitude of the region to which a Mantra relates.This is only a brief sketch of the theory of Mantras, and if you wish to get greater insight into it you ought to study our literature. This so far relates to the differentiation of the various Mantras but successful performance of the practice of Sumiran or repetition of the Holy Name will depend in each case upon the extent to which a person can devote his attention to it.

(१३६) अनुवाद

रचना के तीन बड़े हिस्से या दरजे हैं। सबसे ऊँचा जो कि निर्मल चैतन्य देश है, दयाल देश कहलाता है। मध्य के देश को जो चैतन्य और माया की मिलौनी का देश है यानी जहां माया की मिलौनी तो है मगर चैतन्य उस पर हावी और ग़ालिब है, ब्रह्मांड कहते हैं। और तीसरा या सबसे नीचे का देश जिसमें हम और हमारी पृथ्वी अवस्थित है, पिंड या माया और चैतन्य का देश कहलाता है, जहाँ चैतन्य पर माया प्रधान है। इन तीन बड़े हिस्सों में से प्रत्येक के छ: छ: छोटे हिस्से हैं। वह छ: हिस्से या दरजे जिनका ताल्लुक़ पिंड से है, छ: चक्र हैं। सबसे नीचे का चक्र गुदा में और छठा चक्र पिनियल ग्लांड* (Pineal Gland) में आँखों के पीछे बना हुआ है जिसको हम

* supreme.

* दिमाग़ के नीचे के हिस्से में एक गिल्टी, ग्रंथि या गाँठ जिसके कार्य, स्वभाव, लक्षण और गुण आधुनिक मेडीकल साइंस को मालूम नहीं।

लोग सुरत की बैठक का स्थान कहते हैं। पिंड ब्रह्मांड और दयाल देश के हर चक्र का अपना विशेष और अलग मंत्र है जो उस चक्र के देवता का ज़ाती नाम है। मंत्रों के इस क्रम में "राधास्वामी" परम मंत्र है जो कि सबसे ऊँचे रूहानी देश का मंत्र है। कोई भी मंत्र हो, शुरू में उसके जाप में क़रीब २ एक सी ही मेहनत करनी पड़ती है मगर अंत में जो फ़ायदा होता है वह इस हिसाब से अलग २ होता है कि जिस देश का वह मंत्र है, वह देश कितना ऊंचा है। यह मंत्रों के सिद्धान्त का संक्षिप्त वर्णन है। अगर तुम ज़्यादा भेद जानना चाहो तो तुम्हें हमारे यहां की पोथियां ग़ौर से पढ़नी चाहिये। यहाँ तक भिन्न २ मंत्रों के भेद की बात बतलाई गई है। मगर सुमरन या पवित्र नाम का जाप भली प्रकार से बनना, प्रत्येक व्यक्ति के लिये, इस बात पर निर्भर है कि वह उसमें कितना चित्त लगा सकता है।

(137)

Such engagements as demand an almost complete absorption of one's interests and energies, leaving hardly any residue for application to others, or make so deep an impression upon one's mind that they cannot be easily subdued or divorced, must act as a serious stumbling block at the time of spiritual practices. Spiritual practice presupposes that the devotee takes a fleeting, or even diminishing interest in the affairs of the world, and if one makes a start with this asset the ordinary engagements resorted to for earning a decent livelihood according to one's station in life, and living with one's family and discharging all the duties of a householder, will not act as a hindrance. In short, a person desirous of achieving success in spiritual practices must place spiritual interests above all others. or at any rate, must be actuated by a desire to achieve this object one day. Upon concentration at the time of spiritual practice will depend further spiritual advancement and the subjugation of the lower tendencies of the mind and spirit. The two act and react upon each other and the minimum required to ensure some measure of success in the practice is the capacity to forget, to some extent at least, the world and its affairs, at the time and eventually to create a mood in which one would leave the world to take care of itself.

(१३७) अनुवाद

इस तरह के काम जिनमें क़रीब २ कुल ताकत और तवज्जह लगाने की जरूरत होती है कि जिससे दूसरे कामों में लगाने के लिए कुछ भी शेष नहीं रहता या मन पर इतने गहरे नक़श पड़ते हैं कि वह आसानी से नहीं दबाये या नहीं हटाए जा सकते, अंतरमुख अभ्यास करने के समय भारी रुकावट का काम करते हैं। अंतरमुख अभ्यास के लिए लाज़मी है कि अभ्यासी की दुनियावी मामलों में दिलचस्पी बिल्कुल आर्ज़ी हो

और वह भी ऐसी कि दिन-ब-दिन कम और गायब होती जावे। अगर इतनी योग्यता लिये हुए कोई अभ्यास शुरू करे तो दुनिया में अपनी स्थिति के अनुसार अच्छी तरह जिन्दगी बसर करने के लिये जो मामूली काम धंधा करेगा और अपने कुटुम्ब के साथ रह कर जो गृहस्थी के सब काम और फ़र्ज़ अदा करेगा उनसे कोई रुकावट नहीं पैदा होगी। संक्षेप में यह कि रूहानी अभ्यास में कामयाबी हासिल करने की चाह रखने वाले शख्स को परमार्थी लाभ सब बातों के ऊपर रखना चाहिये या कम से कम एक दिन इस नतीजे को हासिल करने की चाह तो होनी चाहिये। अंतरमुख अभ्यास के वक्त किस क़दर चित्त लगता है, इस बात पर आगे की रूहानी तरक्की और मन व सुरत की मलीन चाहों को रोकने की क़ाबलियत मुनहसिर होगी। एक का असर दूसरे पर पड़ेगा। संसारी चिंताएं कम होंगी तो अभ्यास दुरुस्ती से बनेगा। अभ्यास दुरुस्त बनेगा तो वह चिंताएं कम व्यापेंगी। अभ्यास में कामियाबी हासिल करने के लिये कम से कम इतना जरूर होना चाहिये कि किसी क़दर दुनिया और उसके कारोबार को अभ्यास के समय भूल जाने की योग्यता हो और अंत में ऐसी चित्त-वृत्ति या चित्त का भाव पैदा हो कि दुनिया को दुनिया पर ही छोड़ दे कि जो हो सो हो।

(138)

The use of eggs is not permissible amongst Satsangis but it is certainly preferable to meat. If.........wants to use them and thinks that their use is essential for his health, he should be left free to use them and no sort of pressure should be brought to bear upon him for its discontinuance.

To an outsider or even a Satsangi, ordinarily speaking, one's interference in this matter should terminate with advice. In the case of one's own son a certain amount of pressure would be permissible but differentiation, as below, should be kept in view. In one's infancy or boyhood when one is solely dependent upon one's parents for all needs and guidance, forcible prevention too, would be permissible but when a person attains manhood and evolves freedom of choice and action, great discrimination should be used in applying pressure, i. e., pressure will be permissible only to the extent to which it does not result in entirely crushing out the spirit of filial obedience. Pressure would be legitimate only as long as the person concerned views it with a sense of filial duty and considers the advice given as being disinterested and for his own advantage and wishes to follow it even though distasteful, but as soon as an indication of the disappearance of this spirit comes in and the person concerned tries to evade it by acting surreptitiously contrary to the advice given or shows signs of acting in defiance of it, any pressure employed should be completely withdrawn.

So in the matter of meat diet too, if...........feels aggrieved and thinks that his health is being sacrificed to sentiments, you should leave him alone to take any diet he wishes.

(१३८) अनुवाद

सतसंगियों को अंडे खाने की इजाज़त नहीं है, लेकिन मांसाहार के मुक़ाबले में ज़रूर बेहतर है। अगर........को अंडे खाने की ज़रूरत है और उसका यह ख़याल हो कि उसकी तन्दुरुस्ती के लिये उनका इस्तेमाल करना ही पड़ेगा तो उसे करने दिया जाय और छोड़ने के लिये किसी क़िस्म का दबाव नहीं डाला जाय। इस मामले में किसी ग़ैर-सतसंगी बल्कि सतसंगी को भी मामूली तौर से सिर्फ़ नसीहत कर दी जावे, इसके अलावा उसके साथ कुछ नहीं करना चाहिये। अपने ख़ुद के लड़के के मामले में किसी क़दर दबाव की भी इजाज़त है, मगर नीचे लिखी हुई तफ़रीक़ को निगाह में रखना चाहिये छुटपन या लड़कपन में जब कि वह अपनी कुल जरूरियात और रहनुमाई के लिये सिर्फ़ अपने माँ बाप ही के भरोसे रहता है, उसको ज़बरदस्ती रोका जाना भी रवा है, मगर जब कि वह बालिग़ हो जावे और पसंद ना-पसंद और काम करने की आज़ादी ग्रहण कर ले, तब दबाव डालने में बहुत विवेक से काम लेना चाहिये यानी महज़ इतना दबाव डालना या ज़बरदस्ती करना रवा है कि फ़रजन्दाना ताबेदारी का जोश बिल्कुल ही न मसल दिया जावे। सिर्फ़ उसी हद तक दबाव डालना या ज़बरदस्ती करना रवा है जहाँ तक कि वह शख़्स उस दबाव या ज़बरदस्ती को मानना बेटा या बेटी होने के नाते अपना फ़र्ज़ समझता है और जो सलाह दी जावे उसको बे-ग़रज और अपने ख़ुद के फ़ायदे के लिये ख़याल करे और पसंद न होने पर भी उसके मुताबिक़ काम करना चाहे। मगर ज्योंही यह भाव ग़ायब हो जावे और जो सलाह दी गई है उसके ख़िलाफ़ चुपके चुपके काम कर के उसको टालने की कोशिश करे या खुल्लम-खुल्ला हुकुम अदूली के आसार ज़ाहिर हों तो किसी भी क़िस्म का दबाव या ज़बरदस्ती पूरे तौर से हटा देना चाहिये।

यही बात मांसाहार के लिये भी है। अगर.......दुख मानता हो या ख़याल करता हो कि उसकी तन्दुरुस्ती दूसरों के निजी ख़यालात पर क़ुरबान की जा रही है तो तुम्हें उसको आज़ादी दे देना चाहिये कि जो चाहे सो खावे।

(139)

I do not at all approve of your idea of publishing the Bengali poems you have composed. Such poetical effusions, if indulged in at this stage of your spiritual practices, will have a pernicious effect upon your future spiritual advancement. Huzur Maharaj persistently discouraged them whenever any Satsangi showed a tendency of this kind. All enthusiasm, intensity and zeal should be directed inwardly in order that spiritual concentration may be further intensified and take an inward course instead of being frittered

away in outward manifestations. This is, of course, my advice to you as a brother Satsangi and you are at liberty to act according to your wishes.

The Trust does not undertake the publication of any works except those of Sant Sat Gurus.

(१३९) अनुवाद

बँगला भाषा में जो कविताएं तुमने बनाई हैं उनके छापने के ख़याल को मैं बिल्कुल पसंद नहीं करता। इस वक्त अभ्यास की जिस मंजिल पर तुम हो, अगर इस तरह के कविता के जोश में बह गए तो उसका असर तुम्हारी आइन्दा रूहानी तरक़्की के लिये मुज़िर होगा। जब कभी भी किसी सतसंगी का इस तरफ़ झुकाव पाया गया, हुज़ूर महाराज ने बराबर ना-पसंद किया। कुल उमंग, तीव्रता और जोश को अंतर में लगाना चाहिये ताकि सुरत चैतन्य का ज़्यादा ज़ोरदार समूह बन सके और बाहर निकल कर बिखरने के बजाय अंतर में धँसने लगे। एक सतसंगी भाई के नाते यह मेरी तुमको सलाह है, मगर तुमको अपनी ख़्वाहिशात के ब-मूजिब काम करने की आज़ादी हासिल है।

संत सतगुरुओं की रचित पुस्तकों के अतिरिक्त कोई अन्य प्रकाशन का कार्य ट्रस्ट नहीं करता।

(140)

The difficulties that you speak of are really landmarks in the spiritual path of a devotee and ought to serve as a warning to him to gather new strength and to make renewed efforts to overcome them. The strength of the devotee lies in gradually exhausting his own and having nothing else to sustain him except the helping hand of Radhasoami Dayal. I am glad you appreciate the difficulties that beset you at their full value, and you will doubtless apply all your efforts to turn inwards and seek succour and protection there from the Supreme Father Radhasoami Dayal. If you constantly bear this in mind (towards accomplishing which too, Radhasoami Dayal will from time to time give His assistance) you will, in spite of any reverses that you may meet at the hands of Kal and Maya, continue your progress unobstructed towards the attainmet of the eventual goal.

(१४०) अनुवाद

जिन कठिनाइयों का तुमने वर्णन किया है, वह दर असल उस रास्ते की निशानियां हैं जिससे अभ्यासी को गुजरना है और उनसे उसको यह चेतावनी लेनी चाहिए कि नई ताक़त जमा करने और उन पर फ़तह पाने की नई कोशिशें करने की

जरूरत है। अभ्यासी की ताक़त या बल इसी बात में है कि धीरे २ अपना सब बल हार कर उसके पास सिवा राधास्वामी दयाल की सहायता के और कोई बल न रह जावे। मुझे यह जान कर ख़ुशी है कि जिन कठिनाइयों ने तुमको घेर रक्खा है उनका तुमको पूरा अंदाजा है और तुम निस्संदेह अंतर में रुख़ करने की पूरी कोशिश करोगे और अंतर में ही परम पिता राधास्वामी दयाल की सहायता और रक्षा माँगोगे। अगर तुम निरंतर इस सलाह को याद रक्खोगे (जिसको पैरवी के लिये भी राधास्वामी दयाल समय २ पर मदद देंगे) तो काल और माया के हाथों जो शिकस्तें तुमको खानी पड़ें, उनके बा-वजूद अपने अंतिम निशाने की ओर तुम्हारी चाल निर्विघ्न चलती रहेगी।

(141)

If the measure of your success has not come up to the standard you formed in your mind, you should not feel despondent. You should keep before yourself the immense magnitude of the task you have undertaken and guard sedulously against a feeling of disappointment overtaking you. Any such feeling is likely to undermine your faith and damp your enthusiasm and zeal. For the purification of the mind and bringing it under control, it is necessary that the spiritual current which has been embedded in it for long ages should be gradually withdrawn inwards. The withdrawal must be very slow and gradual at least in the beginning, as otherwise the equilibrium necessary for the continuance of the work of this world and of Parmarth will be lost resulting in a suspension of activity in both directions. On the other hand always invigorate your mind and spirit with the belief that the Supreme Father Radhasoami Dayal is all powerful and will not allow your real interests to suffer. Working in this spirit and laying special stress upon the performance of "Sumiran" at the spirit centre, which is the remedy for impurities of the mind and its vagaries, you will find no reason to lag behind in your efforts and will occasionally receive impressions of the grace and mercy of Radhasoami Dayal.

(१४१) अनुवाद

अगर उस दरजे तक तुमको कामयाबी हासिल नहीं हुई है जिसका कि तुमने ख़याल बाँधा था तो तुमको हताश नहीं होना चाहिये। तुम्हें इस बात को देखते रहना चाहिये कि जो काम तुमने उठाया है वह किस क़दर भारी है। और ना उम्मीदी न आने देने के लिये चौकन्ने रहना चाहिये। इस तरह के ना-उम्मीदी के ख़याल से विश्वास जाते रहने और तुम्हारी उमंग और जोश ठंडा पड़ जाने का अंदेसा है। मन की सफ़ाई और उसको काबू में लाने के लिये यह जरूरी है कि सुरत चैतन्य की धार जो मुद्दत से उसमें मुंजमिद हो गई है, उसको धीरे २ अंतर में उलटाया या खींचा जावे। कम से

कम शुरू में यह बात बहुत आहिस्ते और धीरें २ होना चाहिये वरना स्वार्थ और परमार्थ के-काम साथ २ जारी रखने के लिए जिस ऐतदाल की ज़रूरत है, वह जाता रहेगा और नतीजा यह होगा कि दोनों ही काम बन्द हो जावेंगे। बर-अक्स इसके इस विश्वास से कि परम पिता राधास्वामी दयाल सर्व शक्तिमान हैं और तुम्हारे असली हितों को कोई नुक़सान न पहुँचने देंगे, हमेशा अपने मन और सुरत को पुष्ट करते रहो। इस भाव से काम करते हुए और सुरत के घाट पर सुमरन करने पर ज़्यादा ज़ोर देते हुए जो कि मन की मलीनता और उसकी चपलता के दूर करने का उपाय है तुमको अपनी कोशिशों में पिछड़ जाने का कोई कारण न रह जावेगा और अकसर राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का असर मालूम होगा।

(142)

The law of "Karams" is inexorable, but all the same the only way to mitigate their effects or to overcome them and to turn their course, lies in following faithfully and earnestly the devotional methods of the Radhasoami Faith. Themain difficulties lie in making the devotee amenable to the "Dhar"[1] "Daya"[2] which is constantly present, and to make him passively submit to the processes necessary for the purification of the mind. An unquestioning submission to the Mauj of Radhasoami Dayal, and the acceptance of His "Saran"[3] as the sole refuge of the devotee, when once acquired, will effectually and absolutely nullify the effects of all "Karams" though most of them will materialise and manifest themselves in their ordinary forms. Prayer and devotion will play a great part in the attainment of this stage. Whether or not the mind accepts them at their true value at present, when the time for a real and profound change comes in the life of a devotee, he will constantly devote his attention and energy to them and count upon them as the chief propeller of the ark of safety in which he has taken refuge.

(१४२) अनुवाद

करमों का क़ानून बड़ा सख्त है। लेकिन यह होते हुए उनके असर को कम करने या उन पर विजय पाने और उनका रुख़ बदल देने का केवल उपाय यह है कि राधास्वामी मत में जो भक्ति और अभ्यास की जुक्तियां बताई गई हैं, उनका शौक़ और सच्चाई से पालन किया जावे। ख़ास दिक़्क़तें तो यह हैं कि अभ्यासी को इस योग्य बनाना कि वह दया की धार के जो निरंतर मौजूद है, असर को क़बूल करे और मन की सफ़ाई करने के लिये जो रीतियां जरूरी हैं, उनको बग़ैर उज्र व मुख़ालिफ़त, होने दे। राधास्वामी दयाल की मौज को बे चूँ व चरा क़बूल करना और उनकी सरन, जब

(1) Current (2) Grace and Mercy (3) Protection.

से प्राप्त हो, इस भाव से मंजूर करे कि भक्त के लिये सिर्फ़ वही जा-ए-पनाह[१] है, तब तमाम कर्मों का असर बिल्कुल जाता रहेगा, अगरचे उनमें से बहुत से अपनी मामूली शक्ल में ज़ाहिर होकर सामने आवेंगे। इस दरजे को हासिल करने में भक्ति और प्रार्थना से बहुत काम बनेगा। फ़िलहाल मन उनको पूरी क़दर से माने या न माने, जब अभ्यासी के जीवन में असली और गंभीर परिवर्त्तन होने का समय आवेगा तब वह निरंतर अपनी तवज्जह और ताक़त उनमें लगावेगा और उनको बचाव रूपी नाँव का जिसमें कि उसने सरन ली है, चलाने वाला समझेगा।

(143)

The keen desire expressed by you in your letter for obtaining "*Puran Bhakti**" is a healthy sign. This desire should be fondly cherished and strengthened as far as possible but the grant of the prayer should be left to the Mauj of Radhasoami Dayal. He alone knows when proper time comes for it.

He in His Gracious Mauj will so ordain that this desire should penetrate into higher self and get established there and be freed from the counteracting influences of other jarring desires of the world. This will necessarily take time and if done prematurely it might result in smothering that desire which though keen at the place at which you feel it, is apt to prove extremely feeble if translated to a higher centre.

(१४३) अनुवाद

पूर्ण भक्ति प्राप्त करने की तीव्र अभिलाषा जिसका तुमने अपने पत्र में वर्णन किया है, अच्छी है। जहाँ तक मुमकिन हो, इस अभिलाषा को बनाए रखना और बढ़ाना चाहिये लेकिन प्रार्थना का मंजूर किया जाना राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ देना चाहिये। केवल वे ही जानते हैं कि उसके लिए कौन समय उचित है।

वह अपनी दया पूर्ण मौज से ऐसा इंतज़ाम करेंगे कि यह अभिलाषा और अंतर में धँस जावे और वहाँ थाना गाड़ दे और दुनिया की अन्य बे-मेल चाहों के मुख़ालिफ़[२] असर से आज़ाद हो जावे। इसके होने में लाज़मी तौर पर वक़्त से पहले हो जावे तो उस चाह को दबा दे सकती है। यह चाह उस घाट पर कि जहां वह उठती है, तीव्र मालूम होती है, मगर ऊँचे घाट पर ले जाई जावे तो अत्यन्त दुर्बल मालूम होगी।

---

(१) सरन लेने की जगह। रक्षा प्राप्त करने की जगह। (२) विरोधी।
* Perfect Devotion.

(144)

Dreams, of the character you speak of, have little or no spiritual significance. Very often dreams present a kaleidoscopic reproduction, in a disordered and fantastic form, of the impressions gained in the objective world, modified in varying degrees by the creative impulse of the mental strata lying behind. All physical, and mental conditions whether immediately cognisable or not, have distinct pictures of their own, some pronounced some faint, and generally speaking all remain treasured up, to be presented again under suitable conditions. There are numerous strata in the mental plane, each having a peculiar phantom of its own, and they play a very important part in the presentation of dreams. I do not mean to say that all dreams are devoid of spiritual significance, but those that do possess it in a marked degree, have peculiar features of their own and are the products of higher impulses over which the dreamer has little control, and are often attended by spiritual hilarity and bliss which sometimes last for several days. The significance of the dreams, too, dawns of itself upon the mentality of the dreamer and he stands in little need of being made to recognise it, even though the full significance may not be intelligible. The creation in the higher planes too sometimes becomes visible in the dreams, but they are recalled, if at all, in a very imperfect manner.

(१४४) अनुवाद

जिस किस्म के स्वप्नों के बारे में तुमने लिखा है, उनमें आध्यात्मिक विशेषता बहुत ही कम या बिल्कुल नहीं है। बाहर से दिखाई देने वाली और बाहर की कार्रवाई की रचना से जो नक़्श लिये जाते हैं वही कमोबेश अंतर में मनाकाश की उत्पादक शक्ति से अव्यवस्थित रूप में और अजीबो ग़रीब तौर पर नकल उतर कर अकसर स्वप्न में दिखाई देते हैं। कुल स्थूल और मानसिक हालतों की अपनी २ तसवीरें कुछ स्पष्ट और कुछ अस्पष्ट होती हैं, चाहे वह फ़ौरन ही मालूम हों या नहीं। आम तौर पर वह अंतर में जमा रहती हैं और मुनासिब हालतों में वह फिर सामने आती है। मनाकाश में कई तबक़े या परतें हैं जिनमें अलेहदा २ छापे या नक़्श बनते हैं और वही स्वप्नों के बनने में ख़ास हिस्सा रखते हैं। कहने का मतबल यह नहीं है कि सभी स्वप्न रूहानी मतबल से ख़ाली होते हैं। जिन स्वपनों में नुमायां तौर पर रूहानी मतलब होता है, उनकी अपनी ख़ास सूरत हुआ करती है और वह ऊँचे घाट की प्रेरणा से आते हैं कि जिस पर स्वप्न देखने वाले का कोई इख़्तियार नहीं होता और अक्सर उनमें रूहानी मसर्रत और आनन्द प्राप्त होता है जो कई २ दिनों तक रहता है। ऐसे स्वप्नों की बड़ाई और विशेषता भी स्वप्न देखने वाले के मन में आप ही आप भास जाती है और उसको इसके बतलाये जाने की ज़रूरत नहीं होती, अगरचे पूरा २ मतलब फिर भी न समझ में आवे। ऊपर के देश की रचना भी कभी २ स्वप्न में दिखाई देती है, लेकिन

अगर कभी जाग्रत अवस्था में उसकी याद भी रहे तो वह बहुत ही अस्पष्ट रूप में होती है ।

(145)

Sant Sat Guru and Sadh Guru have no Karams of their own, but there are well defined laws by which suitable transference of Karams takes place, and this method not only very greatly accelerates the emancipation of those who lovingly accept the protection of Sant Sat Guru, but also obliterates such Karams which a devotee unaided would be unable to atone for. This forms the basis of the theory of atonement.

(१४५) अनुवाद

संत सतगुरु और साध गुरु पर अपने कोई कर्म नहीं होते । लेकिन दूसरों के कर्म अपने ऊपर ले लेने के स्पष्ट नियम हैं और इस रीति से न सिर्फ़ उन लोगों के उद्धार में बहुत ज़्यादा जल्दी हो जाती है जो कि संत सतगुरु की सरन प्रेम पूर्वक लेते हैं बल्कि भक्त के ऐसे कर्म भी नेस्त व नाबूद हो जाते हैं जिनका कि बिना मदद संत सतगुरु के भुगतान करना उसके लिये ना-मुमकिन था । बिना कर्म फल भुगताए हुए दूसरों के कर्मों के नाश करने के सिद्धान्त का यह आधार है ।

(146)

The prayer in the specific form in which you put it is not permissible in "*Parmarth*[1]" and "*Bhakti*[2] *Merg*"[3]. All that you and I can pray for is— that Radhasoami Dayal in His Gracious Mauj may be pleased to extricate you from the difficulties in which you find yourself at present in the best way He thinks fit. After offering prayers no definite answer should be insisted upon, and the attitude of the mind should be brought up to that Parmarthi level in which the devotee accepts with humility and meekness whatever Radhasoami Dayal may in His August Mauj ordain.

(१४६) अनुवाद

जिस शक्ल में तुमने प्रार्थना की है, वह परमार्थ और भक्ति मार्ग में जायज़ नहीं है । मैं या तुम जो कुछ प्रार्थना करके माँग सकते हैं, वह यह है कि राधास्वामी दयाल बेहतरीन तरीक़े से जो वे मुनासिब समझें, अपनी दयापूर्ण मौज से तुमको उन मुसीबतों से निकाल लें जिनमें कि तुम इस वक्त फँसे हुए हो । प्रार्थना करने के बाद कोई स्पष्ट उत्तर पाने के लिये ज़ोर नहीं देना चाहिये और मन के रुख़ और भाव को उस परमार्थी

(1) Parmarth=The highest or most sublime truth. Truth. The best end. The highest object. Salvation (2) Bhakti=Devotion. (3) Marg=A way, road, path.

सतह पर ले आना चाहिये कि भक्त दीनता और नम्रता पूर्वक जो कुछ राधास्वामी दयाल अपनी महान मौज से करें उसे मंजूर करे।

(147)

You have to bear in mind that once a person has been taken under the protection of Radhasoami Dayal, he can under no circumstances be forsaken and he shall gain access to Dayal Desh eventually. Even those persons whom you find misguided at present will also, after the lightening of their burden of "Karams", return to receive the grace of Radhasoami Dayal, though it may take more than one birth to achieve this object. The process of purification must take its own time and no importunate demand can shorten the period.

(१४७) अनुवाद

तुमको यह हमेशा याद रखना चाहिये कि एक बार जिस किसी को राधास्वामी दयाल ने सरन में ले लिया, वह किसी भी हालत में नहीं छोड़ा जा सकता और अंत में वह दयाल देश में पहुँचेगा। वह लोग भी जो इस वक्त तुमको भूले हुए मालूम होते हैं, अपने करमों का बोझ हल्का होने पर राधास्वामी दयाल की दया प्राप्त करने के लिए फिर लौट कर आवेंगे, गो इसमें एक जन्म से ज्यादा भी लग सकता है। सफ़ाई की जो रीति है, वह अपना समय लेगी और आग्रह करने से उसमें कमी नहीं हो सकती।

(148)

You should take special care not to allow a day to pass without practice unless disabled by any physical ailment. Even if urgent works prevent you from giving the allotted time, you should try to perform your Abhyas for a shorter period, but as far as possible the day should not be allowed to pass without Abhyas at all.

To remove the present state of apathy, it is necessary that you should perform "Sumiran" for half an hour to one hour in the morning and evening, and if the mind wanders even in this Abhyas, do not slacken your efforts; and devote some time in the reading of selected Shabds[1] from Sar Bachan and Prem Bani; especially those of "Chitaoni".

(१४८) अनुवाद

तुमको इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये कि अगर किसी शारीरिक व्याधि से मजबूर न हो तो कोई दिन बिना अभ्यास किए हुए खाली नहीं जाने

(1) Hymns.

पावे । अगर जरूरी कामों की वजह से मुक़र्ररा वक़्त न दे सको तो तुमको थोड़ी देर के लिए ही अभ्यास कर लेना चाहिये । लेकिन जहाँ तक मुमकिन हो, बिल्कुल अभ्यास किए बिना दिन नहीं निकल जाना चाहिये ।

मौजूदा रूखी फीकी हालत को दूर करने के लिये यह ज़रूरी है कि आध घंटे से घंटे भर तक सुबह शाम सुमरन किया जावे और अगर इस अभ्यास में भी मन न लगे तो अपने जतन और कोशिशों को मत ढीला करो बल्कि सार बचन और प्रेम बानी में से चुने हुए शब्दों का, ख़ास कर चेतावनी के शब्दों का कुछ वक़्त पाठ किया करो ।

(149)

Don't let despondency take hold of you. Whatever the circumstances, try to reconcile yourself to them and consider that everything that comes to pass is through the Mauj[1] of Radhasoami Dayal and calculated to serve your best interests. Depend upon it that Radhasoami Dayal will undoubtedly give you as much out of His bounties as is necessary to let you pull on. Giving up your professional practice is out of question until some other decent means of livelihood is secured. You ought to read occasionally if not daily, a Bachan[2] from Prem Patra and a few Shabds daily should be recited from the Holy Books.

(१४६) अनुवाद

ना-उम्मीदी को अपने ऊपर हावी मत होने दो । जो कुछ भी हालत हो, उससे मुआफ़क़त करने की कोशिश करो और ऐसा समझो कि जो कुछ होता है, वह राधास्वामी दयाल की मौज से है और बेहतरीन फ़ायदे के लिये है । यक़ीन रक्खो कि राधास्वामी दयाल अपनी बख़शिशों में से तुमको निस्संदेह इतना देंगे कि जितना तुम्हारा काम चलने के लिये ज़रूरी है । जब तक आजीविका का कोई अन्य साधन न निकले, अपनी मौजूदा प्रेक्टिस को छोड़ने का ख़याल न करो । अगर रोज़ाना नहीं तो कभी २ प्रेम पत्र से एक बचन पढ़ लेना चाहिये और दूसरी पोथियों में से भी कुछ शब्दों का रोज पाठ कर लेना चाहिये ।

(150)

The experiences that you have had are indicative of the inward abstraction of the spiritual current diffused through the body, and its concentration at the spirit centre. In the course of these practices care should be taken that no physical pressure is applied to force up the spiritual current.

(1) Supreme Will. (2) Discourse.

Contraction

It is enough to concentrate the attention at the spirit centre by merely directing your attention towards the spot indicated. It will result in very slight and harmless ~~concentration~~ and inward turn of the muscles of their own accord, without producing any appreciable effect upon the body. The attention alone should be directed inwards, and no pressure should be applied to the muscles. If this is carefully observed, no harm will arise.

(१५०) अनुवाद

अनुभव जो तुमको हुए हैं, वह सुरत चैतन्य की धार के जो कि शरीर में फैली हुई है, अंतर में खिचने और उसके सुरत के घाट पर समूह बनने के चिन्ह हैं। इन अभ्यासों के करने में इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि सुरत चैतन्य की धार को ज़बरदस्ती ऊपर चढ़ाने के लिए कोई शारीरिक दबाव न लगाया जावे। इतना ही काफ़ी है कि जो स्थान बतलाया गया है उसकी तरफ़ रुख़ करके चित्त को वहाँ जमाया जावे। इसके फलस्वरूप जिस्म पर बग़ैर कोई बुरा असर मालूम हुए, सिकुड़ने वाले अंग अपने आप धीरे २ और बग़ैर कोई नुकसान पहुँचाने के सिकुड़ कर अंदर की तरफ रुख़ करेंगे। केवल चित्त का रुख़ अन्दर की तरफ़ करना चाहिये और उन अंगों पर कोई ज़ोर नहीं डालना चाहिए। अगर इस बात का अच्छी तरह पालन किया जावे तो कोई नुक़सान नहीं होगा।

(151)

You should not allow yourself to be carried away by each whiff and wave that arises in the mind, but you should try to curb them and keep them under check with the help of the gracious and sacred name RADHASOAMI. Nor should you allow yourself to be smothered with despondency at the sight of troubles all round. Keep your eye towards the grace and mercy of Radhasoami Dayal and try as far as possible with the help of His grace to assume the position of a spectator rather than of an interested actor. A sudden change of this description is not possible, but if you keep this ideal in view, you will find much of the venom of your surroundings extracted therefrom, I hope Radhasoami Dayal will grant you graciously His assistance to effect a change in the attitude of your mind.

(१५१) अनुवाद

मन में जो कोई भी झोंका आवे या लहर उठे, उसमें अपने को नहीं बह जाने देना चाहिये। दयावंत पवित्र नाम 'राधास्वामी' की मदद से उसको दबाने और क़ाबू में रखने की कोशिश करनी चाहिये। अपने चारों ओर मुसीबतों को देख कर ना-उम्मीदी को अपना गला घोंटने न देना चाहिये। राधास्वामी दयाल की मेहर और

दया को निहारते रहो और उनकी दया की मदद से जहाँ तक हो सके इस तरह रहो गोया तुम देखने वाले हो, न कि उनमें फँस कर काम करने वाले। इस प्रकार का यकायक परिवर्तन मुमकिन नहीं है, लेकिन अगर तुम इस आदर्श को अपने सामने रक्खो तो तुमको महसूस होगा कि जो हालतें तुमको घेरे हुए हैं, उनका बहुत सा ज़हर निकल जावेगा। मैं आशा करता हूँ कि मन का रुख़ बदलने में राधास्वामी दयाल तुमको मदद देंगे।

(152)

You are actuated by a sincere desire to approach the Holy Charans of Radhasoami Dayal, and to secure advancement in your spiritual progress, but it is a pity your engagements do not permit you to fulfil your desire to attend the Satsang for some time, which is an essential factor in attaining spiritual progress and combating the difficulties which beset the path of a devotee and goes a great way towards burnishing up the mind and softening and chastening it, thus imparting to it greater susceptibility to receive the impress of the higher spiritual current. I trust through the grace and mercy of Radhasoami Dayal your efforts to attend Satsang will meet with greater measure of success. Till such opportunity comes your way, you ought to devote, as regularly as you can, at least three hours a day to the services of Radhasoami Dayal. This is the minimum required of a devotee, who wishes to maintain the continuity of his progress.

(१५२) अनुवाद

राधास्वामी दयाल के पवित्र चरनों का सामीप्य प्राप्त करने और रूहानी चाल चलने में तरक़्क़ी हासिल करने के लिये तुमको सच्ची चाह से उत्तेजना मिली है, लेकिन यह अफ़सोस की बात है कि ब-वजह तुम्हारे काम काज के संतसग में हाजिर होने की चाह पूरी नहीं हो पाती जो कि रूहानी चाल चलती रहने और अभ्यासी के रास्ते में जो मुशकिलें पेश आती हैं, उनसे लड़ने के लिये एक जरूरी चीज है और मन को मांजने, मुलायम और साफ करने में बहुत मददगार होती है और इस तरह ऊँचे देश की चैतन्य धार का असर ग्रहण करने और उससे प्रभावित होने की योग्यता देती है। मुझे यक़ीन है कि राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से सतसँग में हाज़िर होने की तुम्हारी कोशिशें ज़्यादा कामियाब होंगी। जब तक ऐसा डौल बने, तुमको नियम से प्रतिदिन कम से कम तीन घंटे राधास्वामी दयाल की सेवा में ख़र्च करने चाहिये। जो अभ्यास अपनी तरक़्क़ी बराबर क़ायम रखना चाहता है, उसके लिए कम से कम इतना जरूरी है।

(153)

I entirely disapprove of the idea of people, especially in your position and in your age, relinquishing the world and settling down in Satsang. You seem to think that life in Satsang is very easy, and anybody and everybody could live in it in a suitable manner. It is idleness and temerity to face the trials of the world, which prompt people to give up world and live the life of a recluse. You may depend upon it that after a short time in the Satsang you will feel surfeited and long to go back to the world, with all its terrors. At present you have the choice of passing some time in Satsang and some time in your occupations of the world, but if once you wind up your worldly engagements, it will be very difficult to go back to them. Chances are that after some time you will find that you are able neither to engage yourself in Parmarth nor in the legitimate pursuits of the world. This state of affairs would be deplorable, and you should not take a plunge in the dark. Try to do your duty honestly, and devote as much of your time as you can to Parmarth with intervals of Satsang here. This is the best advice I can give you under the circumstances.

(१५३) अनुवाद

दुनिया को छोड़ छाड़ कर सतसंग में आ पड़ने का लोगों का जो ख़याल होता है, ख़ास कर तुम्हारी जैसी हालत और उम्रवालों का, उसको मैं बिल्कुल ना-पसंद करता हूँ। तुम ऐसा ख़याल करते मालूम होते हो कि सतसंग की ज़िन्दगी बहुत आराम-दह है और हर एक शख़्स सतसंग में मुनासिब तरीक़ से रह सकता है। यह आलस और दुनिया की मुसीबतों का मुक़ाबला करने का भय है जो लोगों को दुनिया छोड़ने और साधू या विरक्त होकर रहने के लिये उकसाता है। यक़ीन जानो कि सतसंग में कुछ समय रहने के बाद तबियत उकता जावेगी और बा-वजूद उसकी तमाम ख़ौफ़नाक हालतों के तुम फिर दुनिया में जाना चाहोगे। इस वक्त तो तुम्हारी मर्जी पर है कि कुछ वक्त सतसंग में और कुछ वक्त दुनिया के काम धंधों में गुज़ारो लेकिन अगर एक दफ़ा तुम अपने दुनिया के कारोबार बन्द कर दोगे तो फिर वापस जाकर उनको करना बहुत मुशकिल हो जावेगा बल्कि ज्यादा इमकान तो इस बात का है कि कुछ समय पश्चात् तुमको मालूम होगा कि न तो परमार्थ में लगने के क़ाबिल हो और न दुनिया के वाजिब कारोबार करने के। यह हालत अफ़सोसनाक होगी और तुमको आँख मींच कर अँधेरे में नहीं कूद पड़ना चाहिये। अपना फ़र्ज़ ईमामदारी से अदा करते रहो और जितना वक्त कि तुम लगा सको, परमार्थ में लगाओ और कभी २ यहाँ सतसंग कर जाओ। मौजूदा हालतों में यही बेहतरीन सलाह मैं तुमको दे सकता हूँ।

(154)

Ups and downs are incidental to spiritual practices and you should not allow your efforts to be slackened, when you find that they do not meet with the success which they formerly met with. Faith and love translated to higher level lose much of their extraneous elements and measure considerably less in quantity than they formerly did. But this loss in measure is more than compensated by the amount of purification that they undergo. In the case of a true devotee this apparent diminution of faith and love should not stand in the way of future progress and should rather prove an incentive to the application of redoubled efforts.

(१५४) अनुवाद

अंतरमुख अभ्यासों में ऊँच नीच हुआ ही करती हैं और जब मालूम हो कि अभ्यास में वह कामियाबी नहीं हासिल हो रही है जो पहले हुआ करती थी तो अपनी कोशिशों और जतनों में ढील नहीं आने देना चाहिये। मौजूदा विश्वास और प्रेम जब ऊँचे घाट पर पहुँचते हैं तो उनमें से बहुत से अ-संबंधित और अनावश्यक अंग छूट जाते हैं और नीचे घाट पर जितनी मात्रा में कि वे विश्वास और प्रेम थे, उसके मुक़ाबले में बहुत कम मात्रा में रह जाते हैं। लेकिन इस मात्रा में जो कमी होती है, उसके एवज़ में कहीं ज़्यादा उनकी शुद्धि यानी सफ़ाई हो जाती है। सच्चे भक्त के प्रेम और विश्वास की मिक़दार में यह ज़ाहिरा कमी उसकी आइन्दा की तरक़्क़ी में सद्दे-राह न होनी चाहिए बल्कि पहले से दुगुनी कोशिश करने का जोश पैदा करने का सबब साबित होगा।

(155)

It is very satisfactoy that amidst all distractions you retain the consciousness that you are constantly under the protection of Radhasoami Dayal, and that you feel that His helping hand prevents you from being carried away by the overwhelming tide of Kal and Karam, and that you receive succour from Him when you need it most. It would certainly help you in your onward progress in the path of Parmarth if you can, from time to time, avail yourself of the advantages of Satsang but as long as you are unable to do so, you should, as far as possible, keep in touch within yourself with the August Charans of Radhasoami Dayal with the help of the Supreme Name constantly fresh within yourself and regard it as the fountain of life upon which you depend for existence.

(१५५) अनुवाद

यह बहुत ही संतोष की बात है कि दरहम बरहम* करने वाली हालतों से घिरे हुए रह कर भी यह सुध रखते हो कि तुम निरंतर राधास्वामी दयाल की रक्षा में हो और तुमको जान पड़ता है कि उनकी मदद का हाथ काल और कर्म के ज्वार भाटे की बाढ़ में तुमको नहीं बहने देता और यह कि तुमको सख्त ज़रूरत के वक्त उनकी मदद मिलती है। अगर तुम वक़्तन फ़वक़्तन सतसंग से लाभ उठाने का मौक़ा निकाल सको तो वह ज़रूर तुमको परमार्थ के मार्ग पर आगे चाल चलाने में मददगार होगा। लेकिन जब तक कि तुम ऐसा न कर सको, जहाँ तक हो सके, तुम अंतर में राधास्वामी नाम की याद निरंतर ताज़ा रखकर उसकी सहायता से राधास्वामी दयाल के महान चरनों से मेला करते रहना चाहिये और ऐसा समझो कि तुम्हारा वजूद ही उस नाम पर मुनहसिर है और वही तुम्हारी ज़िन्दगी का स्रोत है।

(156)

I would recommend you to read carefully the two books in English relating to our Faith, viz., (1) *Discourses* and (2) *Radhasoami Mat Prakash*. If you happen to know Hindi or Bengali, I would recommend a few more books for your perusal. It is essentially necessary that you should gain some familiarity with the distinctive principles of our Faith and the particular advantage and ease offered by the practice of Surat Shabd Yoga in the attainment of true salvation. When you have understood them to some extent and accept the principles of our Faith and the conditions attaching to the performance of the practices enjoined by it, then alone can initiation be given to you and then alone will it prove efficacious.

(१५६) अनुवाद

हमारे मत से संबंध रखने वाली दो अँगरेज़ी की पुस्तकों (१) डिस्कोरसेज़ (राधास्वामी मत पर प्रवचन) और (२) राधास्वामी मत प्रकाश को होशियारी से पढ़ो। अगर तुम हिन्दी या बँगला जानते हो तो तुम्हारे पढ़ने के लिये मैं और भी पुस्तकों के लिए सिफ़ारिश करूँगा। यह बहुत लाज़मी और ज़रूरी है कि हमारे मत के न्यारे सिद्धान्तों से और सच्चे उद्धार की प्राप्ति में सुरत शब्द योग के अभ्यास से जो खास फ़ायदा और सहूलियत मिलती है, उनसे तुम कुछ वाक़फ़ियत हासिल करो। जब तुम उनको किसी क़दर समझ लो और हमारे मत के सिद्धान्तों और हमारे अभ्यासों के लिये जो शरतें हैं उनको मंजूर करो, तब ही तुमको उपदेश दिया जा सकता है और तब ही वह फलदायक सिद्ध होगा।

*उलट पलट। तितर बितर। विनष्ट।

(157)

There are numerous divisions and grades in creation and each main celestial region has a presiding deity of its own. Following the diversity of these regions there is diversity in the various religions revealed to humanity under the impulse and direction of each presiding deity, not to speak of the differences and confusion arising from the activities of intellect and reason which really count for nothing in the domain of higher religion. The Supreme Creator is of course one, but the goals of the various extant religions are different and the methods employed for reaching the goal are likewise different. Hence it is not correct to say that all religions have the same goal. In fact each religion has a god of its own and because research in the domain of religion is not conducted in a spirit of true and earnest investigation people become confounded and hurry to the conclusion that all religions are the same and reach the same goal. It is necessary that the matter should be carefully understood before any attempt is made to start a particular form of practice. To start one in a haphazard fashion is worse than useless.

(१५७) अनुवाद

रचना में बहुत से दरजे और हिस्से हैं और हर एक मुख्य आस्मानी हिस्से या दरजे का एक एक धनी है। चूँकि इन दर्जात में ऊंच नीच है, इसलिये उनके अलेहदा २ धनियों की प्रेरणा और हिदायत से जो अलेहदा २ मज़हब (दुनिया के भिन्न २ भागों में भिन्न २ समय पर) प्रकट किए गए, उनमें भी इख्तिलाफ़ (भिन्नता) और ऊंच नीच है। बुद्धि और विचार की, जो ऊंचे दरजे के परमार्थ में कुछ भी हैसियत नहीं रखते, कार्रवाइयों से जो मत भेद और गड़बड़ पैदा हुई है, उसका तो ज़िक्र ही नहीं है। कुल्ल मालिक ज़रूर एक ही है मगर अनेक प्रचलित मतों के निशाने और आख़िरी मंजिलें अलग २ हैं और इसी तरह उन मंज़िलों तक पहुँचने की रीतियां भी अलग २ हैं। इसलिये यह कहना दुरुस्त नहीं है कि सब मतों या धर्मों के निशाने एक हैं। वास्तव में प्रत्येक धर्म या मत का अपना ख़ुदा है और चूँकि मज़हब के मामले में सच्चाई और हित चित से तहक़ीक़ात नहीं की जाती लोग चक्कर में पड़ जाते हैं और जल्दी इस नतीजे पर आ जाते हैं कि सब मज़हब एक हैं और एक ही जगह पर पहुँचते हैं। किसी ख़ास क़िस्म के अभ्यास को शुरू करने से पहले इस बात को होशियारी से समझ लेना ज़रूरी है। अललटप्पू शुरू कर देना बेफ़ायदा से बद-तर है।

(158)

It is always a pleasure to me to initiate people who earnestly seek t practise devotion according to the teachings of our Faith. But before I can do

so, it is incumbent upon me to see that the applicants for initiation have satisfied themselves upon the following points :-

1. That the true and real, as distinguished from conventional, name (*Dhwanyatmak*) of the Supreme Creator is RADHASOAMI.

2. That true salvation can be attained by the practice of "Surat Shabd Yoga".

It is not possible for an outsider to accept these as a workable belief on the basis of mere hearsay and, in the absence of any facilities for association with such people who can fully explain the principles of our Faith in the course of personal interviews and discourses, the only method that can be resorted to is a study of the books which give an exposition of these principles.

(१५८) अनुवाद

हमारे मत के अभ्यास करने के जो लोग सच्चे मन से जिज्ञासु हैं, उनको उपदेश देने में मुझे हमेशा ख़ुशी होती है। लेकिन उपदेश से पहले, यह इतमीनान कर लेना मेरा फ़र्ज़ है कि उपदेश मांगने वाले ने नीचे लिखी बातों को समझ कर अपना इतमीनान कर लिया है या नहीं :—

(१) आदि कर्त्ता का सच्चा और ज़ाती (ध्वन्यात्मक) नाम "राधास्वामी" है यानी वह किसी दुनियावी या सामाजिक तरीक़े से रक्खा हुआ नाम नहीं है

(२) सच्चा उद्धार सुरत शब्द योग से प्राप्त हो सकता है।

ग़ैर-सतसंगी के लिए यह मुमकिन नहीं है कि सिर्फ़ सुन सुना कर इन बातों को मंज़ूर कर ले जिससे काम चलने लायक़ विश्वास पैदा हो जावे। ऐसे लोगों की संगत का, जो हमारे मत के सिद्धान्तों को मुलाक़ात और बात चीत द्वारा पूर्ण रूप से समझा सकें, मौक़ा मिलने की सुविधाएं न होने पर जो कुछ किया जा सकता है वह सिर्फ़ यह है कि उन पुस्तकों को पढ़ा जावे जिनमें इन सिद्धान्तों को समझाया गया है।

(159)

Please bear in mind that "Sumiran" and "Dhyan" are the foundations upon which the purification of the mind and spirit and their elevation into higher regions rest. Hence you should direct your attention principally to the performance of "Sumiran" and "Dhyan" and also devote a quarter to half an hour twice a day to the performance of Surat Shabd Yoga, that is, Bhajan.

(१५९) अनुवाद

इस बात को ध्यान में रक्खें कि मन और सुरत की सफ़ाई और उनकी ऊंचे देशों में चढ़ाई की नींव सुमरन और ध्यान है। इसलिये सुमरन ध्यान में चित्त ज़्यादा लगाना चाहिये और सुरत शब्द योग यानी भजन भी रोज़ाना दो बार पाव पाव घंटे से आध आध घंटे तक करें।

(160)

The journey that you have before you is a tremendously long one and the distance that you have to traverse is immense. In the midst of this long distance there are numberless toll-posts. These toll-posts all occur within the regions of Maya and Kal, and until these regions are fully covered you cannot escape the demands of toll whenever they are found to be due. The faster the journey is performed the greater the frequency with which the tolls accost the traveller. These tolls take the form of awakening the hidden form of Maya and Kal and manifest themselves in the shape of Karam, jealousy, anger, hatred, chagrin, worry, etc., etc., and sometimes in the shape of passions of even a lower order. If the devotee more or less completely identifies himself with these downward forces, the Kal chuckles at his victory, and succeeds in setting back the onward march of progress. If the devotee enters into the stream of Daya attracting upwards, he sets his back upon the tricks of Kal and proceeds triumphantly towards the Gracious Charans of the Supreme Father. A moderate and controlled use of anger etc., so far as may be necessary to carry on the affairs of this world, does not matter. What matters is the loss of equanimity, and dropping the reins, the results of which are surely disastrous, and might hurl down the traveller back again into the chasm left behind. The lines I quote below cannot be read too often. They are my props in all the crises that I have to face. One should commit them to memory, or rather they should be ingrained by constant rememorances and effort to act in conformity with their spirit.

धीरज धरो बचन गुरु गहो।
अमृत पियो गगन चढ़ रहो॥

धीरज धरना, मत घबराना, चित ठहराना,
रूप समाना, नित गुन गाना, नहीं बहाना।
यही निशाना, ज्यों पपिहा स्वांती आस॥
घट में रहना, कहीं न बहना, मन में सहना,
रस ही लेना, धीरज गहना, मर्म न कहना,
ज्यों जल मीना, राधास्वामी पास॥

[Translation :- Have patience. Follow what the Guru says. Drink nectar. Ascend to and reside in Gagan (Trikuti).

Have patience. Do not be dejected. Fix your attention on, and absorb yourself in, the Holy Form of Guru. Always sing His praises. Make no excuses. Your attitute should be like that of the Papiha[1] waiting patiently and with a steadfast aim for the Swanti rain.

Keep your attention directed inward, do not allow it to flow out anywhere else. Put up with everything inwardly. Take nothing but internal joy. Have patience. Do not divulge acts of grace of the Guru to others. Live with Radhasoami like a fish in water.]

(१६०) अनुवाद

सफ़र बहुत दूर दराज़ का है और रास्ता जो तै करना है, बहुत ज़्यादा है। इस लम्बे रास्ते में अनगिनत कर या टैक्स वसूल करने की चौकियां बनी हैं। यह चौकियां काल और माया के देशो में हैं और जब तक यह देश तय न कर लिये जावें, तुम टैक्स या कर देने से जब जब वह वाजिब-अदायगी हों, नहीं छूट सकते। जितनी तेज़ी से चाल चलेगी, उतना ही जल्दी २ यात्री को टैक्स और कर वसूल करने के लिये रोका जावेगा। यह टैक्स या कर काल और माया के छिपे हुए अंग हैं जो मंजिल २ और वक्त-ब-वक्त काम क्रोध घृणा द्वेष तैश परेशानी वग़ैरा की शक्ल में ज़ाहिर होते हैं और कभी २ नीचे दरजे के काम अंग की सूरत में भी। अगर अभ्यासी इन नीचे की तरफ़ रुख़ वाली ताक़तों से कमोबेश अपने को पूरे तौर पर सम्मिलित कर दे तो काल अपनी विजय पर ख़ुश होता है और अभ्यासी की चाल में रुकावट पैदा कर देने में कामियाब होता है। अगर अभ्यासी दया की धार में जिसका आकर्षण ऊपर की ओर है, समावे तो वह काल की घातों को पीठ देकर परम पिता के दयामय चरनों की ओर विजय के साथ बढ़ता है। दुनिया के काम काज चलाने के लिए जितना ज़रूरी है, उतना थोड़ा सा गुस्सा जिस पर क़ाबू रहे, आने में हर्ज नहीं है। हर्ज इसमें है कि ऐतदाल क़ायम न रहे और लगाम छूट जावे जिसके कि नतीजे मुसीबत-अंगेज़ होते हैं और यात्री को फिर उसी गड्ढे में फेंक सकते हैं जिसको कि पीछे छोड़ आया था। नीचे जो पंक्तियां मैं उद्धृत करता हूँ, वह इतनी अच्छी हैं कि उनको बार २ पढ़ने से भी जी नहीं उकता सकता। संकट के समय में वे मेरा आधार हैं उनको ज़बानी याद कर लेना चाहिये बल्कि निरंतर याद करने और उनके उपदेशों के अनुसार बर्ताव करने की कोशिशों से उनको मन में धँसा लेना चाहिए।

धीरज धरो वचन गुरु गहो।
अमृत पियो गगन चढ़ रहो॥

1. The sparrow-hawk.

धीरज धरना, मत घबराना, चित ठहराना,
रूप समाना, नित गुन गाना, नहीं बहाना,
यही निशाना, ज्यों पपिहा स्वाँती आस ।।
घट में रहना, कहीं न बहना, मन में सहना,
रस ही लेना, धीरज गहना, मर्म न कहना,
ज्यों जल मीना, राधास्वामी पास ।।

(161)

While assuring you of my fullest sympathy I must say that this tug between Swarth[1] and Parmarth[2] is inevitable and must go on until such time as the annealing process is so far advanced that your mind becomes more or less immune from the effects of the ups and downs of this world and begins to treat them more or less with indifference and enters upon the conduct of its affairs with a sense of performance of a duty imposed upon you by the Supreme Mauj, which you discharge to the best of your ability, un-influenced to any considerable degree by the results eventually obtained. This object will not be served if you leave the affairs of the world to themselves prematurely, rendering yourself liable to frequent reactions. Occasional visits to the Satsang would be very beneficial but they must always be followed by a return to your own place, to let off the steam accumulated in the period. Your late brother was differently situated, and had not those duties to perform, which you have. You must see your son settled in life and your daughters married, before you can think of any long sojourn in the Satsang here. But all these obstacles ahead should cause no discouragement in your mind. On the other hand you should muster up your courage and face the situation as it is. This will certainly result in a permanent amelioration of your spiritual condition and remove the thorns which beset your path.

(१६१) अनुवाद

अपनी पूरी हम-दर्दी का यक़ीन दिलाते हुए मुझे कहना पड़ता है कि स्वार्थ और परमार्थ में यह खैंचातानी होना लाज़मी है और उस वक़्त तक जारी रहनी चाहिये जब तक कि इस क़दर ताव न दे दिया जावे कि मन दुनिया की ऊंच नीच के असरों से कमोबेश बरी हो जावे और उनको कमोबेश बे-परवाही से देखने लगे और यहाँ के काम काज इस भाव से करने लगे कि वह मौज की तरफ़ से तुम्हारे फ़र्ज़ क़रार दिये गये हैं जिनको कि तुम अपनी पूरी लियाक़त से अंजाम देते हो बिला इस बात के ख़याल के कि अंत में उनका क्या नतीजा होगा । यह मतलब वक़्त से पहले दुनिया के कारोबार छोड़ देने से बरामद नहीं होगा बल्कि ऐसा करने से तुम पर अक्सर झटके लगने का अंदेशा रहेगा । कभी २ सतसंग की हाज़िरी देते रहना फ़ायदेमंद होगा

(1) Temporal and (2) Spiritual matters or affairs.

लेकिन उस अर्से में जो भाफ इकट्ठी हो जावे उसको निकाल देने के लिये तुम्हें हर मर्तबा अपने वतन को वापस चले जाना चाहिये। तुम्हारे परलोक वासी भाई का मामला जुदा था। उनको वह फ़र्ज़ नहीं अदा करने थे जो तुमको करने पड़ते हैं। पेश्तर इसके कि तुम यहां सतसंग में कुछ लंबी मुद्दत के लिये आकर ठहरने का इरादा करो, तुम्हें अपने लड़के को काम धंधे से लगा देना चाहिये और लड़कियों के विवाह कर देने चाहिये। लेकिन इन सब रुकावटों से जो सामने खड़ी हैं, पस्त हिम्मत नहीं होना चाहिये। बर-ख़िलाफ़ इसके तुमको हिम्मत बटोर कर जैसी हालत हो उसका मुक़ाबला करना चाहिये। इससे ज़रूर तुम्हारे परमार्थ में दायमी तरक़्क़ी होगी और तुम्हारे रास्ते के काँटे निकल जावेंगे।

(162)

Use of meat diet and intoxicants is strictly prohibited in the case of the followers of our religion.

(१६२) अनुवाद

हमारे मत के अनुयाइयों के लिये गोश्त और नशे की चीज़ें सर्वथा वर्जित हैं।

(163)

You should not feel disheartened owing to the vagaries of the mind and your inability to check them. You ought to apply yourself more assiduously to the repetition of the Holy Name RADHASOAMI at the third Til or Sahasdal Kanwal. Struggle with the mind is a life-long one, and when you feel your weakness to curb, check or train it, always remember that Radhasoami Dayal is all-powerful, and that with His help and succour which will always be forthcoming when urgently needed, the mind will not be able to do any permanent harm to you. It may tease and worry you and retard your progress, but all the same it is losing ground from day to day. Always turn to the Holy Name and the Holy Charans within you whenever you feel dejected and are unable to check the wanderings of the mind.

(१६३) अनुवाद

मन की गुनावनों और उनको न रोक सकने से तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिये। तीसरे तिल या सहसदल कँवल पर राधास्वामी नाम के सुमरन में तुमको ज़्यादा मेहनत करनी चाहिये। मन से लड़ाई जीवन पर्य्यंत है और जब कभी भी उसको दबाने या काबू में लाने के लिये अपने को असमर्थ पाओ तो हमेशा याद रक्खो कि राधास्वामी दयाल सर्व शक्तिमान हैं और उनके सहारे और मदद से जो वक़्त ज़रूरत

हमेशा मिलते रहेंगे, मन स्थाई रूप से तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा। तुमको चाहे दिक़ और परेशान करे और तुम्हारी तरक़्क़ी की रफ्तार भी चाहे कम करे, लेकिन वह दिन-ब-दिन मैदान हारता जाता है। जब कभी भी ना-उम्मीदी आवे और मन की अटक भटक न रोक सको, हमेशा अंतर में पवित्र नाम और पवित्र चरनों की तरफ़ रुख़ करो।

(164)

It will give me great pleasure to see that your attendance at the Satsang meetings bears fruit in a more tangible form and a desire is created in you to devote some of your time to the service of the Supreme Father Radhasoami Dayal. It is only necessary to overcome the needless apprehension that devotion to Parmarth would interfere with the course of the business of the world. Two or three hours taken off the 24 hours of the day cannot seriously interfere with it, as several people of the old "Sanatan"* persuasion devote as much and more time to the performance of empty rituals. It is the real Parmarth which the mind dreads to take up although this will result only in purifying the activities undertaken in the interest of the world and make the devotee less amenable to the influence of pain or pleasure, and loss or gain of the world. To speak the truth, if real Parmarth could be obtained by the sacrifice of what the whole world stands for, it would have been cheaply gained, although it may be remarked that loss and gain in this world must go on undisturbed as a result of the past Karams of the individuals concerned while, if anything, the devotion to real Parmarth ought to create facilities both in this world and the world to come. If the fascinations and allurements of the world are not allowed to wipe out all independent sense of judgment and appreciation of truth, and false apprehensions alluded to above are not allowed to damp all activities in the interest of Parmarth, there ought to be no difficulty in pursuing the path of true salvation.

(१६४) अनुवाद

यह देख कर मुझे बड़ी ख़ुशी होगी कि सतसंग की हाज़िरी से ज़्यादा साफ शक्ल में फ़ायदा ज़ाहिर हो और परम पिता राधास्वामी दयाल की सेवा में कुछ वक़्त लगाने की चाह तुम में पैदा हो। सिर्फ़ इस फ़िज़ूल वहम को दूर करना ज़रूरी है कि परमार्थ में लगने से दुनिया के काम काज में हर्ज वाक़ै होगा। चौबीस घंटे में से दो या तीन घंटे निकाल लेने से कोई भारी नुक़सान नहीं हो सकता क्योंकि बहुत से पुराने सनातन धर्म के ख़याल वाले लोग इतना या इससे ज़्यादा वक़्त निष्फल कर्म कांड में लगा देते

* The traditional Hindu religion.

हैं। यह सत्य परमार्थ है जिसके करने से मन घबराता है, गो इससे सिर्फ़ दुनिया के फायदे के लिए किए जाने वाले कामों में शुद्धता प्राप्त होगी और दुख सुख या सांसारिक हानि लाभ का अभ्यासी पर कम असर व्यापेगा। सच्ची बात तो यह है कि सारी दुनिया न्यौछावर कर देने से भी अगर सत्य परमार्थ मिल सकता हो तो वह सस्ता मिला। अगरचे यह कहा जा सकता है कि दुनिया के हानि लाभ हर शख्स को पिछले कर्मों के फल अनुसार बे रोक टोक व कमी बेशी चलते रहने चाहियें, मगर फिर भी सत्य परमार्थ की कमाई का अगर कोई असर हो सकता है तो यह है कि इस लोक और परलोक दोनों के कामों में आसानी पैदा हो जाती है। अगर दुनिया के आकर्षण और दिल-फरेबियों को निर्पक्ष निर्णय और सच्चाई की क़दरदानी को न मिटाने दिया जावे और ऊपर ज़िक्र किये हुए झूठे डरों को परमार्थी करनी में सुस्ती और निरासता न पैदा करने दिया जावे तो सच्चे उद्धार की कार्रवाई की राह में कोई दिक़्क़त नहीं होनी चाहिये।

(165)

I fully appreciate the generous and charitable motives which prompt you to initiate the measures outlined in your letter. But I doubt very much whether they are in consonance with the highest ideals and teachings of our Faith. My own experience tells me that they are fraught with danger both to those who initiate them and to those amongst whom the propaganda is carried on, on these lines. At the outset, I may tell you that propaganda in any active form is abrogated in our Faith. The first concern of a devotee ought to be to purify himself and to aim at spiritual advancement, leaving the matter of the propaganda of the Faith to the Mauj of the Supreme Father Radhasoami Dayal. समझाने वाला अपना फिक्र आप कर लेगा, इसको चाहिये कि यह अपना फिक्र करे।" [Trans: He should not bother about teaching or instructing others but should mind his own business. The Instructor Himself will take care of His work.]

The advent of Sants is attended by the gradual spiritualisation of the whole creation, and those spirits in whom the spiritual instinct is awakened become fit subjects for association with the Sant Sat Guru, and eventual admission into the highest spiritual regions while others, according to their degree of evolution, are impregnated with the spirituality of the Dayal Desh which gradually leads to the awakening of the spirit in them and fitting them for the performance of Guru Bhakti* and Surat Shabd Yoga.

"गुरु प्यारे करें आज जगत उद्धार"

हंस जीव सब लिए मुक्ताए।
और जीवन पर बीजा डार॥

*Devotion to Guru.

रूप गुरु धर कर जग आए ।
हंस जिव सबही मुक्ताए ॥
काग जीवन पर बीजा डाल ।
काटिया काल कठिन का जाल ॥

[Translation : The beloved Guru redeems the entire creation today.

He redeems all Hans Jivas, and, as regards others, He sows the seed of spirituality in them.

Assuming the form of Guru, He has made His advent in this would and conferred salvation on all Hans Jivas (deserving souls). In Kag Jivas, i.e., Jivas of a lower category, He has sown the seed of salvation and has cut asunder the snares of ruthless Kal.]

The forcing up of the process by methods suggested by human intellect disturbs the spontaneity of action and response resulting from the current of Mauj and Daya and is often productive of abortive results. The general spiritua-lisation must result in the creation of a spiritual instinct of various degrees and the stratification of spirits of varying degrees of spiritual capacity must follow, accompanied by varying phases of religious activity. In this sense I do not deny the utility of the numerous communities which initiate religious activities in their own fashion, but at the same time I must affirm that those who have been initiated in the highest ideals and are the custodians of the highest teachings of the Supreme Faith cannot associate themselves with any movement which, in its frantic and immature efforts to uplift humanity, obscures the real object of the Supreme Father by lending countenance to the superficial and abortive activities of the mind.

I may further add that the advent of Sants is always accompanied by redoubled activity amongst the lower centres of Kal and Maya, and they too make desperate efforts to impede the work of spiritual emancipation and are represented in one form or other in the Satsang itself and active agents are employed by them in the garb of religions more or less akin in form to the *Sant Mat*, their object being to cast off all sorts of obstacles in the path of true and real salvation. These activities, too, are useful in their own sphere and though adopted by Kal and Maya with the purpose of putting obstacles in the path of the devotee, are helpful in evolving that sublime spiritual instinct which alone can make its way into the purely spiritual regions. In this view the religious activities of the various grades, some directly opposed to the current of Daya and Mauj, are not lackjng in advantage and

utility towards the attainment of the main object of "Uddhar"* but those who have understood the highest principles underlying the Faith and stick to the supreme ideals laid down for their guidance, cannot allow their own cult to be defiled by an admixture of the activities receiving their impulse from lower centres. In consonance with these principles, I am sorry we cannot associate ourselves with any movement which does not conform to the ideals as understood by us.

The ordinary methods of the propagation of the Faith are that Sants open Satsangs in which their followers congregate and to those Satsangs are also admitted outsiders who come with the professed object of investigating truth, and following, on conviction, the methods prescribed by the Sants for salvation. Natural sympathy and spiritual affinity secretly work in attracting people fitted for following our sublime Faith to the "Satsang" and the people thus attracted derive full benefit therefrom. This method ordinarily answers all purposes and active propagandas in the shape of public preaching etc., are not only unnecessary but produce undesirable results.

(१६५) अनुवाद

मैं उन दयालु और उदार भावों की पूरी क़दर करता हूँ जिनकी उत्तेजना से तुम वह कार्रवाइयां करते हो जिनका तुम्हारी चिट्ठी में ज़िक्र है। लेकिन मुझे बहुत शक है कि वे हमारे मत के श्रेष्ठ आदर्शों और उपदेशों के अनुकूल हैं भी या नहीं। मेरा ज़ाती तजरुबा यह है कि वे जो इनको करते हैं और जिनमें इस रीति से प्रोपेगन्डा किया जाता है दोनों के लिये वे कार्रवाइयां ख़तरे से भरी हुई हैं। हमारे मत में किसी क़िस्म का इश्तिहार और प्रचार सरगरमी से करना मनै है। मत का प्रचार परम पिता राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ते हुए सेवक का पहला काम यह है कि अपनी सफ़ाई और रूहानी तरक़्क़ी करे। "समझाने वाला अपना फ़िक्र आप कर लेगा, इसको चाहिये कि यह अपना फ़िक्र करे।"

संतों के आगमन से सारी रचना का धीरे २ रूहानी दरजा बढ़ता है और वे जीव जिनकी सुरत जागी हुई है, संत सतगुरु के सतसंग में आने के और अंत में सबसे ऊँचे रूहानी देश में प्राप्त होने के लायक़ बनते हैं। बाकी अन्य जीवों में उनके दरजे के मुआफ़िक दयाल देश का बीजा डाला जाता है जो धीरे २ उनमें सुरत को जगाता है और उनको गुरु भक्ति तथा सुरत शब्द योग करने के लायक़ बनाता है।

"गुरु प्यारे करें आज जगत उद्धार"

---

* Salvation

हंस जीव सब लिये मुक्ताए ।
और जीवन पर बीजा डार ॥

रूप गुरु धर कर जग आए ।
हंस जिव सबही मुक्ताए ॥
काग जीवन पर बीजा डाल ।
काटिया काल कठिन का जाल ॥

उद्धार की इस रीति को मनुष्य की बुद्धि के उपजाये हुए उपायों द्वारा ठेलने से उस असर और ख़ुद-ब-ख़ुद काम करने की आमादगी में जो मौज और दया की धार से पैदा होती है, ख़लल पड़ता है और उससे अकसर नाक़िस और अध-कच्चे नतीजे पैदा होते हैं। कुल रचना को रूहानी फ़ैज़ पहुँचाने वाली कार्रवाई का लाज़मी नतीजा यह होना चाहिए कि जीवों में भिन्न २ दर्जे की आध्यात्मिक सुध और समझ पैदा हो और उसके अनुसार भिन्न २ आध्यात्मिक योग्यता की सुरतों के भिन्न २ परत या तबक़े[1] बन जावें और साथ २ धर्म या मत संबंधी कार्रवाई के भिन्न २ रूप प्रकट हों। इस मानी में अनेक संप्रदायों या मंडलियों के अपने २ तौर पर धार्मिक कृत्यों को चलाने के लाभ को मैं अस्वीकृत नहीं करता लेकिन साथ ही मैं निश्चय पूर्वक कहूँगा कि वे लोग जो सर्व श्रेष्ठ मत के ऊँचे से ऊँचे मक़सदों के भेदी और सर्वोच्च उपदेशों की रक्षा करने वाले हैं, किसी ऐसे काम में नहीं शरीक हो सकते जो मनुष्य जाति के उपकार की सौदाई[2] और अध-पकी कोशिशों में मन की नाक़िस और बेरूनी[3] कार्रवाइयों की हिमायत करके परम पिता के असली मुद्दआ[4] को ख़ब्त कर दें।

संतों के अवतार लेने से काल और माया के नीचे के चक्रों की कार्रवाई हमेशा दुगुनी हो जाती है और वे (काल और माया) भी मोक्ष के कार्य्य में रुकावट डालने की जान तोड़ कोशिश करते हैं और ख़ुद सतसंग में किसी न किसी स्वांग में मौजूद रहते हैं और संत मत से कमोबेश मिलते जुलते मज़हबों के भेष में चालाक एजेंट या कारिंदों से काम लेते हैं। उनका मतलब सच्चे और असली उद्धार के मार्ग में सब क़िस्म के रोड़े अटकाना होता है। ये कार्रवाइयां भी अपने हलक़े में फ़ायदेमंद हैं और गो भक्त के रास्ते में विघ्न और बाधा डालने की ग़रज़ से काल और माया उनको इख़्तियार करते हैं, वे उस आला दरजे की रूहानी सुध और समझ की तरक़्क़ी में मददगार होते हैं, सिर्फ़ जिनकी वजह से निरमल रूहानी मुक़ामों में पहुँचा जा सकता है। इस दृष्टि कोण से मुख़्तलिफ़ धार्मिक कार्रवाइयां (जिनमें बाज़ तो मौज और दया की धार की कार्रवाई के सीधी ख़िलाफ पड़ती हैं) उद्धार प्राप्त करने में लाभदायक और उपयोगी होने से

---

(१) लोक। तल। परत। तह। (२) पागल। बावला। (३) बहिरमुख।
(४) उद्देश्य। अभिप्राय।

ख़ाली नहीं हैं। लेकिन वे लोग जिन्होंने मत के सबसे ऊंचे सिद्धातों को समझ लिया है और उनके पथ प्रदर्शन के लिये जो सर्वोच्च आदर्श रक्खे गए हैं, उन पर जमे रहते हैं, उन कारवाइयों की मिलौनी से जिनकी ताक़त नीचे के चक्रों से आती है, अपने दीन और मत को दूषित न होने देंगे। मुझे अफ़सोस है कि इन सिद्धान्तों के अनुसार, हम किसी ऐसे कार्य्य में साथी नहीं हो सकते जो हमारे आदर्शों के अनुरूप न हो।

मत प्रचलित करने के मामूली तरीक़े ये हैं कि संत सतसंग की स्थापना करते हैं जिसमें उनके अनुयाई एकत्रित होते हैं और उन बाहरी आदमियों को भी आने दिया जाता है जो 'सत्य' की जिज्ञासा लेकर आते हैं और जब विश्वास आ जावे, तब उद्धार के लिये संत जो अभ्यास बतलाते हैं, करते हैं। जिन लोगों में हमारे श्रेष्ठ मत के ग्रहण करने का अधिकार पैदा हो गया है, उनकी आध्यात्मिक रुचि और स्वाभाविक सहानुभूति उनको गुप्त रीति से सतसंग में खींच लाती है, और इस तरह से आकर्षित होकर जो जीव आते हैं, वह सतसंग से पूरा फ़ायदा उठाते हैं। यह तरीक़ा मामूली तौर पर सब मतलबों को पूरा कर देता है और पबलिक में लेकचर देने वग़ैरा के रूप में पुर-जोश[1] प्रचार न सिर्फ़ ग़ैर-ज़रूरी है बल्कि बुरे नतीजे पैदा करता है।

(166)

The lives of Sants cannot be written in ordinary forms of biography, and as their lives consist of activities in higher and inner spheres hidden from the cognisance of the people at large of this world, no serious attempt was ever made to write out their lives in biographical form. The real lives of Sants are contained in their writings, which will be intelligible only to those who gain access into the highest regions.

(१६६) अनुवाद

संतों की जीवनियां मामूली जीवन चरित्र की पुस्तकों की शक्ल में नहीं लिखी जा सकतीं और चूँकि उनके जीवन के ख़ास काम तो ऊंचे और अंतर के देशों से संबंधित होते हैं जो कि दुनिया के आम लोगों की निगाह से छिपे हुए रहते हैं, इसलिये जीवन चरित्र की पुस्तकों के रूप में उनकी जीवनियां लिखने की कभी ख़ास कोशिश नहीं की गई। संतों की असली जीवनियां उनके बचन बानी में मौजूद हैं जिनको सिर्फ़ वे ही समझ सकते हैं जिनकी सबसे ऊंचे देशों में रसाई है।

(167)

If you value my advice, I would advise you to stop all activities of the kind you seem to be engaged in at present and apply yourself to subduing

(१) पुर-जोश=जोश से भरा हुआ।

your mind and purifying it and elevating your spirit to the higher spiritual centres. By this method you will not only accomplish your own work, but will help others similarly situated to attain true "Parmarth". This is real "Nij Upkar"[1] and "Par Uakar"[2]. All others, according to my light, are sham and glare. I assure you of my true sympathy and love for you and all whose aim is devotion and service of Radhasoami Dayal.

(१६७) अनुवाद

इस वक़्त तुम जिस तरह की कार्रवाइयों में फँसे हुए मालूम होते हो, उन सबको छोड़ दो और अपने आपको मन के मारने और उसकी सफ़ाई करने में और अपनी सुरत को ऊंचे देशों में चढ़ाने की कोशिश में लगा दो। इस रीति से तुम न सिर्फ़ अपना काम ही करोगे बल्कि इसी हालत में पड़े हुए अन्य लोगों की भी परमार्थ की प्राप्ति में मदद करोगे। यह असली "निज उपकार" और "पर उपकार" है। बाक़ी सब मेरी समझ में ढोंग और नुमाइश हैं। तुम्हारे साथ और उन सबके साथ जिनका ध्येय राधास्वामी दयाल की भक्ति और सेवा करना है, मुझे सच्ची हम-दर्दी और प्रेम है।

(168)

The requests made in your letter are all legitimate, but the fulfilment of your wishes should be left to the Mauj of Radhasoami Dayal. He alone knows what is best in our interests, and so ordains, in His Mauj, that the maximum of benefit may be secured for His children with the minimum of mental and bodily inconvenience to them. I may, by the way, add that the removal of all cares and anxieties prior to the complete abandonment by the devotee of his cares to the safe keeping of the Supreme Father, would not only be useless but be a handicap to the progress of Parmarth. Cares and anxieties and Parmarthi[3] progress must go hand in hand, but rest assured that the Supreme Father will not allow the real interests of His devotee to suffer. When the time comes, all the difficulties will be solved one way or the other, and the Supreme Mauj will steer the barge of Parmarth to the final goal of Supreme Prem, Happiness and Bliss.

(१६८) अनुवाद

तुमने अपनी चिट्ठी में जो प्रार्थनाएं की हैं, वह सब ठीक हैं मगर अपनी चाहों का पूरा होना राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ देना चाहिये। सिर्फ़ वे ही जानते हैं कि हमारे लिए क्या बेहतरीन है और अपनी मौज से ऐसा बंदोबस्त करते हैं कि

(1) Doing good to oneself. (2) Doing good to others. (3) Spiritual,

उनके बच्चे कम से कम शारीरिक और मानसिक कष्ट उठा कर ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठावें। पेश्तर इसके कि भक्त अपनी सब चिंताओं को पूरे तौर पर परम पिता पर छोड़ दे, उनका हट जाना न सिर्फ़ बेकार होगा बल्कि परमार्थ की तरक़्क़ी में बाधक होगा। चिंताएं और परमार्थी तरक़्क़ी साथ २ चलते हैं, लेकिन यक़ीन रक्खो कि परम पिता अपने भक्त के असली मुद्दआ में कोई हर्ज न होने देंगे। जब वक्त आवेगा, सब मुशकिलात किसी न किसी तरीक़े से हल हो जावेंगी और मौज परमारथ की नैया खेय कर परम प्रेम, आनन्द और सुख के अंतिम लक्ष्य तक पहुँचा देगी।

(169)

Unwavering reliance upon the Supreme Mauj and stable and constant expectancy of Grace are the keynotes of spiritual progress and if they continue unshaken in the storms and haze created by Kal and Maya, all their wiles and traps will eventually go to naught and the spirit shall one day be received in the loving embrace of the Supreme Father Radhasoami Dayal.

(१६९) अनुवाद

मालिक की मौज का अडिग्ग आसरा और मालिक की दया की निरंतर और स्थायी रूप से उम्मीदवारी आध्यात्मिक उन्नति यानी रूहानी तरक़्क़ी की बुनियादें हैं। अगर वह काल और माया के पैदा किए हुए रगड़ों झगड़ों तथा भुलावों की आँधी में दृढ़ और अचल रहे तो उनके छल कपट और जाल उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेंगे और उसकी सुरत एक दिन अवश्य परम पिता राधास्वामी दयाल के प्रेम भरे आलिंगन[1] का आस्वादन[2] करेगी।

(170)

The experiences which you have described are also quite satisfactory and are not outcome of mere imagination. They are glimpses of lights of the ultra earthly regions, though not yet of the higher celestial regions. Your aim ought to be to approach the Supreme Father within you in a spirit of humility and devotion and the sign of success is development of love for the Supreme Father, which would always be accompanied to some extent by a blissful sensation within you and increase of ardour for attaining proximity to Him, and coming in contact with the current of ambrosia proceeding from His august presence. The spirit would feel elated but with a feeling of complete servility and dependence upon His Supreme Mauj. Humility is the true sign of successful performance of practice.

(१) गले से लगाना। हृदय से लगाना। (२) चखना। स्वाद लेना। रस लेना। मज़ा लेना।

(१७०) अनुवाद

अनुभव जो तुमने वर्णन किए हैं, काफ़ी संतोषजनक हैं। वे कदापि कल्पित या ख़याली नहीं हैं, वे इस लोक से मिले हुए ऊपर के लोक की रोशनी की झलक हैं, यद्यपि विशेष ऊँचे रूहानी स्थानों की नहीं। तुम्हारा मक़सद और उद्देश्य अंतर में दीनता और भक्ति पूर्वक परम पिता का सामीप्य प्राप्त करना और परम पिता के प्रति प्रेम उत्पन्न करना होना चाहिये। ऐसा होने पर अंतर में कुछ न कुछ आनंद का अनुभव हमेशा होगा और अधिकाधिक सामीप्य प्राप्त करने की उत्कंठा उत्पन्न होगी और अंतर में जो उनके चरनों से अमृत की धार आ रही है उससे मेला होगा। सुरत को मस्ती और मगनता का अनुभव होने लगेगा मगर पूरी दीनता से और परम पिता की मौज पर सर्वांग आश्रित रह कर। अभ्यास अच्छी तरह बन रहा है या नहीं इस बात की माक़ूल पहचान सच्ची दीनता है।

(171)

You have never visited the Satsang and it is not possible to deal with all matters in detail in correspondence. This deficiency can, to small extent, be supplied by carefully reading the Holy Books in prose and cogitating upon them and reading them again and again. However as a brief reply to your letters, I may tell you that the one essential thing for a Satsangi is to place unshakable and absolute reliance on the grace and mercy of the Supreme Father Radhasoami Dayal and to entertain no doubt in regard to the eventual emancipation of the spirit from the bondage of Kal and Maya. The struggle with mind is a life-long one, nay, it may last more than one life, but however frail and weak a Satsangi may feel to overcome its devices and temptations he should never allow himself to be carried away by a feeling of despondency. After every failure, renewed efforts should be made with the help of the Supreme Name, Swarup* and Shabd to curb the vagaries of the mind. A feeling of one's frailty should be accompanied by a tightening of the hold on the Grace and Mercy of Radhasoami Dayal and the deepening of the spirit of prayerfulness to invoke His aid. If you go on like this, you are sure to receive assistance from time to time, but do not expect that the attacks of Kal and Maya will be silenced in a brief space of time. The struggle will continue and with it also your spiritual progress, which will be accompanied by increased confidence in the Grace and Mercy of the Supreme Father. Precautions to keep away, as far as possible, from the temptations of Kal and Maya should also be taken at the same time.

---

* Form, Countenance of the Sant Sat Guru.

(१७१) अनुवाद

तुम कभी सतसंग में नहीं आए और सब बातों का पत्र में ब्यौरेवार वर्णन करना संभव भी नहीं है। इस कमी की पूर्ति किसी अंश में हमारे सतसंग की गद्य की पोथियों को होशियारी और ग़ौर से बार २ पढ़ने और उन पर विचार व मनन करने से हो सकती है। फिर भी तुम्हारे पत्रों के संक्षिप्त उत्तर के रूप में सिर्फ़ इतना ही कहना काफ़ी है कि सतसंगी के लिए जो सबसे लाज़मी और ज़रूरी बात है वह परम पिता राधास्वामी दयाल की मेहर और दया पर अटल और पूर्ण विश्वास रखना है और नीज़ यह कि एक दिन काल और माया से छुटकारा पाकर उसकी सुरत का अवश्यमेव उद्धार होगा। मन से जूझना जीवनपर्यंत है, बल्कि एक जन्म से अधिक। मन के प्रलोभन और छल कपट से पार पाने में सतसंगी चाहे जिस क़दर अपने को दुर्बल और कमज़ोर पावे, उसको कभी निरास वा ना-उम्मीद नहीं होना चाहिए। हर ना-कामियाबी के बाद यानी प्रत्येक असफलता के पश्चात परम नाम, रूप और शब्द की मदद से पुनः मन की तरंगों को रोकने और दबाने की कोशिश करनी चाहिए। अपनी कमज़ोरी महसूस करने के साथ २ राधास्वामी दयाल की मेहर और दया पर अधिकतर भरोसा करना और उनकी मदद हासिल करने के लिए गहरी पुकार करनी चाहिए। अगर तुम इस तरह करते रहोगे तो समय समय पर तुम्हें ज़रूर मदद मिलती रहेगी मगर यह उम्मीद न रखनी चाहिये कि काल और माया के आक्रमण और हमले बहुत जल्द बन्द हो जावेंगे। काल और माया से जूझना और लड़ना जारी रहेगा मगर इसके साथ २ तुम्हारी रूहानी तरक़्क़ी यानी आध्यात्मिक उन्नति भी होती रहेगी और परम पिता की मेहर और दया पर भरोसा बढ़ता रहेगा। काल और माया के प्रलोभनों से जहाँ तक हो सके दूर रहने के उपाय भी करते रहना चाहिये।

(172)

It is possible the solution may not take exactly the form you desire but somehow or other the difficulties will be met and cease to trouble you as they do. You have in the past seen His Mauj coming to your succour and this should sustain you in the future. Whenever you feel distressed you may pray internally and seek His assistance. This alone will act as a balm to your distressed mind.

(१७२) अनुवाद

यह मुमकिन है कि तुम्हारी मुशकिलात और तरद्दुदात दूर किए जाने की वह सूरत न निकले जो कि तुम चाहते हो परन्तु किसी न किसी प्रकार भी उनका उपाय किया जावेगा और वह तुमको उस वेग से तंग न करेंगी जैसा कि अब करती हैं। अब तक मौज ने आड़े वक्तों पर जो तुम्हारी मदद की है उसको याद कर करके तुम्हें आगे के लिए भी भरोसा रखना चाहिये। दुख और परेशानी की हालत में तुम अंतर में परम

पिता की मदद के लिए प्रार्थना कर सकते हो। यह प्रार्थना करना ही तुम्हारे दुखित और पीड़ित मन के लिए शाँतिदायक औषध का काम करेगा।

(173)

If a Satsangi reaches a stage which is beyond or outside the influence of evil he will be perfectly immune from all evil influences; but during the interval between his present locus and the stage where immunity naturally arises, his protection lies in linking himself at all times with the Sant Sat Guru or the Supreme Spirit within himself supplemented, if necessary, with association with His human Form.

सतगुरु स्वामी को सदा सिर पर रक्खो, सब बचाव हो जावेगा

Translation : Always Keep Sat Guru Soami on your head. You will be protected in every way.

(१७३) अनुवाद

अगर कोई सतसंगी ऐसे घाट पर पहुँच जावे जो गुनाह और पाप के असर से परे है तो बेशक वह ज़रूर उनसे छूट जावेगा। परन्तु उस समय तक जब तक वह अपने मौजूदा घाट से उस घाट पर पहुँचे जहाँ क़ुदरत के क़ायदे के मुताबिक़ गुनाहों से छुटकारा हो जाता है, उसकी रक्षा इसी बात में है कि वह परम पिता के शब्द स्वरूप से नाता जोड़े और यदि हो सके तो उनके नर स्वरूप से भी।

सतगुरु स्वामी को सदा सिर पर रक्खो, सब बचाव हो जावेगा

(174)

Ordinarily a good Satsangi, firm in his faith, will not be subject to mystic or hypnotic evils and will be protected from them by Radhasoami Dayal. Satsangis are enjoined as far as possible to rely trustfully and depend upon the Mauj of Radhasoami Dayal, and to leave as far as possible the cares of this world to the safe keeping of Radhasoami Dayal. An attempt to peep into the future should be eschewed. This does not mean that any legitimate attempt for securing the necessities of the world and discharging the ordinary obligations of a house-holder should in any way be relaxed or neglected.

(१७४) अनुवाद

मामूली तौर पर एक अच्छे सतसंगी पर जिसका राधास्वामी दयाल में अडिग विश्वास है, ग़ैबी[1] या ग़ाफ़िल[2] कर देने वाली बुराइयों का असर नहीं होगा। राधास्वामी दयाल उनसे उसे बचा लेंगे। सतसंगियों को ताकीदन फ़रमाया गया है कि जहाँ तक हो सके, राधास्वामी दयाल की मौज का विश्वास पूर्वक आस भरोस रक्खें और दुनिया की चिंताएं राधास्वामी दयाल पर छोड़ दें। भविष्य के जानने का प्रयत्न त्याजनीय है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि दुनियावी ज़रूरतों को पूरा करने का मुनासिब जतन न किया जावे वा घर गृहस्थी की ज़िम्मेदारियों को पूरा करने में सुस्ती वा ला-परवाही की जावे।

(175)

It is my earnest prayer that Radhasoami Dayal may be pleased to grant you relief at the earliest possible moment, but we have at the same time to remember that the Mauj that He has ordained must have been allowed to take its course in our own highest interests. There are ties of the mind and body which cannot be loosened otherwise, and it is necessary that they should be relaxed before any spiritual progress can take place. Rest assured that He will not allow one moment to elapse beyond the stage it is necessary that these difficulties should confront us and when the proper time arrives the relief will come in a manner and form in which there will be no danger of the former ties gaining strength to the spiritual detriment of the devotee.

(१७५) अनुवाद

मेरी हार्दिक प्रार्थना है कि राधास्वामी दयाल जल्द से जल्द तुम्हारे लिए सहूलियत पैदा करें, लेकिन साथ ही साथ हमें यह भी याद रखना चाहिये कि जो मौज उन्होंने हमारे लिए रवा रक्खी है उसके उसी तरह प्रवाहित होने में हमारा ज़्यादा से ज्यादा फ़ायदा है। तन और मन के ऐसे बंधन हैं जो किसी और रीति से ढीले नहीं किए जा सकते और रूहानी तरक़्क़ी के लिए यह आवश्यक है कि वे ढीले हो जावें। विश्वास रक्खो कि जिस क़दर और जितने समय के लिये मुशकिलों और दिक़्क़तों का आना हमारे लिए ज़रूरी है, उससे एक क्षण भी ज़्यादा न लगने दिया जावेगा और जब मुनासिब वक्त आ जावेगा, ऐसी रीति और रूप से सहूलियत कर दी जावेगी कि जिसमें पहले के बंधन फिर मज़बूत न होने पावें और भक्त की रूहानी तरक़्क़ी में कोई विघ्न बाधा न हो।

(176)

The Satsang does not interest itself in raising memorials to departed Satsangis. On the other hand it discourages any desire on the part of

(१) परोक्ष संबंधी। (२) बेहोश।

Satsangis to perpetuate their memories and inculcates the desirability of relaxing all sorts of ties with this world.

(१७६) अनुवाद

गुज़रे हुए सतसंगियों की स्मृति में कोई यादगार अथवा स्मारक आदि क़ायम करने की सतसंग में रीति नहीं है। बल्कि सतसंग के उपदेश के अनुसार, यदि इस तरह की कोई इच्छा हो भी तो उसे दिल से निकाल देना चाहिये और इस दुनिया के सर्व बंधनों और संबंधों को ढीला करके काट डालना चाहिये।

(177)

All depends upon the cultivation of faith and love for the Supreme Father Radhasoami Dayal and by far the best method for attaining it is the repetition of the Supreme Name at the spirit centre. The spirit has a natural affinity for the Holy Name and it has only to be awakened at its centre to realise the truth of this assertion.

(१७७) अनुवाद

सारा दारोमदार परम पिता में विश्वास और प्रेम पैदा होने पर है और इसके लिये सबसे उत्तम उपाय सुरत की बैठक के स्थान पर नाम का सुमरन करना है। सुरत को नाम के साथ क़ुदरती आकर्षण है और इस बात की सत्यता की पुष्टि करने के हेतु सुरत को उसके घाट पर जगाने की ज़रूरत है।

(178)

RADHASOAMI SATSANG,
ALLAHABAD.

28th May 1927

My dear Tej Singh,

Your letter has pained me. No matter what the circumstances there is no justification for harbouring the thoughts you do. You cannot conceive of a greater sin in relation to yourself or to that of your Creator.

My creed is - Never abandon hope. Hope is one of the Cardinal virtues - 'Tis something dearer than life. With some it fails seemingly at slight blast, with others it lasts longer, & with a few outlives all shocks & storms. It may sink at times, but as a matter of fact outlives all lives & merges in Supreme Bliss. This am

asset - an invaluable asset - the anchor to which all moorings ought to be tied. Those, with whom it fails, are born again to live upon it. This is not mere speculative philosophy, but stern truth. The termination of a life is a mere respite for catching up the thread where it was left.

Mercy is never denied to anybody. This more responsive to hope and faith. Hence ask you to rely even in extremity upon the Grace and the Mercy of the Supreme Father. Be assured

That are things on other side
always turn up well which the
way they will again please to
sustain. But if you remain
firm or hopeful.

You should not allow
yourself to be so un-
nerved as you have done.
I have this hope that
you will be able to
tide the events, &
even if the sudden
change takes place
the time you pass
may bring about
an amelioration of
your condition.

Any precipitate action instead of helping others will but further jeopardise their interests.

Manjanji has had an attack of fever owing to exposure - it is a passing phase, but the fact that she is walking is improvement but one is in the other hand. Losing vitality causes anxiety.

With hearty RL

Yours affectionately

Madhav Prasad

Let me have better news in your work.

I have again had numerous letters sent to Calcutta & Hyderabad

Radhasoami Satsang
Allahabad.
28th May 1927.

My Dear Tej Singh,

Your letter has pained me. No matter what the circumstances, there is no justification for harbouring the thoughts you do. You cannot conceive of a greater sin in relation to yourself and to that of your Creator.

My creed is—Never abandon hope. Hope is one of the cardinal virtues —It is something dearer than life. With some it fails seemingly at slight blast, with others it lasts longer and with a few outlives all shocks and storms. It may sink at times, but as a matter of fact outlives all lives and merges in Supreme Bliss. It is an asset—an invaluable asset—the anchor to which all moorings ought to be tied. Those, with whom it fails, are born again to live upon it. This is not mere speculative philosophy, but stern truth. The termination of a life is a mere sequel for taking up the thread where it was left.

Mercy is never denied to anybody. It is more responsive to hope and faith. I will urge you to rely ever increasingly upon the grace and the mercy of the Supreme Father. Be assured that one thing or other will always turn up with which the ray of hope will again gleam to sustain you if you remain firm and hopeful.

You should not allow yourself to be so unnerved as you have done. I have still hope that you will be able to tide the crisis and even if no sudden change takes place, the time you gain may bring about an amelioration of your condition. Any precipitate action instead of helping others might further jeopardise their interests.

Maiyanji has had an attack of fever owing to exposure, it is a passing phase, but the fact that she is making no improvement but is on the other hand losing vitality causes anxiety.

With hearty R. S.,

Yours affectionately,
Madhav Prasad

Let me have better news in your next. I have again had peremptory letters sent to Calcutta and Hyderabad.

Cardinal Virtues—prudence, justice, temperance and fortitude are the four natural virtues; faith, hope and charity are the three theological virtues.

(१७८) अनुवाद

राधास्वामी सहाय

राधास्वामी सतसंग
इलाहाबाद
२८ मई १९२७

प्रिय तेजसिंह !

तुम्हारी चिट्ठी पढ़ कर दु:ख हुआ। कैसी भी हालत हो, इस प्रकार का ख़याल कभी भी दिल में नहीं लाना चाहिये। अपने और अपने कर्त्तार के प्रति इससे बढ़ कर और कोई गुनाह और पाप कर्म नहीं हो सकता !

मेरा मत है — उम्मीद कभी मत छोड़ो — उम्मीद असली और बुनियादी सिफ़्तों या गुणों में से एक है। सार गुण है। यह जान से भी अधिक मूल्यवान है। कुछ लोगों का तो यह हाल है कि ज़रा से झोंके या हलचल से ही उम्मीद को छोड़ बैठते नज़र आते हैं। कुछ लोग किसी क़दर ज्यादा अरसे तक उम्मीद का सहारा रखते हैं। ऐसे लोग बहुत ही कम हैं जो सब झोंकों या हलचलों और धक्कों को झेलते हुए उम्मीद का दामन नहीं छोड़ते। किसी २ वक्त तो उम्मीद कम हो सकती है मगर नेस्त नहीं होती। असल में उम्मीद ही है जो सब ज़िन्दगियों के बाद अंत में परम आनन्द में समा जाती है। यही पूँजी अनमोल पूँजी है। यही लंगर या सहारा है जिससे सब नौकाओं को बाँधना चाहिये। जो लोग उम्मीद का दामन छोड़ देते हैं, वह मर कर फिर उम्मीद ही के सहारे ज़िन्दगी बसर करते हैं। यह केवल ख़याली घोड़े दौड़ाने वाली विद्या बुद्धि की फ़िलॉसफ़ी की बात नहीं है बल्कि यह असली और कठोर सत्य है। एक ज़िन्दगी ख़तम होने का मतलब केवल यह है कि जिस मंज़िल पर वह ख़तम हुई उसी जगह से फिर दूसरे जन्म में सिलसिला उठा कर कार्रवाई की जावे।

"दया" से कोई वंचित या महरूम नहीं किया जाता है बल्कि जिस क़दर आस और विश्वास अधिक है उतनी ही अधिक दया होती है। मैं तुमको ताकीद के साथ कहूँगा कि परम पिता की मेहर और दया पर अधिकाधिक भरोसा करो। निश्चय रक्खो कि हमेशा कोई न कोई बात ऐसी ज़रूर वाक़ै हो जावेगी जिससे उम्मीद की झलक फिर दिखाई दे और तुमको सहारा मिले और हिम्मत बँधे बशर्ते कि तुम अपने विश्वास में अडिग रहो और उम्मीद न छोड़ दो।

इस क़दर घबरा कर पस्त हिम्मत नहीं होना चाहिए। मुझे अब भी उम्मीद है कि इस झकोले को तुम पार कर जाओगे। अगर तुरन्त ही कोई बेहतरी की सूरत नहीं पैदा होती तो भी वक़्त बीतने से तकलीफ़ में कुछ न कुछ कमी हो सकती है। बे सोचे समझे कोई काम करने से, बजाय भलाई के और नुक़सान हो जाने का अंदेशा है।

हवा लग जाने से मैयांजी को बुख़ार आ गया था। गो यह एक आरज़ी तकलीफ़ है मगर इस वजह से फ़िक्र की बात है कि उनकी तबियत अच्छी नहीं हो रही है और नक़ाहत[1] बढ़ रही है।

ज़्यादा राधास्वामी

तुम्हारा सच्चा हितकारी
माधव प्रसाद

उम्मीद करता हूँ कि अगली चिट्ठी में कोई अच्छी ख़बर मिलेगी। कलकत्ता और हैदराबाद ताकीदी ख़त भिजवा दिये हैं।

(179)

I am fully conscious of the fact that you have borne with great patience and forbearance the wave of Karams that you have had to pass through. The fury is not yet spent out, but, depend upon it that if you only by invoking constantly the Grace of the Supreme Father maintain your equanimity you will steer through the storm, the worst of which I hope has passed. It is idle to talk of termination of the present life and re-birth, as for eradication of Karams the features existing at present are essential; any abrupt termination of the present course and its resumption hereafter will hardly be of an advantage.

(१७९) अनुवाद

मैं इस बात को ख़ूब अच्छी तरह समझता हूँ कि तुमने कर्मों के वेग को बहुत सब्र और बर्दाश्त के साथ झेला है। उसका ज़ोर अभी क्षीण नहीं हुआ है। लेकिन भरोसा रक्खो कि अगर परम पिता की दया के लिए निरंतर प्रार्थना करते हुए तुम अपनी चित्त वृत्ति स्थिर रख सकोगे तो तुम इस तूफ़ान और आँधी से साफ़ निकल जाओगे जिनकी पराकाष्टा[2] मैं आशा करता हूँ, निकल चुकी है। ऐसा विचार कि वर्त्तमान जीवन यहीं समाप्त होकर पुनर्जन्म मिले, हितकर नहीं है क्योंकि करमों के काटे जाने के लिए जो कुछ अवस्था इस मौजूदा जीवन में व्याप रही है, ज़रूरी है। उसके मौजूदा भुगतान को यकायक ख़त्म करके अगले जीवन में फिर उसी तरह भुगतना कोई फ़ायदे की बात नहीं है।

---

(१) निर्बलता। (२) अंत। हद।

(180)

Expert treatment should be resorted to and the Grace of Radhasoami Dayal will only manifest itself through the ordinary processes of treatment.

Also feed the poor from time to time, or one or two daily or every alternate three days.

(१८०) अनुवाद

माक़ूल इलाज कराते रहना चाहिये । राधास्वामी दयाल की दया अपना इज़्हार इलाज मालजे के नियमों द्वारा ही करेगी ।

समय २ पर कंगलों को भोजन कराते रहो वा एक दो को प्रतिदिन वा हर तीसरे दिन ।

(181)

I am glad to find that you fully appreciate the high ideals of the Radhasoami Faith, and are sincerely desirous of elevating your spirit and reaping the incalculable good which it bestows upon its devotees. Your attitude towards your erring brethren is likewise praiseworthy and is characterised by compassion and tolerance which ought always to be the main feature of the behaviour of a Satsangi. By tolerance I do not mean compromise, as truth is incapable of compromise. The exclusive character of Radhasoami Faith must always be maintained and no defilement in its original purity should ever be allowed in the name of compromise. Absence of ill-will and desire to help others without obtruding in an unwelcome manner or forcing one's advice upon unwilling ears should characterize the attitude of a Satsangi towards others.

(१८१) अनुवाद

मुझे यह जान कर खुशी हुई कि तुम राधास्वामी मत के उच्च आदर्शों की क़द्र करते हो और तुमको इस बात की सच्ची अभिलाषा है कि तुम्हारी सुरत की चढ़ाई हो और ऐसा होने से अभ्यासियों को जो असीम लाभ होता है, तुमको भी प्राप्त हो । अपने भूले भटके हुए भाइयों के प्रति जो तुम्हारा दया और सहनशीलता पूर्ण व्यवहार है, वह भी सराहनीय है । सतसंगी के व्यवहार में दया और सहनशीलता खास तौर पर होनी चाहिये । सहनशीलता से मेरा मतलब मेल मिलाने से नहीं है क्योंकि "सत्य" सर्वथा अमेल है । सत्य तो सत्य ही है । राधास्वामी मत का अमेलपन तथा निरालापन सर्वथा क़ायम रखना चाहिये और समझौता करने के बहाने इसकी आदि पवित्रता और शुद्धता में कोई फ़र्क़ नहीं आने देना चाहिये । हर सतसंगी को इस बात

का ख़ास तौर पर लिहाज़ रखना चाहिये कि दूसरों के साथ बरतने में किसी प्रकार का द्वेष न रक्खे और उनकी मदद करने का ख़्वाहिशमंद रहे, मगर इस तरह कि उनको बुरा न मालूम हो और जो न सुनना चाहे उसको ज़बरदस्ती नसीहत न दे।

(182)

A careful and repeated perusal of the Shabd "सतगुरू से करूँ पुकारी, संतन मत कीजे जारी", in Sar Bachan Poetry, will give you an idea of what the attitude of a Satsangi ought to be towards the spread of Radhasoami religion and of the mould in which the natural desire that the humanity at large should participate in the benefits of the Radhasoami Faith should be cast.

(१८२) अनुवाद

राधास्वामी मत आम तौर से जारी हो वा फैले, इस बात की तरफ़ सतसंगी का क्या रुख़ और भाव होना चाहिये और नीज़ यह इच्छा कि जीव राधास्वामी मत से लाभ उठावें, किस साँचे वा रूप में ढलनी चाहिये, इन बातों का जवाब सार बचन छंद बंद के शब्द, "सतगुरु से करूँ पुकारी, संतन मत कीजे जारी" को बार २ ग़ौर से पढ़ने और समझने से मिलेगा।

(183)

Your keen desire for the enhancement of "Bhakti" in the Holy Charans of Radhasoami Dayal will undoubtedly receive a gracious response. Those who have earnestly and seriously come under the protection of the Supreme Father R. S. Dayal are receiving and will receive unmistakable signs of His grace while the process of general spiritualisation which is going on will gradually benefit other human beings to avail themselves of the mercy and grace which are being continuously showered since the advent of Radhasoami Dayal and will continue till the work of salvation pertaining to the present stage is completed.

(१८३) अनुवाद

राधास्वामी दयाल के चरनों में भक्ति की वृद्धि के लिये तुम्हारी तीव्र इच्छा का जवाब दया अवश्य देगी। जिन जीवों ने परम पिता राधास्वामी दयाल की सरन सच्चे तौर पर और संजीदगी से ली है, वे उनकी दया के बिल्कुल साफ़ साफ़ परचे पा रहे हैं और पाते रहेंगे। साथ ही साथ सारी रचना का रूहानी दर्जा बढ़ाने की जो मौज से कारवाई जारी है उससे बाक़ीमांदा[1] जीवों को यह लाभ होगा कि वे भी धीरे २

(१) बाक़ीमांदा=बाक़ी बचे हुए।

राधास्वामी दयाल की उस दया और मेहर के भागी बनें जिसकी वर्षा राधास्वामी दयाल के अवतरण के समय से बराबर हो रही है और होती रहेगी जब तक कि रचना के उद्धार की वर्तमान कारंवाई पूरी न हो जावे ।

(184)

When are you likely to proceed to America for excavation work ? It is possible you may come there in contact with people who may desire to know something of the Faith you profess. Of course it is not necessary to withhold from earnest seekers after truth any help you can render to them, but your activities too in this direction should be free from the taint of any spirit of propaganda or a mission of misplaced Evangelism. For the most part people in the West evince a great deal of interest and zeal for knowing the religions of the East, but their zeal and interest are usually purely intellectual and academical or historical. Such people are mere encumbrances in the fold of religion. To those who are ready to benefit themselves by the teachings of Sants you can impart the essence of the instructions you have received from our Sublime Faith, but your attitude in your intercourses with them should be one of strict impartiality.

'उपदेश करना मनै नहीं है मगर निर्पक्ष होकर करना चाहिए'

[Translation : Radhasoami Faith does not prohibit propounding of its teachings but it should be done in an impartial manner (and not with any ulterior motive.)]

(१८४) अनुवाद

खुदाई के काम के लिए तुम अमरीका कब जाने वाले हो ? संभव है कि वहां पर तुम्हारा ऐसे लोगों से मिलना जुलना हो जो तुम्हारे मत और पंथ के बारे में कुछ जानना चाहें । यह ज़रूरी नहीं है कि सत्य वस्तु के सच्चे जिज्ञासुओं को उस मदद से वंचित रक्खो कि जो तुम दे सकते हो, परन्तु इस विषय में जो कुछ भी तुम करो, प्रोपेगेंडा अथवा अनुचित प्रचार का या ईसाई धर्म के अदूरदर्शी प्रचारकों के मिशन अथवा धर्म प्रचारकों का सा रूप न धारन करने पावे । पश्चिमी लोग प्राय: पूर्वीय धर्मों और मतों को जानने के लिए अत्यधिक जोश व दिलचस्पी दिखलाते हैं लेकिन उनका जोश व दिलचस्पी सिर्फ़ साधारण इल्मी, अक़्ली और तवारीख़ी वाक़फ़ियत हासिल करने का होता है । ऐसे लोग धर्म और मज़हब के गिरोह में केवल भार रूप होते हैं । जो संतों के उपदेश से फ़ायदा उठाने को तैयार हों, उनको तुम हमारे मत के उपदेशों का सार जो तुमने सीखा है, बतला सकते हो लेकिन उनके साथ तुम्हारा व्यवहार निर्पक्षता का होना चाहिये ।

'उपदेश करना मनै नहीं है मगर निर्पक्ष होकर करना चाहिये'

(185)

Before your departure for America I wrote you a letter in which I gave general instructions as to your attitude towards those who seek to know the principles of the Faith you profess. Those who are really surfeited with the attractions that this world offers, and seek the true haven of rest are deserving of pity, and if such people approach you, their enquiries deserve encouragement. To such people you can give a clear and impartial exposition of the Faith and if the true spiritual instinct has been awakened in them, they will listen to your exposition with sympathy and open mind. Seeking converts in a propagandist spirit is what is deprecated. Such activity is almost always associated with selfish motive of aggrandisement cr adding to one's strength in one form or another, based on some morbid desire. The Supreme Father Himself guides those in whom the spark of true devotion has been kindled.

(१८५) अनुवाद

तुम्हारी अमरीका के लिये रवानगी से पहले मैंने तुमको एक पत्र लिखा था जिसमें तुमको आम हिदायतें थीं कि हमारे मत के बारे में जानने की इच्छा रखने वालों के प्रति तुम्हारा बर्ताव कैसा होना चाहिये। जिन लोगों को सांसारिक प्रलोभनों से वाक़ई अजीर्ण हो गया है यानी जो लोग दुनिया को भोगते २ अघा गए और उकता गए हैं और अब ऐसी जगह की तलाश में हैं जहाँ असली चैन मिल सके, वह लोग क़ाबिल हम-दर्दी है। अगर ऐसे लोग तुम्हारे पास आवें तो उनकी जिज्ञासा बढ़ानी चाहिये। ऐसे लोगों को तुम मत का यथार्थ और निर्पक्ष दिग्दर्शन करा सकते हो। अगर उनमें सच्ची आध्यात्मिक वृत्ति जाग उठी होगी तो वे तुम्हारे धर्म निरूपण को हित और शुद्ध हृदय से सुनेंगे। प्रोपेगन्डा के रूप में नए धर्म-अनुयाई बनाने की कोशिश ना-पसंदीदा है। इस क़िस्म की कारंवाई में हमेशा किसी न किसी रूप में अपनी ताक़त बढ़ाने की खुद-ग़रज़ी जिसकी जड़ कोई न कोई अनुचित इच्छा होती है, शामिल रहती है। जिन जीवों के हृदय में सच्ची भक्ति की चिनगारी प्रज्वलित हो गई है उनका खुद परम पिता पथ प्रदर्शन करते हैं।

(186)

The Supreme Father will forgive any casual lapses in the matter of diet in the past, but you ought to be more careful in future and rely more upon His succour than on the means that the world provides.

(१८६) अनुवाद

खान पान के मामले में पहले कोई भूल चूक हो गई होगी तो उसको परम पिता माफ़ कर देंगे मगर भविष्य में तुमको ज्यादा सावधान रहना चाहिये और दुनियावी उपायों के मुक़ाबले में मालिक की मदद पर ज्यादा भरोसा करना चाहिये ।

(187)

Ordinarily we don't accept offers for the construction of Samadh from non-Satsangis. Any offer completely dissociated from a spirit of devotion for the August Personage whose Samadh is being constructed is not acceptable. Besides, I don't think that a structure of the kind which has no utilitarian value from the point of view of the world will command the sympathy of American millionaires.

(१८७) अनुवाद

मामूली तौर पर हम ग़ैर-सतसंगियों से समाध की तामीर के लिए भेंट नहीं लेते हैं । भेंट, जिसके साथ उन महान पुरूष के प्रति कि जिनकी समाध बन रही है जरा भी श्रद्धा भाव न हो, मंज़ूर नहीं की जाती है । इसके अतिरिक्त मेरे विचार से इस क़िस्म की इमारत के लिए कि जो दुनिया के दृष्टि कोण से साधारण जनता के लिए उपयोगी नहीं समझी जा सकती, अमेरिका के पूँजीपतियों को कोई सहानुभूति नहीं हो सकेगी ।

(188)

You have read some of the books, but have not understood the real import of the teachings contained in them. On the basis of stray quotations divorced from the context and divested of the references to the stage of development of the devotee to which they relate, you draw conclusions entirely at variance with the true spirit of the teachings contained in them. This is all the result of desultory reading of religious books and utter lack of Satsang.

You seem to stretch out your hand to catch a thing which is beyond the reach of those who have devoted a life-time to the work and are still yearning for it. Don't imagine that the life long toil of these people has been in vain. Far from it, they are daily piercing through the curtains which divide their consciousness from the beatific vision which lies beyond and gaining that power which will eventually enable them to control and curb the vagaries of the mind and fit them for admission into the portals of the region which lies beyond the Pind Desh.

The process of purification and mortification of the mind and the withdrawal at the spirit centre of the spirituality pervading the human body must precede the ascension of spirit. Don't think access into the spirit centre is mere child's play. It will require all the conservation of spirit energy effected by patient practice and Satsang, unperturbed by the storms of the outside world and the outbursts of opposing currents within, before that equanimity can be obtained which is necessary for the development in the devotee of the ultra consciousness required for the perception of the new conditions which lie beyond. The Supreme Father Radhasoami Dayal will of course continuously help the devotee on his onward path.

All forms must lose their charm before the Form of the Father can manifest itself within the disciple. Gradual and partial concentration accompanied by partial glimpses will continue to help on the true and sincere devotee.

If this process does not satisfy you, seek a more expeditious method if you can find one.

(१८८) अनुवाद

तुमने कुछ पोथियां पढ़ी अवश्य हैं मगर उनके उपदेशों का असली भाव नहीं समझा है। किस प्रसंग में और अभ्यासी की कौनसी गति के हिसाब से कोई बात कही गई है, उसको बिलकुल नज़र-अंदाज कर के इधर उधर से बे-जोड़ वाक्यों को उद्धृत करके उनसे ऐसे नतीजे तुमने निकाले हैं जो कि उनके अंतरगत उपदेशों के बिलकुल विरुद्ध हैं। यह नतीजा मज़हबी किताबों को अललटप्पू व बे-सिलसिले पढ़ने व सतसंग से क़तअन ग़ैरहाज़िरी का है।

तुम उस वस्तु को केवल हाथ ही फैला कर ले लेना चाहते हो जो उन लोगों को भी मयस्सर नहीं हो पाई हैं जिन्होंने अपना सारा जीवन इसी काम में व्यतीत कर दिया है और अब भी उसके लिये तरसते हैं। ऐसा कभी भी ख़याल न करना कि इन लोगों की सारे जीवन भर की मेहनत रायगाँ चली गई। नहीं, नहीं, कदापि नहीं। वे दिन-ब-दिन उन पर्दों को हटा रहे हैं जो उनकी जाग्रत अवस्था और उसके आगे यानी अंतर में जमाली नज़्ज़ारे के दरमियान हायल हैं और वे वह शक्ति इकट्ठी कर रहे हैं जिसके द्वारा अंत में वे अपने मन की तरंगों और चंचलता को वश में ला सकेंगे तथा दमन कर सकेंगे और पिन्ड देश के परे जाने के लायक़ बनेंगे।

सुरत की चढ़ाई होने से पहले मन का शुद्ध होना तथा मरना और जो चैतन्यता सारे तन में फैल रही है उसका सुरत के घाट पर खिच कर आना, परमावश्यक है और यह कोई बच्चों का खेल नहीं हैं। इसके लिये धीरज के साथ अभ्यास और सतसंग करके

सुरत चैतन्य की कुल शक्ति को सुरक्षित करने की ज़रूरत होगी और साथ ही साथ अंतर में जो विरुद्ध धारें चल रही हैं और बाहर जो तूफ़ान और आँधी आते हैं, उन सबसे घबराना नहीं होगा ताकि वह सम भाव हासिल हो सके कि जो भक्त में जाग्रत अवस्था के परे की जागृति पैदा करने के लिये आवश्यक है जिससे कि और परे की नई नई अवस्थाओं का ज्ञान हो सके। परम पिता राधास्वामी दयाल निस्संदेह भक्त को आगे से आगे बढ़ने में बराबर मदद करते रहेंगे।

सर्व रूप नीरस और अनावश्यक हो जाने चाहिये पेश्तर इसके कि परम पिता का रूप शिष्य के अंतर में दरस सके। धीरे २ गौण अंग का सिमटाव और कभी कभी रूप की झलक सच्चे और पक्के भक्त की चाल चलाने में मददगार होते रहेंगे।

अगर तुम इस मार्ग से संतुष्ट नहीं हो तो, यदि तुमको मिल सके, इससे विशेष तीव्र गामी मार्ग वा पथ खोज लो।

(189)

I find the noticrs that you carry in respect of Radhasoami's name and principles of the Radhasoami Faith are not correct. The name Radhasoami is not in any way like the 'nominal' names by which persons and objects are called or known in this world. It is the Highest Spiritual Name, Sound—the automanifestation of the Supreme Being and the original Spirit Current which first emanated from His Holy Feet—and is thus the only real and true Name of the Supreme Creator. The incarnation of the Supreme Being in human form here is also therefore called Radhasoami. A perusal of *Radhasoami Mat Prakash* and *'Discourses'* (which are both in English) will, I believe, remove the misconception you now have.

(१८९) अनुवाद

'राधास्वामी' नाम और राधास्वामी मत के उसूलों के बारे में तुम्हारे ख़यालात दुरुस्त नहीं हैं। 'राधास्वामी' नाम किसी प्रकार भी उस तरह का कृत्रिम नाम नहीं है जिनसे कि संसार में मनुष्य और वस्तुएँ पुकारी और जानी जाती हैं। यह सबसे ऊंचा चैतन्य-मयी नाम वा शब्द वा कुल मालिक का और उनके चरनों से जो आदि चैतन्यता की प्रथम धार निकली, उसका स्व-प्रकाशन है और इस भांति कुल मालिक का एक मात्र सच्चा और असली नाम है। इसीलिये कुल मालिक के मानव देह धारी अवतार को भी 'राधास्वामी' कहते हैं। राधास्वामी मत प्रकाश और डिस्कोरसेज़ (राधास्वामी मत प्रवचन) को जो दोनों पुस्तकें अँग्रेजी में हैं, पढ़ने से आशा है कि तुम्हारी मौजूदा ग़लत-फ़हमियां दूर हो जावेंगी।

(190)

As regards what you call your 'mission' here, which too, I find, you have not properly understood, I may tell you that your concern should at present be to work for the emancipation of your spirit from the bondage of mind and matter under proper guidance with a view to ultimately attain the region of pure spirit. Any other thought or activities such as reforming the world and establishing a brotherhood on earth etc., only entangle you further in the world and beguile you from the path of your true salvation. You may rest assured that the Merciful Supreme Father is taking care of every thing in the manner He considers most proper and you need not think of saddling yourself with functions like those referred to in your letter. If you commence your own work in right earnest with confidence in the Mercy of the Supreme Father Radhasoami leaving everything to His Mauj, He will no doubt grant you His mercy and protection and success in your work.

(१६०) अनुवाद

जिस कृत्य को तुम अपना 'मिशन' अथवा दैव निश्चित कर्त्तव्य कहते हो, यद्यपि तुमने इसको भी अच्छी तरह नहीं समझ पाया है, उसकी बाबत मैं तुमको बतला देना चाहता हूँ कि इस समय तुम्हारा केवल यह मंतव्य[1] होना चाहिये कि किसी से उचित शिक्षा दीक्षा लेते हुए अपनी सुरत को मन माया के बंधन से मुक्त करो ताकि अंत में उसको निर्मल चैतन्य देश में बासा मिल सके। इसके अतिरिक्त और २ विचार या कृत्य जैसे कि दुनिया का सुधार या पृथ्वी पर किसी एक भाईचारे की संस्था की स्थापना इत्यादि, तुमको संसार में और ज़्यादा फँसावेंगे और सच्चे उद्धार के मार्ग से डिगा देंगे। तुमको विश्वास रखना चाहिये कि दयालु परम पिता प्रत्येक बात की उस रीति और भाँति से जिसको वे उचितोत्तर उचित समझते हैं, सँभाल कर रहे हैं। तुमको अपने ऊपर उन कामों का भार नहीं लेना चाहिये जिनका कि तुमने अपने पत्र में उल्लेख किया है। अगर तुम अपने ज़ाती काम को सिदक़ दिली[2] से और परम पिता राधास्वामी की दया का आस भरोस रख कर आरंभ करोगे और सब बातों को उनकी मौज पर छोड़ दोगे तो वे अवश्य तुम पर दया और तुम्हारी रक्षा करेंगे और तुम्हारे काम में सफलता प्रदान करेंगे।

(191)

This world is full of troubles and sorrows, and no attempt at converting its main features in this respect can succeed. The only safety although not very easy of achievement, lies in an abode of everlasting bliss and peace in the Sacred Charans of the Supreme Father Radhasoami Dayal.

---

(१) विचार। मत। (२) सच्चे दिल से।

Devotion with patience, perseverance, application with reliance upon the Grace and Mercy of the Supreme Father will achieve it. I have every hope that the Supreme Father will extend both to you, and that you will with His gracious guidance continue on the path of progress and will one day attain your object.

(१९१) अनुवाद

यह संसार दुख संताप से भरा हुआ है और इसके मूल लक्षणों और विशेषताओं में परिवर्तन करने का यत्न कभी सफल नहीं होगा। एक मात्र कुशल, यद्यपि उसका प्राप्त होना आसान नहीं है, इस बात में है कि परम पिता राधास्वामी दयाल के पवित्र चरनों में दायमी[1] आनन्द और शांति के धाम में बासा मिले।

दीनता, संतोष, धैर्य्य तथा मेहनत के साथ परम पिता की मेहर और दया पर भरोसा रखते हुए अपना अभ्यास करते रहने से यह हासिल होगा। मुझे हर प्रकार से आशा है कि परम पिता तुमको दोनों वस्तुएं यानी मेहर और दया प्रदान करेंगे और तुम उनकी दया भरी देख रेख में उन्नति करते रहोगे और एक दिन अपना वाँछित फल पाओगे।

(192)

I am sorry to find that you are being persecuted for following the true path of Parmarth. It also behoves you to warn others from falling into the pit laid by interested people, but this duty should not be carried too far. Any over-zeal in this direction is likely to create unnecessary difficulties in your way. Your duty lies in following with fortitude and unswerving loyalty the path you have found to be the true one, but you need not go about telling people without any occasion arising for it, that all others who do not conform to your way of thinking are treading a dangerous path or are ruining their Parmarth. Salutary and wholesome advice is not prohibited, but it should be confined to people who seek it from you or have confidence in you and will listen to your advice with sympathy, or in other words, are themselves seekers after Truth, or else you simply create an opposition for yourself which does good to none. You might refer with advantage to Bachan Nos. 39 and 94, Part II in Sar Bachan Prose, which prescribe the correct attitude for a Satsangi in his dealings with others in regard to this matter. I hope through the Grace of Radhasoami Dayal you will come away unscathed from the machinations of selfish and interested people.

---

(1) हमेशा रहने वाला। हमेशा का।

(१९२) अनुवाद

मुझे यह मालूम करके दुःख हुआ कि परमार्थ के सत्य मार्ग पर चलने के कारण तुमको सताया जा रहा है। स्वार्थी मनुष्यों के रचे हुए षड़यन्त्र में पड़ने से बचने के लिए दूसरों को सावधान कर देना भी तुम्हारा फ़र्ज है, परन्तु इस फ़र्ज़ की अदायगी में 'अति' न होनी चाहिये। इसमें ज़रूरत से ज्यादा दिल-चस्पी दिखलाने से तुम्हारे मार्ग में अनावश्यक कठिनाइयों के पैदा होने की संभावना है। तुम्हारा कर्त्तव्य यही है जिस मार्ग को तुमने सत्य मार्ग पाया है, उस पर दृढ़ता और साबित क़दमी के साथ चलते रहो, परन्तु तुमको अकारण लोगों से यह कहते फिरने की ज़रूरत नहीं है कि जो तुम्हारे हम-ख़याल नहीं हैं, वे सब ख़तरनाक रास्ते पर चल रहे हैं वा अपना परमार्थ मटियामेट कर रहे हैं। हितकर और नेक सलाह देने की मनाई नहीं है मगर यह केवल उन्हीं लोगों को दी जानी चाहिये जो उसके तलबगार हों वा जिनको तुम में विश्वास हो और तुम्हारी सलाह को हित से सुनें या दूसरे शब्दों में कहा जावे तो वे स्वयं सत्य वस्तु के खोजी हों, वरना बिला किसी को भी कुछ फ़ायदा पहुँचाए हुए तुम केवल अपने लिये ही विरोध पैदा करोगे। इस संबंध में तुम सार बचन बार्तिक दूसरे भाग के बचन नंबर ३९ और ६४ को मुलाहज़ा कर सकते हो जिनमें इस बात का वर्णन है कि सतसंगी को इस विषय में दूसरों के साथ किस प्रकार बरतना चाहिये। मुझे आशा है कि राधास्वामी दयाल की दया से तुम स्वार्थी और ख़ुद-मतलबी लोगों की साज़िशों से बे-ज़रर निकल आओगे।

(193)

It is in the best interests of a Satsangi that engagements *spiritual and temporal* should go hand in hand. Premature cessation of temporal duties is detrimental to spiritual progress and is likely to cause a serious handicap in future, so you should continue to pay as much attention as is really necessary to your temporal duties, with a strong desire to reduce the time and energy devoted to them to a minimum and to cultivate 'Prit'[1] and 'Pratit'[2] in the Holy Charans[3] and to avail of any opportunities that may come in your way of attending Satsang.

(१९३) अनुवाद

यह सतसंगी के बेहतरीन फ़ायदे की बात है कि उसके परमार्थी और स्वार्थी (सांसारिक) काम दोनों साथ २ चलते रहें। समय से पहले सांसारिक कर्त्तव्यों का पालन छोड़ बैठना परमार्थी उन्नति में बाधक होता है और आइन्दा भारी विघ्न पैदा हो जाने की संभावना रहती है। पस तुम अपने संसारी काम काजों में जितना ध्यान देने

(1) Love, affection. (2) Faith, belief, confidence. (3) Feet.

की ज़रूरत है, अवश्य देते रहो। अलबत्ता साथ २ इस बात की तीव्र चाह रहनी चाहिये कि उनमें जितना भी कम से कम समय व शक्ति लगाई जा सके, लगाई जावे, मालिक के पुनीत चरनों में प्रीत प्रतीत पैदा हो और जब डौल बने, सतसंग किया जावे।

(194)

Love and devotion are the free gifts of Radhasoami Dayal and He alone knows when they can be given without injury or detriment. Lack of patience itself is an index of weakness of faith. It is only with patience that faith and devotion can be cultivated.

(१६४) अनुवाद

प्रेम और भक्ति राधास्वामी दयाल की मुफ़्त की दात हैं और केवल वे ही इस बात से परिचित हैं कि ये कब, बग़ैर नुक़सान या हर्ज पहुँचाए हुए, दी जा सकती हैं। अधैर्य स्वयं विश्वास की न्यूनता का बोधक है। केवल धीरज से ही विश्वास और भक्ति की उन्नति हो सकती है।

(195)

One knows his power in adversity. You have to face the difficulties that encounter at present with patience and fortitude. At no time should you lose hope and always be expectant of receiving the succour and protection of the Supreme Father. Trustful reliance upon Him is a panacea for all evils and all tribulations can, with His assistance, be undergone with cheerfulness and equanimity.

(१६५) अनुवाद

विपत्ति काल में ही मनुष्य को अपनी शक्ति का पता चलता है। कठिनाइयों का जो इस समय आ रही हैं, धीरज और दृढ़ता के साथ मुक़ाबला करना चाहिये। कभी भी तुमको आशा का परित्याग नहीं करना चाहिये और हर समय परम पिता की सहायता और रक्षा पाने की मनोकामना रक्खो। विश्वास सहित मालिक का आधार सर्व रोगों की एक मात्र औषध है। मालिक के सहारे से सर्व दुःख संताप प्रफुल्लता तथा शांति से झेले जा सकते हैं।

(196)

Mere amassing of money is a sin in itself. It breeds vice and crime. No one knows how by amassing money physical, mental and spiritual deterioration takes place. Similar is the case in the company of women.

(१९६) अनुवाद

धन का संग्रह करना ही पाप है। बिना किसी करनी के यह आप ही आप बुराई और पाप को उत्पन्न तथा पोषण करता है। इस बात का किसी को ज्ञान ही नहीं है कि धन इकट्ठा करने से किस प्रकार शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक अवनति होती है। यही बात स्त्रियों के संग पर घटित है।

(197)

There is no worse crime than laying violent hand upon one's self. Happen what may, this should never be thought of. Instead of bringing any relief in any shape, the future is further darkened by its commission. Patient suffering calls forth the compassion and mercy of the Supreme Maker and goes a great way towards washing past sins.

(१९७) अनुवाद

आत्मघात करने से दुस्तर[1] कोई गुनाह और पाप नहीं है। चाहे जो हो, इसका तो कभी ध्यान भी नहीं आना चाहिये। किसी प्रकार की भी कोई सहूलियत पैदा करने के बजाय, इस कर्म से भविष्य अधिक अंधकारमय हो जाता है। धीरज के साथ तकलीफ़ बर्दाश्त करने से मालिक की करुणा और दया आती है और पिछले पापों की बहुत कुछ सफ़ाई हो जाती है।

(198)

We have suffered from treachery. We are suffering from treachery. But to withhold what you can do and to allow yourself to slacken your efforts and droop down in despair is to allow Kal to get the better of you. This is another form of treachery. Don't allow this to happen. Continue your efforts as usual and rely upon the guiding hand of Radhasoami Dayal. Whatever happens thereafter, receive as the Mauj of Radhasoami Dayal.

(१९८) अनुवाद

विश्वासघात से हमने नुक़सान उठाया है और उठा रहे हैं मगर जो कुछ कि तुम कर सकते हो, उसे न करना और अपने पुरुषार्थ और जतन को ढीला हो जाने देना और निरास होकर गिर जाना काल को अपने ऊपर प्रभुत्व जमाने देना है। यह

(१) विकट। कठिन

विश्वासघात का दूसरा रूप है। ऐसा मत होने दो। पहले की तरह जतन और कोशिश करते रहो और राधास्वामी दयाल की रक्षा पर भरोसा रक्खो। इसके उपरांत जो कुछ भी हो, उसे अपने लिए राधास्वामी दयाल की मौज समझो।

(199)

Before obligation to Maker, all other obligations sink into non-entity.

(१९९) अनुवाद

निज करतार के प्रति जो धर्म है, उसके सामने सर्व धर्म शून्य हो जाते हैं।

(200)

The proper attitude, according to our ideal, to approach the subject is a firm and determined desire to free one's spirit from the trammels of mind and matter and all materialistic tendencies. We hold that it is idle to work for the betterment of humanity unless one has sufficiently freed oneself from the influences which drag his spirit down from day to day and warp his judgement to such an extent as to render him practically unfit for deciding what is good for one's own self. The Supreme Creator, under His own divine and all-wise impulses has struck the right chord for our emancipation and uplift and the coming into being of Sants, regarded as the highest personages and the saviours of humanity, is not paraded and likened to a fortuitous catch of a fish in the net of a fisherman, as if the advent of so high a personage were only a matter of a casual catch of an ordinary mortal in the process of tidal wave of the ocean, and so important an event in the salvation, should be devoid of all design and method. In fact all Sants are manifestations or incarnations, or representatives in human form of the Supreme Being, the Nij Dhar (emanation or projection of the Supreme Spiritual Current) taking its abode in human form; the Supreme Being remaining in His own august abode, be they Sants, Swatah Sants or Sants in succession. The only difference between a Swatah Sant and the succeeding Sant is that the former descends to a particular plane, while the latter descends to or is rather a projection (of the same essence) to a lower plane (the essence of the two descriptions of Sants is identical), so that the work of the uplift of the creation may be carried to the lowest point and the advantage of the higher spiritual tug of the Sant located at a higher centre be retained. "संत सभी वा घर से आवें" [Translation—All Sants incarnate from the same abode.] And the praises sung in *Radhasoami Mat Prakash* in honour of Gurmukh—गुरमुख की गति सबसे भारी [Translation : The status of the Gurmukh is the highest of all]

who has reached that quarter by practice of Surat Shabd Yoga under the immediate direction of the former only refer to the subsequent ascent of the Gurmukh to the highest region, a complementary process in the spiritual uplift of creation. Bachan 250 in Part II of Sar Bachan Prose lays down that there is absolutely no difference between the two descriptions of Swarup.* It ought to be remembered that both are emanation from the same source in essence and both descend from the highest region, one to a higher and the other to a lower plane.

(२००) अनुवाद

हमारे मतानुसार इस विषय को आरंभ करने के लिये उचित मनोवृत्ति इस प्रकार होनी चाहिये कि मन माया के बंधनों से तथा सर्व मायक कामनाओं से अपनी सुरत जीवात्मा को मुक्त करने की दृढ़ व प्रबल इच्छा हो। हमारा मत है कि किसी व्यक्ति का सामाजिक उन्नति के लिए यत्न करना उस समय तक निरर्थक है जब तक कि उसने अपने आपको उन विकारों से काफ़ी रिहा (मुक्त) न कर लिया हो जो उसकी सुरत को दिन-ब-दिन अधोगति को पहुँचाते जाते हैं और उसकी समझ बूझ को इस क़दर गंदा कर देते हैं कि उसमें इस बात की योग्यता क़रीब २ ग़ायब हो जाती है कि इस बात का निर्णय कर सके कि स्वयं उसके लिये कौन सा काम भलाई का होगा। आदि कर्त्ता ने स्वयं अपनी चैतन्य व सर्व ज्ञानमयी मौज से उबार और उद्धार के लिये उचित योजना की है और संतों के जो कि सर्व श्रेष्ठ पुरुष और मनुष्य मात्र के मुक्ति दाता माने जाते हैं, इस लोक में आगमन को किसी ऐसे वाक़आ से तुलना नहीं दी जा सकती है कि जैसे मछेरे के जाल में मछली आन फँसती है मानो कि ऐसे उच्च पुरुष का अवतरण भी बिल्कुल इसी प्रकार का आकस्मिक आ फँसना है जिस प्रकार कोई मामूली आदमी समुद्र की चढ़ती हुई लहर में यकायक फँस जाता है और यह कि उद्धार की कारंवाई में ऐसे महत्व की बात भी सर्व समझ बूझ तथा क्रम और तौर तरीक़े से विहीन हो सकती है। असल में सभी संत, चाहे वे संत, स्वतः संत वा संत के बनाए हुए संत हों, कुल मालिक के, नर चोले में रूप, अवतार और प्रतिनिधि हैं। 'निज धार' जो कि चैतन्य आदि धार का यहाँ पर एक प्रकार से प्रकटन वा निकसन है, नर शरीर में ठेका लेती है और कुल मालिक अपने उच्च धाम में समाए रहते हैं। स्वतः संत और संत के बनाए हुए संत दोनों की ज़ात एक ही है। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि स्वतः संत एक ख़ास घाट तक नीचे उतरते हैं, मगर दूसरे प्रकार के संत रचना के निचले हिस्से तक उतरते हैं वा यों कहिये कि उनकी सुरत को नीचे उतारा जाता है। ताकि रचना के नीचे से नीचे हिस्से तक उबार और उद्धार की कारंवाई का असर पहुँच सके और साथ ही साथ संत जो ऊपर के घाट पर विराजमान हैं, उनकी चैतन्य धार का जो ऊपर को आकर्षण है, उसका लाभ बना रहे।

---

*Forms.

'संत सभी वा घर से आवें'

और जिस महिमा का वर्णन "गुरुमुख की गति सबसे भारी" जैस शब्द में गुरुमुख के प्रति, जो स्वतः संत की निगरानी में सुरत शब्द योग करके "वा घर" में पहुँच गए हैं, "राधास्वामी मत प्रकाश" में किया गया है। उससे मतलब गुरुमुख की जो अंतिम चढ़ाई ऊँचे से ऊँचे धाम को होती है, उससे है जो तरीक़ा कि दूसरे छोर (सिरे) से उद्धार की कार्रवाई को पूर्ण करने का है। सार बचन बार्तिक के दूसरे भाग के बचन नम्बर २५० में लिख दिया गया है कि स्वरूप के हर दो बयानों में कोई फ़र्क नहीं है। इस बात को याद रखना चहिये कि दोनों एक ही का रूप हैं और एक ही ज़ात है और दोनों सबसे ऊँचे धाम से उतर कर आते हैं, एक किसी क़दर ऊँचे घाट तक और दूसरे किसी क़दर नीचे घाट तक।

(201)

The accepted notions of some people in the West are such as to prevent or render difficult the creation of an attitude which alone can enable them to engage in this pursu it with determination and patient persistence. Humanitarian principles and works of general utility with, at best, a desire to live a pure life according to the moral standard of the world seem to be regarded as the aim and object of life, and the true spiritual instinct, though rare here too, is almost wanting in the people of the West, with, of course, rare exceptions, and it is only the wave of "Mehar" and "Daya" (Grace and Mercy) of R. S. Dayal penetrating into those regions which can fit them to receive the gracious message of R. S. Dayal with sympathy and appreciation.

This will of course come to pass gradually and it will be a day of general rejoicing when the world is so far spiritualised as to accept His message in humility and helplessness which alone are the qualifications for receiving His Grace and Mercy.

(२०१) अनुवाद

पश्चिमी देश के बासियों के विचार कुछ ऐसे हैं कि जिनके कारण उनके चित्त की वृत्ति ऐसी नहीं बन पाती वा मुश्किल से बन पाती है कि जिसके ज़रिये से उनमें इस बात की योग्यता पैदा हो कि वे इस कार्य में लगन और अविचिलता के साथ लग सकें। मनुष्य मात्र के साथ दया भाव से बर्ताव करना वा सर्व साधारण को फायदा पहुँचाने के काम करना वा बहुत हुआ तो इस संसार के नैतिक आदर्श के अनुसार पवित्र जीवन बसर करने की इच्छा रखना ही इन लोगों के जीवन का उद्देश्य और लक्ष्य मालूम होता है। सच्चा आध्यात्मिक प्राकृतिक रुझान, हालांकि इस देश में भी कमयाब है, पश्चिमी देश के बासियों में तो क़रीब २ है ही नहीं, गो इसमें भी कहीं २ मुस्तस्नियात ज़रूर हैं और यह केवल राधास्वामी दयाल की मेहर और दया की धार है जो उन देशों में पहुँच कर

वहाँ के बासियों को इस क़ाबिल बना सके कि वे राधास्वामी दयाल का दयामय संदेश हित चित से ग्रहण कर सकें।

धीरे २ यह ज़रूर होगा और वह दिन सबके लिये ख़ुशी मनाने का होगा जब कि इस संसार में चैतन्यता इस क़दर व्याप्त हो जावेगी कि लोग कुल मालिक का संदेश दीनता और निस्सहायता के साथ ग्रहण कर सकें क्योंकि यही दो बातें उनकी मेहर व दया पाने के लिए प्रमुख हैं।

(202)

The loss you have suffered is indeed great and, tied as we are to our bodily tenements, the separation of dear ones must cause a pang at times, but it ought to be the humble effort of every follower of our Faith to avoid, as far as possible, the perpetuation of the affection born of bodily ties, as those are only evanescent landmarks of innumerable ephemeral relations that we form in the course of our descent and eventual ascension of the spirit to its true spiritual home, the Supreme Source and Fountain Head of Spirit. The only real and soothing balm is in the commingling of the spirit with the current of Life (Spirit) which descends from above and vivifies the forms of life below. The practices described by the Radhasoami Faith, if faithfully followed, ensure this beyond doubt and engender a living belief in the Supreme Creator and His beneficent intent.

(२०२) अनुवाद

वियोग का दुख जो तुमको पहुँचा है, बेशक भारी है और चूँकि हम लोगों का देह में बंधन है, हमको अपने प्रिय जनों के विछोह से कभी २ दुःख लब्ध होना आवश्यक है, परन्तु हमारे मत के प्रत्येक अनुयाई का यह दीनता पूर्वक प्रयत्न होना चाहिये कि जहां तक हो सके, देह संबंधी बंधनों से उत्पन्न हुए मोह को चिर स्थायी न बनावें। सुरतों के यहाँ उतर कर आने और फिर अंत में उनके आदि और भंडार में लौट कर जाने की बीच की अवधि में जो अन गिनत क्षण भंगी संबंध हम स्थापित करते हैं उनके यह देह संबंधी बंधन ही केवल उनकी ख़ास और पहचान करने वाली निशानियाँ हैं। सच्ची शांतिदायक औषध सुरत का जीवन धार अथवा शब्द धार के साथ जो ऊपर से आ रही है और नीचे की रचना के सर्व रूपों को चैतन्यता प्रदान करती है, सम्मिलित होना है। अभ्यास की क्रियाएं जिनका राधास्वामी मत में निरूपण किया गया है, सचौटी के साथ करने मे यह बात निस्संदेह प्राप्त हो सकती है और इनसे सर्व श्रेष्ठ कर्त्ता और उसकी लाभकारी चेष्टा में जीता जागता विश्वास पैदा हो जावेगा।

(203)

It seems you are very anxious to see the tenets of the Radhasoami Faith spread to the western countries. In itself this is not a bad desire but it may be noted that anything in the nature of a public propaganda is foreign to the spirit of the teachings of the R. S. Faith and is therefore to be discouraged. This, of course, does not mean that we should not place reasonable facilities, consistently with our principles, in the way of persons sincerely desirous of acquainting themselves with the principles and teachings of our Faith. It only means that one need not go off one's way to seek possible listeners who would perhaps listen to something new only to satisfy their curiosity or their academic or educational instinct so prevalent in the West or would bear with the speaker out of courtesy, with an air of patience and possibly even of patronage. Such occasions have always to be avoided, and if it be that one does speak to sincere and earnest enquirers, it should always be done in a spirit of meekness and humility banishing all ideas of vanity and self-glorification. Helping one on to the right path in this spirit is reckoned as service of Radhasoami Dayal.

As a rule, however, you will find such true and earnest enquirers few and far between in the countries of the West. Generally speaking, few if any of the Westerners have the requisite longing for "Parmarth" and they can hardly grasp the inner purpose of such a Faith as ours for nearly the whole trend of their thought and activity, call it beneficence or moral and spiritual welfare, has its roots and ends in worldly desires and rarely goes beyond the betterment of the conditions of ease and comfort for men during their earthly sojourn. Therein lies the source of their happiness, or at best, even if they have a religious bias, it is of a kind that evaporates into the vanities of a creed. The Parmarth for which we stand seeks no other object from the Giver of gifts but the Giver Himself. No doubt signs are not wanting of a kind of ferment going on even among the nations of the West, where occasionally you do find some individuals here and there who are satiated with what the world can offer and are moved to seek a solution for the riddle of life that would offer the prospect of permanent peace and happiness that we aim at. Sure enough, things are, in the inscrutable will of Providence, shaping to a great end but it still requires a long period of waiting and development to reach the stage of fruition. Until that time arrives and men have acquired the requisite amount of 'Adhikar'[1] all effort at conversion will prove to be premature, if not futile. With the advent of Radhasoami Dayal

---

(1) Fitness.

the process of development is being enormously speeded up all round but it must abide the time. Among other things, an inter-change by birth of souls of high spiritual calibre between the East and the West will go a long way towards producing that "Adhikar"which will prepare them for real redemption by the elevation of their spirit from the regions of bondage of Kal and Maya and transport them into those of Mercy and Bliss, which is the quintessence of our Faith. For such a devout consummation we can, for the present, only hope and pray with trust in the Mercy of the Supreme Being who in the fullness of time is sure to bring about the proper means to attain the end. Meanwhile there is no harm if on suitable occasions you speak with propriety and restraint to friends of the message delivered to the mankind by Radhasoami Dayal,

(२०३) अनुवाद

मालूम होता है कि तुम पश्चिमी देशों में राधास्वामी मत के प्रचार के लिये बहुत उत्सुक हो। यह ख्वाहिश तो कोई बुरी नहीं है, मगर यह समझ लेना चाहिये कि कोई भी कृत पबलिक प्रोपेगेन्डा या आम प्रचार के रूप का राधास्वामी मत के उपदेशों के विरुद्ध है और इसलिये निषेध है। इसका यह मतलब हरगिज नहीं है कि जो लोग सच्चे दिल से हमारे मत के सिद्धान्तों और उपदेशों को जानने के ख्वाहिशमंद हों, उनको हमारे उसूलों का ख़याल रखते हुए मुनासिब सुविधा न दी जावे। कहने का मतलब सिर्फ़ यह है कि अपने पथ से च्युत होकर ऐसे श्रोताओं को ढूँढ़ते फिरने की ज़रूरत नहीं है कि जो किसी बात को नई समझ कर शायद सिर्फ़ इस खयाल से सुनना पसंद करें कि वह उनकी पाश्चात्य प्रवृत उत्कंठा वा सैद्धान्तिक वा शिक्षा संबंधी प्राकृतिक प्रेरणा को संतुष्ट करती है वा वह केवल शिष्टाचार के भाव से और भी शायद वक्ता के प्रति अपने धैर्य वा संरक्षण प्रदर्शन करने के लिए उसको सुनते हैं। इस क़िस्म के मौक़ों को हमेशा बचाना चाहिये। अगर कभी ऐसा हो कि सच्ची और शुद्ध पूछताछ का जवाब देना पड़ जावे तो नम्र और दीन भाव से देना चाहिये जिसमें घमंड वा अपने बढ़ावे का ख़याल बिल्कुल न हो। इस भाव से किसी को सुमार्ग में लगाना राधास्वामी दयाल की सेवा समझी जाती है।

परन्तु पश्चिम के देशों में बहुत करके इस प्रकार की सच्ची और शुद्ध पुछ ताछ बहुत कम पाओगे। आम तौर पर पश्चिम देश वालों में कोई बिरले ही ऐसे निकलेंगे जिनको परमार्थ की वास्तविक चाह हो। वे लोग हमारे जैसे मत के आंतरिक भाव को मुशकिल से समझ सकते हैं क्योंकि उनके विचारों और कामों के रुख का, चाहे उसे नेकी कहो, चाहे नैतिक और परमार्थी तरक़्क़ी कहो, आदि और अंत इसी संसार की कामनाओं में ही है और वह मनुष्य के लिये दुनिया में उसके चंद रोज़ा क़याम में आराम और आसायश की हालत बढ़ाने ही तक महदूद रहता है और इसी से उनको ख़ुशी हासिल होती है।

अगर किसी को मज़हबी रुझान है भी तो वह इस क़िस्म का होता है कि मज़हबी टेक या पाखंड में हवा हो जाता है। जिस परमार्थ के हम अनुयाई हैं उसको दाता से दाता ही की तलब है, न कि दाता से किसी दात की। अलबत्ता पश्चिम देशों में भी एक प्रकार के उफान के चिन्ह दिखाई दे रहे हैं और कभी २ कहीं २ कुछ ऐसे शख्स निकल आते हैं जो उस सबसे अघा गए हैं जो कि दुनिया मुहय्या कर सक्ती है और ज़िन्दगी के पेचीदा मसले का हल मालूम करने की तलाश करने लगे हैं कि जिससे सदैव की शाँति और आनंद जो हमारा उद्देश्य और मक़सद है, प्राप्त करने की आशा हो। इसमें संदेह नहीं कि मालिक की ला-मालूम (अज्ञात) मौज से सब बातें किसी बड़े भारी मक़सद की तकमील की सूरत अख्तियार कर रही हैं और पेश्तर इसके कि उसका नतीजा निकले, मुद्दत दराज़ तक इंतज़ार करना पड़ेगा। जब तक कि वह वक्त न आवे और उन जीवों में यानी पश्चिमी देश के वासियों में वह अधिकार न पैदा हो, उनके मत परिवर्तन की कुल कोशिशें निरर्थक न सही, मगर क़ब्ल-अज़-वक्त यानी असामयिक ज़रूर सिद्ध होंगी। राधास्वामी दयाल के अवतार लेने से अधिकार पैदा करने की कार्रवाई चारों ओर बड़ी तेज़ी से तरक़्क़ी कर रही है लेकिन वक्त मुक़र्ररा तो लगेगा ही। पूर्व देश की आला रूहानी दर्जे की सुरतें पश्चिम देश में जन्म लें और वहाँ की यहां, तो अलावा दूसरे असबाब के इस रीति से उस अधिकार के पैदा करने में बहुत मदद मिलेगी जिसमे कि काल और माया के बंधनों के देश से छूट कर उनकी सुरतें भी ऊँचे देशों की ओर चढ़ने के लिये तैयार हों और दया व आनंद के धाम में बासा मिले जो कि हमारे मत का खुलासा और सार है। इस दिली ख्वाहिश के पूरा होने के वास्ते फ़िलहाल हम परम पिता की दया पर भरोसा रखते हुए सिर्फ़ उम्मीद और प्रार्थना कर सकते हैं कि वह मुनासिब वक़्त पर अवश्य इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उचित प्रबंध करेगा। इस अर्से में मुनासिब मौक़ों पर अपने मित्रों के सामने उस संदेश पर जो राधास्वामी दयाल ने मनुष्य जाति के हित के लिये दिया है, ज़ब्त और दुरुस्ती से बात चीत करो तो उसमें कोई हर्ज नहीं है।

(204)

I am not surprised to hear that you find people over there not taking much interest in Parmarth. The fact is that Western people have no idea of what Parmarth really is. They pride themselves as being practical while really speaking they are least so. They fritter away opportunities in engaging themselves upon the vanities and fleeting pleasures of the world, little knowing what they will have to face when they enter the void after the dissolution of the body. Parmarthis look upon such men with pity just in the same way as worldly people wonder how Parmarthis can sacrificepleasures of this life (which they consider real) for spiritual advantages in the next world (which they consider uncertain and imaginary). It all depends on what

one believes to be the object of life. You will find few people in the West who are prepared to subscribe to the teaching :–

तन मन इन्द्री सब दुखदाई, बुधि और विद्या सभी अनीत

(Translation : The body, the mind and all the organs cause trouble; similarly knowledge and wisdom of the world are improper.)

A mere intellectual acceptance of this principle which some speculators in the domain of philoophy might be found to have discovered especially the sentiments contained in the first half of the couplet, is not enough; a gradual dawning of the truth of this teaching in the inner consciousness (*Surat* and *Nij Man**)and its assimilation in the vitals of one's existence is what is needed. This will naturally take time and it may be more than one birth before the spiritual practices of the Radhasoami Faith fructify in the generation of this consciousness.

(२०४) अनुवाद

तुमसे यह सुन कर मुझको कोई ताज्जुब नहीं हुआ कि वहाँ तुमको लोगों में परमार्थ के लिये ज़्यादा शौक़ नहीं दिखाई देता। वास्तव में बात यह है कि पश्चिम देश वालों को इस बात का ज़रा भी ख़याल नहीं है कि असल परमार्थ होता क्या है। उनको इस बात का घमंड है कि वे हर बात के अमली पहलू पर निगाह रखने वाले हैं मगर हक़ीक़त यह है कि वे इससे बिल्कुल दूर हैं। वे दुनिया के क्षण भंगी भोगों और दिखावे के कामों में सु-अवसरों को नष्ट कर देते हैं और कुछ होश नहीं है कि मरने के बाद क्या होगा। परमार्थियों को ऐसे शख़्सों पर उसी तरह रहम और तरस आता है जिस तरह कि दुनियादारों को इस बात पर हैरत होती है कि परमार्थी, परलोक में आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करने के लिये जिनको वे कल्पित और असत्य समझते हैं, इस ज़िन्दगी के मज़ों को जो उनकी निगाह में सत्य हैं, किस तरह त्याग कर देते हैं। यह सब इस पर निर्भर है कि जीवन का क्या ध्येय समझा गया है। पश्चिमी देश में कोई बिरले ही मिलेंगे जो नीचे लिखे उपदेश को मानने के लिये तैयार हों।

तन मन इन्द्री सब दुखदाई।
बुधि और विद्या सभी अनीत॥

इल्म फ़िलसफ़ी के बाज़ मुहक़्क़िक़ों ने इस कड़ी के ख़ुसूसन उसकी पहली पंक्ति के सार को मालूम भी कर लिया हो, मगर महज़ अक़्ली तरीके से उसका मान लेना काफ़ी नहीं है। ज़रूरत इसकी है कि इस उपदेश की सच्चाई अंतरी समझ बूझ यानी सुरत और निज मन में धीरे २ दरसने लगे और फिर जीवन का अंग बन जावे। इसमें ज़रूर

*Higher mind.

वक़्त लगेगा और मुमकिन है राधास्वामी मत के अभ्यास के द्वारा इस क़िस्म का अनुभव पैदा होने में एक जन्म से अधिक भी लग जावे।

(205)

For any Parmarthi practice to be fruitful it is absolutely essential that there be genuine love for and faith in the Supreme Name Radhasoami. Without this nothing can be accomplished, nothing can be gained. This is *sine qua non.* Bearing this always in mind you should practise Sumiran, Dhyan and Bhajan according to instructions already given; and in order to guard against the baneful effects of the surroundings you are placed in, it is necessary that you should read the principal books of our Faith regularly every day.

(२०५) अनुवाद

परमार्थ की किसी भी करनी में सफलता प्राप्त करने के लिये यह नितांत आवश्यक है कि इस परम मंत्र, राधास्वामी नाम में सच्चा विश्वास और प्रेम हो। बिना इसके न कुछ बन सकता है और न कुछ प्राप्त हो सकता है। इस बात पर हमेशा अपनी तवज्जह रखते हुए सुमरन ध्यान भजन का अभ्यास जैसा कि उपदेश के वक्त बतलाया गया है, करते रहना चाहिये और जिस हालत (वातावरण) और सोहबत में तुम इस वक्त हो, उनके हानिकारक असर से अपने को बचाने के लिये यह ज़रूरी है कि तुम प्रति दिन हमारे मत की मुख्य पुस्तकों का बिला नाग़ा पाठ किया करो।

(206)

As a votary of music, it is natural that a system which stresses the importance of the spiritual sounds of the higher celestial spheres as the means for the ascension of the spirit should find favour with you, but this point should not be lost sight of that our religion does not concern itself with the development of any activities of this world and confines itself solely to developing the latent powers of the spirit to enable it to gain access into its original abode. Although I do not deny that the music on this plane is only a reflex, though grossly mentalized and materialised, of the music and the harmony of the higher spheres, yet I must affirm that it is idle to expect the development of the musical powers and senses valued in this world, as a result of the practices recommended by the Radhasoami Faith. On the other hand, I would not recommend one to take up a serious study of its principles and teachings and to apply onesif with a steadfastness of purpose to its practices, unless one is actuated by an almost exclusive desire, or rather impulse, of liberating oneself from the duress of mind and matter and

achieving the ever-lasting benefit of the spirit which consists in its eventual conscious absorption in the Ocean of Supreme Bliss who is the Supreme Creator and the Parent or Origin of all.

This need not be taken as a discouragement to those who seek contact with the Radhasoami Faith, as I am only too anxious that as wide a range of humanity as possible should benefit from the message of Grace, Mercy and Love brought by Radhasoami Dayal, yet at the same time I am not prone to raise false expectations, or to seek an augmentation of the number of followers in a spirit of propaganda. With these preliminary remarks which if rightly interpreted ought to produce a most salutary effect, I recommend a careful study of the books *"Discourses on Radhasoami Faith"* and *"Radhasoami Mat Prakash"* and hope that with the blessings of the Supreme Father Radhasoami Dayal a true spirit of devotional appreciation will be generated which will be fruitful of the result aimed at by our Faith. If a study of these books leads you to recognise the Supreme Name—RADHASOAMI—as the only true and real name of the Supreme Being and the practice of the Surat Shabd Yoga as the sole avenue leading to complete emancipation, I shall be glad to send a paper of instructions for the practices enjoined by us. In the absence of the attitude described above of the devotee, a knowledge of the processes recommended will hardly lead to any result.

It is not my object that the belief described above, should be accepted as a dogma or an article of faith, but critical study with an open and impartial mind should establish the reasonableness of the claim made in order that the practices may be approached in a frame of mind sympathetic to the work lying ahead. There is an absolutism about the spiritual name peculiar to the presiding deity of each sphere and the main harmonies proceeding from it, but it is not possible for me to deal at any length with the matter in a letter. The study of the books sent will greatly help you in appreciating the import of the points referred to.

(२०६) अनुवाद

यह स्वाभाविक ही है कि तुम संगीत के ज़बरदस्त हामी होने के नाते उस विधि को पसंद करो जिसमें सुरत यानी रूह को रूहानी देशों में चढ़ाने के लिये रूहानी आवाज़ या शब्द की महिमा ज़ोर देकर बतलाई जाती है मगर यह बात न भूलनी चाहिये कि हमारा पंथ इस दुनिया की कार्रवाइयों को फ़रोग़ देने से कोई सरोकार नहीं रखता है। हमारा मत या पंथ केवल सुरत की गुप्त शक्तियों को जगाने और बढ़ाने के लिये है ताकि सुरत अपने आदि देश में जाने के क़ाबिल हो जावे। यद्यपि मैं इस बात से इनकार नहीं करता कि इस घाट का राग और गान ऊपर के देशों के राग

और गान अथवा शब्दों की छाया है और वह भी स्थूल मन और माया से लिप्त, तो भी यह स्पष्ट कर देना ज़रूरी है कि राधास्वामी मत के अभ्यास करने से यह उम्मीद करना फ़िज़ूल है कि उससे इस देश के संगीत का ज्ञान और क़ाबलियत पैदा हो सकती है। बरअक्स इसके मेरी सलाह तो यह है कि कोई शख़्स संजीदगी के साथ इस मत के उसूल और सिद्धान्तों के समझने की और दृढ़ता से उसके अभ्यास करने की कोशिश न करे ता वक्ते कि उसको मन और माया के दबाव से निकल कर दवामी रूहानी फ़ैज़ यानी आध्यात्मिक लाभ हासिल करने की केवल एक मात्र अभिलाषा बल्कि अंतरी प्रेरणा न हो। वह आध्यात्मिक लाभ यह है कि रूह यानी सुरत पूरे होश हवास के साथ उस परम आनंद के सागर में जा समावे जो सब का आदि कर्त्ता, पिता और मालिक है।

इसका यह मतलब नहीं है कि जो लोग राधास्वामी मत से परिचय चाहें उनकी अभिलाषा को मैं पस्त करना चाहता हूँ बल्कि मेरी तो खुद आरज़ू यह है कि ज़्यादा से ज़्यादा क़िस्म के लोग राधास्वामी दयाल के मेहर दया और प्रेम से भरे हुए संदेश से फ़ैज़याब हों। लेकिन साथ ही साथ मैं झूठी उम्मीदें बंधवाने का भी हामी नहीं हूँ और न प्रोपेगेंडा से अपने अनुयाइयों की संख्या बढ़ाने की फ़िक्र में हूँ। इन इब्तिदाई बातों को अगर ठीक तौर से समझा जावे तो बहुत फ़ायदेमंद असर पैदा होना चाहिये। "डिस्कोरसेज़ ऑन राधास्वामी फ़ेथ" (राधास्वामी मत पर प्रवचन) और "राधास्वामी मत प्रकाश" पुस्तकों को समझ २ कर पढ़ा जावे तो उम्मीद करता हूँ कि परम पिता राधास्वामी दयाल की दया से परमार्थ और भक्ति की महिमा समझने का सच्चा भाव पैदा होगा जिससे वह फलदायक नतीजा निकलेगा जो हमारे मत का उद्देश्य है। इन पुस्तकों के पढ़ने से अगर यह बातें तुम्हारी समझ में अच्छी तरह आजावें कि राधास्वामी नाम ही कुल मालिक का सच्चा और ज़ाती नाम है और सुरत शब्द योग का अभ्यास ही वह मार्ग है सिससे पूर्ण उद्धार हो सकता है तो मैं तुमको हमारे यहाँ के अभ्यास और उपदेश के परचे भेज दूँगा। यदि ऊपर वर्णन किया हुआ चित्त का भाव न उत्पन्न हो तो केवल इस अभ्यास की विधि को जानने से कुछ नहीं होगा।

यह मेरा मतलब नहीं है कि यह विश्वास जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ है महज़ मज़हबी अक़ीदें की तौर पर मान लिया जावे बल्कि निर्पक्ष और बारीक नज़र से उन किताबों को पढ़ने के बाद इस क़िस्म का यक़ीन हो जाना चाहिये कि जिस नतीजे और फल की प्राप्ति की उन में उम्मीद दिखाई गई है वह मानने योग्य है ताकि अभ्यास के लिये उनका रुख़ ऐसा हो जावे जिससे जो काम सामने है उसके करने में मदद मिले। हर मंडल के धनी का नाम और उसकी धुन या शब्द पूर्ण रूपेण निश्चित है। लेकिन इन बातों के बारे में पूरे तौर पर विचार करना चिट्ठी में नहीं हो सकता। पुस्तकें जो भेजी गई हैं, उनको ग़ौर से पढ़ने से ऊपर वर्णन की हुई बातों का अभिप्राय समझने में बड़ी मदद मिलेगी।

(207)

It ought to be remembered that one cannot be too careful in promoting the zeal for the propaganda of the Faith to smother one's own efforts for spiritual progress. One ought to concentrate one's efforts, at least in the beginning, upon securing one's spiritual ascension by degrees to the original source of the spirit. It is a mistake to take this as an index of selfishness as apart from all the considerations involved one is apt to forget or to fail to realise that the translation of the spirit to the original source, involves the cutting through of all sorts and degrees of mental and physical 'selves' that the spirit has assumed in its descent to the level of activity in the human form. This is the highest sacrifice, the burning out of all 'selves' at the altar of Love of the Supreme Being. This form of sacrifice to the Supreme Creator is, in a sense, the sacrifice of the entire creation, and is unattainable except through obtaining the dignity of *Servus Servorum*. The ascension of spirit in this form in an individual reflects its action upon all spirits similarly situated but less capable of battling with mind and matter and effecting the escape of their individual spirits from the bondage of mind and matter. This process is more active in the case of those who are themselves highly spiritually gifted and the effect of this procedure is more manifest in the case of kindred spirits. This maybe taken in a sense as an atonement for the sins of others who are less capable of effecting their emancipation without receiving aid of this description. This of course does not prohibit the rendering of assistance to others as it lies in one's power, but the main point to be kept in view is that the desire to help others should not overshadow the determination to continue with unabated energy the journey of the spirit to its goal.

(२०७) अनुवाद

जितना इस बात का ख़याल रक्खा जावे कम है कि मत प्रचार का जोश बढ़ते २ ख़ुद की रूहानी तरक़्क़ी की कोशिशों को न दबा दे। कम-अज़-कम शुरू में तो हर शख़्स को अपनी तवज्जह और कोशिश इस बात पर यक-जा और एकाग्र करनी चाहिये कि रफ़्ता २ अपनी रूह को चढ़ा कर उसके आदि भंडार में पहुँचा दे। इसको ख़ुद ग़रज़ी ख़याल करना ग़लती है क्योंकि इस विषय के मुताल्लिक जितनी ग़ौर-तलब बातें हैं उनके अलावा मनुष्य भूल जाता है या पूरी तौर से समझ नहीं पाता कि आदि धाम की ओर सुरत के चलने में सब क़िस्म और दरजों के आपे — स्थूल और सूक्ष्म — जो कि नर चोले की कार्रवाई की सतह तक उतर कर आने में सुरत ने धारण किए थे, नाश हो जाते हैं। परम पिता के प्रेम की वेदी पर सब आपों को जला देना बहुत बड़ी क़ुरबानी और त्याग है। मालिक के आगे यह क़ुरबानी करना एक मानी में सारी रचना को क़ुरबान और भेंट कर देना है और जब तक दासानुदास की पदवी न प्राप्त कर ले,

ऐसी गति नहीं हो सकती। जिस अभ्यासी की सुरत की इस तरह ऊपर चढ़ाई होती है, उसका असर उन सब सुरतों पर पड़ता है जो उस घाट पर हैं मगर जो खुद मन और माया से लड़ने और जूझने व अपनी सुरतों को मन और माया के बंधनों से छुटकारा दिलाने की काबलियत कम रखती हैं। ऊँचे दरजे की सुरतों में दूसरी सुरतों पर असर पहुँचाने की क़ाबलियत ज़्यादा होती है और यह दूसरी सुरतें जिस क़दर अभ्यासी सुरत से मुआफ़क़त रखने वाली होंगी, उतना ही ज़्यादा असर ले सकेंगी। एक मानी में यह कार्रवाई उन दूसरे लोगों के गुनाहों का भुगतान करना है जो बग़ैर इस किस्म की मदद के अपनी मुक्ति प्राप्त करने की क़ाबलियत कम रखते हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि दूसरों को जो कुछ मदद दी जा सकती है, वह न दी जावे बल्कि ख़ास बात याद रखने की यह है कि दूसरों को मदद पहुँचाने की चाह, अपनी सुरत को उसके धाम में पहुँचाने के दृढ़ संकल्प पर ग़ालिब और हावी न होने पावे।

(208)

The one unfailing test for the eligibility of a person for admission to the Radhasoami Faith is the existence of an inherent, though feeble, desire of getting out of the regions of Mind and Matter and gaining admission into the regions of pure bliss and love. No tinkering of the regions of Mind and Matter or any compromise with their presiding deities can secure the object of the true devotee of Radhasoami Faith. The existence of the desire or rather impulse of the nature described above is a sure sign of the person having reached a stage in the course of his evolution when he or she can benefit by the teachings of our Faith. In short, it is an indication of the receptivity of the spirit in him or her of the seed of true spiritual light and love which would eventually lead the person to the goal under the protection of Radhasoami Dayal, the Supreme Father. It will automatically help the seeker to accept nothing but the true Faith and protect him from the enchantment of the material regions (Maya) and the wiles of the Universal Mind and its emissaries the individual minds.

(२०८) अनुवाद

आया कोई शख़्स राधास्वामी मत में शामिल किए जाने के क़ाबिल है या नहीं, इस बात की पूरी कसौटी यह है कि उसमें मन और माया के देशों से निकल कर केवल प्रेम और आनन्द के देश में प्राप्त होने की स्वाभाविक और सच्ची चाह, चाहे कमजोर ही हो, है या नहीं। मन और माया के देश में किसी प्रकार की दुरुस्ती कर लेने या मन और माया देशों के धनियों के साथ कोई समझौता कर लेने से राधास्वामी मत के सच्चे अनुयायी का उद्देश्य और ध्येय नहीं प्राप्त हो सकता। उस चाह, बल्कि प्रेरणा या प्रोत्साहन का जिसका ऊपर ज़िक्र किया गया है, मौजूद होना इस बात का पक्का निशान है कि वह शख़्स क़ुदरत के क़ायदे से उस घाट पर आ गया है जब कि वह राधास्वामी मत के उपदेशों से फ़ैज़याब हो सकता है। संक्षेप में यह कि वह इस बात का संकेत या चिन्ह है कि उसकी सूरत सच्चे आध्यात्मिक प्रकाश और प्रेम का बीज ग्रहण कर सकती

है। वही प्रकाश और प्रेम का किनका राधास्वामी दयाल की रक्षा में उसको अंत में आख़िरी मंजिल पर पहुँचा देगा। इस क़िस्म के जिज्ञासुओं को अपने आप मदद मिलेगी जिससे जो सत्य मार्ग है उसी को पकड़ेंगे और मायक आकर्षणों और ब्रह्मांडी मन तथा उसके प्यादे पिंडी मनों के छलों से सुरक्षित रहेंगे।

(209)

I am glad to receive your letter and to see that you are imbued with a desire that the gracious message of Radhasoami Dayal may reach the distant land of America. This desire is quite legitimate and laudable and every possible facility should be placed in the way of people who are sincerely desirous of benefiting by it. Of course the real impetus will come from the Supreme Father Himself and as soon as such people as are capable of benefiting by His message take birth in that distant land, His own methods of reaching them with His Spiritual Grace are bound to manifest themselves. We shall only be His humble agents to carry out His gracious behests.

(२०९) अनुवाद

तुम्हारी चिट्ठी पढ़ कर और यह जान कर ख़ुशी हुई कि तुम अमेरिका जैसे दूर देश में राधास्वामी दयाल का दया पूर्ण संदेश पहुँचाने के इच्छुक हो। यह चाह बिल्कुल ठीक और सराहनीय है और उन लोगों को जो कि सच्चे मन से इससे फ़ायदा उठाना चाहते हैं, हर प्रकार की सुविधा देनी चाहिये। वैसे असली प्रेरणा तो स्वयं परम पिता की तरफ़ से ही आवेगी और ज्योंहि ऐसे अधिकारी जीव उस दूर देश में पैदा हुए कि जो उस संदेश से फ़ायदा उठा सकें, ख़ुद-ब-ख़ुद मालिक की तरफ़ से ऐसे असबाब ज़रूर में आ जावेंगे जिनसे उसकी रूहानी फ़ैज़ पहुँचाने वाली दया उन जीवों तक पहुँच जावे। हम केवल उसकी दया पूर्ण आज्ञाओं को कार्यान्वित करने वाले तुच्छ सेवक होंगे।

(210)

R. S.

Radhasoami Satsang
Allahabad.
12. 11. 1932

My dear Kakko,

Verily Calcutta has swallowed up Banno as Tej Singh says. But your experience should not merely end in an observation of this nature; it should lead to action. You both should now make it your objective to shun Calcutta as one would shun a viper—gradually work for it (better still do it as early as practicable) so that the tentacles of Calcutta do not establish their grip upon you both and make redemption impossible. A half loaf in an atmosphere of comparative poverty is preferable to the luxuries of Calcutta. All the so-called successes of Calcutta are almost without exception tainted with all sorts of trickeries and dishonesty. Clean, honest earning alone will lead to peace of mind. Your mother is very anxious that you both should come away from Calcutta.

It will be an act of great courage on the part of you both if you renounce the life of Calcutta in favour of an humble modest living elsewhere.

With hearty R. S.,

Yours affectionately,
Madhavprasad

RADHASOAMI SATSANG,
ALLAHABAD
12. 11. 32

My dear Kakko

Verily Calcutta has swallowed up Bannoo as Tej Singh says. But your experience should not merely end in an observation of this nature; it should lead to action. You both should now make it your objective to shun Calcutta, as one would shun a viper – gradually work for it (better still do it) so that as early as practicable the Centaurs of Calcutta don't establish their grip upon you both + make redemption impossible. A half loaf in an obscure place of comparative poverty is preferable to the luxuries of Calcutta – All the so-called

successes of Calcutta are almost without exception tainted with all sorts of trickeries & dishonesty. Clean, honest earning alone will lead to peace of mind. Your mother is very anxious that you both should come away from Calcutta.

It will be an act of great courage on the part of you both if you ~~have~~ ~~to~~ renounce the life of Calcutta in favour of an humble modest living elsewhere. With hearty

R.S. Yours affly

Madhavprasad

(२१०) अनुवाद

राधास्वामी सहाय

राधास्वामी सत्संग
इलाहाबाद
१२-११-१६३२

प्रिय कक्को !

तेजसिंह सच कहते हैं कि कलकत्ता बन्नो को निगल गया । पर महज़ यह कहना ही काफ़ी नहीं । इस पर अमल करना चाहिये । जिस तरह ज़हरीले साँप से गुरेज़[1] करते हैं, उसी तरह तुम दोनों को कलकत्ते से दूर रहने का इरादा करना चाहिये । धीरे २ इसके लिये कोशिश करो बल्कि बेहतर होगा कि यह काम जल्द से जल्द करो ताकि कलकत्ते के चंगुल में ऐसे न फँस जाओ कि रिहाई[2] ना-मुमकिन हो जाय । कलकत्ते के ऐशो आराम के मुक़ाबले, ग़रीबी की आधी रोटी बेहतर है । कलकत्ते में जिसको "सफलता" कहते हैं, वह तक़रीबन सब की सब दगाबाज़ी और बेईमानी से प्राप्त होती हैं । शुद्ध और ईमानदारी की कमाई ही से मन को शांति मिलेगी । तुम्हारी मां चाहती हैं कि तुम दोनों जल्द से जल्द कलकत्ता छोड़ कर यहां चले आओ ।

तुम दोनों के लिये यह बड़ी हिम्मत की बात होगी अगर तुम कलकत्ते के जीवन को त्याग कर, कहीं और सादगी और ग़रीबी से जीवन व्यतीत करो ।

ज़्यादा राधास्वामी ।

तुम्हारा सच्चा हितकारी
माधव प्रसाद

(211)

When your efforts prove unsuccessful, you ought to pray internally in the Supreme Charans for the grant of Mercy and Grace in meek and humble spirit. This will greatly facilitate your progress on the path of spiritual elevation.

(२११) अनुवाद

जब तुम्हारी कोशिशें बे-सूद साबित हों तो तुम को अंतर में दया और मेहर के लिये दीन अधीन होकर चरनों में प्रार्थना करनी चाहिये । इससे सुरत की चढ़ाई और तरक़्क़ी में बड़ी सहूलियत पैदा होगी ।

(१) गुरेज़ करना= भागना । बचना । दूर रहना । (२) रिहाई=छुटकारा ।

(212)

Remember that Radhasoami Dayal does not allow His children to suffer more than is absolutely necessary for the eradication of their Karams. In fact the minimum amount of suffering that would serve the purpose is allowed by Him. Some Karams, however, are such that they cannot be eradicated without undergoing the sort of experiences that you are at present having. So you must not be disheartened but bear with patience and cheerfulness and humility and thankfulness, all that may come to pass, in the firm belief that the Supreme Father is tempering with mercy, and has reduced to the minimum what you had to go through. Rest assured, also your worries and anxieties will be mitigated at the proper time.

(२१२) अनुवाद

याद रक्खो कि कर्म काटने के लिए जितने दुख तकलीफ की नितांत[1] आवश्यकता[2] है, उससे ज्यादा दुख तकलीफ राधास्वामी दयाल अपने बच्चों पर नहीं आने देते। वास्तव में कम से कम दुख तकलीफ कि जिससे कर्मों का खातमा हो जावे, आने देते हैं। लेकिन कुछ कर्म ऐसे होते हैं कि वह बिना उस क़िस्म का तजुरबा हुये, नहीं कट सकते हैं जैसा कि तुमको फ़िलहाल हो रहा है। इसलिए तुमको हिम्मत नहीं हारनी चाहिए बल्कि जो कुछ हो, उसको धैर्य खुशी दीनता और शुकरगुज़ारी के साथ वर्दाश्त करना चाहिए, यह दृढ़ विश्वास रखते हुए कि जो कुछ तुमको भुगतना है, उसको परम पिता कम से कम करके अपनी दया से मुलायम भी कर रहे हैं। यक़ीन मानो, तुम्हारी चिंताएं और परेशानियाँ भी मुनासिब वक्त पर कम कर दी जावेंगी।

(213)

In the case of a Satsangi, the element of Mauj is always present in whatever happens to him, and Mauj is always directed towards securing maximum benefit of Parmarth, side by side with the paying up of the toll of Karams that continue to hinder the path of Parmarthi.

(२१३) अनुवाद

सतसंगी के लिये जो कुछ होता है उसमें हमेशा मौज शामिल रहती है और मौज की कार्रवाई हमेशा यह होती है कि ज्यादा से ज्यादा परमार्थ का लाभ प्राप्त हो और साथ २ कर्मों का जो कि परमार्थी के लिए बराबर सद्दे-राह होते हैं, कर भी चुकता जावे।

---

(१) एक दम। निरी। निपट। (२) ज़रूरत।

(214)

The sudden death of your wife must really have been a shock to you all and I fully and cordially sympathise with you in your sad bereavement. It is quite true that the event has deprived your children of a parent's care and created difficulties for you in looking after them and managing your household affairs. The facility too, with which you could come here for Satsang has no doubt been curtailed thereby. But, in spite of all these difficulties it must be borne in mind that whatever the Supreme Father ordains is never without some good purpose and is always meant for the ultimate benefit of His children. It behoves you, therefore, to hold fast to your faith in His Grace and Mercy and conform with His Mauj. Rest assured that all your difficulties will be mitigated with Grace in course of time, and Radhasoami Dayal will afford you facilities for attending Satsang here.

(२१४) अनुवाद

यकायक तुम्हारी स्त्री के मर जाने से तुम सब लोगों को ज़रूर धक्का लगा है और मैं तुम्हारे साथ इस दुःख में दिली हम-दर्दी का इज़हार करता हूँ। यह बिल्कुल सच है कि तुम्हारे बच्चे माता की सम्हाल और निगरानी से महरूम (वंचित) हो गए हैं और उनकी देख भाल और गृहस्थी का प्रबन्ध करने में तुम्हारे लिये मुशकिलें और दिक़्क़तें पैदा हो गई हैं। जिस सहूलियत के साथ कि तुम यहां सतसंग में आ सकते थे वह भी बिला शक कम हो गई है। लेकिन इन सब कठिनाइयों के होते हुए यह ख़याल रखना चाहिए कि जो कुछ मालिक के हुक्म से होता है वह कभी मसलहत से ख़ाली नहीं होता और हमेशा अपने बच्चों के लिए बिलआख़िर फ़ायदेमन्द होता है। इसलिये तुमको चाहिए कि उसकी मेहर और दया में जो तुम्हारा विश्वास है, उसको दृढ़ता से क़ायम रक्खो और उसकी मौज से मुआफ़क़त करो। विश्वास रक्खो कि जैसे जैसे वक्त गुज़रता जावेगा दया से तुम्हारी दिक़्क़तें कम होती जावेंगी और राधास्वामी दयाल तुमको यहां सतसंग में हाज़िर होने की सहूलियत बख्शेंगे।

(215)

It is not right to think if certain measures had been taken in time the result would have been different. Life and death are absolutely in the hands of the Creator and nothing that man can do, can avert or counteract them. You must not, therefore, allow your mind to indulge in such thoughts, as they will only add to the bitterness of your grief and make it harder for you to resume and maintain the correct attitude of mind which should be that of patient resignation and humble submission to the Mauj of the Supreme Father Radhasoami Dayal. Think less of the difficulties of your position, turn inwards to the Holy Charans, and pray for help, guidance and strength to overcome them. The Merciful Father will provide ways and means.

Babuji Maharaj and His family

बाबूजी महाराज सकुटुम्ब

Last Darshan of Babuji Maharaj (soon after His departure)

(२१५) अनुवाद

यह ख़याल करना ठीक नहीं है कि अगर फ़लां तदबीर की जाती तो नतीजा कुछ और होता । मरना और जीना केवल मालिक के हाथ में है । इन्सान जो चाहे कर ले, उसको न रोक सकता है और न बदल सकता है । इसलिए तुमको ऐसे ख़यालात में महव नहीं होना चाहिये क्योंकि उनसे तुम्हारा दु:ख और बढ़ेगा और तुम्हारे लिये यह बात और ज़्यादा मुशकिल हो जावेगी कि मन को फिर अपनी सही हालत में ले आओ और क़ायम रक्खो जिससे कि परम पिता राधास्वामी दयाल की मौज पर सब कुछ छोड़ दो और उससे दीनता और धैर्य्य पूर्वक मुआफ़क़त कर सको । अपनी हालत की दिक्क़तों और मुशकिलों का ख़याल कम करो, अंतर में चरनों में लगो और मदद, रहनुमाई और उन पर क़ाबू पाने की ताक़त के लिये प्रार्थना करो । दयालु पिता कोई न कोई रास्ता निकाल देंगे ।

(216)

The facts mentioned by you are sure indications that she was blessed with the Grace of the Supreme Father Radhasoami Dayal. It is not a question of merely articulation of the Name by mouth. It was in her case followed by the appearance at a higher plane of Radhasoami Dayal in a form recognisable by her as that of her Redeemer, and was accompanied by internal spiritual sounds which helped her in her ascension to the higher regions destined for her abode where she is to sojourn until the time comes for her to be born again in human form to complete the Bhakti which she had begun in this life. The description given by you of her last days and specially of her last moments has given us all great satisfaction as it shows that her end was that of a true Bhakt.

(२१६) अनुवाद

जो बातें तुमने लिखी हैं, वह निस्संदेह इस बात के चिन्ह् हैं कि उस पर परम पिता राधास्वामी दयाल की दया नाज़िल हुई । यह सिर्फ़ ज़बान से राधास्वामी नाम उच्चारण करना ही नहीं था, बल्कि साथ २ ऊंचे घाट पर उसको राधास्वामी दयाल के मुक्तिदाता के रूप में दर्शन हुए और उसने इसी रूप में उनको वहाँ पहचाना और नीज़ यह कि अंतर में आध्यात्मिक शब्द सुनाई दिया जिससे उसको ऊंचे स्थान की जो कि उसको उस समय तक बासा देने के लिये तजवीज़ किया गया है जब तक कि वह फिर जन्म ले और इस जन्म में शुरू की गई भक्ति को पूर्ण करे, चढ़ाई में मदद मिली । उसके अंतिम दिनों और ख़ास कर अंतिम क्षणों का हाल, जो तुमने लिखा है, उससे हम सबको बड़ा संतोष हुआ क्योंकि इससे ज़ाहिर होता है कि उसकी मौत एक सच्चे भक्त की सी हुई ।

(217)

The sole concern of a true devotee, a traveller on the path of salvation, should be to flee away from the attractions of this world and translate his spirit entity to the region of supreme bliss, his only desire being to approach the Supreme Father for His sake only and to love Him for Him alone.

(२१७) अनुवाद

दुनिया के इन आकर्षणों से दूर भाग जाना और अपनी सुरत जीव आत्मा को परम आनंद के देश में पहुँचाना ही सच्चे भक्त अथवा उद्धार के मार्ग पर चलने वाले यात्री की एक मात्र चिंता होनी चाहिये। परम पिता के निकट परम पिता ही के निमित्त पहुँचना और उससे उसके निमित्त ही प्रेम करना उस भक्त और यात्री की एक मात्र अभिलाषा होती है।

(218)

The exclusive character of our religion does not connote a sectarian bias but is only an index of our desire to keep clear of, and minimise contact with the public, which always leads to social and civic organisation and materialism.

(२१८) अनुवाद

हमारे धर्म या पंथ की सबसे न्यारा होने की खासियत का यह अर्थ नहीं है कि वह साम्प्रदायिक तास्सुब है, बल्कि वह हमारी इस इच्छा की सूचक है कि पबलिक के साथ कम से कम सम्पर्क हो क्योंकि उससे सामाजिक और नागरिक आंदोलन और माया की ओर प्रवृत्ति होती है।

(219)

We are really sorry to learn of the persistent worry and trouble you are undergoing at present and it will give us real pleasure if the Supreme Father Radhasoami Dayal is pleased to grant you relief from them and you should off and on pray to Him internally for it. But I must tell you that a real and more abiding relief lies in not allowing your mind to feel so distressed as it seems it does, by trying to accept dutifully and if possible cheerfully, the Mauj of the Supreme Father. You should prayerfully apply yourself internally to devotion and there is no trouble which will not yield to the sweet ambrosial effects of the repetiton of the Holy Name RADHASOAMI.

(२१६) अनुवाद

इस समय तुम पर जो लगातार चिंता और दुःख का चक्कर चल रहा है, यह जान कर हमको वाक़ई अफ़सोस हुआ। परम पिता राधास्वामी दयाल तुमको राहत और आराम बख़्शें, इससे हमको भी सच्ची ख़ुशी होगी और इसके लिये तुमको अकसर अंतर में प्रार्थना करनी चाहिये। लेकिन सच्चा और अधिक स्थायी आराम इस बात में है कि तुम परम पिता की मौज से, कर्त्तव्य समझ कर और मुमकिन हो तो ख़ुशी से, मुआफ़क़त करने की कोशिश करते हुए इस क़दर दुखी न हो जैसे कि मालूम होते हो। तुमको भक्ति पूर्वक अंतर में लगना चाहिये। कोई ऐसा दुख नहीं है जो पवित्र नाम—राधास्वामी—के सुमरन के मधुर और अमृतमय प्रभाव से न जाता रहे।

(220)

It is regretted that in a fit of temper you should have lost your control and done a thing which does not behove a Satsangi to do. In future you should try to avoid such incidents and if you remember the Holy Name on such occasions, you will find great help in overcoming the "Kal Ang."* However all is well that ends well.

(२२०) अनुवाद

अफ़सोस की बात है कि गुस्से की झक में तुमने अपनी तबियत पर क़ाबू न रख कर ऐसा काम किया जो एक सतसंगी के करने योग्य नहीं है। भविष्य में तुमको ऐसी घटनाएं न होने देना चाहिये। अगर तुम पवित्र नाम को ऐसे मौक़ों पर याद रक्खोगे तो काल अंग को दबाने में तुम्हें बहुत मदद मिलेगी। ख़ैर जिसका अंत अच्छा, वह सब अच्छा है।

(121)

It is not at all incumbent on a Satsangi to hold Shradh** or to feed the poor for the well-being of his dead relatives, but if you want to feed some poor you may do so.

(२२१) अनुवाद

सतसंगी के लिये यह फ़र्ज़ और कर्त्तव्य नहीं है कि अपने मृत संबंधियों के हितार्थ श्राद्ध करे या कंगलों को भोजन करावे। लेकिन अगर तुम गरीब गुरबा को खिलाना ही चाहते हो तो ऐसा कर सकते हो।

---

*Evil tendency.

** Offering of water, food, etc., to the Brahmans in honour of manes.

(222)

You should not allow worldly thoughts to disturb your mind especially during devotional practices. At that time all such thoughts should be dispelled.

(२२२) अनुवाद

सांसारिक गुनावनों और ख़यालों को मन में विक्षेप नहीं पैदा करने देना चाहिये, ख़ास कर अभ्यास के समय में। उस समय ऐसे ख़यालों को निकाल देना चाहिये।

(223)

You should not forget that you have domestic responsibilities which you have to fulfil. You should not lose your equanimity. With calm and collected mind you should do what the Supreme Father has ordained for you and accept everything that happens as the Mauj of Radhasoami Dayal and abide by it. Surely you do not expect your family and household affairs to be managed from here. If half a dozen Satsangis approached with a prayer of the kind you have made, all the affairs of the Satsang here will have to be stopped and a directorate will have to be started to manage the family and worldly affairs of Satsangis all over India. The very idea would appear to you absurd. Let not your mind run amuck. With trustful reliance on the Grace and Mercy of the Supreme Father and with cool head and mind attend to your both temporal and spiritual responsibilities as far as you can, leaving the rest to the Mauj of Radhasoami Dayal who alone knows what is best in your interests.

(२२३) अनुवाद

तुमको यह नहीं भूल जाना चाहिए कि तुम पर गृहस्थी की ज़िम्मेदारियों का भार है जिसको निभाना पड़ेगा। तुमको ऐतदाल नहीं खोना चाहिये। जो कुछ परम पिता ने तुम्हारे लिये निर्दिष्ट किया है, उसको तुम्हें शाँत और स्थिर मन से करना चाहिए और जो कुछ हो, उसे राधास्वामी दयाल की मौज समझ कर मंज़ूर करना और उस पर दृढ़ रहना चाहिये। यक़ीनन तुम अपने कुटुम्ब और घर का प्रबन्ध यहाँ से किये जाने की उम्मीद नहीं कर सकते। अगर पाँच छः सतसंगी भी इस तरह की प्रार्थना, जैसी कि तुमने की है, पेश करे तो सतसंग के सब काम बन्द कर देने पड़ेंगे और एक प्रबन्धक के पद का निर्माण करना पड़ेगा कि जो हिन्दुस्तान भर में सब सतसंगियों के घर के और दुनियावी मुआमलात का इन्तज़ाम किया करे। तुम ही देख सकते हो कि इस तरह का महज़ ख़याल उठना ही बेहूदापन है। अपने दिमाग़ को पागल न होने दो। विश्वास पूर्वक परम पिता की मेहर और दया पर भरोसा रखते हुए और शाँत मन

और मस्तिष्क से अपने दुनिया के और परमार्थ के, दोनों काम, जहाँ तक कर सको, करते रहो। बाक़ी को राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ दो। सिर्फ़ वे ही जानते हैं कि तुम्हारे हित के लिये क्या बेहतरीन है।

(224)

In every family domestic troubles occur and shall always occur. They are necessary for the correction of the mind to keep it under some pressure to prevent it from going astray.

(२२४) अनुवाद

प्रत्येक परिवार में घरेलू रगड़े झगड़े उठते हैं और हमेशा उठेंगे। मन को सीधे रास्ते से भटक जाने से रोकने के लिये उस पर कुछ दबाव का रहना ज़रूरी है और इस दुरुस्ती के लिये गृहस्थी की भींचा भाँची व रगड़े झगड़े ज़रूरी हैं।

(225)

Running away from your present condition of life won't do. You will have to live in it and concomitantly attend to your Parmarth. It seems you are not prepared to abide by the Mauj of Radhasoami Dayal. He has ordained :—

जिस विधि राखें वही विधि रहना।
शुकर की करना समझ विचार॥

(Live in the state He keeps you in with thankfulness and gratitude.) Always remember this couplet when your mind revolts or frets. Keep yourself always cheerful in the hope of Grace coming from the Supreme Father who is always watchful of your interests, both spiritual as well as temporal.

(२२५) अनुवाद

ज़िन्दगी की मौजूदा हालतों से भाग जाने से यानी जी चुराने से काम नहीं चलेगा। तुमको इस हालत में रहना पड़ेगा और साथ २ अपना परमार्थी काम भी करना पड़ेगा। ऐसा मालूम होता है कि तुम राधास्वामी दयाल की मौज पर रहने को तैयार नहीं हो। उन्होंने हुक्म दिया है कि जिस हालत में रक्खें उसमें शुकरगुज़ारी और

कृतज्ञता के साथ रहो ।

जिस विधि राखें वही विधि रहना ।
शुकर की करना समझ विचार ।।

जब कभी मन नाराज़ होवे या उत्पात करे, इस कड़ी को याद रक्खो । सदा प्रसन्न चित्त रहो, इस आशा में कि परम पिता की दया आने वाली है । वे तुम्हारे स्वार्थ और परमार्थ दोनों के निगरां हैं ।

(226)

All that is required from a Satsangi is his trustful reliance on and implicit faith in Huzur Radhasoami Dayal's Grace and Mercy, leaving the fulfilment of temporal and spiritual interests to the Mauj of Radhasoami Dayal who alone knows what is best in your interests.

(२२६) अनुवाद

सतसंगी से जिस चीज़ की आशा की जाती है, वह यह है कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल की दया और मेहर पर स-विश्वास भरोसा और शंका रहित श्रद्धा हो और स्वार्थ और परमार्थ दोनों राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ दे क्योंकि सिर्फ़ वे ही जानते हैं कि तुम्हारे हक़ में क्या बेहतरीन है ।

(227)

Try as far as you can to control your passions which are great impediments in the devotional practice of a Satsangi. The only remedy is the repetition of the Holy Name RADHASOAMI for overcoming onslaughts of passions of whatever description they may be.

(२२७) अनुवाद

काम क्रोध आदि को जो कि सतसंगी के अभ्यास में बहुत विघ्न करते हैं, रोकने की जिस क़दर कोशिश कर सको, करो । उनके हमलों को, चाहे जिस क़िस्म के हों, रोकने का एक मात्र उपाय राधास्वामी नाम का सुमिरन है ।

(228)

Remembrance and Sumiran of Name will take you to Nami the contemplation of whose Rup[1] is essential for awakening the Shabd[2] Dhar[3].

---

(1) Form. (2) Sound. (3) Current.

(२२८) अनुवाद

नाम का सुमरन और नाम की याद तुमको नामी तक पहुँचा देगी। नामी के रूप का ध्यान शब्द की धार जगाने के लिये ज़रूरी है।

(229)

You should not feel disheartened owing to the vagaries of the mind and your inability to check them. Struggle with the mind is a life-long one and when you feel your weakness to curb or check it, you should apply yourself to the repetition of the Holy Name RADHASOAMI at the third Til. Always turn to the Holy Charans within you whenever you feel dejected and are unable to check the wanderings of the mind.

(२२९) अनुवाद

मन की तरंगों और उनके रोकने में अपनी ना-क़ाबलियत से तुमको हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। मन से लड़ाई जीवन पर्य्यंत रहेगी। जब मन पर काबू पाने में तुम अपने को कमज़ोर समझो, तुमको तीसरे तिल पर राधास्वामी नाम का सुमरन करना चाहिये। जब कभी तुम अधीर हो जाओ और मन की भटकना को न रोक सको, तभी अन्तर में चरनों की ओर रुख करो।

(230)

Do all that you humanely can for your and your family's protection and leave the result to the 'Mauj' of Radhasoami Dayal and, whatever the circumstances, try to reconcile yourself to them and consider that everything that comes to pass is through the 'Mauj' of the Supreme Father. Always turn to the Holy Name RADHASOAMI and the Holy Charans within you whenever you feel disheartened or perturbed owing to difficulties and helplessness.

(२३०) अनुवाद

अपनी और अपने कुटुम्ब की रक्षा के लिये जो कुछ मनुष्य कर सकता है, वह तुम करो और नतीजा राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ दो और जो हालत हो, उससे मुआफ़क़त करने की कोशिश करो और जो कुछ होता है उसको राधास्वामी दयाल की मौज से समझो। मुशकिलों और मजबूरियों से जब कभी तुम अधीर हो या घबराओ, अन्तर में नाम और चरनों की तरफ़ मुतवज्जह हो।

(231)

In the present world-wide calamities, you should keep yourself calm and reconcile yourself to the circumstances as they arise and consider that everything that comes to pass is through the Mauj of R. S. Dayal and calculated to serve your best interests.

(२३१) अनुवाद

वर्तमान संसार व्यापी संकट के समय में तुमको शांत चित्त रहने तथा जैसी हालत भी पेश आवे उससे मुआफ़क़त करने की कोशिश करनी चाहिए और याद रखना चाहिये कि जो कुछ होता है, वह राधास्वामी दयाल की मौज से है और उसी में तुम्हारा लाभ है।

(232)

Always remember the Holy Name RADHASOAMI whenever you find your mind perturbed or depressed.

(२३२) अनुवाद

जब २ मन में कोई विक्षेप या ना-उम्मीदी पैदा हो, पवित्र नाम राधास्वामी को याद करते रहो।

(233)

While the efficacy of the Supreme Name RADHASOAMI cannot be over-estimated, we have always to remember that it is impossible to conduct devotional practices with anything like success without proper training and guidance. This sort of training and help can be accorded by Him alone who has access to all the subtle planes of the various spheres of the path of true salvation. Only He can be the true and perfect spiritual guide or Sant Sat Guru as He is called, and one should look for such a being (living of course). This is, in fact, what I meant in my last letter: I referred to the means of attaining the original form and original abode of the Supreme Being. It is only through His mercy that this gift of genuine "Bhakti" and "Shabd" can be obtained. If you feel attractad by the writings of the Maharishiji or in any way inclined to think that he may possibly be the one whom you are in search of, I would advise you to pursue your enquiry in that direction first.

(२३३) अनुवाद

परम मन्त्र राधास्वामी नाम की शक्ति और सामर्थ्य का अंदाजा नहीं किया जा सकता। हमको यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये कि बग़ैर उचित शिक्षा और पथ प्रदर्शन (रहनुमाई) के अभ्यास इस तौर से बनना ना-मुमकिन है कि जिसमें कुछ सफलता का आभास हो। इस क़िस्म की मदद और शिक्षा केवल उसीसे मिल सकती है जिसको सच्चे उद्धार के रास्ते में आने वाले तमाम देश और घाट तक गति हासिल है। केवल वही पूर्ण आध्यात्मिक पथ प्रदर्शक या जिसको संत सतगुरु कहते हैं, हो सकता है। ऐसे जीते जागते पुरुष की तलाश करनी चाहिये। मैंने अपने पिछले पत्र में कुल मालिक के आदि रूप और आदि धाम प्राप्त करने के उपायों के विषय में जो लिखा था, उसका वास्तव में यही मतलब है। केवल उसकी मेहर से ही असली भक्ति और शब्द की दात मिल सकती है। अगर आप महर्षिजी के लेखों या उनकी पुस्तकों से आकर्षित हों अथवा किसी भी प्रकार आपको यह ख़याल होता है कि संभवतः वह वही हैं जिनकी कि आपको तलाश है तो मैं आपको सलाह दूंगा कि पहले आप उस दिशा में खोज और तलाश करलें।

(234)

In a matter of such vital importance as acceptance of a spiritual guide, your search should be so thorough, as to leave no doubt in your mind as to his being the one you are in search of. With this object in view, you may, if you please, pursue your enquiries with an open mind in the direction referred to in your card and should not be in any hurry at any time. The time spent in such search should not be considered to be wasted.

(२३४) अनुवाद

आध्यात्मिक गुरु धारण करने जैसे अति आवश्यक और बड़े विषय में आपकी जाँच पड़ताल इतनो पर्याप्त और पूर्ण होनी चाहिये कि जिससे आपके चित्त में उनके विषय में कोई शंका बाक़ी न रहे कि वह वही पुरुष हैं जिनकी कि आपको तलाश है। इस ध्येय को अपने सामने रखते हुए अगर आप चाहें तो आप निर्पक्ष होकर उस दिशा में खोज और छान बीन कर सकते हैं जिसके बारे में कि आपने अपने कार्ड में लिखा है। और इस मुआमले में कभी जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये। ऐसी खोज में व्यतीत किए हुए समय को नष्ट हुआ नहीं समझना चाहिये।

(235)

You should perform your devotion with regularity and earnestness and you will gradually receive signs within you of the grace and mercy of the Supreme Father Radhasoami Dayal.

(२३५) अनुवाद

तुम्हें अपना अभ्यास उमंग से नियम पूर्वक करना चाहिये। धीरे २ अंतर में परम पिता राधास्वामी दयाल की दया और मेहर के परचे मिलेंगे।

(236)

There is no cause for you to feel despondent. Every one who has sought the protection of the Supreme Father, will receive His assistance when needed. The progress to the sound must be gradual and you will occasionally experience the grace of the Supreme Father within yourself, if you apply yourself with devotion and earnestness.

(२३६) अनुवाद

निराश होने का कोई कारण नहीं है। जिस किसी ने परम पिता की सरन ली है, वह वक्त ज़रूरत पर उनकी सहायता प्राप्त करेगा। भजन में तरक़्क़ी धीरे-धीरे होगी और अगर तुम प्रीत प्रतीत सहित उमंग से अभ्यास में लगे रहोगे तो कभी कभी अंतर में परम पिता की दया का अनुभव करोगे।

(237)

The appearance of Guru Swarup* in devotional practice must be looked upon as a rare manifestation of grace of the Supreme Father. Whether the Form is visible or not, efforts should be continued unabated towards the contemplation of Guru Swarup.

For successful performance of this form of devotion, love for Guru Swarup is essential which can be cultivated by attending in person the Satsang of Sant Sat Guru, but because you have been unable to avail yourself of this advantage, you need not despair of achieving success in this form of practice. Love is also cultivated by internal Satsang, i.e., by attending to the modes of devotion prescribed by our sublime Faith and my object in your attending to the Satsang in person of Sant Sat Guru is only to give it prominence as a very easy method of cultivating love.

(२३७) अनुवाद

अभ्यास में गुरु स्वरूप के दर्शन होना परम पिता की दया का निशान समझना चाहिये जो कि शाज़ व नादिर ही मिलता है। चाहे रूप सामने आवे या नहीं, गुरु स्वरूप का ध्यान करने की कोशिश बराबर जारी रखनी चाहिये।

* Form.

इस अभ्यास के सफलता पूर्वक बनने के लिये गुरु स्वरूप में प्रेम होना अनिवार्य है। यह प्रेम संत सतगुरु के सतसंग की हाज़िरी देने से पैदा हो सकता है लेकिन इस लाभ के प्राप्त करने का मौक़ा न मिलने से तुमको अभ्यास में सफलता प्राप्त करने के बारे में निरास न होना चाहिये। प्रेम अंतरी सतसंग यानी हमारे मत के अभ्यास करने से भी पैदा हो सकता है। तुम को संत सतगुरु का बाहरी सतसंग भी करने के लिये कहने का मेरा मतलब इस बात को महत्त्व देने से था कि वह प्रेम पैदा करने का बहुत सहल तरीक़ा है।

(238)

If you earnestly and sincerely, with a devout and humble heart, devote yourself internally to the service of the Supreme Father, you are sure to receive unmistakable signs of His grace and occasional glimpses too of His Adorable Form.

(२३८) अनुवाद

अगर तुम दीनता और उत्साह पूर्वक सच्चे और शुद्ध हृदय से अंतर में परम पिता की सेवा करो तो निश्चय है कि तुमको उसकी दया के पक्के चिन्ह और कभी २ उसके मनोहर रूप की झलक प्राप्त होगी।

(239)

I am sorry to learn the condition of your mind, but in the removal of the Karams it is inevitable that difficulties of the description you have been experiencing should appear from time to time.

You should not, however, lose heart; but should continue to devote your efforts in an unabated manner to the service of Radhasoami Dayal. Repetition of the Holy Name RADHASOAMI is indispensably necessary in your present condition and it should be resorted to as frequently as possible. Half an hour once in the morning and once in the evening, or at any other time it may be convenient to you, should be devoted exclusively to the repetition of the Holy Name and in addition to it, whenever convenient, you should utter the Holy Name for 5 to 10 minutes continuously at intervals in the course of day. Such occasions should be made as frequent as possible. If practised in this manner you will notice its benefits and find it easier to perform the other mode of devotion.

(२३९) अनुवाद

तुम्हारे मन की अवस्था का हाल मालूम करके अफ़सोस हुआ, लेकिन कर्मों की सफ़ाई में यह लाज़मी है कि उस क़िस्म की मुश्किलें समय २ पर आती रहें जैसी कि तुम अनुभव कर रहे थे।

लेकिन तुमको हिम्मत नहीं हारनी चाहिये। बल्कि राधास्वामी दयाल की सेवा में तुमको पूर्ण रूप से लगे रहना चाहिये। तुम्हारी मौजूदा हालत में राधास्वामी नाम का सुमरन करना लाज़मी तौर पर ज़रूरी है और इसे जितनी दफ़ा हो सके, करना चाहिये। सुबह शाम आध आध घंटे या और किसी वक्त जब तुमको सहूलियत हो, केवल नाम का सुमरन करना चाहिये। इसके अतिरिक्त जब मौक़ा और सहूलियत हो बीच बीच में पाँच पाँच दस दस मिनट के लिये लगातार नाम का उच्चारण करना चाहिये। इस तरह का नाम का उच्चारण जितनी ज़्यादा दफ़ा बन सके, करना चाहिये। ऐसा करने से तुमको इसके फ़ायदे मालूम होंगे और दूसरे अभ्यास का बनना आसान हो जावेगा।

(240)

The care of worldly matters should not be allowed to unduly weigh on your mind, specially during the time of devotional practice. You should leave all the cares, at least for the present, to the Mauj of the Supreme Father. This will not only render your practice easy but at the same time relieve your mind of a good deal of unnecessary anxiety and render the course of your worldly affairs more smooth and elastic.

(२४०) अनुवाद

दुनियावी मामलों की चिंता को तुम्हारे चित्त पर ज़रूरत से ज़्यादा भार रूप न होने देना चाहिये, ख़ास कर अभ्यास के समय में। कम से कम फ़िलहाल तुमको सब चिंताएं परम पिता की मौज के सुपुर्द कर देना चाहियें। इससे न सिर्फ़ अभ्यास सहज और आसान हो जावेगा बल्कि साथ ही साथ तुम्हारे चित्त से बहुत सी ग़ैर ज़रूरी चिंताएं दूर हो जावेंगी और तुम्हारे दुनिया के मामले ज़्यादा मुलायम और आसान हो जावेंगे।

(241)

Ills of flesh and mind come and go and they are bound to cause a disturbing effect, but the effort of the devotee ought to be to cling, as steadfastly as he can, to the Holy Charans within one's self. This will undoubtedly leave a soothing and chastening influence in all the concerns of the devotee's life, and besides mitigating the troubles of the mind and body, give a spiritual stamina which cannot otherwise be acquired.

(२४१) अनुवाद

तन और मन की व्याधियाँ आती हैं और चली जाती हैं और उनसे ज़रूर परेशानी होती है। मगर भक्त की यह कोशिश होनी चाहिये कि अंतर में चरनों से

जिस क़दर हो सके, मजबूती से चिपटे। इससे ज़रूर भक्त की ज़िन्दगी से सरोकार रखने वाली सब बातों में सफ़ाई और तसकीन बख़्श असर पैदा होगा और तन व मन के दुःखों को कम करने के अतिरिक्त आंतरिक आध्यात्मिक बल प्रदान करेगा जो और प्रकार से नहीं मिल सकता।

(242)

The repetition of the spiritual supreme holy name must necessarily result in vivifying the old slumbering beliefs in you and the crowding in your mental vision of the preceptors of old faith who exact a toll before releasing their hold upon you and you find yourself embraced in their death struggle and unnecessarily get frightened over it. If you courageously and patiently adhere to the repetition of the Holy Name RADHASOAMI you will soon vanquish your old tormentors and find your path to spiritual advancement freed from their obstacles and interference. This is only meant as a sincere advice to you for your spiritual welfare, and you are free to follow it or not.

(२४२) अनुवाद

पुराने अक़ीदे जो सोई हुई हालत में होते हैं, वह सुमिरन से जाग जाते हैं और पुराने इष्ट या पहले जिस मत में थे, उसके दीक्षक और शिक्षक जो बिना अपना कर लिए हुए तुमको नहीं छोड़ते, सामने आते हैं और तुम अपने को उनके साथ जीवन मरण संग्राम में पाते हो और इस बात से बिला ज़रूरत डरते हो। अगर तुम हिम्मत और धीरज के साथ राधास्वामी नाम के सुमरन में लगे रहो तो तुम जल्द ही अपने पुराने दुखदाइयों को हरा दोगे और उनके विघ्न और बाधाओं से अपनी रूहानी तरक़्क़ी का रास्ता साफ़ पाओगे। यह तुम्हारी रूहानी तरक़्क़ी के लिये सच्ची सलाह के तौर पर कहा गया है। तुमको इख़्तियार है कि इसे मानो या न मानो।

(243)

What the Radhasoami Faith promises in the case of an ordinary human being (I am not speaking of specially gifted persons), is that if a person devotes himself with earnestness and sincerity to the methods of devotion prescribed by Radhasoami Dayal, he will, within a few years or even shorter term, gain such internal experiences of the presence and tangible force of the Supreme Father Himself, that will leave him in no doubt as to the absolute correctness of the Faith adopted and the eventual result aimed at, with occasional moments of ineffable bliss and joy. He would also realise within himself the true features of the teachings of the Radhasoami Faith, beyond any reasonable doubt, and the absolute superiority of the Faith over others.

(२४३) अनुवाद

विशेष रूप से अधिकारी जीवों की बात तो न्यारी है, मामूली जीवों के लिये राधास्वामी दयाल का बचन है कि अगर उनके बतलाए हुए अभ्यास को कोई शख्स सिद्क़ दिली और दर्दमंदी के साथ करे तो थोड़े ही वर्षों में बल्कि उससे भी कम वक्त में उसको अपने अंतर में परम पिता की समर्थता और मौजूदगी के ऐसे अनुभव होंगे कि जिससे उसके मन में इस बात का कोई संदेह बाक़ी न रह जावेगा कि जो मत उसने धारण किया है और जो अपना अंतिम ध्येय स्थिर किया है, वह बिल्कुल दुरुस्त है और उसको कभी २ अवर्णनीय रस और आनन्द भी मिलेगा। उसको अंतर में राधास्वामी मत के उपदेशों की विशेषताओं का और राधास्वामी मत के अन्य मतों से आला और बाला होने का ऐसा ज्ञान भी प्राप्त होगा कि जिसमें कोई संदेह की गुँजाइश बाक़ी नहीं रहेगी।

(244)

Mere admission in the Radhasoami Faith does not transform a man from a frail human being into a Hans or Param Hans or Sadh or Sant, and as long as a desire for self aggrandisement sways the human mind, such factions are bound to come into existence. Of course admission into the Radhasoami Faith opens up the path for purification, but the process will occupy the period of more than one birth.

(२४४) अनुवाद

सिर्फ़ राधास्वामी मत में शामिल हो जाने से ही कोई आदमी दुर्बल जीव अवस्था से बदल कर हंस या परम हंस या साध या संत नहीं हो जाता और जब तक कि खुद-परवरी की चाह मन में ज़बर है, इस क़िस्म की विरोधी (मुख़ालिफ़) जमाअतों का वजूद में आना लाज़मी है। अलबत्ता राधास्वामी मत में शामिल होने से सफ़ाई होने का रास्ता खुल जाता है, मगर इस कार्रवाई में एक जन्म से ज़्यादा भी लग सकता है।

(245)

You mention your friend's connection with the Theosophical Society; it is hoped that he will withdraw his attention from that direction. There cannot be a plurality of religious faiths, and progress in the *Sant Mat* cannot be expected unless one's efforts are concentrated upon it.

(२४५) अनुवाद

तुम्हारे मित्र का थियोसाफ़िकल सोसाइटी से जो संबंध है, उसके बारे में तुमने ज़िक्र किया। उम्मीद की जाती है कि वह उस दिशा से अपना चित्त हटा लेगा। कोई

व्यक्ति एक से अधिक मतों का अनुयाई नहीं हो सकता। और जब तक कि सब तरफ़ से तवज्जह को हटा कर संत मत की कार्रवाई न की जावे, संत मत में तरक्क़ी की उम्मीद नहीं की जा सकती।

(246)

Bereavements and calamities of other sorts appear to injure us, but they really do not do so. They are means adopted by Radhasoami Dayal for helping one to free himself from the world and fit him for spiritual advancement. Therefore they should not cause grief or sorrow, and I judge from your letter that you too have, to some extent, accepted them in that spirit.

(२४६) अनुवाद

सगे संबंधियों की मृत्यु और दूसरी क़िस्म के सदमों और मुसीबतों से हमको नुक़सान पहुँचता हुआ मालूम होता है, मगर वास्तव में यह बात नहीं है। दुनिया से अलग होने और रूहानी तरक़्क़ी की क़ाबलियत पैदा करने के लिये वे राधास्वामी दयाल के उपाय हैं। इसलिये उनसे अफ़सोस या दुःख नहीं होना चाहिये और तुम्हारी चिट्ठी से मालूम होता है कि तुमने किसी क़दर उसी भाव से उनको झेल लिया है।

(247)

The Supreme Mauj of Radhasoami Dayal must be submitted to patiently in the expectation of relief eventually coming from the same quarter. Prayers should also be offered occasionally in His Gracious and Merciful Charans and some sort of relief, either in the shape of abatement of troubles or ascension of mind and spirit to higher regions, where physical ailments cease to give serious trouble, is sure to make its appearance.

(२४७) अनुवाद

राधास्वामी दयाल की अति श्रेष्ठ मौज से धैर्य पूर्वक मुआफ़क़त करनी चाहिये, इस आशा में कि अंत में उसी मौज से दुःखों से मुक्ति मिलेगी। कभी २ मालिक के कृपामय और दयामय चरनों में प्रार्थनाएँ करनी चाहिये। कुछ न कुछ सहायता अवश्यमेव आवेगी, चाहे दुक्खों और विघ्नों की कमी की शक्ल में, चाहे मन और सुरत के ऊंचे देशों में चढ़ाई की शक्ल में जहाँ कि स्थूल शरीर की तकलीफ़ों का भारी दुःख मिट जाता है।

(248)

A student of comparative religion, a term which has attained eminence in the domain of learning, fails to attract our admiration, and in the manner in which it is done, we regard it as a parody of religion and indicates an utter

lack of reverence and seriousness on the part of the person who devotes himself to this line of research. Without meaning any disparagement to their efforts conducted in a spirit of ignorance and lack of perspective, their attitude is more akin to atheism than theism. People who have attained to unspeakable altitude in the domain of Parmarth have also in the beginning devoted themselves to a study of religious books but their outlook and attitude were peculiar to themselves and an unbarterable asset. They soon discovered that the secret knowledge, the mystery of life, lay within themselves, and could be attained by devotion, Bhakti and Prem. They discarded book knowledge as a useless encumbrance and soon betook themselves to a study of the internal script under the guidance of an expert. But such men can be few and far between; to them the knowledge is only a handmaid and the real thing to be wooed is 'Abhyas' which comes in the wake of cultivation of devotion and love. The 'Shabd' (hymn) by the Founder of our Faith, given below, you will find of interest and significance in this connection.

हे विद्या तू बड़ी अविद्या ।
संतन की तैं क़दर न जानी ॥१॥
संत प्रेम के सिंध भरे हैं ।
तैं उलटी बुधि कीचड़ सानी ॥२॥
संतन प्रेम लगा प्यारे से ।
उनकी सूरत शब्द समानी ॥३॥

[Translation : O Vidya (intellectual knowledge) ! Thou art ignorance itself. Thou hast failed to appreciate the grandeur of Sants. Sants are an overflowing ocean of "Love". Thou with thy perverse intellect, art soiled with mud.]

(२४८) अनुवाद

सब धर्म्मों और मतों के मुक़ाबले की नीयत से वाक़फ़ियत हासिल करने वालों की हमारी निगाह में क़दर नहीं है और जिस तरह कि यह काम किया जाता है, उसको हम लोग धर्म और मत का विध्वंस करना समझते हैं और वह ज़ाहिर करता है कि इस तरह की अन्वेषणा[1] करने वाले व्यक्ति में संजीदगी और धर्म और मत के लिये कोई ताज़ीम नहीं है। उनकी जो कोशिशें इस विषय में (बिना उचित दृष्टिकोण और ज्ञान के) होती हैं, उनकी ना-क़दरी ज़ाहिर करने का मतलब नहीं है। बजाय आस्तिकता के, नास्तिकता की ओर उनका ज़्यादा झुकाव होता है। जिन लोगों ने परमार्थ में ऊंचा दर्जा प्राप्त किया, उन्होंने भी शुरू में धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन पर ज़्यादा ज़ोर दिया

(1) खोज।

था। लेकिन उनका दृष्टिकोण और मनोवृत्ति अपनी निराली थी और यह उनके पास ऐसी पूँजी थी जिसका कोई बदल नहीं हो सकता। उन्होंने शीघ्र मालूम कर लिया कि अंतर का ज्ञान यानी जीवन का गुप्त भेद अंतर में ही मौजूद है और वह अभ्यास, भक्ति व प्रेम द्वारा प्राप्त हो सकता है। उन्होंने किताबी इल्म को व्यर्थ का भार या रुकावट समझ कर त्याग कर दिया और जल्द "मुर्शिद" या "उस्ताद" की रहनुमाई या पथ प्रदर्शन में घट की पोथी पढ़ने में लग गए। मगर ऐसे लोग बहुत कम और शाज़ व नादिर होते हैं। उनके लिये विद्या केवल दासी या चेरी है। असली चीज़ तो 'अभ्यास' में दिल लगाना है जो कि भक्ति और प्रेम पैदा करने से हो सकता है। इस संबंध में नीचे दिया हुआ शब्द जिसे हमारे मत के जारी करने वाले प्रथम आचार्य ने बनाया था, दिलचस्प और पुर-मानी[1] है :—

हे विद्या तू बड़ी अविद्या।
संतन की तैं क़दर न जानी॥ १॥
संत प्रेम के सिंध भरे हैं।
तैं उलटी बुधि कीचड़ सानी॥ २॥
संतन प्रेम लगा प्यारे से।
उनकी सूरत शब्द समानी॥ ३॥

(249)

Be assured that He has never forgotten you, that He has always been and always will be soliciting for your welfare and progress.

(२४६) अनुवाद

इस बात का भरोसा रक्खो कि राधास्वामी दयाल कभी तुमको भूले नहीं हैं। वह हमेशा तुम्हारी भलाई और तरक़्क़ी का ख़याल रखते हैं और रक्खेंगे।

(250)

There is no harm in cooperating with others in the performances of family ceremonies etc. So let your parents perform the hair cutting ceremony of your son. You cooperate with them. The only thing you should observe at the time of performance and family deity *puja* (worship) etc. is that you should internally repeat the holy name RADHASOAMI. It would save friction in the family and there would be no harm to you.

(१) पुर=भरा हुआ। (२) मानी=अर्थ।

It is not advisable to leave your parents and their family. Live with them and try to behave humbly and with *Dinta* (humility) so that they may be pleased with you.

(२५०) अनुवाद

घर में किसी कारज या उत्सव के समय सब का साथ देना चाहिये। इसमें कोई हर्ज नहीं है। तुम्हारे माता पिता जिस प्रकार चाहें, तुम्हारे लड़के के मुंडन का उत्सव मनावें। तुम उनका साथ दो। सिर्फ़ इतना ख़याल रखना चाहिये कि कुल देवता की पूजा के समय तुम अंतर में, मन ही मन में, राधास्वामी नाम का उच्चारण करते रहो। ऐसा करने से घर में किसी क़िस्म की ना-इत्तिफ़ाक़ी या झगड़ा न होगा और तुम्हारा कोई नुक़सान न होगा।

माता पिता तथा कुटुम्ब को छोड़ देने की सलाह नहीं दी जा सकती। उनके साथ रहो और दीनता व नर्मी से बर्ताव करो जिससे वह तुमसे ख़ुश रहें।

(251)

Act as your good sense dictates and leave the result to the Mauj of Radhasoami Dayal who alone knows what is best in your interest and who alone can best fulfil it.

(२५१) अनुवाद

जैसा तुम उचित समझो, करो। नतीजा राधास्वामी दयाल की मौज पर छोड़ दो। केवल वे ही जानते हैं कि किस बात में तुम्हारा लाभ है और वे ही उस लाभ को प्राप्त करा सकते हैं।

CHAPTER 7

CORRESPONDENCE EXCHANGED BETWEEN THE SECRETARY, SOAMI BAGH, AGRA (INDIA), AND A FOLLOWER OF THE BEAS GROUP, MR. HARVEY H. MYERS, CALIFORNIA, U.S.A.

Copy of letter dated October 20, 1939, from Mr. Harvey H. Myers, Attorney-at-Law, Orange, California; to the Secretary, Soami Bagh, Agra.

Dear Sir,

............I understand that the Radhasoami doctrines taught by our Master differ slightly from those set forth in this book (*Radhasoami Mat Prakash*)......These books I value highly......and they impelled me to ask for my initiation from our beloved Father. Later on, I became His American representative............

Copy of letter dated January 24, 1940 from the Secretary, Soami Bagh, Agra, to Mr. Harvey H. Myers.

Dear. Sir,

............I am glad you had an occasion to read the Radhasoami doctrines in their pristine purity as set forth in the *Radhasoami Mat Prakash* which impelled you to ask for initiation. These doctrines, you are doubtless aware, being divinely revealed are absolute and immutable (Sat) and must remain so irrespective of time, place or any other conditions whatever. There can, therefore, in the very nature of things, be no countenancing of different opinions in the fold of the faithful, viz., the Radhasoami Satsang, as it is commonly called. In fact, one can do no more than accept these doctrines and be in faith, or reject them and remain outside. It is a matter of history that people even after initiation, when dissenting, had to break off from the parent fold and set up new sects of their own, with doctrines fashioned to the varying hour. They cannot, for the time their defection continues, form part of the parent stock, which I may, by the way, mention is represented by us, with headquarters at Soami Bagh, Agra. Mere retention by them of the Name is not sufficient to show the integrity of the faith or the identity of the goal, the doctrines having been mutilated and the Name detached from its ~~gisnificance~~ Significance. This accounts for the version of doctrines in certain quarters you

refer to in your letter differing from the true and original one found in the *Radhasoami Mat Prakash*............

Copy of letter dated March 19, 1940. from Mr. Harvey H. Myers, to the Secretary, Soami Bagh, Agra.

Dear Sir,

............You bring up the matter of orthodoxy and heterodoxy and verity of teachings of the various Radhasoami groups. I had hoped you would not enter this ground; but, as you have done so, it seems fitting that I should make such reply as my uninformed self may properly inscribe.

In general, your position is that the book teachings are divinely inspired and revealed and are immutable (Sat) as you say. Now, this exactly is the position of the orthodox Christian Catholics and orthodox Sikhs; they rely on a book, or books, rather than on original internal revelation. This thesis I reject, and strongly adhere to the Truth internally revealed. Any person who can accomplish this internal revelation I will recognise as a genuine Master, originally inspired and designated by Deity to expound Truth, not from books but from his own experiences. Books are helpful and suggestive to a degree.

Being an American, baptised and confirmed in the Anglican Church and never excommunicated as yet, I became decidedly heterodox when I adopted the Radhasoami Faith. So heterodoxy holds no terror for me assuming I might be heterodox, which I deny.

It is my understanding that the Agra group, whereof you are a member, is the heterodox one; and it is heterodox because it teaches a different technique from that taught by Founder Soamiji to be followed when performing 'Bhajan'. I gather that you use different names from Soamiji and from the Dera group.

............And. in addition, the Dera group has put out an English translation of the Sar Bachan Prose written by Founder Soamiji.

As I gather it, Soamiji initiated Baba Jaimal Singh who was a genuine master later on, and who initiated Sawan Singh Maharaj. The purity of the original teachings was preserved by both of these, and was attested by Seth Saheb, nephew of the Founder, before he passed onward. No, doubt you know more of these things than I ; but I am not inclined to get into any discussion of them because, being a lawyer, I know the uncertainties and fallacies of the human mind. But my understanding of these facts would be unavailing were it not for Truth internally revealed to me by my own beloved

Master and when, years ago, in desperation I prayed and begged for Truth, from any master whomsoever, even though he were not a 'Western' master, as I thought I wanted, and my own revered Sawan Singh Maharaj made Himself known to me, I determined to accept and follow him. Where was the Agra Master ? He failed to answer my intense prayer.

.........As I understand it, our Dera group has no part in the construction of the Samadh of Founder Soamiji and naturally I shall follow their example ......I trust that you will regard the "Sar Bachan Prose" as translated into English by Satsangis at Dera, as orthodox and genuine.........

Copy of letter dated 18 June, 1940, from the Secretary, Soami Bagh Agra, to Mr. Harvey H. Myers.

Dear Sir,

I am in receipt of your letter dated March 19, 1940 in reply to mine of January 24, 1940. I had no desire to introduce any controversial matter in my letter. In view of your statement in your previous letter that the Radhasoami doctrines taught by our master (Sardar Sawan Singh Saheb) differ slightly from those set forth in this book, *viz., Radhasoami Mat Prakash*, I thought it necessary to point out that the doctrines of Radhasoami Faith as set forth in *Radhasoami Mat Prakash* were exactly as revealed by Soamiji Maharaj and as such they were absolute and immutable and did not admit of any variation or departure. The intention was never to suggst that there was no necessity of a master or a living guide. Radhasoami Faith hinges round the Sant Sat Guru and without Him it will cease to exist. Mere study of religious books would not conduce to that spiritual advancement which would only be possible under the constant and life giving association and guidance of the Sant Sat Guru. It would be no fanaticism to claim the divine character of the teachings of Soamiji Maharaj, the Founder, as embodied in the scriptures which emphasize the necessity of a True and Perfect Living Guide.

The case of Roman Catholics and Sikhs who regard their respective scriptures as substitutes for Living Master is not analogous to our case.

The difference of opinion regarding the identity of the living guide and deviation from the original principles of the Faith as taught by the Founder, have led to the formation of separate sects after the departure of each Sant Sat Guru. After the departure of Soamiji Maharaj, Baba Jaimal Singh (who, initiated by Soamiji Maharaj, had attended His Satsang occasionally when the regiment in which he was employed happened to be stationed at Agra)

founded his own sect at Beas which eventually grew into Dera Satsang. Similarly, in 1910, after the departure of our 3rd Sant Sat Guru (Maharaj Saheb) sprang up another sect at Morar which in 1915 removed its headquarters to what is now known as Dayal Bagh, Agra, just opposite the Soami Bagh, the headquarters of our Satsang, *i. e.,* the parent stock. The 'Bagh' (garden) in which our headquarters are located was laid out by Soamiji Maharaj Himself and named by Him as ' Soami Bagh". It was His last residence where His Samadh is being built.

Evidently you have been confounding Dayal Bagh with Soami Bagh and mistaking us for Dayal Bagh sect. Miss E. Bruce referred to in your letter was never a member of our Satsang. She at one time belonged to Dayal Bagh sect with which we have absolutely no connection. Had it not been for the misconceptions of this kind, much of what you have said in your letter as applying to us would not have come to be said and therefore needs no answer from me.

It is not my purpose to enter into a "controversy" with you as such; it is an impediment in progress in the path of Truth. It is not only distasteful to a true Satsangi, but from the point of view of utility, is barren in its results. The term indicates that both the parties are, for the time being, irrevocably wedded to their views on a basis of self interest. What I call "self interest" is interest created by the association of spirit with mind and matter and is removed from the interest *solo* of the undistinguishable but conscious absorption in the Supreme Spirit. Any emotion devoid of the Supreme Ideal or Goal is the result of an impulse of self interest. There are, of course, degrees of self interest from the bottom of the creation right upto the bottom of the purely spiritual regions and where self अहं first appeared in its subtlest form, a form full of refulgence and purity but lacking in these attributes in their absolutely pure form. I have no quarrel with a person who holds a belief with honesty and sincerity. I cannot, however, fail to observe that 'sincerity and honesty' are both relative terms as everything else is in the world of relativity. The measure of 'honesty and sincerity' is its locus in the natural centres formed in the course of creation. 'Sincerity and Honesty' at the navel base and the solar plexus differ materially from these attributes at the spirit centre which is at the focus behind the eyes. This too is not absolute 'sincerity and honesty' as it cannot be attained before gaining access into the purely spiritual regions. Unless and until these attributes permeate the locus of Universal Mind in the frame of human being and deep into the spirit (Surat) beyond, no reliance can be placed on the so-called 'sincerity and honesty', nor can they survive the dissolution of the centre whence the

concrete form of material and mental entity in a particular case has sprung. To exemplify, I may add that some of the lower animals display these attributes in a remarkable degree but 'honesty and sincerity' of a dog, which is regarded as a fine expression of these attributes, can only achieve canine results. It is idle to assert that the 'honesty and sincerity' of the lower animal is at a par with the 'sincerity and honesty' of a highly spiritually developed human being or an angel or a Hans (a being untied from the subtle mind and matter and who soars high in the ultra celestial region beyond the limits of universe). Unless 'sincerity and honesty' are engendered at the centre of which the truth or the relative truth is being revealed, there would be no response to such truth.

In ordinary circumstances my answer to a letter bearing the characteristics which some portions of your letter do, would have been silence. Why I break this, is because:—

1. I regard you as one belonging to that section of the Radhasoami Faith which originated as the result of that part of the Message which Radhasoami Dayal, in view of the existing circumstances, chose to give out publicly as an introduction to the announcement at a later stage of the Supreme Name RADHASOAMI hitherto not publicly given out by any Sant.

2. Your letter contains, in some parts, an absolute overturning of facts, i. e., the actual historical happenings.

When a matter relating to the vitals of our religion is stirred up (as in your letter, previous to the one under reply) it becomes incumbent upon one belonging to that progressive phase of the Faith, introduced by the Founder Himself, when the time for its announcement became ripe, to speak out the unvarnished truth. In this connection arise various presentations of the principles of our Faith which show that a good deal of the teachings of the Faith have not reached you in their true form. You are, of course, not responsible for it because you know only what has been reported to you and can have no claim to personal knowledge. It is the duty of a Sadhu to stand upon strict adherence to truth, no matter what it leads to, when an expression of his intuitive knowledge becomes necessary, *cf*, the following couplet of Kabir, the first harbinger of the Message of Dayal Desh :—

साधु ऐसा चाहिए साँची कहे बनाय ।
कै टूटै कै फिर जुड़े बिन कहे भर्म न जाय ॥

[Translation :- The standard of truth for a Sadhu (one who has attained to the top of the intermediate region) is to lay bare the truth,

irrespective of what it leads to, a mending or a break off], because in the absence of true expression (of course in a legitimate manner), it is impossible to remove the delusion (parenthetically I may add that according to the standard set down for a Satsangi no person has any right to impose his belief upon another). The response must come in a natural and easy manner from the innermost consciousness of the person concerned.

The expression हित चित (*Hit Chit*) in the Message (*Sandesh*) delivered by Radhasoami Dayal appearing as a prelude to the teachings contained in the sacred hymns in Sar Bachan Poetry means that love or sympathy must precede intelligence exposed for reception. This is why propaganda finds no place in our religion as the propagation of the Faith is relied upon a response arising in the subject as a result of spiritual awakening, however fractional it may be. It was the *Sant Mat* or the *Sat Mat* which for the first time revealed the existence of that essence in human beings (Surat) which was unknown to the founders of the faiths (revealed religions) which preceded the *Sant Mat*. With them, the *Sewak* (server) and the *Soami* (the Lord) were the lower, the higher and the Universal Mind. It was at that stage when the force of expansion of creation was nearing exhaustion and when the stage of evolution of creation brought about the emergence to some extent of spirit essence in apt pupils for the Message of Surat Shabd Yoga, that the first Messenger of grace and mercy appeared in the person of Kabir Saheb culminating in the highest divine manifestation in Radhasoami Dayal. It is only the spirit which can become one with Sat Shabd in an inseparable and undistinguishable form, cf.,

कलियुग में स्वामी दया बिचारी ।
परगट करके शब्द पुकारी ॥

[Translation : In Kali Yuga, the Soami (Lord) has taken pity on Jivas, and has openly given out the secrets of Shabd.] It was at the stage of incipient exhaustion of the forces of mind and matter that the Supreme Being in His unbounded grace and mercy revealed openly the essence of Shabd to which spirit alone is cognate.

From the time of advent of Kabir Saheb onwards there appeared successively on this earth Sants and Sadhs from time to time, who publicly gave out the true essentials of the realization of the highest and purest form of 'Self' or the 'Universal Mind' (the true Gyan Marg) combined with an exposition relating to the existence of still higher regions of Dayal Desh in plain or esoteric language.

To the innermost circle they imparted the secrets of Dayal Desh and in their technique allowed Pranyam or Ashtang Yoga as a preliminary and auxiliary to the Surat Shabd Yoga.

जोग ज्ञान मत इन्हूँ भाखा
पुनि संतन मत ऊँचा राखा

[Translation : They also spoke of the paths of Yoga and Gyan. Thereafter, they upheld the superiority of the religion of Sants.] To explain the rationale of this, will require a long dissertation, and I suppress it.

This convention (not as a slave to convention but as a measure of utility in the best interests of humanity) was followed with more or less rigidity by all the Sants and Sadhs and those who ventured to discard it (of course under the impulse and direction of the Lord whom they represented on earth) paid the penalty of death, e. g., Sarmad, Mansoor and others. The rigid, unrelenting and, at times, ferocious opposition of the men of the world or *Sakit Jan* (persons unmoved by the emotion of Divine Love) and priesthood of the various extant religions proved most formidable obstacles to the prevalence in general of the *Sant Mat* and at least in one instance, viz.. Tulsidas, the author of the world-renowned epic, "Ramayan", had to content himself with an exposition of the faith relating to the top of intermediate regions, with of course unmistakable references in unequivocal terms to the superiority of the regions beyond, going to the length of expressing that "Nam" (Shabd) is an essence whose attributes, Ram, the hero of the epic, himself could not describe. He again incarnated himself in the person of Tulsi Saheb of Hathras (U. P., India) who used to visit frequently the family of Soamiji Maharaj during the latter's childhood and within a selected circle gave out that Soamiji Maharaj was an Incarnation of the Supreme Being and would deliver the Message of the Most High.

This difficulty continued to exist to more or less extent until the policy of non-interference with other religions exhibited itself as a political measure with the advent of the British Government. The shackles, that prevented the free expression of the true Message of mercy and grace brought by Supreme Sants and Sadhs, were considerably less obstructive when Soamiji Maharaj made His gracious advent. Though freed to some extent of some of these difficulties, there still existed a violent and unrelenting opposition to the exposition of *Sant Mat* in its true form and more so to the public manifestation of any Name (Nam) beyond Sat Nam, Sat Shabd or Sar Shabd. People who belonged to the so-called *Sant Mat* of the time (amongst whom were included the family of Soamiji Maharaj and His near relations) contented

themselves with outward formalities of Guru Nanak's *Mat* and worship of Samadhs etc. In this atmosphere there was not one single soul who would tolerate the Message of "Nam" higher than that of Sat Nam. The Sat Nam has certainly the full potency to lead a human spirit to Sat Lok, the region of pure spirit, full of Grace and Mercy without any contamination or the least trace of mind and matter. That is why with us the watch word of our Faith is Sat Purush Radhasoami. Radhasoami Dayal has declared in the sacred writings that His *Rup* (spiritually cognisable manifestation) in *Agam, Alakh* and *Sat* (more or less analogous to the expression of human entity in the pineal gland, viz., the seat of spirit in the human body, the thyroid centre and the solar plexus and to the corresponding expression of Brahm in the three forms of *Avyakrit, Hiranyagarbh* and *Vairat* in Brahmand, intermediate regions) are His own *Rup* (Form). The relevant couplets in Sar Bachan Poetry the scriptures acknowledged by all the divisions of the Radhasoami Faith, are;-

पिरथम अगम रूप मैं धारा ।
दूसर अलख पुरुष हुआ न्यारा ।।
तीसर सत्तपुरूष मैं भया ।
सत्तलोक में ही रच लीया ।।
इन तीनों में मेरा रूप ।
यहाँ से उतरीं कला अनूप ।।
यहाँ तक निज कर मुझको जानो ।
पूरन रूप मुझे पहिचानो ।।

[Translation : First I assumed the form of Agam Purush, next I assumed the form of Alakh Purush. The third form assumed by Me was that of Sat Purush and it was I who created Sat Lok. In these three regions, My own form exists. From here descended incomparable emanations. Know that upto this (Sat Lok), it is My own self and in these three, I am fully manifest.]

It would have been utterly futile to openly preach the Message of Radhasoami Dayal amongst the people who surrounded Soamiji Maharaj and the highest good that He could do to them was to wean them from the formalities and the outward rituals of the *Sant Mat* as it prevailed at that time and to instil into them the secrets of Sat Lok (Dayal Desh) and the method of their approach by the Surat Shabd Yog. To this too there was very partial and limited response. This went on for sometime until Huzur Maharaj (the spiritual successor, according to us, of Soamiji Maharaj) after an agitating and poignant search for the Supreme Being, continuously eating into his

vitals for over a decade, came into the presence of Soamiji Maharaj through Chachaji Saheb, the youngest brother of Soamiji Maharaj, named, Lala Pratap Singh, who was employed in a lower post in the office in which Huzur Maharaj was serving at the time. The first audience lasted for nearly five hours and when Huzur Maharaj came out of the room in which He was closeted with Soamiji Maharaj, He broke forth in tones of profound gratitude, "I have found what I was seeking for". Simultaneously about this time, some males and females gathered round the person of Soamiji Maharaj and became His enthusiastic, devoted (and lost to themselves) followers. Within this circle which continued to expand from time to time Soamiji Maharaj gave out the Supreme Name (Nam) RADHASOAMI which was in its turn used by His followers for Him while Soamiji Maharaj continued to give *Updesh* (to impart spiritual instruction) confined to Sat Lok and Sat Purush. It was in this setting that the most exalted, most gracious, most merciful. most munificent and most forgiving Radhasoami Dayal incarnated Himself in the person of Soamiji Maharaj. Except among those who recognised in His person the Incarnation of Radhasoami Dayal, the greatest good that He could have done to others who came to Him for spiritual light was to save them from the routine of a religious life leading to perdition and to convert their goal and object of worship into Sat Lok and Sat Purush. Even as it was all sorts of indignities and calumnies were heaped upon Him and fanciful motives ascribed to Him by the people in general and His own caste fellows in particular.

This is the true and actual history of the manifestation of the Supreme Name RADHASOAMI.

In His writings, Sar Bachan Radhasoami Poetry, Soamiji Maharaj has, from beginning to end, sung the absolute superiority of *Radhasoami Dham* and *Radhasoami Nam*. I will give only a few quotations below, which will establish the assertion made, while a translation of the whole book would be necessary to bring out the real spiritual significance of the Supreme Name RADHASOAMI. These quotations are ;—

(१) मैं तो चकोर चंद राधास्वामी ।
नहीं भावे सतनाम अनामी ॥

(Translation : I am Chakor and Radhasoami is the moon to me. Sat Nam Anami does not attract me)

(२) बिन राधास्वामी मोहि कछु न सुहावे ।
चार लोक मेरे काम न आवे ॥

(Translation: Nothing pleases me except Radhasoami. The four Loks (regions) are of little avail to me.)

(3) राधास्वामी नाम, जो गावे सोई तरे।
कल कलेश सब नाश, सुख पावे सब दुख हरे ॥

Translation : RADHASOAMI Nam whoever recites,
gets across the ocean of life,
troubles vanish, bliss abides,
and gone's complete all strife.

(4) राधास्वामी गाय कर, जनम सुफल कर ले।
यही नाम निज नाम है, मन अपने धर ले ॥

Translation : By reciting RADHASOAMI Nam
let thy life most fruitful be,
this is the true and real Nam
keep IT innermost within thee.

(5) राधास्वामी जप निज नामा।
सत्तलोक पावे तब धामा ॥

(Translation : Repeat the True Name, "RADHASOAMI ; you will then attain Sat Lok).

(6) सेवक सेव न दास न स्वामी।
नहीं सतनाम न नाम अनामी ॥
कहां लग कहूँ नहीं था कोई।
चार लोक रचना नहिं होई ॥

(Translation : There was no worshipper and nothing to be worshipped, no servant, no master. Neither Sat Name existed, nor was there any trace of Sat Nam Anami'. How far should I emphasize that there was none. The creation of the four Loks (Pind, And, Brahmend and Dayal Desh) had not been evolved).

(7) आपहि आप न दूसर कोई।
उठी मौज परघट सत सोई।
तीन देश मौज ने रचे।
अगम अलख सतनाम होय हँसे ॥

(Trans : Only He Himself, and none else, was there. There issued forth a great current of सत Sat (Spirituality), Love and Grace, which is called His मौज Mauj. This was the first manifestation of Truth or Sat or True Supreme Being. This Mauj brought into being three regions, viz., Agam, Alakh and Satnam, of eternal bliss).

These quotations form part of the scriptures acknowledged by all the followers of the Radhasoami Faith and appear also in the Gurumukhi edition published by the Beas Satsang (Dera Group).

The lines upon which great stress is laid by the *Panch-namis*, viz., all those who believe in the sanctity of the five 'Names' and at least at a time discarded the Supreme Name 'Radhasoami' as an artificial interpolation by interested persons, (Beas is one of these such groups), are :—

पाँच नाम का सुमिरन करो
श्याम सेत में सूरत धरो

(Trans. : Perform Sumiran of five names, fixing your Surat at Shyam Sait.) But it passes one's comprehension why the lines given below

सुनत सुरत फिर आगे चढ़ी।
अलख लोक में जाकर धरी॥
कोटिन अरब सूर उजियारा।
अलख पुरुष छबि अद्भुत धारा॥
तहाँ से अगम लोक को चली।
अगम पुरुष से जाकर मिली॥
खरबन सूर चंद्र परकाशा।
धुन का वहाँ की अगम बिलासा॥
धन का वर्णन कैसे गाऊं।
जग में कोई दृष्टांत न पाऊं॥
ताके आगे रहत अनामी।
निज घर संतन बरना स्वामी॥

[Translation : Hearing the sound, Surat ascends further and reaches Alakh Lok. Resplendent with suns, millions in number, Alakh Purush has a form most majestic and wondrous. From there, the spirit marches further and meets Agam Purush. The resplendence of that region far exceeds even that of myriads and myriads of suns and moons. The bliss of Shabd is ineffable. How can I describe the melody of that Sound, for nowhere is

any resemblance to be found ? Beyond that dwells ANAMI, the Nameless Lord. That is the abode of Sants.]

which point unmistakably to the path onwards to *Radhasoami Anami,* are ignored. Again these lines :—

दर्शन कर अति कर मगनानी ।
सत्तपुरुष तब बोले बानी ।।
अलख लोक का भेद सुनाया ।
बल अपना दे सुरत पठाया ।।
अलख पुरुष का रूप अनूपा ।
अगम पुरुष निरखा कुल भूपा ।।
देखा अचरज कहा न जाई ।
क्या क्या सोभा बरनूँ भाई ।।
तीन पुरुष और तीनों लोक ।
देखे सूरत पाया जोग ।।
प्रेम बिलास जहां अति भारी ।
राधास्वामी कहत पुकारी ।।

[Translation : Surat feels immense pleasure on getting Darshan of Sat Purush who now speaks, and gives out the secrets of Alakh Lok, and helps the Surat advance further. The beauty of the form of Alakh Purush is incomparable. Surat sees that Agam Purush is the sovereign of all. Surat cannot describe the wonders it has seen. What more should I say, my brother ? Surat has seen the three regions (Sat Lok, Alakh Lok and Agam Lok) and their Lords, and made contact with them, The final region where supreme Prem (Love) and Anand (Bliss) prevail is Radhasoami Dham.]

appearing at the end of the Shabd (hymn) describing the fifth region 'Sat Lok' and fifth Name 'Sat Nam' declare the ultimate goal to be *Radhasoami Anami.* Five descriptive hymns are assigned to the five regions and their respective Shabds but any description in this detail of the regions and the Shabd current above is impossible as they are far too subtle to be described by analogous forms and sounds in our regions. It is worthy of note that in Sar Bachan Radhasoami Poetry there are five Shabds or hymns which sing the praises of the Supreme and the Highest Name 'RADHASOAMI' while there is not one in that sacred book which is assigned solely to the praises of 'Sat Nam'. Not that 'Sat Nam' is not worthy of praise, in fact it is the first haven of rest which the devotee reaches in his pilgrimage to Dayal Desh but because still higher and subtler regions and names exist, the highest one is chosen for devotional praises in which similar praises of *Sat Nam*

Alakh and Agam are included. Points like these can be multiplied to a very large extent but those given above will be enough for present purposes.

Seth Saheb referred to in your letter

For a correct understanding of the position it is necessary that some details should be given of the family members, of Soamiji Maharaj. Soamiji Maharaj had two brothers, one was Rai Brindaban known as Sarkar Saheb who several years after his initiation by Soamiji Maharaj founded the Brindabani sect with 'Satgur Ram' as the supreme name, and the other, the youngest, was Lala Pratap Singh Seth, (Seth being the patronymic of the family) known as Chachaji Saheb. Chachaji Saheb had three sons, Lala Suchet Singh, Lala Sujan Singh and Lala Sudarshan Singh (whom you refer to as Seth Saheb). Chachaji Saheb was the first President of the Central Administrative Council of the Soami Bagh Group, Agra, while his three sons were also members of the Council (amongst several others in whom the third Guru of the parent stock, Maharaj Saheb and the present Head of Soami Bagh group were included), a body created to assist the Sant Sat Guru of the time being in the management of the Satsang properties which had grown to considerable dimensions by this time. Evidently Chachaji Saheb and his three sons owed allegiance to the Council and formed part and parcel of the group represented by us. As a matter of fact, Chachaji Saheb, though treated with regard and respect as a brother of Soamiji Maharaj, very frequently attended the Satsang of Huzur Maharaj (the successor, according to us, of Soamiji Maharaj). All the four belonged to our fold till the time of their death and Seth Saheb acknowledged the present Head of the Soami Bagh group as his Spiritual Guide. To quote Seth Saheb as an authority for heterodoxy is, to say the least, surprising.

From what you say it appears that the expenditure on the construction of the Samadh of the Founder, Soamiji Maharaj, is regarded by you and the followers of Beas Satsang as an anathema (although the Head of the Satsang would be the last person to affirm this) but as a matter of fact Rs. 25,000/- to Rs. 30,000/- have already been spent by the family upon it,

It was in December 1873 that the present Head of our Satsang here, went to Agra with His grandmother., an elder sister of Soamiji Maharaj and resided with Soamiji Maharaj for several months. There he attended Satsang held at various times by Soamiji Maharaj (including often those held in the early hours of the morning which were by far the most important and were confined to the select few) and remained almost in constant attendance upon Him. Residing in the same house, Seth Saheb and the present Head of our Satsang came in close contact and became life long friends.

Soon after Soamiji Maharaj started the open Satsang on the Basant Panchami day in 1861, His fame as an exponent of a unique and transcendental Faith spread far and wide, andpeople of Agra and other places flocked to Him to listen to His discourses. Amongst such visitors were the prominent ecclesiastics of the Christian faith at Agra which has an archbishopric of the Roman Catholic faith and representatives of the priesthood and Sadhu class. Several groups of such visitors held discussions with Soamiji Maharaj and went away greatly satisfied with His expositions. Amongst those who held discussions with Soamiji Maharaj those who belonged to the *Sufi* class and the votaries of *Gyan Mat* (Vedant Philosophy) were the most prominent. Discussions are of course against the grain of Radhasoami Faith but Soamiji Maharaj tolerated them as they helped in disseminating the highest principles of Radhasoami Faith and dispelling the illusory and fantastic ideas formed by the public in general in regard to the Radhasoami Faith. These discussions besides answering the above purpose served to elucidate points of great importance to His own followers. From amongst those people who visited Him, a large number accepted the Radhasoami Faith and joined its fold. It was at this stage of the Satsang that the regiment in which Baba Jaimal Singh was employed happened to be stationed at Agra and Baba Jaimal Singh began occasionally to visit the Satsang of Soamiji Maharaj and attracted by the elucidations of the Granth Saheb (scriptures of Guru Nanak's faith) by Soamiji Maharaj which were held in the evening every day, joined the Radhasoami Faith. It was after his retirement from service that he founded the nucleus of his Satsang on the banks of the Beas river which eventually grew into the Dera Satsang. The subsequent events are also known to us but it is not necessary to refer to them here.

There is always a relation between the technique and the ultimate goal. Some of the preliminary phases of the technique may be common to various religions but the characteristic feature of the technique dependent upon the Supreme Name and the Supreme Goal must be present almost from the very beginning. In the Radhasoami Faith any repetition of the Name (even though the highest) which does not carry the *Chit* (attention) to a region beyond third Til would be abortive.

You could have well spared us the expression 'Where was your Guru'. The answer is 'everywhere and nowhere', everywhere for kindred spirits and nowhere for those who have no spiritual affinity for Him

The Dera group had for some time taken a different position but it has ultimately accepted the position that RADHASOAMI is the true (Nij) name of the Supreme Being. This is evident from the pact arrived at between Sardar Sawan Singh Saheb and the then leader of the Dayal Bagh sect, published in Prem Pracharak of December 26, 1932.

To an earnest seeker of Truth, a solution of some of the questions exemplified below on a rational basis would afford a collateral test of the accuracy of the path he has chosen for himself to achieve the object in view. The list cannot in the nature of things be exhaustive, nor can it be made out straightway, as a good deal of personal element will be present owing to the different view points of the persons concerned. Such questions ought of course not to arise in a distrustful mood, but as a result of an honest effort to assimilate the secrets unfolded to the disciple. Satisfactory answers to such questions will greatly strengthen his belief and prove an incentive in the successful performance of the devotional practices. People generally think that they have no doubts left in their minds but as time proceeds, fresh crops of doubts arise, which the devotee cannot easily solve or dispel.

Is there one Eternal without beginning and without end or more than one ? If more than one, who are they? And in what form or concept have they existed for all time and will exist for all time ? Is there any difference between them and if there is no difference, what made them to have an independent existence ? In what relation do they stand to each other ? Have they or any one of them undergone any change and if so what and why ? Whether Kal and Maya were present in Anami Purush or co-eternal with Him ? If not, what brought about their existence ? Have 'Time and Space' always existed or were they created at some stage of the creation ? If the latter, what brought about their creation ? Is the Anami Purush statical or dynamical ? If statical, how did dynamic action come into existence ? Was Anami Purush conscious or unconscious before creation ? Was there any being conscious coexistently with Him ? Was visibility or any functions of the senses in their subtlest forms present before creation ? Which of the two forces or forms of energy, viz., centripetal and centrifugal existed from the beginning ? Are they interdependent one upon the other or can they exist independently of each other ? Has everything which has a beginning, an end too ? If not, in what relation does it stand to 'time' in regard to its beginning ? Whether spirit can exist independently of matter and matter independently of spirit ? Which of the two is absolute or are both absolute ? What is the relation between absolute, relative and negative ? Is there anything as absolute negative ? If so, what is your conception of it ? Is there any differentia or characteristic difference between the process of creation in Dayal Desh created by Mauj and the process of creation in the Brahmand and the Pind created by Kal and Maya ?

You speak of 'Love' and "Beloved" at more than one place in your communications. "Love" as we understand it, is not so cheap a commodity

as you seem to imagine. Love (or attraction) is of course everywhere in the mineral (material), the vegetable, the animal kingdom and in the economy of human existence. But 'Love' as taught by Radhasoami Dayal is an entirely different thing.

भक्ति सुनाई सबसे न्यारी
वेद कतेब न ताहि विचारी

[Translation ; He teaches a unique mode of Bhakti (devotion), of which the Vedas and other scriptures had no idea.]

Such 'Love', in fact, is exotic in these regions. The emergence of the spirit from the stress of mind and matter marks a new era in the life of a human being and is the commencement of the epoch in which the 'Love', as taught by Radhasoami Dayal, begins to bud forth and eventually blossoms and bears fruit.

I do recognise the truth of the saying, "Love has no law", more than any body else. But 'love' there is of varying degree, variety, intensity, significance and value. When a person uses this term, he uses it in the sense in which he is capable of exercising it. And 'Love' there is absolute, and then real and true (within this range there is only difference of intensity) and then again mixed with mind and matter, manifesting itself on the assumption of the garb or cover of mind, and its projection into the denser covers of matter, Maya. In the course of its radiation through mind and matter, it deflects and undergoes a curvature in its downward course. In its lowest form it is what may be termed 'physical attraction' which alone keeps a unit of existence in its cosmic form in contradistinction from its previously chaotic and unmanifested condition. This physical attraction keeps the heavenly bodies at their assigned places and makes them capable of exercising the functions which they are intended to perform. The resultant of the action of true and real love and that manifested by its admixture with mind and matter is the dual action of revolution and rotation.

The few questions that I suggested to you in my previous letter to stimulate investigation and open up new avenues for the realization of the unapproachable sublimity of the teachings of Radhasoami Faith, have been designated by you as 'philosophic'. The association of the word 'philosophic' with these questions is rather unfortunate as all philosophies, Eastern and Western, (the so-called *Darshans*, *Shastras* and the numberless systems of the West), have utterly failed to solve them and have on the other hand raised

a storm of haze blinding the vision of those engaged in the speculation and others deriving their inspiration from them and leading them astray from the reality and truth, and further rendering them incapable of appreciating the higher revelations when conveyed to them. You will realise from this what value we set upon books and secular education. In the manner you speak of "internal revelation", "not from books", I fear, you have been rather unjust to us in denying us the possession of an elementary knowledge of the teachings of Radhasoami Faith. We have constantly in our remembrance the invaluable guidance given to us in the following hymn of Soamiji Maharaj.

Hymn No. 3, Bachan No. 24, Sar Bachan Radhasoami (Poetry), the opening two couplets of which are given below with their translation.

हे विद्या तू बड़ी अविद्या ।
संतन की तैं क़दर न जानी ॥ १ ॥

संत प्रेम के सिंध भरे हैं ।
तैं उलटी बुधि कीचड़ सानी ॥ २ ॥

[O, Vidya (Intellectual knowledge) ! Thou art ignorance itself ! Thou hast failed to appreciate the grandeur of the Sants. Sants are overflowing oceans of 'Love'. Thou with thy perverse intellect, art soiled with mud.]

The whole of the hymn is full of inestimable gems of *'Anubhava'* and would well repay the time and energy of a devotee spent upon reading and ruminating upon them. There are other hymns too in the same book in which *Vidya* and *Buddhi* have been unmistakably brought out as formidable hindrances to spiritual advancement. It is a pity you cannot go to the originals to realise their beauty and precious teachings.

You are apparently unaware of the existence of a number of divisions and subdivisions of the Radhasoami Faith which exist at present. In order to give you full information on this point, I am enclosing herewith a genealogical tree showing the past and present leaders from the appearance of the August Founder of our Faith down to the present day. When I speak of ourselves as representing the parent stock, I mean to say that all the other divisions and subdivisions of the Faith are offshoots from the line of Gurus which we represent. All the originators of the other groups broke off as dissidents or dissenters from the parent line and founded a new line of gurus of their own. The departure of each guru in the parent line was invariably followed by the founding of one or more independent lines of gurus. Most of us have been more or less on friendly terms with each other

with the exception of the Dayal Bagh line of gurus between whom and ourselves arose a litigation which lasted for over 12 years and eventually went up for final decision to the Privy Council in England, the highest law tribunal to which we are subject. We hate litigation and the mere idea of engaging in a conflict of this nature is abhorrent to us. But we had perforce to take the defensive to save ourselves from extinction. I enclose herewith a batch of printed papers giving copies of the judgments passed from time to time and you will see that the matter was started by the Dayal Bagh colony and we had to defend ourselves against their aggression. Thank Radhasoami Dayal the case was lastly decided in our favour by the highest tribunal and we are here able now to resume our existence in the garden originally laid out by Soamiji Maharaj, the August Founder of the Faith, in 1876, and named 'Soami Bagh' by Him.

You will find that the Beas group was one of the groups founded after the departure of Soamiji Maharaj and remained practically a separate group from the parent line represented by Huzur Maharaj, the nominee of Soamiji Maharaj, but fortunately the Beas group remained more or less attached to Chachaji Saheb, the youngest brother of Soamiji Maharaj and thereafter to the family represented by "Seth Saheb" and the Samadh at Soami Bagh although Chachaji Saheb and his family members always remained part and parcel of the Satsang headed by Huzur Maharaj and later on Chachaji Saheb and his three sons became members of the Council on its creation. These are facts which I relate here and I do not wish to comment upon the myths wound by interested persons round the origin of some of the groups founded from time to time. Our relations with the Beas group have always been friendly although we have differed in particular essential, viz., the position and importance that we attach to the holy Name RADHASOAMI in recognising It as the Supreme Name in the series of spiritual names commencing with Sat Nam. Latterly, however, there has arisen another ground for widening the thin and flimsy gulf between ourselves, viz., the mutilation of some of the important lines of the holy scriptures, in poetry, of Soamiji Maharaj and the mutilation of the most important Bachan No. 250 occurring in Sar Bachan Prose which totally alters the essentials of the teachings of the Radhasoami Faith. A translation of this Bachan in its original form as uttered by Soamiji Maharaj and which appears as Bachan No. 250 in the original edition of Sar Bachan Prose published under the authority of Chachaji Saheb and Huzur Maharaj is sent herewith as desired by you as also a copy of the correspondence relating to this subject. The letter addressed by us to the Secretary, Beas Satsang, remains unanswered to this day.

A reminder sent to Sardar Sawan Singh Saheb through an Amritsar Satsangi of ours, when Sardar Saheb happened to be at Amritsar elicited a reply from him, "It is a matter of half a century back and I will speak to Babuji Maharaj when I meet him". His secretary remarked, "What does all this matter ? We have a following of a lakh with us".

Deplorable of course it is that so many sects and sub-sects should have come into existence in the Radhasoami Faith but human nature as it is, this result is inevitable and the eventual fulfilment of the mission started by Radhasoami Dayal will not be affected in any way by this state of affairs. I do not like to expatiate upon the causes which have led to these divisions and sub-divisions but would rather lay stress upon the good which is hidden in this apparent evil which alone permits the votaries of the true and undefiled faith as expounded by Radhasoami Dayal to pursue it in a more or less isolated sphere undisturbed by constant friction between aspirants of varied order.

Copy of Letter sent to Secretary Beas Satsang

I am directed to forward herewith a copy of the correspondence that passed between us and a gentleman of Ambala for the information of the venerable Sardar Saheb and any action that he may deem necessary to take upon it in the light of the remarks and observations which follow. It was at that time considered undesirable that a fruitless controversy should be stirred up, but the misunderstanding that originated at that time is spreading far and seriously affecting the pristine purity of the Faith as preserved by us and creating a grossly incorrect impression of the sublime teachings of the Radhasoami Faith. I feel it my duty to acquaint you with the actual facts as they stood, leaving it of course to you to accept them as authentic or not. I may add that there is no living person who knows a fraction of the actualities and the happenings from the time of Soamiji Maharaj up to the present as the Head of our Satsang does and it would be unfortunate if His knowledge is buried in oblivion and the future generations fail to know what the actual facts were. I have, of course, no quarrel with any body who holds beliefs and doctrines widely varying from ours but what we seriously object to is that a translation of the unalterable scriptures of our Faith (Sar Bachan Prose) purporting to be a faithful translation of the Hindi original text should appear not only in a mutilated form but with such a dressing given to the most important pronouncement

in the book as cuts at the fundamental of the teachings of the Radhasoami Faith and creates a false impression in regard to the most important technique in the spiritual practices of the Faith, viz., the contemplation of Guru Swarup.

Bachan 250 in the second part of Sar Bachan Prose as also 251 and 252 are solely and entirely based upon a letter written by Huzur Maharaj under the command and instructions of Soamiji Maharaj Himself in reply to a letter received from Lala Sudarshan Singh Seth Saheb in the from of a diary which he used to submit from time to time to Soamiji Maharaj for instructions. The three Bachans referred to above are a faithful reproduction of the letter to Lala Sudarshan Singh Seth Saheb referred to above with excisions of such few words which gave it the form of epistolary correspondence without altering one word which forms the subject matter of the three Bachans. This letter remained in the possession of Lala Sudarshan Singh Seth Saheb till a short time before his death when he made it over to Babuji Maharaj and which is preserved in original in the archives of the Satsang. No tampering with the original was possible in the circumstances detailed above. I can send a verbatim copy of letter if you so desire and it is open to inspection by any body who wants to see it. When Huzur Maharaj obtained the commands of Soamiji Maharaj for writing out a reply, Soamiji Maharaj, Huzur Maharaj, Chachaji Saheb and Seth Sujan Singh were all present as evidenced by the contents of the letter itself. Their names are referred to in it as being present. The letter was written out and read out in the presence of all. In this connection I may mention that the first edition of Sar Bachan Radhasoami (Poetry) and (Prose) and the subsequent editions upto the time of creation of the Trust were published under the joint authority of Huzur Maharaj and Lala Pratap Singh Seth (vide title page of the first edition of February 1884 and subsequent editions up to 1904) and Lala Sujan Singh Seth was placed in charge of seeing the books through the press. Both these gentlemen were present, as I have said above, at the time, when the letter which was reproduced as the three Bachans referred to above, was being written. The two gentlemen had the supervision and the direction of the printing and publication of the book in their hands and it is inconceivable that they should not have intervened if they came across any tampering with the text. It is really painful that the charge of interpolation and tampering with the text should have been brought against those who in a spirit of pure Sewa undertook the publication of the sacred scriptures of Soamiji Maharaj and scrupulously stuck to the actual utterances of Soamiji Maharaj, looking upon a change in them as an act of sacrilege in addition to the injury caused to the best interests of our sublime Faith by altering the text. I may again repeat here that the full original text is in our possession. In regard to the question of contradiction.

I may point out that there is absolutely no contradiction, if the Bachan is properly read and construed. The portion in the middle of the Bachan which is regarded as a contradiction was an answer to a supplementary question raised by Lala Sujan Singh when a reply to Lala Sudarshan Singh's letter was being drafted and relates only to the question put by Lala Sujan Singh which inquired as to what the result would be if a devotee worshipped a Sant of the past whom he had never seen and had not been benefited by His teachings by actual contact. Thereafter the thread relating to the answer of Lala Sudarshan Singh's letter has been resumed. If the matter is viewed in this light which is based on actual facts no question of contradiction arises. In the original letter, we have in our possession, the following words occur in regard to the answer of Lala Sujan Singh's query.

पिछलों की मानता इस सबब से बे-फायदा है कि उनसे प्रीति नहीं हो सकती। न तो उनको देखा है, न उनका सतसंग किया और जो सतगुरु मिले नहीं तो उनके चरनों में प्रीति मुमकिन नहीं।

(Translation : As regards faith in the past Sat Gurus it is infructuous for the reason that no love can be generated for them, since one has not seen them nor attended their Satsang. If one has not met the Sat Guru, there can be no devotion in His feet.)

Coming next to the question of internal evidence and the condemnation of the principles enunciated in Bachan No. 250 as being not in harmony with the teachings of Soamiji Maharaj all that I can say is that this condemnation can only be ascribed to a want of real knowledge of the principles of the Faith and the secrets governing the advent of Sants combined with actual experiences in the course of the practices prescribed by the Radhasoami Faith. these I will briefly explain below.

The work of salvation is started by *'Swatah Sant or Sadh"* who does not descend below the third Til (the portals of death) as here at this point commences the awakening of spirit, i.e., the spirit occupies a spot at this point where for the first time in the course of its journey upwards, the first experience of the liberation of spirit from coarse mind and matter and the exhilaration felt in consequence of the spirit dominating mind and matter is experienced. Below this point the hurl and downward forces of mind and matter are so great that spirit of even a Sant or Sadh would lose itself under the weight and force of these downward currents and would be helpless to extricate itself unaided or render help to others. This is because the laws of process of evolution of creation and their economy do not admit of a greater amount of spiritual energy being brought to a lower region than is

suitable to its existence and preservation. If a large amount of spiritual energy were to be thrust forcibly into it, a disintegration of that region would take place and it would be absorbed into higher regions at the time of *Pralaya*. Of all regions the minima and maxima of spiritual energy are fixed and within that range ebb and flow take place. Any divergence from these minima and maxima would upset the process of creation, evolution and its involution and nullify the beneficent object of the creation itself. All Sants make their advent upon this earth under the Mauj of Sat Purush Radhasoami. Some come with plenary powers of salvation and some as auxiliaries to maintain the spiritual equilibrium of the regions concerned, and gradually spiritualise the region and its occupants to make them fit for receiving the benefit of advent of Sants. A distant reference to this principle is made by Soamiji Maharaj in Bachan 66 in Sar Bachan Prose Part II.

जो संत गृहस्थ में रहते है उनसे बहुत से जीव पार होते हैं और जो भेष में होते हैं उनसे उद्धार किसी का नहीं होता पर जो संत दयाल हैं वह गृहस्थ ही में रहते हैं।

(Translation : Innumerable souls are saved by those Sants who live the life of a house-holder, while none is redeemed by those who live as recluses. But redeemer Sants always live as house-holders.)

An absolutely indispensable adjunct to the work of salvation is the appearance of a perfect *Gurumukh* who conjointly with the *Swatah Sant* performs the work of salvation.

याते मो मत निश्चय येही, गुरु बिन दूसर और न सेई ॥
जाके हिरदे गुरु परतीती, काल कर्म वा से नहीं जीती ॥
सबके सिर पर उसका डंका, काहू की उसके नहीं संका ॥
बड़े २ उधरें उस संगा, गुरुमुख है इन सबसे चंगा ॥
गुरुमुख की गति सबसे भारी, गुरुमुख कोटिन जीव उबारी ॥
कहाँ लग महिमा गुरुमुख गाऊं, कोई न जाने किस समझाऊँ ॥

(Translation : Hence, I am convinced that one should serve none but Guru. Kal and Karam cannot overcome one who has firm faith in Guru. Such a devotee has sway over all and he has none to fear. Many a high and great soul is redeemed through association with Gurumukh (the chief disciple of the Guru). Gurumukh is superior to all of them.

Exalted most is Gurumukh's role,
Gurumukh redeems many many a soul.

How far may I sing the greatness of Gurumukh ? None understands it. To whom should I explain ?)

The spirit of *Gurumukh* descends in the ordinary course to the heart centre and also to the lowest centre under the protective hand of the *Swatah Sant.* The heart centre is mentioned here because from this point control of mind and matter is especially exercised and the lower tendencies below this centre which relate to the brute creation are kept under curb.

मन के घाट हुए अबकामी, अस मेरे प्यारे राधास्वामी ।।
इन्द्री घाट बिकार घटामी, सो मेरे प्यारे राधास्वामी ।।
अलत्तपच्छ सम फिर उलटामी, अस मेरे प्यारे राधास्वामी ।।

(Translation : Descending to the heart centre, He became subject to desires. Such is my beloved Radhasoami. He, however, reduces the evil propensities associated with the plane of senses. Such is my beloved Radhasoami. But Alalpaksh* like He flies up. Such is my beloved Radhasoami.)

The spiritualising force of the highest region is thus made available in some measure to the whole creation and those in whom the spiritual force is emerging and awakening (i.e., *Hans Jivas*) readily accept the *Saran* of a Sant, as they alone can conform in more or less degree to the directions of Sant Sat Guru while others need in a greater measure the corrective influence of the Kala कला forces.

मानेंगे कोई हंस बचन से

(Translation . Radhasoami now sums up that only the Hansa Jivas will accept Him by His discourses. Sants never use any means except 'Bachan' for the correction and purification of their disciples.)

The *Gurumukh* working out his salvation under the aegis, guidance and spiritual help of the *Swatah Sant* and thus extricating completely his spirit from the lower centres and translating it to the higher regions exercises an attractive influence in the deepest recesses of kindred spirits and this tug upon the spirituality in such spirits develops their *'Bhag'* and makes them amenable to the iufluence of Sant. Without this it would be impossible for

---

*Alalpaksh is a fabulous bird. It lays eggs in the sky, but the young birdling that comes out in the course of descent, flies up without touching the ground.

ordinary Jivas to obtain their salvation. The advent of Guru and Gurumukh is also, by the by, accompanied by the descent of spirits from higher regions into human form, such spirits as are fit for completing their work of salvation. They alone by their behaviour towards the Guru and Gurumukh can show and set example of *Bhakti Rit.* The Gurumukh after piercing through the portals of death and rising again to the highest regions becomes capable of continuing the work of salvation. It will be seen from the above that the spiritual assistance of the order needed in the Radhasoami Faith can only be rendered when the spirit of the Redeemer sits at the third Til and traverses at will the regions upto the highest and never descends in *'Mukh Ang'* to the regions below the third Til. The spirituality of a Sadh and Sant is so great and powerful that their *Bhas* (diffused spirituality) alone is sufficient to carry on the functions of a human being. In the fullness of time when the *Swatah Sant* leaves the body, the *Gurumukh* resumes the work of salvation, Himself having gained access into the highest region and becoming capable of exercising His functions as a human being without descending below the third Til.

In accordance with the law of mutual adjustment, the *Guru* and the *Chela* must occupy in full consciousness the same centre or plane of existence. Without this it is not possible that the *Chela* could derive according to his existing *Bhag* the full benefit of the spiritualising influence and help of the Guru. The Guru can render no assistance and help of this order, viz., the drawing up of the *Chela* gradually to the third Til (by far the most difficult portion of the journey of the Jiva to the *Sat Dham*) if the Guru did not descend in human form to the *Ghat* (level) of the *Chela* and the *Chela* remained confined to the centres below the third Til. If this were possible no necessity would have arisen for *Avatars* and prophets to assume human form. To make the *Chela* independent of the help which a Guru while residing in human form can render, the *Chela* must gain access to the third Til in such measure as to be able to possess full consciousness at that centre with the capacity to exercise functions of all *Gyan Indries* (sensory organs).

दृष्टि खुली और झांकी पाई, सूरत मूरत अगम दिखाई

(Translation : My inner eye has opened and caught a glimpse of the unapproachable and unimaginable spiritual form.)

Then alone can Guru and *Chela* meet together and hold converse with each other, as they previously did in the human form. The form of both Guru and *Chela* in the region beyond the third Til will of course be made of the *Akash* of that region. If this degree of spiritual advancement is not

attained, the *Chela* will need as before the assistance of a living Guru in the human form. Mere occasional flashes and glimpses of *Guru Swarup* in the higher regions in the course of practices or at other times or in dreams will be of no avail in the matter of raising the spirit of the *Chela* to the regions beyond the third Til. If the *Chela* does not get or accept the benefit of the assistance of a living Guru in the human form, he can continue to perform the practices taught to him, contemplating the form of his departed Guru, but the result will only be a further purification to some extent of the mind and the lightening of the burden of *Karams,* without any further ascent to the higher regions. In that case at the time of *Chela's* death when he enters into the regions beyond the third Til after great travail and the terrors of *Kal* and *Karam* the Guru will appear to him in His human form, of course, made of the *Akash* of that region, and save the *Chela* from onslaughts of *Kal* and *Jam* and allocate him to a region suitable to his spirituality, for further acclimatization until such time as he is made fit to practise with greater advantage the modes of devotion in human form under guidance of a Sadh or Sant.

Access into the regions beyond the third Til with full consciousness is अंतर का खुलना (inner realization) and unless this is attained the need of a living Guru in the human form will continue to stand. It is only those who are keenly alive to their spiritual interests and are not blinded by prejudice and false vanity, who will readily betake themselves to the protection and guidance of the *Gurumukh* to whose hands the work of redemption is assigned.

The expression आप आन समाते हैं (He re-incarnates) has been made the target of fantastic criticism in consequence of complete ignorance of the laws which govern the advent of Guru and Gurumukh. It is the height of absurdity to bring in the question of dispossession of the Gurumukh's spirit. There is no more dispossession than in the case of the appearance of a 'Swatah Sant'. Under the command of Sat Purush Radhasoami the spirit of a Sant descends into the human form (of course stationing itself at the third Til without which the assumption of the human form would be impossible) without losing itself at any intermediate region, and retaining full consciousness and the power of access to all the regions above. Into this spirit a continuous flow of spirituality from the highest regions unceasingly continues without causing any dispossession of the Sant's spirit. This flow is an expression of the eternal communion with the Supreme Spirit and the existence and the possession of the attributes of the Supreme Being. In the same manner when the spirit of the Gurumukh goes beyond the third Til and attains

communion and becomes one with Sat Purush Radhasoami and the condition described in Bachan 235 of Sar Bachan Prose Part II, viz., फिर नाम का सूक्ष्म रूप और सतगुरु का सूक्ष्म रूप और अपना सूक्ष्म रूप सब एक रूप नज़र आवेंगे (Translation : After that the subtle form of Name, of Sat Guru and the Jiva will all appear to be one and the same).

is attained practically the same state is produced as at the time of advent of a *Swatah Sant*, and the spirituality of the former Guru now one with that of the Supreme Being continues to flow into the spirit of *Gurumukh* as a result of the same impulse which sent the first Guru. It is needless to add that at no time the Sat Purush vacates His regions and it is only His *Nij Dhar* which works in the Guru and Gurumukh. As regards the plurality of Gurumukhs Bachan No. 14 Sar Bachan Prose Part II may be referred to इसी तरह गुरुमुख तो एक ही होता है। उसके प्रताप से बहुत से जीव पार हो जाते है। (Translation : There is only one Gurumukh but on his account innumerable souls are saved.)

which shows beyond doubt that there can be only one Gurumukh at a time and there are of course in association with him a number of other spirits of varying degrees of spirituality.

It may be added that notwithstanding the immeasurably high status of a Gurumukh when he once descends into the regions of dense darkness and forgetfulness the process of his transformation and eventual ascension into the highest regions becomes extremely delicate, subtle and difficult which none other than a perfect Gurumukh can undergo.

दूध छटी का निकसे भाई। तब कुछ राह अगम की पाई॥

[Translation : Even the milk sucked during the first six days after birth will come out, i. e., one's entire worldly nature and character as developed from the very beginning of one's life will have to be transformed before any progress is made on the path leading to the Unapproachable and Unimaginable One.]

It is essential that the Gurumukh should practically remain in constant touch with his Guru and benefit by very frequent associations with the Guru and derive benefit of His Bachans, बैन and सैन and very frequent and prolonged exercises of दृष्टि का साधन by means of Artis and as frequent and prolonged gazing on the eyes of the Guru as may be possible. It is only by these processes that the spirit of the Gurumukh or a Chela of a high spiritual status can be raised and elevated to the spiritual levels from which the Gur

pronounces His Bachans. The Guru attracts the spirit of a Gurumukh or Chela intertwined in His spirit overflowing with Grace and Mercy to the level of His activities, which brings about the curbing of lower impulses and the purification of the mind. It is only a Gurumukh as described above who holds the keys of the kingdom of heaven and can perform the work of redemption.

The lot of casual visitors who lack these advantages is described in the Bachan below :—

Bachan No. 126 Sar Bachan Prose Part II.

जिसको सतगुरु के चरनों में ऐसी प्रीति है कि जब तक दूर है तभी तक दूर है और जब सन्मुख आया तब ही मन निश्चल हो गया और ऐसा लग गया कि जैसे मक्खी उड़ती फिरती है और जब शहद मिला तब ऐसी चिमटी की नहीं छोड़ती, उसी को ऐसी प्रीति का फल भी मिलता है और यों तो बहुतेरे आए और चले गए हरचन्द फ़ायदा उनको भी होता है पर कम ।

(Translation : He whose love for the Sat Guru is such that he is away only so long as he is absent, but as soon as he comes before Him his mind becomes restful and attached to Him, just as a bee flits about hither and thither but as soon as it finds honey it clings to it so fast that it would not leave it. Such a one assuredly gets the full benefit of devotion. Otherwise there are many who come and go ; though they also get benefit but not much.)

Coming next to the question of the unwarranted changes made in the Bani (Poetry) of Soamiji Maharaj about which it is said that the changes were made under the sanction and authority of Chachaji Saheb, we shall be glad if we are informed how, when and in what form the authority was given. We shall reserve our remarks upon this for a future communication when we get the information asked for.

It is not in a spirit of controversy that I am writing this letter to you nor in the expectation that I shall be able to convert others to our beliefs, (other beliefs, by the way, once formed, are difficult to alter especially when the basis of the formation of such beliefs is far removed from the basis upon which alone the edifice of true Parmarth can be built), but as the custodians of the Radhasoami Faith in its pristine purity we feel it our duty, an obligation, to pronounce the real teachings and the true principles of Radhasoami Faith as propounded by Soamiji Maharaj devoid of all apocryphal accretions and the changes made in the principles by unwarranted alterations in the text and artificial interpretation put upon them.

साधू ऐसा चाहिये साँचो कहे बनाय ।
कै टूटै कै फिर जुड़े 'बिन कहे भर्म न जाय ॥

(Translation : A Sadhu should be such as would speak the truth and nothing but truth, no matter whether it results in severance of all connection or in union, for without plain speaking doubts and delusions cannot be removed.)

These elucidations if they fall into the hands of unprejudiced and courageous Satsangis who place Parmarthi interests above all and refuse to be slaves of convention, are bound to derive immense benefit from them.

At least the Satsangis of our fold would take warning and protect themselves against any foreign taint and contamination likely to eat into the vitals of the Faith. The pursuit of Parmarth is not the work of holiday associates and prosperity mongers or votaries of Vidya and Buddhi (materialistic knowledge, intellect and reason) or intellectual indolence which all must be sacrificed at the alter of higher intelligence (Anubhava) before the secret of the regions above can be divulged to the real devotee, who stakes his all for the sake of his Beloved (Pritam) Radhasoami Dayal.

While on this subject I shall be glad if you would kindly let me know what led to the signing of an agreement between the Beas and the Dayalbagh Satsangs. The document as published in the Prem Pracharak of 26—12—1932 bears the signatures of the heads of both the Satsangs. It refers to certain differences which existed prior to the signing of this document and which were removed after some discussion and conversation between the heads of the two Satsangs and I shall be glad to know what these differences were and how they were settled. According to our notions of Parmarth 'Truth' is not capable of compromise. We hold ourselves to be uncompromising and exclusive in our beliefs although at the same time we are perfectly tolerant and unobtrusive. We can tolerate any thing but can under no circumstances enter into a compromise or employ give and take methods in the matter of religious beliefs. We do not believe in a religious pact or the establishment of diplomatic relations between different religious bodies. Conflict, of course, should under all circumstances be avoided but this does not mean that any flexibility in the beliefs should be introduced to secure a false unity.

This matter upon which I am directed to address you is of the highest importance in the interests of Satsangis and I shall request you to give it the consideration it deserves and send me a reply with the approval and consent of Sardar Saheb to whom each word of this communication should be read and if necessary explained.

N. B. Soami Bagh letters purporting to have been written by the Secretary, were all dictated by Babuji Maharaj.

अध्याय ७

व्यास वाले फ़िरके के अनुयायी मिस्टर हारवे मीयर्स, कैलीफोर्निया, अमेरिका, के साथ पत्र व्यवहार

अनुवाद

कैलीफोर्निया (अमेरिका) के एक वकील हारवे एच० मीयर्स साहब को व्यास सतसंग द्वारा 'राधास्वामी मत प्रकाश' अंगरेजी पुस्तक मिली जिसको उन्होंने पढ़ा और २० अक्टोबर सन् १९३९ को स्वामी बाग़ के सेक्रेटरी को एक पत्र भेजा जिसका सारांश यह है।

"राधास्वामी मत प्रकाश" आदि आपकी पुस्तकों की मैं बहुत क़दर करता हूँ। इन्हीं को पढ़ने से मुझे सरदार सावन सिंह साहब से राधास्वामी मत की दीक्षा लेने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। किन्तु मुझे मालूम हुआ है कि राधास्वामी मत के सिद्धान्त और उसूल जो मेरे गुरु बतलाते हैं, वह आपकी पुस्तक 'राधास्वामी मत प्रकाश' में वर्णित सिद्धान्तों और उसूलों से किसी क़दर भिन्न हैं।

इस चिट्ठी का जबाब जो २४ जनवरी सन १९४० को मीयर्स साहब के पास भेजा गया, उसका सारांश नीचे दिया जाता है।

मुझे ख़ुशी है कि राधास्वामी मत के सिद्धान्त और उसूल, सत्य रूप में, जैसा कि राधास्वामी मत प्रकाश में वर्णन किये गये हैं, आपको पढ़ने का मौक़ा मिला। इन सिद्धान्तों और उसूलों को स्वयं कुल्ल मालिक ने अवतार धारण करके बतलाये और समझाये हैं। इसलिये यह न किसी दलील या सबूत के मोहताज हैं न इनमें किसी समय किसी भी कारण से ज़रा भी रद्दोबदल हो सकता है और इसी वजह से इस मत के मानने वाले यानी सतसंगियों में उनकी बाबत कोई इख़्तिलाफ़ राय या मतभेद हो तो उसको नज़र अन्दाज़ नहीं किया जा सकता है। यदि किसी का दिल क़बूल करे तो इनको माने और राधास्वामी मत में रहे या न माने और न क़बूल करे तो चाहिये कि अलग रहे। और ऐसा ही होता भी आया है यानी समय समय पर चन्द लोग इस मत में शरीक होने के बाद उसके बाज़ २ सिद्धान्तों से मतभेद ज़ाहिर करने लगे और अपने अलेहदा २ जाथे क़ायम करते गये और जैसा ज़माने का रंग देखा वैसे ही उन्होंने नये उसूल इख़्तियार कर लिये। मगर जब तक यह इख़्तिलाफ़ यानी मतभेद क़ायम

रहेगा, वह लोग उस फ़िरक़े में जिसकी स्थापना स्वामीजी महाराज ने की और जिसका सदर मुक़ाम स्वामी बाग़ आगरे में है, सम्मिलित यानी शरीक नहीं समझे जा सकते, ख्वाह वह 'राधास्वामी' नाम लेते रहें, क्योंकि न तो उनका वह सिद्धान्त पद ही रहा और न 'राधास्वामी' नाम की असली सिफ़त और अज़मत और महिमा उनको मालूम है, बल्कि मूल सिद्धान्तों को भी इन्होंने तोड़ मोड़ कर अपने अनुकूल कर लिया। इस लिये लाज़मी तौर पर उन मूल सिद्धान्तों की तर्जुमानी जैसी ऐसे शख्स करेंगे, वह उस सच्ची और असली तर्जुमानी से जो 'राधास्वामी मत प्रकाश' में है, मुख्तालिफ़ (भिन्न) होगी।

उपर्युक्त पत्र के उत्तर में मीयर्स साहब ने फिर १६ मार्च १६४० ई० को स्वामी बाग़ सेक्रेटरी के नाम निम्न आशय का पत्र भेजा।

मुझे उम्मीद थी कि राधास्वामी मत में जो बहुत से फ़िरक़े और शाखें हैं, उनके आपस के मतभेद का आप ज़िक्र न करेंगे। किन्तु जब आपने किया है तो यह मुनासिब मालूम होता है कि मैं भी अपनी समझ के मुताबिक़ जवाब दूँ।

आपकी धारणा है कि पुस्तकों में जो कुछ लिखा है वह खुद मालिक का प्रकट किया हुआ है इसीलिये उसमें कोई रद्दोबदल नहीं हो सकता। किन्तु मैं इस बात से सहमत नहीं। ईसाई और सिक्ख भी तो पुस्तकों को ही पकड़ कर बैठे हैं और अन्तर के भेद से बे-खबर हैं। इसीलिये मैं केवल उस शख्स को गुरु मानूँगा जो अपने निजी अनुभव और शक्ति से अंतर में सत्य का प्रकाश कर दे, न कि जो पुस्तकों का मोहताज हो। पुस्तकें एक दर्जे तक मददगार हैं।

मुझे मालूम हुआ है कि स्वामीबाग़ आगरा वाला फ़िरक़ा जो जुक्ति भजन के अभ्यास की बतलाता है, वह, स्वामीजी महाराज की बतलाई हुई जुक्ति से भिन्न है। स्वामीजी महाराज ने और उनके बाद अब व्यास वाले फ़िरक़े ने जो नाम बतलाया है, उससे पृथक कोई नाम स्वामीबाग़ वाले लेते हैं।

मुझे यक़ीन है कि स्वामीजी महाराज के सार वचन बार्तिक का जो अंग्रेज़ी अनुवाद व्यास वालों ने छापा है, उसे आप प्रमाणित मानते होंगे।

मुझे विदित हुआ है कि स्वामीजी महाराज ने बाबा जैमलसिंह को दीक्षित किया और वह स्वामीजी महाराज के बाद असली गुरु हुए। उन्होंने सावनसिंह महाराज को दीक्षा दी और अब वे गुरु हैं। बाबा जैमलसिंह और सरदार सावनसिंह दोनों साहबों ने मूल सिद्धान्तों को सत्य रूप में सुरक्षित रखा। इस बात को स्वामीजी महाराज के भतीजे सेठ साहब ने मंजूर किया है। इन सब बातों की बहस में पड़ना नहीं चाहता क्योंकि वकील होने के कारण मैं ब-खूबी जानता हूँ कि इन्सान का दिमाग़ किस तरह काम करता है और किस तरह वह भूल और ग़लती में पड़ जाता है।

कई वर्ष पूर्व मैं एक प्रकार की निराशता और विवशता की अवस्था में प्रार्थना करता रहता था कि मुझे किसी सच्चे गुरु से सत्य वस्तु का पता मिले। मेरी प्रार्थना और मांग के जवाब में गुरु सावनसिंह महाराज ने अपने को मुझ पर प्रकट किया और इसीलिये मैंने उनको गुरु धारन करने का दृढ़ संकल्प किया। उस समय आगरे के गुरु कहाँ थे ? उन्होंने मेरी प्रार्थना क्यों नहीं सुनी और क्यों नहीं उसका जवाब दिया ?

जैसा कि मुझे मालूम हुआ है व्यास सतसंग स्वामीजी महाराज की समाधि की तामीर में कोई हिस्सा नहीं लेता है। स्वाभाविक ही है कि मैं भी उसका अनुसरण करूँ।

इसका जवाब जो मीयर्स साहब को जून सन् १९४० में भेजा गया, उसका सारांश नीचे दिया जाता है।

मेरा मतलब आपके साथ वाद विवाद करने का नहीं है। वाद विवाद सत्य वस्तु की प्राप्ति में बाधक है। वाद विवाद ज़ाहिर करता है कि वादी और प्रतिवादी दोनों किसी न किसी आरज़ी मतलब या स्वार्थ से अपनी २ बात को हठ पूर्वक पकड़े हुए हैं।

उस व्यक्ति से हमें कोई विरोध या झगड़ा नहीं है जिसके विश्वास की बुनियाद सच्चाई पर हो। हमें इस बात से इन्कार नहीं कि आपका जो कुछ मौजूदा एतक़ाद और विश्वास है, वह दिली और हार्दिक है। मगर आम तौर पर हर एक आदमी का घाट जुदा २ है और उसी के अनुसार उसकी सच्चाई और विश्वास का दर्जा है। अंतःकरण के घाट की ब-निस्बत तीसरे तिल पर सच्चाई का अंग ज्यादा है और तीसरे तिल की सच्चाई भी मुतलक़ और खालिस सच्चाई और सत्य नहीं है। सत्तदेश में पहुँचने पर वह सत्य और सच्चाई प्राप्त होती है जो केवल और मुतलक़ सत्य है। इसलिये जब तक ब्रह्मांडी मन और सुरत द्वारा किसी बात की धारणा न की जाय तब तक उसकी पायदारी और सच्चाई पर भरोसा नहीं किया जा सकता क्योंकि मन और माया के जितने घाट हैं, वह सब नाशमान हैं। जब उनका विनाश होगा, उन घाटों के विश्वास और सच्चाई का भी विनाश हो जायगा। कुत्ता अपने मालिक के साथ वफ़ादारी और सच्चाई से बरतता है किन्तु कुत्ते की वफ़ादारी और सच्चाई मनुष्य की वफ़ादारी और सच्चाई के हम पल्ला नहीं है। मनुष्य से भी ऊपर जो हंस हैं, उनकी सच्चाई के मुक़ाबले में इन्सान की सच्चाई कुछ भी नहीं है। इसके अलावा जिस घाट के सत्य की धारणा करनी है या करानी है, वह उस घाट पर या उससे मुआफ़क़त रखने वाले घाट पर पहुँचने पर ही हो सकती है। जिस मनुष्य की स्थिति नीचे घाट पर है, उसके सामने ऊँचे घाट का सत्य रक्खा जाय तो ग्रहण नहीं कर सकेगा। दूसरे

लफ़्ज़ों में यों कह सकते हैं कि जब तक सुरत मन से किसी क़दर न्यारी होकर अधिकार न जागे, ऊँचे दर्जे का सत्य या परमार्थ जिसका सिर्फ़ सुरत अहसास और क़दर कर सकती है, नहीं ग्रहण कर सकता, बल्कि उससे विरोध होगा। इसीलिये संत किसी जीव को उसी वक़्त चरनों में लगाते हैं जब उसके मूल कर्म कट कर शेष कर्म बाक़ी रह जावें और सुरत के जागने का वक़्त आवे।

फिर भी साधू का धर्म है कि जब कहे तब सत्य वस्तु का इज़हार बग़ैर किसी लाग लपेट के करे, ब-क़ौल कबीर साहबः—

साधू ऐसा चाहिये साँची कहे बनाय।
कै टूटै कै फिर जुड़े बिन कहे भर्म न जाय॥

मामूली तौर पर, आपके पत्र में जो दलीलें हैं, उनका अथवा इसी तरह के किसी पत्र का जवाब ख़ामोशी था लेकिन चूँकि आपने कुछ ऐसी बातें लिखी हैं जो असली वाक़आत के ख़िलाफ़ हैं, इसलिए मैंने जवाब देना मुनासिब समझा। इसमें आपका कोई दोष नहीं है। जैसा आपको बतलाया गया, आपने मान लिया। आपको कोई ज़ाती इल्म तो उन वाक़आत का है नहीं और न हो सकता है। आपको बतलाने वालों तक को ज़ाती इल्म नहीं है।

दूसरा कारण जवाब देने का यह भी है कि आपने जो कुछ अपने पहले ख़त में लिखा, उससे ज़ाहिर है कि राधास्वामी मत के उसूलों को मुख़्तलिफ़ जमाअतों ने मुख़्तलिफ़ शक्लों में पेश किया है और उनका ज़्यादातर हिस्सा आपके पास सही सूरत में नहीं पहुँचा। इसलिये आपकी ग़लत फ़हमी दूर करने के लिए चंद ज़रूरी वाक़आत नीचे लिखे जाते हैं।

'राधास्वामी' नाम प्रकट करने से पहले इस बात की तैयारी के लिए कि जीव 'राधास्वामी' नाम सुन सकें और उसकी धारणा कर सकें, राधास्वामी दयाल ने मसलहत वक़्त समझ कर जो इब्तदाई* संदेश दिया था, उसी से वह फ़िरक़ा क़ायम हुआ जिससे आपका संबंध है।

इसके बाद वह वक़्त आया जब स्वामीजी महाराज ने "राधास्वामी" नाम को दृढ़ाया और इस मत को आगे बढ़ाया। हमारा ताल्लुक़ राधास्वामी मत के उस गिरोह या जमाअत से है जिसने यह संदेश ग्रहण किया।

सहसदल कँवल से सत्तलोक तक तो हम भी वही नाम और शब्द मानते हैं जो डेरा (व्यास) वाले मानते हैं लेकिन हमारा निशाना सत्तलोक और सत्तनाम से आगे

* आरम्भ का। आरम्भिक।

धुर पद राधास्वामी धाम है। मगर कुछ अर्से के बाद तो डेरे (व्यास) वाले भी आख़िर कार मानने लगे कि कुल्ल मालिक का सच्चा और निज नाम 'राधास्वामी' ही है। यह बात उस समझौते से साफ़ ज़ाहिर है जो सरदार सावनसिंह साहब और दयालबाग़ फ़िरक़े के गुरु के दरमियान दिसम्बर सन् १९३२ में हुआ।

मेरा गुमान है कि शायद आप स्वामीबाग़ फ़िरक़े को दयालबाग़ से मन्सूब कर रहे हैं जिसकी मिस ई० ब्रूस एक ज़माने में मेम्बर थी। अगर यह गुमान सही है तो बहुत सी बातें जो आपने इस ग़लत फ़हमी से अपने ख़त में स्वामीबाग़ पर थोपी हैं, उन पर कोई ताज्जुब नहीं है। लेकिन दयालबाग़ से स्वामीबाग़ का न कोई ताल्लुक है, न दयालबाग़ ही राधास्वामी मत के सिद्धान्तों को उसी सत्य और मूल रूप में धारण किए हुए है जिस रूप में कि स्वामीजी महाराज ने प्रकट किए थे, अगरचे वह भी अपने को राधास्वामी मत के अनुयाई समझते हैं। जिस तरह स्वामीजी महाराज के गुप्त होने पर बाबा जैमलसिंह ने (जिन्होंने स्वामीजी महाराज से उपदेश तो लिया मगर उनका सतसंग सिर्फ़ मौक़े २ पर जब उनकी पलटन का मुक़ाम आगरे में होता था, करते थे) अपना अलेहदा फ़िरक़ा व्यासमें क़ायम किया जो कि अब डेरा सतसंग के नाम से मशहूर है, इसी तरह तीसरे संत सतगुरु महाराज साहब के गुप्त होने पर सन् १९१० ईसवी में एक नया फ़िरक़ा ग़ाज़ीपुर में क़ायम हो गया जिसका सदर मुक़ाम सन् १९१५ में बदल कर आगरे आ गया और दयालबाग़ के नाम से मशहूर हुआ।

इसके बर-अक्स स्वामीबाग़ की बुनियाद स्वयं स्वामीजी महाराज ने अपने कर कमलों से रक्खी थी और इस नाम से मोसूम किया और इसी बाग़ में जहाँ अब उनकी समाधि बन रही है, उन्होंने अपने जीवन का अंतिम समय व्यतीत किया। इसके अतिरिक्त स्वामीजी महाराज के सगे भाई लाला प्रतापसिंह सेठ उर्फ़ चाचाजी साहब स्वामीबाग़ सतसंग की सेन्ट्रल एडमिनिस्ट्रेटिव कौन्सिल के प्रथम प्रेसीडेन्ट (सभापति) मरते वक़्त तक रहे। इसके बाद उनके छोटे लड़के लाला सुदर्शनसिंह उर्फ़ सेठ साहब जिनका हवाला आपने दिया है, उस कौन्सिल के वाइस प्रेसीडेन्ट (उप सभापति) सन् १९३६ तक, जब वह मरे, रहे। चाचाजी साहब, उनकी कुल औलाद और ख़ानदान के दूसरे लोग यानी स्वामीजी महाराज के ख़ानदान के सब व्यक्ति स्वामीबाग़ ही के सतसंग में शामिल रहते आए और स्वामीबाग़ ही के गुरुओं को मानते रहे हैं।

हमारे मौजूदा आचार्य्य और संत सतगुरु बाबूजी महाराज की दादी साहिबा स्वामीजी महाराज की बड़ी बहन थीं। दिसम्बर सन् १८७३ ईसवी में बाबूजी महाराज दादी साहिबा के साथ स्वामीजी महाराज के यहाँ गए और कई महीने वहाँ रहे। दिन रात में जितनी दफ़ा स्वामीजी महाराज सतसंग करते थे, उन सब में बाबूजी महाराज हाज़िरी देते थे। प्रातःकाल का सतसंग बड़ा महत्त्वपूर्ण था। इसमें केवल ख़ास २ व्यक्ति

ही सम्मिलित होते थे। इसमें भी बाबूजी महाराज हाजिर होते थे। एक ही घर में रहने के कारण सेठ साहब और बाबूजी महाराज की आपस में घनिष्ट मित्रता हो गई जो अख़ीर तक क़ायम रही।

जो कुछ ऊपर कहा गया है उससे आपको डेरा (व्यास) सतसंग, दयालबाग़ और स्वामीबाग़ सतसंग के जुदा २ आग़ाज़ की हक़ीक़त मालूम होनी चाहिये। ऐसी दशा में आपके इस कहने से बड़ा ताज्जुब होता है कि व्यास वालों ने सेठ साहब से इस बात का सरटीफिकेट या प्रमाण पत्र हासिल कर लिया है कि व्यास वाला फ़िरक़ा ही राधास्वामी मत के सिद्धान्तों और उसूलों को सुरक्षित रक्खे हुए है, उसी रूप में जिस रूप में कि स्वामीजी महाराज ने उनका प्रतिपादन किया था। बर-अक्स इसके हक़ीक़त यह है कि जिस राधास्वामी सतसंग की स्थापना स्वामीजी महाराज ने की थी, वह राधास्वामी सतसंग सत्य रूप में केवल स्वामीबाग़ आगरा में है, और कहीं नहीं।

राधास्वामी मत को समझने के लिये और फिर उसको क़बूल करने के लिये केवल विद्या और बुद्धि काफ़ी नहीं है। इनके साथ २ बल्कि इनसे भी ज्यादा ज़रूरी यह है कि जिज्ञासु हित चित से यानी पूरी तवज्जह और प्यार से उसको समझने की कोशिश करे। दोष दृष्टि और पक्षपात छोड़ कर और शौक़ व प्रेम व ग़रज़मन्दी के साथ राधास्वामी का सन्देश जिसको स्वामीजी महाराज के सुनाया, हित चित से कोई तब ही सुन सकता है कि जब कि उसकी सुरत किसी क़दर—चाहे थोड़ी से थोड़ी भी—जागी हो। अगर यह हालत अभी नहीं पैदा हुई है तो उसको हज़ार समझाओ कभी वह सन्देश उसकी समझ में सही मानी में नहीं आवेगा और इसी वजह से हमारे यहां इस मत के (propaganda) यानी प्रचार का दस्तूर नहीं है।

संत मत या सत्य मत ही ने पहले पहल सुरत का भेद दिया। संत मत के पेश्तर किसी मज़हब में सुरत का भेद नही दिया गया। उन सब मज़हबों में सेवक और स्वामी नीचे घाट का मन यानी पिंडी मन और ब्रह्मांडी मन थे। जब मन यानी काल और माया की वह शक्तियाँ जिन्होंने रचना का विस्तार किया था, क्षीण होने लगीं और सुरत के बरामद होने या निकलने या उभरने का समय आया और सुरत शब्द के अधिकारी जीव पैदा हुए तब दया और मेहर का सन्देश लेकर कबीर साहब आये। वह इस पृथ्वी पर प्रथम प्रकट संत अवतार थे।

केवल सुरत ही है जो सत्त शब्द से मिल कर तद्रूप हो सकती है। जब तीनों युगों में काल और कर्म का दंड भोगते २ कलियुग में कोई २ जागी हुई सुरत वाले अधिकारी जीव पैदा हुए तब शब्द का भेद देने वाले संत आये। इससे पेश्तर नहीं आये।

कलियुग में स्वामी दया विचारी ।
परघट करके शब्द पुकारी ॥

कबीर साहब के बाद भी बराबर संत, साध, महात्मा आते रहे जिन्होंने ब्रह्मांडी मन के स्थान या ब्रह्माण्ड की चोटी तक का भेद आम आदमियों को दिया। किन्तु इशारे में दयाल देश का सन्देश भी सुनाया। उन्होंने ज्ञान मार्ग भी चलाया और प्राणायाम, अष्टांग योग, भी कराया। मगर इन सबसे मतलब यह था कि सुरत शब्द योग का अधिकार पैदा हो। यह समय ही ऐसा था। दुनियादारों, साकित जनों, पंडितों और मुल्लाओं का ऐसा ज़ोर और विरोध था कि संत मत आम तौर पर जारी न किया जा सकता था। जगत् प्रसिद्ध ग्रन्थ रामायण के रचयिता तुलसीदासजी ने भी केवल ब्रह्माण्ड तक का भेद खोला, गो कहीं २ इशारे में कह दिया कि नाम और शब्द की महिमा स्वयं राम भी वर्णन नहीं कर सकते। वह दूसरे जन्म में फिर हाथरस वाले तुलसी साहब के रूप में प्रकट हुए। कभी २ संत, साध, महात्माओं ने इस प्रकार अपने मत को छिपा कर कहने के बजाय खुल्लम खुल्ला कहना भी मसलहत समझा और फक्कड़पने से कह ही डाला, अगरचे उनको सूली पर चढ़ना पड़ा, मगर मसलहत से क्योंकि रचना के कठिन से कठिन कर्म वही अपने ऊपर ले कर काट सकते थे।

स्वामीजी महाराज के प्रकट होने तक दुनियादारों और रोज़गारियों का विरोध बहुत कम हो चला था। अंगरेज़ों का राज्य भी स्थापित हो गया था जिसमें सब प्रकार की मज़हबी आजादी थी। नवम्बर सन् १८५८ में महारानी विक्टोरिया ने घोषणा की थी कि धार्मिक मामलों में सरकार किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगी। इससे पेश्तर यह बात नहीं हासिल थी। पहले के संत साध महात्माओं को दुनियादारों के हाथों से बड़ी बड़ी दिक़्क़तें सहनी पड़ी थीं।

बा-वजूद इन सब बातों के संत मत जैसे ऊँचे मत के जारी होने में फिर भी अनेक बाधायें पड़ीं। लोग ज्यादा से ज्यादा सत्तनाम या सत्त शब्द या सार शब्द तक का भेद या नाम सुनने के लिये तैयार थे और सत्तलोक अनामी का उपदेश स्वामीजी महाराज ने पहले पहल दिया। उस समय में जो लोग अपने को संत मतानुयायी कहते थे और जिनमें स्वामीजी महाराज के घर वाले और रिश्तेदार, भी शामिल थे, वह सब गुरु नानक के मत की बाहरी रस्में जैसे ग्रंथ और समाधि आदि की पूजा किया करते थे और इतने ही से संतुष्ट थे। इस वातावरण में एक भी ऐसा शख्स न था जो सत्तनाम से ऊँचे देश का नाम सुनना पसंद करता। यह बेशक ठीक है कि सत्तनाम निर्मल चैतन्य देश का शब्द है जहाँ केवल सत्त ही सत्त है। मन और माया का नामो निशान भी नहीं है। इसीलिये हमारा इष्ट 'सत्तपुरुष राधास्वामी' है। राधास्वामी

दयाल ने फ़रमाया है कि अगम, अलख और सत्त मेरे ही रूप हैं। सार बचन छन्द बन्द में से जो राधास्वामी मत के सब फ़िरक़ों और गिरोहों का सर्व मान्य ग्रन्थ है, इस आशय की कड़ियाँ दी जाती हैं।

पिरथम अगम रूप में धारा।
दूसर अलख पुरुष हुआ न्यारा॥
तीसर सत्त पुरुष मैं भया।
सत्तलोक मैं ही रच लीया॥
इन तीनों मैं मेरा रूप।
यहाँ से उतरीं कला अनूप॥
यहाँ तक निजकर मुझको जानो।
पूरन रूप मुझे पहचानो॥

जिस तरह के आदमी स्वामीजी महाराज को घेरे हुए थे उनको राधास्वामी दयाल का निज सन्देश सुनाना यानी 'राधास्वामी' नाम का उपदेश देना बे-फ़ायदा था। सिर्फ़ यही हो सकता था कि पहले संत मत की बाहरी रस्मियात से वह लोग हटाये जायँ, सत्तलोक और सत्त नाम का निज भेद उनको दिया जाय और उनकी प्राप्ति के लिये सुरत शब्द योग कराया जाय। इस पर भी पूर्ण हित चित वह लोग न ला सके। डावाँडोल से रहे। कुछ अर्से तक इसी तरह चलता रहा।

नवम्बर सन् १८५८ ई० में हुज़ूर महाराज जिनको कि मुद्दत से सच्चे मालिक के भेद और पूरे गुरु की तलाश निहायत विरह और बेकली के साथ थी, स्वामीजी महाराज के सन्मुख आये। स्वामीजी महाराज के सबसे छोटे भाई लाला प्रतापसिंह सेठ जो चाचाजी साहब के नाम से मशहूर थे और जिनका ज़िक्र ऊपर आ चुका है, उस वक्त पोस्ट मास्टर जनरल के कैम्प क्लर्क थे और हुज़ूर महाराज पोस्ट मास्टर जनरल के दफ्तर में हैड असिस्टेन्ट थे। मेरठ के दौरे में हुज़ूर महाराज को चाचाजी साहब से स्वामीजी महाराज का हाल मालूम हुआ और उन्हीं की हम-राह स्वामीजी महाराज के पास गये। पहली ही मुलाकात में पाँच घण्टे तक स्वामीजी महाराज से एकान्त में चर्चा होती रही। कमरे से बाहर निकल कर शुकर गुज़ारी और खुशी में गद्गद् होकर हुज़ूर महाराज ने फ़रमाया कि जिनकी मुझे तलाश थी वह मिल गये।

इसी समय चंद मर्द व औरतें स्वामीजी महाराज के सम्मुख आये और उनके दर्शनों और बचनों पर दिल व जान से फ़िदा होकर उनके शिष्य बन गये। यह हल्क़ा दिन ब दिन बढ़ता गया और इसी हल्क़े के अधिकारी जीवों को स्वामीजी महाराज ने 'राधास्वामी' नाम दिया। और इन अधिकारी और उच्च कोटि की सुरतों ने स्वामीजी

महाराज को इसी नाम से पुकारना शुरू किया मगर अवाम में स्वामीजी महाराज सत्त-लोक और सत्तनाम का ही उपदेश देते रहे।

अब भली प्रकार समझ में आ सकता है कि अत्यन्त कृपाल और दयाल हुज़ूर राधास्वामी ने किस हालत में स्वामीजी महाराज के रूप में यहाँ चरन पधारे। जिन लोगों ने स्वामीजी महाराज को राधास्वामी दयाल का अवतार जाना और माना, उनको छोड़ कर बाक़ी जीवों को जो कुछ परमार्थी लाभ पहुँचाया जा सकता था, वह यही था कि पहले उनको उन नक़लों और रस्मों से छुड़ाया जाय जो वे परमार्थ के नाम पर महज़ लीक पिटाई के तौर पर कर रहे थे और जिनकी वजह से अधोगति को चले जा रहे थे। अगर "राधास्वामी" में भाव नहीं ला सकते तो सत्तनाम या सत्तपुरुष या सत्तलोक का निशाना बाँध कर समरथ पुरुष द्वारा बतलाई हुई रीति से परमार्थ की कार्रवाई करें। इस पर भी दुनिया के लोगों ने और ख़ास कर बिरादरी वालों ने अनेक प्रकार की तोहमतें उन पर लगाईं और तंग किया। स्वामीजी महाराज का सार बचन छंद बंद, राधास्वामी की महिमा से भरा पड़ा है। शुरू से अख़ीर तक यही गान गाया गया है कि राधास्वामी नाम और राधास्वामी धाम सर्वोपरि और सर्वोच्च है। राधा-स्वामी नाम की महिमा समझने के लिए यह ज़रूरी है कि कुल सार बचन छंद बंद का तर्जुमा करके आपके सामने रक्खा जाय। किन्तु यह मुमकिन नहीं है। केवल थोड़ी सी कड़ियाँ नीचे लिखी जाती हैं।

(१) मैं तो चकोर चंद राधास्वामी।
नहीं भावे सतनाम अनामी॥

(२) बिन राधास्वामी मोहि कछु ना सुहावे।
चार लोक मेरे काम न आवे॥

(३) राधास्वामी नाम, जो गावे सोई तरे।
कल कलेश सब नाश, सुख पावे सब दुख हरे॥

(४) राधास्वामी गाय कर जन्म सुफल कर ले।
यही नाम निज नाम है मन अपने घर ले॥

(५) राधास्वामी जप निज नामा।
सत्तलोक पावे तब धामा॥

(६) सेवक सेव न दास न स्वामी।
नहीं सतनाम न नाम अनामी॥

कहां लग कहूँ नहीं था कोई।
चार लोक रचना नहीं होई॥

गुरुमुखी में जो व्यास सतसंग ने सार बचन छंद बंद छापा है उसमें भी यह कड़ियाँ हैं।

अब सार बचन छंद बंद से वह पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं जिन पर पंचनामी और व्यास वाले बहुत ज़ोर देते हैं। इन्ही पंक्तियों के आधार पर वह लोग पाँच नाम का सुमरन और अभ्यास करते हैं और 'राधास्वामी' नाम का सुमरन और श्रवण नहीं करते, बल्कि यहाँ तक कह देते हैं कि 'राधास्वामी' ध्वन्यात्मक नाम नहीं है।

पाँच नाम का समरन करो।
श्याम सेत में सूरत धरो॥

लेकिन यह नहीं समझ में आता कि इन दो पंक्तियों के बाद वाली कड़ियों पर वह लोग क्यों नहीं ध्यान देते जो स्पष्ट बतलाती हैं कि निज नाम और धाम राधास्वामी अनामी है।

सुनत सुरत फिर आगे चढ़ी।
अलख लोक में जा कर धरी॥
कोटिन अरब सूर उजियारा।
अलख पुरुष छबि अद्भुत धारा॥
तहाँ से अगम लोक को चली।
अगम पुरुष से जा कर मिली॥
खरबन सूर चंद्र परकासा।
धुन की वहां का अजब बिलासा॥
धुन का वर्णन कैसे गाऊँ।
जग में कोई दृष्टान्त न पाऊँ॥
ताके आगे रहत अनामी।
निज घर संतन बरना स्वामी॥

नीचे लिखी कड़ियाँ "पंचम क़िला तख़्त सुल्तानी" वाले शब्द के अन्त में आई हैं जिनमें आख़िरी पद व निशाना "राधास्वामी अनामी" बतलाया गया है।

दरशन कर आत कर मगनानी।
सत्त पुरुष तब बोले बानी॥
अलख लोक का भेद सुनाया।
बल अपना दे सुरत पठाया॥

अलख पुरुष का रूप अनूपा।
अगम पुरुष निरखा कुल भूपा॥
देखा अचरज कहा न जाई।
क्या क्या शोभा वरनूं भाई॥
तीन पुरुष और तीनों लोक।
देखे सूरत पाया जोग॥
प्रेम बिलास जहाँ अति भारी।
राधास्वामी कहत पुकारी॥

पाँच स्थानों और उनके पाँच नामों के वर्णन सार बचन छंद बंद में अलग २ शब्दों में किये गये हैं। मगर इनके ऊपर जो नाम और धाम हैं, उनका उसी विस्तार से वर्णन करना ना-मुमकिन है क्योंकि वहाँ की धुनों का नमूना इस देश में नहीं है।

यह बात क़ाबिल ग़ौर करने के है कि सार बचन छंद बंद में शुरू ही में पाँच शब्द और वह भी बहुत लम्बे शब्द हैं जिनमें केवल राधास्वामी ही राधास्वामी की महिमा गाई गई है लेकिन कुल पोथी में एक भी ऐसा शब्द नहीं है जिसमें सिर्फ़ 'सत्तनाम' की महिमा वर्णन की गई हो। इसका यह मतलब कदापि नहीं है कि 'सत्तनाम' इस क़ाबिल नहीं है। वास्तव में दयाल देश का यही पहिला मुक़ाम है और यहाँ से लौट कर जाने वाली सुरतों के विश्राम का यही पहिला स्थान है। बात असल में यह है कि 'सत्तनाम' से ऊपर और भी नाम और स्थान हैं। इसी से शुरू ही से जो नाम सब से ऊपर है यानी 'राधास्वामी' नाम की धारणा कराई गई और जो धाम सब से ऊपर है यानी राधास्वामी धाम का निशाना बँधाया गया। क़रीब क़राब सार बचन के हर शब्द में राधास्वामी की महिमा के साथ सत्त, अलख और अगम की भी महिमा की गई है।

जिस स्थान पर पहुँचने का किसी ने निशाना बाँधा है और जो युक्ति अभ्यास की, वहाँ पहुँचने के लिए करता है, इन दोनों में मुआफ़िक़त और संबन्ध होना चाहिए। भिन्न २ मतों और मज़हबों के अभ्यास की युक्ति के प्रारम्भिक अंग या बातें चाहे एक दूसरे से मिलते हों किन्तु हमारे अभ्यास की विशेषता यह है कि शुरू ही से सबसे ऊँचे धाम या मुक़ाम का निशाना बंधाया जाता है। सुमिरन, चाहे ऊँचे से ऊँचे नाम ही का हो, यदि तीसरे तिल पर या उसके परे चित्त को जमा कर न किया जावे तो वह राधास्वामी मत के उसूल के ब-मूजिब निष्फल है।

सन् १८६१ ई० में बसन्त पंचमी के दिन स्वामीजी महाराज ने आम सतसंग जारी फ़रमाया। शीघ्र स्वामीजी महाराज के नये और निराले मत की ख्याति दूर और नज़दीक हर जगह फैल गई और आगरा तथा अन्य स्थानों से मनुष्य बहुत बड़ी

संख्या में स्वामीजी महाराज के प्रवचन सुनने को आने लगे। इन लोगों में आगरे के ईसाई धर्म के पादरी आदि तथा अन्य मतों के साधू भी थे। इनमें से सामूहिक रूप से बहुत लोग स्वामीजी महाराज से वार्तालाप किया करते थे। और स्वामीजी महाराज के बचनों से सन्तुष्ट हो कर जाते थे। इन वार्तालाप करने वालों में ज़्यादातर सूफ़ी और ज्ञानमार्गी होते थे। बहस-मुबाहिसा या बाद-विवाद करना राधास्वामी मत के सिद्धान्तों और उपदेशों के विरुद्ध है। किन्तु राधास्वामी मत के प्रतिपादन में तथा राधास्वामी मत के लिये जो भ्रमात्मक बातें सर्व साधारण में फैली हुई थीं उनको दूर करने में चूँकि इस तरह का वार्त्तालाप और चर्चा मददगार है इसलिए किसी हद तक बहस मुबाहिसे को भी स्वामीजी महाराज ने रवा रक्खा। दूसरी बात यह भी थी कि इस प्रकार के वाद-विवाद से राधास्वामी मत के अनुयायियों को भी मत का भेद और बारीकियाँ समझने में मदद मिलती थी। वार्तालाप करने वालों में से बहुतों ने राधास्वामी मत क़बूल किया और स्वामीजी महाराज से उपदेश भी लिया।

इसी समय उस पल्टन का आगरे में आना हुआ जिसमें बाबा जैमलसिंह भर्ती थे और बाबा जैमलसिंह कभी २ स्वामीजी महाराज के सतसंग में आने लगे। शाम के सतसंग में स्वामीजी महाराज ग्रन्थ साहब का अर्थ करते थे जिससे आकर्षित हो कर बाबा जैमलसिंह राधास्वामी मत में शामिल हो गये।

पल्टन की नौकरी से अलग होने के बाद बाबा जैमलसिंह ने पंजाब में व्यास गदी के किनारे एक सतसंग खड़ा किया जो आगे चलकर 'डेरा सतसंग' या व्यास सतसंग के नाम से मशहूर हुआ। इसके बाद का भी सब इतिहास हमको मालूम है मगर उसके बयान करके की ज़रूरत नहीं है।

आपके पत्र से ज़ाहिर होता है कि आप और व्यास वाले फ़िरक़े के दीगर व्यक्ति स्वामीजी महाराज की समाधि की तामीर में जो खर्च हो रहा है उसको अच्छी दृष्टि से नहीं देखते, गो हमको यक़ीन है कि व्यास सतसंग के प्रधान कभी ऐसा ख़याल नहीं करते। लेकिन ख़ैर, आपको मालूम होना चाहिए कि स्वामीजी महाराज के घर वाले समाधि की तामीर पर पच्चीस तीस हज़ार रुपया ख़र्च कर चुके हैं।

अगर आप चाहते तो अपने पत्र में यह शब्द न लिखते कि "आगरे के गुरु कहाँ थे ?" उत्तर यह है कि वह सब जगह हैं और कहीं भी नहीं। अधिकारी और सुरतवन्त जीवों के लिये सब जगह हैं और उन जीवों के लिये कहीं भी नहीं हैं जिनकी सुरत नहीं जागी है।

मेरे पहले के ख़त में इस क़िस्म का कोई इशारा भी नहीं था कि वक्त गुरू की ज़रूरत नहीं हैं, बल्कि राधास्वामी मत की सारी कार्रवाई का आधार संत सतगुरु हैं।

बग़ैर उनके तो वह जिन्दा ही नहीं रह सकता। सिर्फ़ मजहबी किताबों के पढ़ने से वह तरक्क़ी नहीं हो सकती जो संत सतगुरू के मुतवातिर सतसंग और चरण सेवा और रहनुमाई से होती है। जो कुछ स्वामीजी महाराज के बचनों में लिखा है उसको ख़ुद कुल मालिक का सन्देश कहना कोई मुबालिग़ा नहीं और इन बचनों में सच्चे और पूरे वक्त गुरु की ज़रूरत पर बहुत ज़ोर दिया गया हैं।

सत्य वस्तु की सत्य जिज्ञासा रखने वाले को यदि नीचे लिखे हुए कुछ प्रश्नों का संतोष जनक उत्तर मिल सके तो वह स्वयं इस बात का निर्णय कर सकता है कि जो मार्ग या पन्थ उसने अख्तियार किया है वह उसे धुर धाम में पहुँचा देने में समर्थ होगा या नहीं। तसस्ली बख्श जवाब पाने से उसका विश्वास दृढ़ होगा और वह कामयाबी के साथ अभ्यास और भक्ति कर सकेगा। लोग ख़याल करते हैं कि अब हमारे मन में कोई संदेह नहीं रहा, किन्तु ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है, नये २ सन्देह उत्पन्न होते हैं जिनको जिज्ञासु आसानी से नहीं हटा सकता। बतौर नमूने के चन्द प्रश्न और सन्देह नीचे लिखे जाते हैं।

अनादि और अनन्त कुल मालिक एक है या एक से अधिक ? यदि एक से अधिक हैं तो वे कौन और क्या हैं और किस प्रकार उनका वजूद रहा आया है और रहेगा ? क्या उनमें आपस में कोई फ़र्क़ है ? अगर नहीं है तो फिर अलग २ स्वतन्त्र वजूद कैसे हुए और क़ायम हैं ? उनका आपस में क्या सम्बन्ध है ? क्या उनमें या उनमें से किसी एक में कोई रद्दोबदल हुआ है ? अगर हुआ है तो क्या और क्यों ? क्या काल और माया शुरू ही से अनामी पुरुष में या उसके साथ २ मौजूद थे ? अगर नहीं तो वे वजूद में किस तरह आए ? क्या वक्त और वसअत यानी ज़मां और मकां (Time and Space) का ज्ञान शुरू ही से है अथवा वह रचना की कार्रवाई के किसी दर्जे पर पहुँचने पर पैदा हुआ और किस तरह पैदा हुआ ? अनामी पुरुष में हरकत है या वह बे-हरकत है ? तो हरकत कैसे और कहां से पैदा हुई ? रचना से पहले अनामी पुरुष बे-होश था या बा-होश ? क्या कोई और व्यक्ति भी उसी तरह बा-होश था ? क्या दृष्टि और दूसरी ज्ञान शक्तियाँ सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप में रचना से पहले मौजूद थीं ? क्या अंतरमुख शक्ति और बहिरमुख शक्ति अनादि और स्वतन्त्र है या एक दूसरे के ताबै है ? जिसका आदि है, उसका अंत क्या लाज़मी है ? क्या चैतन्य या रूह का वजूद बिना माद्दे के हो सकता है ? अथवा क्या माद्दा बिना चैतन्य के हो सकता है ? रूह और माद्दे में से किसका या क्या दोनों का वजूद मुतलक़ है ? जिस प्रकार दयाल देश की रचना मौज से हुई, उसमें और ब्रह्मांड और पिंड की रचना की रीति में जो काल और माया ने की, फ़र्क़ है या नहीं ? काल और माया और जीव में से कौन लौट कर दयाल देश में जा सकता है और कौन नहीं और किस बजह से ?

———

जून सन् १९४० के ख़त का जवाब जो मीयर्स साहब ने दिया उसके जवाब में जो ख़त यहाँ से भेजा गया उसका ख़ुलासा यह है।

आपने अपनी चिट्ठियों में कई जगह Love (प्रेम) और Beloved (प्रीतम) का ज़िक्र किया है। लेकिन शब्द 'प्रेम' से जो हमारा मतलब है, वह ऐसी सस्ती चीज़ नहीं है जैसा आपका ख़्याल है। वैसे तो प्रेम यानी आकर्षण शक्ति का ज़हूर हर जगह— मनुष्य, पशु, वनस्पति और खनिज रचना में है लेकिन राधास्वामी दयाल ने जिस प्रेम का उपदेश दिया है वह बिल्कुल निराली चीज़ है। उसके निस्बत कहा है:

भक्ति सुनाई सबसे न्यारी।
वेद कतेब न ताहि विचारी॥

दर हक़ीक़त वह प्रेम तो ना-पैद है, इस देश की चीज़ नहीं है। मन और माया के दबाव में से सुरत का निकलना मनुष्य के जीवन में एक नये अध्याय का प्रारम्भ होना और उस समय का आना है, जब कि उस प्रेम के पौदे में कलियाँ निकलती हैं और खिल कर फल फूल लगते हैं।

मैं इस बात से सबसे ज्यादा सहमत हूँ कि "प्रेम किसी क़ायदे क़ानून का पाबन्द नहीं।" लेकिन किस घाट या दर्जे का प्रेम है, किस क़िस्म का प्रेम है, किस मतलब से प्रेम किया जाता है, इत्यादि बातों के लिहाज़ से प्रेम में फ़र्क़ है। किसमें कितनी क़ाबलियत प्रेम करने की मौजूद है, उसके हिसाब से हर शख़्स प्रेम का लफ्ज इस्तेमाल करता है। एक प्रेम मुतलक़ है जो राधास्वामी' अनामी में है। एक सत्य और हक़ीक़ी प्रेम है जो अगम लोक, अलख लोक और सत्तलोक में है। इस दर्जे में केवल तेज़ी या तीव्रता की कमी बेशी का फ़र्क़ है। उसके नीचे मन और माया की मिलौनी का प्रेम है जिसके ज़हूर के लिए मन के ग़िलाफ़ की ज़रूरत है, जहाँ से वह उससे भी ज्यादा कसीफ़ माया के ग़िलाफ़ों में उतरता है। मन और माया के ग़िलाफ़ों में से होकर गुज़रने में ज्यों ज्यों उतार होता जाता है ज्यादा कजी पैदा होती जाती है। सबसे नीचे घाट पर उसका रूप केवल physical attraction माद्दी कशिश या स्थूल आकर्षण का है जिसकी वजह से हर चीज़ या व्यक्ति अपना रूप और शक्ल क़ायम किये हुए है, वर्ना रचना से पहिले जैसी हालत थी वैसी ही रहती या हो जाती। इसी माद्दी कशिश या स्थूल और भौतिक आकर्षण से सूरज और चाँद और तारे आदि अपने २ मंडल और हल्क़े में रहते हैं और जिस काम के लिये वे पैदा किये गये हैं उसे अंजाम दे रहे हैं। सत्य प्रेम और मन व माया की मिलौनी का प्रेम, इन दोनों की कार्रवाई का नतीजा revolution यानी अपने से जो विशेष है उसकी परिक्रमा करना, और rotation यानी अपने आपे के गिर्द घूमना है।

पहले के पत्र में मैंने कुछ प्रश्न, जो प्रत्येक सच्चे जिज्ञासु के लिये ज़रूरी हैं, नमूने के तौर पर इस ग़रज़ और अभिप्राय से लिखे थे कि उन पर विचार किया जाय और ध्यान दिया जाय ताकि उनके उत्तर प्राप्त करने की जिज्ञासा पैदा हो और राधास्वामी मत के सिद्धान्तों और उसूलों की बे-मिसाल अज़मत और बड़ाई और महिमा को नये २ पहलू से समझने में मदद मिले। लेकिन आपने तो उनको "दार्शनिक और फ़िलासफ़रों के लिये सिर मारने की चीज़" क़रार दे दिया है। यह अफ़सोस की बात है। उन प्रश्नों के संतोषप्रद उत्तर पूर्व या पश्चिम किसी देश की फ़िलासफ़ी या दर्शन में नहीं हैं। बल्कि जो लोग उनकी तहक़ीक़ात में लगे हुये हैं या उनको मानने वाले हैं उनकी आँखों पर उन्होंने और पर्दा डाल दिया है जिसकी वजह से सत्य और हक़ीक़त से और भी ज़्यादा दूर और गुमराह हो गये हैं और अब अगर उनको सच्चे और ऊँचे मत का भेद बतलाया जावे तो उनकी समझ में आना मुश्किल है। इससे आप अनुमान कर सकते हैं कि हमारी दृष्टि में पुस्तकों और इस देश की पढ़ाई और तालीम की क्या क़ीमत है। चुनांचे आपने जो अपने खत में लिखा है कि "अनुभव अन्तरी होना चाहिये न कि किताबों का", ज़ाहिर करता है कि आपको निगाह में हमको राधास्वामी मत के बुनियादी उसूलों का भी ज्ञान नहीं है। यह बात इन्साफ़ की नहीं, इन्साफ़ से बईद[1] है। वाक़आ तो यह है कि इसके मुताल्लिक़ जो सार बचन छन्द बन्द के बचन २४ शब्द ३ में स्वामीजी महाराज ने फ़रमाया है वह हर वक़्त हमारी याद में रहता है। उसकी शुरू की दो कड़ियाँ यह हैं।

हे विद्या तू बड़ी अविद्या।
सन्तन की तैं क़दर न जानी ॥१॥
संत प्रेम के सिंध भरे हैं।
तैं उलटी बुधि कीचड़ सानी ॥२॥

यह सारा शब्द अनुभव के अमूल्य मोतियों से भरा हुआ है। भाव भक्ति के साथ जिस क़दर उसको पढ़ने और उस पर ग़ौर करने में वक़्त और तवज्जह ख़र्च की जावे, उससे कहीं ज़्यादा उसका एवज़ मिल सकता है। उसी पोथी में कई एक दूसरे भी शब्द हैं जिनमें साफ़ साफ़ बतलाया गया है कि जिस विद्या और बुद्धि की संसार में महिमा है, वह परमार्थी तरक़्क़ी में कैसी बड़ी रुकावट है। अफ़सोस तो यह है कि जिस भाषा में यह पोथी लिखी गई है उसे आप नही समझ सकते और इस वजह से उनकी बड़ाई और क़ीमत जानने से वंचित हैं।

आप को ग़ालिबन यह भी नहीं मालूम है कि आज कल राधास्वामी मत में कई फ़िरक़े हैं, छोटे या बड़े। सब हमारे गुरुओं की लाइन या पंक्ति से निकली हुई शाखें हैं। इसलिये मूल सतसंग या तना हमारा है। अन्य सब फ़िरक़ों के गुरु समय २ पर

(१) दूर।

हमारे सिद्धान्तों से कुछ न कुछ भेद भाव प्रकट करके पृथक होते गये यानी जब २ हमारे संत सतगुरु गुप्त हुए, तब २ कोई नया फ़िरक़ा राधास्वामी मत का क़ायम होता गया और हमसे सम्बन्ध तोड़ दिया। लेकिन क़रीब २ इन सब के साथ हमारा दोस्ताना वर्ताव है, सिवाय दयालबाग़ के गुरुओं के जिनके साथ १२ वर्ष से ज़्यादा हमारी मुक़द्दमेबाज़ी रही और आख़िर को झगड़ा इंगलिस्तान में प्रीवी कौंसिल तक गया जो हमारे लिये सबसे बड़ी अदालत है। हम लोगों को मुक़द्दमे-बाज़ी से ही नहीं बल्कि उसके नाम से सख़्त नफ़रत हैं। लेकिन महज़ अपने उसूलों और अपनी हस्ती को क़ायम रखने के लिये हमको मजबूरन अपना बचाव करना पड़ा। राधास्वामी दयाल का शुक्रिया है कि प्रीवी कौंसिल में मुक़द्दमे का हमारे हक़ में फ़ैसला हुआ और हम फिर से स्वामी-बाग़ में जिसकी बुनियाद स्वामीजी महाराज ने सन् १८७६ ई० में डाली थी, क़याम कर सके।

स्वामीजी महाराज के गुप्त होने के बाद जो नये फ़िरक़े क़ायम हुए, उनमें से व्यास वाला गिरोह भी एक है। यह फ़िरक़ा हमारे मूल तने या सतसंग से, जिसके गुरु हुज़ूर महाराज को स्वामीजी महाराज ने अपने बाद नामज़द किया था, हमेशा अलेहदा रहा। मगर इतनी बात ख़ुशी की है कि यह फ़िरक़ा (व्यास वाला) स्वामीजी महाराज के सबसे छोटे भाई चाचाजी साहब से थोड़ा बहुत ताल्लुक़ रखता रहा और उसके बाद सेठ साहब के ख़ानदान से और स्वामी बाग़ में जो समाधि है उससे ताल्लुक़ रखता रहा। चाचाजी साहब और उनके कुटुम्बी हुज़ूर महाराज वाले सतसंग के ही सतसंगी थे और इसके बाद चाचाजी साहब और उनके तीनों लड़के हमारी कौन्सिल के क़ायम होने पर उसके मेम्बर हुए।

यहाँ मैंने सिर्फ़ सत्य घटनाएं और वाक़आत बयान किए हैं। समय समय पर जो नए नए फ़िरक़े क़ायम हुए, उनके आग़ाज़[1] या बुनियाद के बारे में ख़ुद ग़रज़ लोगों ने जो मन गढ़ंत क़िस्से मशहूर कर रक्खे हैं, उन पर मैं टीका टिप्पणी या राय-जनी[2] करना नहीं चाहता। हमारे ताल्लुक़ात व्यास वालों से हमेशा दोस्ताना रहे हैं, अगरचे हमारे दरमियान एक ख़ास और ज़रूरी बात में इख़्तिलाफ़ और मत भेद है यानी सत्तनाम से शुरू होकर जो रूहानी नाम हैं, उनमें हम महा पवित्र नाम "राधास्वामी" को सबसे बड़ा और सबसे ऊँचा मानते हैं। इसके बाद इस इख़्तिलाफ़ या भेद भाव के बढ़ जाने की एक और वजह पैदा हो गई। उन्होंने स्वामीजी महाराज के सार बचन छंद बंद की बाज़ कड़ियों को और सार बचन बार्तिक के महत्व पूर्ण बचन नंबर २५० को भी इस तरह बदल डाला कि राधास्वामी मत के जो ख़ास और मूल सिद्धान्त थे उनमें तबदीली पैदा हो गई। इस बचन का, जैसा कि उसको स्वामीजी महाराज ने फ़रमाया और सार बचन बार्तिक के प्रथम संस्करण या पहले छापे में जो चाचाजी साहब और हुज़ूर महाराज

(१) शुरू। आरंभ। (२) अपने विचार प्रकट करना। परामर्श देना।

की निगरानी में छपा, तर्जुमा इस ख़त के साथ ब-मूजिब आपकी ख़्वाहिश के भेजता हूँ और नीज़ इस बारे में जो ख़तो-किताबत हुई, उसकी नक़ल। हमारे ख़त का जवाब अभी तक सेक्रेटरी व्यास सतसंग ने नहीं दिया है। सरदार साहब जिस वक़्त अमृतसर में थे, उनको एक सतसंगी के ज़रिये से याद दिलाई गई तो फ़रमाया, "यह पचास वर्ष पुरानी बात है। जब मैं बाबूजी महाराज से मिलूंगा तब बात चीत कर लूंगा। और उनके सेक्रेटरी ने कहा, "इसकी चिन्ता या ज़रूरत भी क्या है, हमारे अनुयाइयों की संख्या एक लाख है।"

यह अफ़सोस की बात तो ज़रूर है कि राधास्वामी मत में इतने छोटे बड़े फ़िरक़े हो गए हैं। लेकिन जो कुछ इन्सानी फ़ितरत[२] की ख़ासियत है, उसके लिहाज़ से यह बात लाज़मी है मगर अंत में जो मिशन या कार्रवाई राधास्वामी दयाल ने शुरू की है, उसके पूरे होने में इन बातों से कोई फ़र्क़ नहीं होगा। जिन वजूहात से ये फ़िरक़े वजूद में आते गए, उनकी बाबत मैं ज़्यादा नहीं कहना चाहता बल्कि ज़ोर उस मसलहत पर दूंगा जो इस ज़ाहिरा बुराई में छिपी हुई है। वक़्त वक़्त पर हमारे पुराने और इब्तिदाई सतसंग से छंटौनी होकर नए फ़िरक़े क़ायम होने से यह बड़ा भारी फ़ायदा हमको हासिल हुआ कि राधास्वामी मत जैसा कि स्वामीजी महाराज ने प्रकट किया, उसको हम उसकी असली शक्ल में क़ायम रख सके। कोई मिलावट या लाग लपेट उसमें न होने दी। और इस पर हम लोग, दूसरे फ़िरक़े वालों के बाहमी झगड़ों से बच कर, एकांत में अमल कर रहे हैं।

व्यास सतसंग के सेक्रेटरी को जो ख़त भेजा गया था उसका सारांश नीचे दिया जाता है।

कई वर्ष पूर्व अम्बाले के एक शख़्स के साथ हमारी ख़तो-किताबत हुई थी। उसकी नक़ल सरदार साहब की सूचनार्थ भेजता हूँ ताकि उस पर वह, अगर मुनासिब समझें, कार्रवाई करें। उस वक़्त यह उचित नहीं समझा गया कि बे-फ़ायदा एक वाद विवाद छेड़ा जाय। किन्तु जो ग़लत फ़हमी उस वक़्त पैदा हुई थी, वह अब दूर और नज़दीक सब जगह फैल रही है और राधास्वामी मत के उच्च सिद्धान्तों का जिस रूप में शुरू में स्वामीजी महाराज ने प्रकट किया था और जिनको उसी सत्य रूप में हम सुरक्षित रखते चले आ रहे हैं, उनमें बहुत ग़लत फ़हमी और भ्रम उत्पन्न करती है। इसलिये लाज़मी है कि आपको सत्य २ घटनाएँ बतला दी जायँ। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि उन वाक़आत का जैसा जाती और सही इल्म बाबूजी महाराज को है, किसी मौजूदा हस्ती को नहीं और यह ना-मुनासिब होगा कि उस इल्म को छिपा कर मौजूदा और आइन्दा नसलों को उससे महरूम रक्खा जावे मगर आपको इख़्तियार है कि उनको आप सच मानें या न मानें।

---

(१) पत्र व्यवहार। (२) प्रकृति, स्वभाव।

इस बात से हमको कुछ मतलब नहीं है कि किसी शख़्स का एतक़ाद और विश्वास हमारे एतक़ाद और विश्वास से भिन्न हो। जिस बात पर हमको सख़्त एतराज़ है वह यह है कि हमारे धर्म ग्रंथ का यानी सार बचन बार्तिक का जो तर्जुमा आपके यहाँ से छपा है और यह कहा गया है कि यह हिन्दी के सार बचन बार्तिक का सही और दुरुस्त अनुवाद है, वह न सिर्फ़ असल को काट छाँट कर तोड़ा मरोड़ा हुआ है बल्कि उसको ऐसा जामा पहनाया गया है कि जो राधास्वामी मत की जड़ काटने वाला है और राधास्वामी मत के अभ्यास की जुक्ति यानी गुरु स्वरूप के ध्यान की निसबत ग़लत और उल्टा ख़याल पैदा करता है।

लाला सुदर्शनसिंह उर्फ़ सेठ साहब अपनी डायरी लिख कर वक़्तन फ़वक़्तन स्वामीजी महाराज के पास भेजा करते थे और हिदायत हासिल किया करते थे। सेठ साहब के इस डायरी नुमा ख़त के जवाब में स्वामीजी महाराज ने हुक्म और हिदायत देकर हुज़ूर महाराज से जो ख़त लिखाया था, ठीक उसके आधार पर सार बचन बार्तिक के बचन नम्बर २५०, २५१ और २५२ हैं। उस ख़त में से आदाब अलक़ाब वग़ैरा के लफ्ज निकाल कर बाकी ज्यों का त्यों इन तीनों बचनों में छापा गया है। किंचित रद्दोबदल या ऊँच नीच नहीं है। यह ख़त सेठ साहब के पास था। चोला छूटने से कुछ ही दिनों पहले सेठ साहब ने वह ख़त बाबूजी महाराज को दे दिया था जो अब सतसंग के रेकार्ड में हिफाजत से रक्खा है। जिस वक़्त स्वामीजी महाराज ने हुज़ूर महाराज से सेठ साहब के ख़त का जवाब लिखने को फरमाया, उस वक़्त चाचाजी साहब राय प्रतापसिंह सेठ और लाला सुजानसिंह सेठ साहब भी मौजूद थे। सबके सामने हुज़ूर महाराज ने ख़त लिख कर स्वामीजी महाराज को सुनाया। ऐसी दशा में किसी प्रकार का रद्दोबदल उस ख़त में ना-मुमकिन था। जो स्वामीजी महाराज ने फ़रमाया वही लिखा गया। और पहले पहल फरवरी सन् १८८४ ईसवी में जब सार बचन बार्तिक प्रकाशित हुआ तो उसके प्रकाशक हुज़ूर महाराज और चाचाजी साहब दोनों थे और छापेख़ाने में छपाने का सारा काम लाला सुजानसिंह सेठ के सुपुर्द स्वामीजी महाराज ने बचन फ़रमाए तब चाचाजी साहब और लाला था। यानी जब सुजानसिंह दोनों मौजूद थे, छपाने और प्रकाशित करने का काम भी इन्हीं दोनों ने किया। फिर यह कैसे मुमकिन है कि इन बचनों को किसी ने बदल दिया होगा?

यह कहना भी ग़लत है कि इन बचनों में ज़िद्दैन बातें दर्ज हैं। अगर ठीक से पढ़ा और समझा जाय तो मालूम होगा कि कोई ज़िद्दैन बात नहीं लिखी गई है। बचन नम्बर २५० के बीच में जो ज़िद्दैन बातें मालूम होती हैं वह असल में लाला सुजानसिंह के प्रश्न का उत्तर है। जब सेठ साहब के ख़त का जवाब लिखाया जा रहा था उस वक़्त लाला सुजानसिंह ने प्रश्न किया कि यदि कोई पिछले संत की पूजा और उपासना करे जिसको कभी आँख से नहीं देखा है और न उसके बचन सुने हैं तो क्या फल

मिलेगा। स्वामीजी महाराज ने जो उत्तर दिया वह भी उस ख़त में दर्ज कर दिया गया। इस हिस्से के बाद फिर सेठ साहब के ख़त के जवाब का सिलसिला पकड़ लिया। अगर इन वास्तविक बातों और घटनाओं को मद्दे नज़र रख कर यह बचन पढ़ा जाय तो कोई ज़िद्दन बात नहीं मालूम होगी।

यह कहना कि इन बचनों में जो बात कही गई है, वह राधास्वामी मत के उपदेशों और सिद्धान्तों के विरुद्ध है, ज़ाहिर करता है कि कहने वाले को न तो मत के भेद से वाक़फ़ियत है न यह मालूम है कि किस गुप्त उद्देश्य से संतों का इस देश में आगमन होता है और राधास्वामी मत के अभ्यासी को अंतर में क्या २ तजरुबे होते हैं। संक्षेप में उसका वर्णन यह है।

उद्धार की कार्रवाई स्वतः संत या स्वतः साध द्वारा आरंभ होती है। वे तीसरे तिल से नीचे नहीं उतरते। यही वह मुक़ाम है जहाँ पहले पहल सुरत को स्थूल मन और माया से किसी क़दर न्यारे होने का और इससे जो आनन्द और सुरूर प्राप्त होता है, उसका तजरुबा होता है। यहाँ से सुरत, मन और माया पर ग़ालिब और हावी होने लगती है। तीसरे तिल के नीचे मन और माया का इस क़दर ज़ोर है कि अगर संत या साध की भी सुरत नीचे उतरे तो वह इन बहिरमुख शक्तियों से दब कर ग़ाफिल हो जायगी और वहां से अपने को बग़ैर मदद नहीं निकाल सकेगी और न दूसरे की मदद कर सकेगी। वजह इसकी यह है कि हर एक मंडल के वजूद और क़याम के लिए जिस क़दर चैतन्य शक्ति की ज़रूरत है उससे ज़्यादा वहां क़ानूने क़ुदरत से यानी उन नियमों के अनुसार जो रचना की पैदाइश और क़याम से ताल्लुक़ रखते हैं, नहीं आ सक्ती है और अगर आवे तो तोड़ फोड़ हो जायगा। नीचे की रचना ऊपर की रचना में सिमट जायगी जैसा कि प्रलय में होता है। हर मंडल के लिए कम से कम और ज़्यादा से ज़्यादा मिक़दार चैतन्यता की मुक़र्रर है। इन हदों के इधर या उधर होने से रचना का काम गड़बड़ हो जायगा और वह मतलब ख़ब्त हो जायगा जिसके लिए रचना की गई।

संत यहां सत्तपुरुष राधास्वामी की मौज से आते हैं। कोई तो पूरा २ अधिकार उद्धार करने का लेकर आते हैं और कोई महज़ इसलिए आते हैं कि उन को मौजूदगी से इस देश में इतनी चैतन्यता बनी रहे कि यह देश क़ायम रह सके और यहां के जीवों का रफ़्ता २ अधिकार बढ़े कि जब उद्धार कर्त्ता संत आवें तब उनके आगमन से लाभ उठा सकें। सार बचन बार्तिक के बचन नंबर ६६ में स्वामीजी महाराज ने इस की तरफ़ इशारा किया है। वह बचन यह है। "जो संत गृहस्थ में रहते हैं, उनसे बहुत से जीव पार होते हैं और जो भेष में होते हैं उनसे उद्धार किसी का नहीं होता। पर जो संत दयाल हैं, वह गृहस्थ ही में रहते हैं।"

उद्धार की कारंवाई के लिए यह नितांत आवश्यक है कि स्वतः संत के साथ गुरुमुख भी पैदा होकर उनका उस कारंवाई में साथ दे।

या ते मो मत निश्चय येही।
गुरु बिन दूसर और न सेई॥

जा के हिरदे गुरु परतीती।
काल कर्म वा से नहीं जीती॥

सब के सिर पर उसका डंका।
काहू की उसके नहिं संका॥

बड़े २ उधरें उस संगा।
गुरुमुख है इन सबसे चंगा॥

गुरुमुख की गति सब से भारी।
गुरुमुख कोटिन जीव उबारी॥

कहाँ लग महिमा गुरुमुख गाऊँ।
कोई न जाने किस समझाऊँ॥

गुरुमुख की सुरत मामूली तौर पर अंतःकरण के घाट तक उतरती है जिस घाट से मन माया और नीचे के चक्रों के हैवानी ख़वास पर रोक थाम की जाती है। मगर स्वतः संत की रक्षा में इन्द्री घाट तक भी जाती है।

मन के घाट हुए अब कामी।
अस मेरे प्यारे राधास्वामी॥

इन्द्री घाट विकार घटामी।
सो मेरे प्यारे राधास्वामी॥

अललपच्छ सम फिर उलटामी।
अस मेरे प्यारे राधास्वामी।

इस रीत से ऊँचे से ऊँचे देश की चैतन्य शक्ति का असर कमोबेश रचना के हर मंडल और हर देश में पहुँचाया जाता है। जिनकी सुरत बरामद हो रही है या जाग रही है यानी जो हंस जीव हैं, वह बहुत जल्द संतों की सरन में आ जाते हैं। केवल वे ही संतों की हिदायत और उपदेश के अनुसार भक्ति की रीति में बरत सकते हैं। बाकी जीवों की दुरुस्ती के लिए कलाओं की नीति की ज़रूरत पड़ती है।

मानेंगे कोई हंस बचन से

जीवों की शुद्धि और सुधार के लिए संत सिवाय 'बचन' के और किसी रीति का प्रयोग नहीं करते।

स्वतः संत की रहनुमाई, हिदायत, रक्षा और सहायता से जैसे २ गुरुमुख अपने उद्धार की कार्रवाई करता है यानी अपनी सुरत को नीचे के चक्रों से खींच कर और निकाल कर ऊपर के मुक़ामों में पहुँचाता जाता है वैसे ही उससे उन्स रखने वाले भक्त जीवों की सुरत पर भी अंतर के अंतरगत उसका आकर्षण और खिंचाव होता है और उनका भी भाग बढ़ता है और वह भी इस क़ाबिल बनते हैं कि संतों का असर उन पर पड़े। इससे ज़ाहिर है कि बग़ैर गुरुमुख की मौजूदगी के मामूली जीवों का उद्धार तो ना-मुमकिन है।

गुरु और गुरुमुख के आगमन के साथ ऊंचे देश की ऐसी सुरतें भी यहां आकर मनुष्य चोले में जन्म लेती हैं जो अपने उद्धार का काम पूरा कर सकें और यही सुरतें गुरु और गुरुमुख के साथ भक्ति की रीति में बर्त कर दूसरे जीवों के लिए नमूना पेश करती है। गुरुमुख तीसरे तिल को पार करके ऊपर के मुक़ामों में गति प्राप्त करता है और स्वतः संत के शुरू किए हुए उद्धार के काम को जारी रखता है।

जो कुछ ऊपर लिखा गया है उससे स्पष्ट है कि राधास्वामी मत की जुक्ति और अभ्यास में जिस दर्जे की रूहानी मदद की जरूरत पड़ती है, वह उसी दशा में प्राप्त हो सकती है जब मदद देने वाले की सुरत तीसरे तिल पर आकर बैठे और ऊँचे से ऊँचे देश तक बीच के सब मुक़ामों में से जब चाहे जब आ जा सके और मुख्य अंग में तीसरे तिल से नीचे कभी न उतरे। संत और साध में इस क़दर ज़बरदस्त चैतन्यता होती है कि केवल उनके भास से मनुष्य चोले के सब काम ब-दस्तूर चला करते हैं।

वक़्त मुनासिब पर जब स्वतः संत गुप्त होते हैं तब गुरुमुख उद्धार का काम अपने हाथ में ले लेता है। उस वक़्त तक उसने ऊंचे से ऊंचे देश की गति प्राप्त कर ली है और यह क़ाबलियत हासिल कर ली है कि बग़ैर तीसरे तिल से नीचे उतरे अपनी देह का काम कर सके।

इस ग़रज़ से कि अपने मौजूदा भाग और गति के अनुसार चेला गुरु से पूरी पूरी रूहानी मदद और असर हासिल कर सके, यह लाज़मी है कि गुरु भी उसी घाट पर यानी मनुष्य चोले में हों जहाँ चेला (यानी साधारण जीव) बा-होश हालत में है, वरना अवतार और पैग़म्बरों के मनुष्य चोले में आने की ज़रूरत भी न थी। मदद से मतलब यह है कि गुरु अपने बल से रफ़्ता-रफ़्ता चेले की सुरत को तीसरे तिल की तरफ़ खींचे जो कि सत्तदेश तक पहुँचने की राह की सबसे कठिन मंजिल है। अगर चेला अपनी मौजूदा गति में तीसरे तिल के नीचे के चक्रों में फँसा हुआ है और गुरु मनुष्य चोले में

चेले के घाट पर उतर कर न आवें तो यह काम कैसे हो सकता है ? अगर तीसरे तिल पर चेला पहुँच जावे और बाहोश रह सके और साथ ही साथ देह और ज्ञान इन्द्रियों के सब काम कर सके तो अलबत्ता उस चेले को देह धारी गुरु की जरूरत नहीं है।

दृष्टि खुली और झांकी पाई।
सूरत मूरत अगम दिखाई ।।

अगर चेले का तीसरा तिल खुल जाय तो चेला गुरु से वहाँ दरस परस कर सकता है, उसी तरह जैसे कि जब गुरू देह में विराजते थे और चेला उनसे मिलता और बात चीत करता था। मगर उस स्थान पर चेले और गुरू दोनों का रूप वहां के आकाश के मसाले का होगा। जब तक चेले का तीसरा तिल नहीं खुला है, उसको परमार्थी तरक़्क़ी के लिए देह धारी वक्त गुरू की उसी तरह जरूरत है जैसे कि पहले थी। कभी २ अभ्यास में या स्वप्न में या किसी दूसरे वक्त गुरू स्वरूप की झलक दिखाई देने से चेले की चढ़ाई तीसरे तिल या परे नहीं हो सकती है। अगर चेला देह धारी वक्त गुरू की सरन न ले या न प्राप्त कर सके तो उसको अख़्तियार है कि पहले वाले गुरू के, जो गुप्त हो गए हैं, स्वरूप का ध्यान करता रहे और जैसा उन्होंने बतलाया था, अभ्यास करता रहे। मगर इससे चढ़ाई नहीं हो सकती, कुछ मन की सफाई होगी और कर्म कटेंगे। इसके अलावा मरने के बाद जब चेले की सुरत तीसरे तिल के पार काल और करम के दुक्खों को सह कर जावेगी तो गुरू, वहां के आकाश के बने हुए रूप में, उसको दर्शन देंगे और काल व जम के हमलों से बचा कर ऐसे स्थान पर बासा देंगे जो इसकी परमार्थी गति के अनुसार हो ताकि वहाँ की आबोहवा (चैतन्यता) से इतनी मुद्दत तक फ़ायदा उठावे कि फिर मनुष्य चोले में आकर साध या संत की रहनुमाई में पहले से ज़्यादा कामियाबी के साथ भक्ति और परमार्थ कमा सके।

तीसरे तिल या उसके परे गति हासिल होना "अन्तर का खुलना" है और जब तक अन्तर न खुले देहधारी गुरू की जरूरत रहेगी। सिर्फ़ वही लोग गुरुमुख की सरन और रहनुमाई अख़्तियार करेंगे जिनको अपनी परमार्थी तरक़्क़ी की तीव्र अभिलाषा है और जो तआस्सुब या अपने झूठे बड़प्पन से अंधे नहीं हो गए हैं।

गुरु और गुरुमुख क्यों और किस प्रकार आते और उद्धार की कार्रवाई करते हैं, इसको भली प्रकार न समझने के कारण अक्सर लोग 'आप आन समाते हैं" इस फ़िक़रे की ना-मुनासिब नुक्ता चीनी करते हैं। इससे यह मतलब लेना कि गुरुमुख की सुरत को बे-दखल कर दिया जाता है, निहायत नादानी है।

सत्तपुरुष राधास्वामी के हुक्म से संत सुरत मनुष्य देह में आती है और तीसरे तिल पर बैठती है। संत सुरत यहाँ से लेकर धुर धाम तक के रास्ते के सब मुकामों में

बाहोश आ जा सकती है, कभी गुम या बेहोश नहीं होती। इस संत सुरत में बराबर धुर धाम से धार आती रहती है मगर वह संत सुरत को निकाल नहीं देती है या वह ग़ायब या गुम नहीं हो जाती है। उस धार के आने से मतलब यह है कि संत सुरत का हर वक्त बा-होश संबंध और सिलसिला सत्तपुरुष राधास्वामी से लगा है और दोनों एक हैं। इसी तरह गुरुमुख की सुरत तीसरे तिल के परे जाकर सत्तपुरुष राधास्वामी से एक हो जाती है जैसा कि सार बचन बार्तिक के बचन नंबर २३५ में वर्णन किया है। "फिर नाम का सूक्ष्म रूप और सतगुरु का सूक्ष्म रूप और अपना सूक्ष्म रूप सब एक रूप नज़र आवेंगे।" और तब स्वतः संत और गुरुमुख में कोई फ़र्क़ नहीं रहता। जैसे पहले वाले गुरू में सत्तपुरुष राधास्वामी से धार आती थी, उसी तरह अब गुरुमुख में आती है। यह मतलब है "आप आ समाने" का।

सार बचन बार्तिक दूसरा भाग बचन नम्बर १४ "इसी तरह गुरुमुख तो एक ही होता है, उसके प्रताप से बहुत से जीव पार हो जाते हैं", निस्संदेह ज़ाहिर करता है कि एक समय में एक ही पूरा गुरुमुख हो सकता है। उसके साथ में और बहुत सी ऊँचे देश की सुरतें होती हैं।

गुरुमुख का परमार्थी दर्जा बयान से बाहर है मगर जब वह तीसरे तिल के नीचे महा तिमिर और भ्रम के घाटों में उतर जाता है, तब फिर उसकी इस गति को बदलने और अंत में ऊँचे से ऊँचे धाम में पहुँचाने की कार्रवाई निहायत मुश्किल और नाजुक हो जाती है जिसको पूरे गुरुमुख के सिवा दूसरा बरदाश्त भी नहीं कर सकता।

दूध छठी का निकसे भाई।
तब कुछ राह अगम की पाई॥

यह लाज़मी है कि गुरुमुख इस ग़रज़ से कमोबेश हमेशा अपने गुरु से मेल क़ायम रक्खे और बार २ उनकी खिदमत में हाज़िर होकर उनके बचन, बैन और सैन से फ़ायदा उठावे और जब २ मौक़ा मिले और जितनी देर तक मुमकिन हो, आँख से आँख मिला कर और आरती के ज़रिये दृष्टि का साधन करे। सिर्फ़ यही जुक्तियाँ हैं जिनसे गुरुमुख की या दूसरे ऐसे चेले की जिसका रूहानी दर्जा बहुत ऊँचा हो, सुरत उस ऊँचे घाट पर खेंची जा सकती है जहाँ से गुरु बचन फरमाते हैं। गुरु उनकी सुरत को अपनी सुरत में जिससे मेहर और दया की धार बह रही है, लपेट कर उस घाट पर ले जाते हैं जहाँ बैठ कर वह कार्रवाई करते हैं। और इस तरह मन की सफाई और नीचे के घाट की मलीन वृत्तियों पर काबू हासिल होता है। जिस गुरुमुख का बयान ऊपर किया गया है, उसी के हाथ में सत्तदेश की कुंजी है और वही उद्धार की कार्रवाई कर सकता है।

इत्तिफ़ाक़िया सतसंग में आने वाले, जिनको यह लाभ प्राप्त नहीं है, उन्हीं की निसबत सार बचन बार्तिक बचन नम्बर १२६ में फ़रमाया है, "जिसको सतगुरु के चरनों में ऐसी प्रीति है कि जब तक दूर है तभी तक दूर है और जब सम्मुख आया, तब ही मन निश्चल हो गया और ऐसा लग गया कि जैसे मक्खी उड़ती फिरती है और जब शहद मिला, तब ऐसी चिमटी कि नहीं छोड़ती, उसी को ऐसी प्रीति का फल भी मिलता है। और यों तो बहुतेरे आए और चले गए, हरचंद फ़ायदा उनको भी होता है, पर कम।"

स्वामीजी महाराज के सार बचन छंद बंद में भी कुछ ना-मुनासिब उलट फेर किये गये हैं और कहा जाता है कि चाचाजी साहब की इजाज़त और मंज़ूरा से ऐसा किया गया। कृपा कर लिखिये कि वह इजाज़त और मंज़ूरी कब कैसे और किस रूप में आपको मिली ? आपका जवाब आने पर हम इस सवाल का आगे निर्णय करेंगे।

बहस मुबाहसे या विरोध के भाव से आपको यह पत्र नहीं लिख रहा हूँ और न इस उम्मीद में कि मैं आपको हम-ख़याल[1] बना लूँगा।

राधास्वामी मत की उस सत्य और ख़ालिस व निर्मल रूप में जिसमें स्वामीजी महाराज ने उसको प्रकट किया, धारणा और हिफ़ाज़त करने वालों की हैसियत से हम यह अपना फ़र्ज़ समझते हैं कि राधास्वामी मत के सिद्धान्तों और उसूलों को उसी ऊपर कहे हुए रूप में घोषित कर दें और जो ना-जायज़ तबदीलियां और इज़ाफ़े उनमें किए गए हैं और बे-बुनियाद मानी उन पर आयद किए गए हैं, उनसे अपना बचाव करें।

साधू ऐसा चाहिये, जो साँची कहे बनाय।
कै टूटे कै फिर जुड़े, बिन कहे भर्म न जाय॥

जिन सतसंगियों में कुछ हिम्मत है और जिनके हिये की पाटी साफ़ है अर्थात् जो अंधाधुन्ध दूसरों की नक़ल नहीं करते और जो परमार्थ को सब चीज़ों पर मुक़द्दम रखते हैं, वह ज़रूर हमारे बयान से फ़ायदा उठावेंगे ब-शर्ते कि यह ख़त उनके हाथों में जावे। नहीं तो कम से कम हमारे यहाँ के सतसंगी तो सावधान हो जावेंगे और राधास्वामी मत की जड़ काटने वाली बातों और कार्रवाईयों से अपने को बचा सकेंगे। विद्या बुद्धि के विलास वालों, दुनियावी तरक़्क़ी के चाहने वालों और सैलानियों के लिये परमार्थ नहीं है। इस देश की विद्या बुद्धि और ऊँचे घाट की बुद्धि यानी अनुभव और यहाँ की सम्पत्ति को अपने प्रीतम राधास्वामी दयाल के चरनों पर न्यौछावर कर दिया जायेगा, तब अंतर का भेद मिलेगा।

तारीख़ २६ दिसम्बर सन् १९३२ ईसवी के प्रेम प्रचारक (दयालबाग़) में वह

(१) एक राय वाले। सहमत। एक धर्म विश्वास वाले।

समझौता छपा है जिस पर व्यास सतसंग के गुरु और दयालबाग़ के गुरु दोनों के दस्तख़त हैं। मसौदे को पढ़ने से ज़ाहिर होता है कि दस्तख़त करने से पहले व्यास और दयालबाग़ के फ़िरक़ों में कुछ तफ़रक़ात और भेद भाव थे, जो दोनों गुरुओं के आपस में बातचीत करने पर दूर हो गए। कृपया बतलाइये कि वह क्या तफ़रक़ात और भेद भाव थे और वह किस प्रकार रफ़ा हो गए।

हमारे परमार्थी नुकते निगाह से 'सत्य' समझौते की चीज़ नहीं है। 'सत्य' तो सत्य है। उसमें समझौता कैसा ? "कुछ हम छोड़ें, कुछ तुम छोड़ो" इस तौर का समझौता मज़हब के मामले में नहीं हो सकता। झगड़े फ़िसाद को तो हमेशा बचाना चाहिये किन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि दुनियावी और झूठा एका और मेल पैदा करने के लिए मज़हबी सिद्धान्तों और उसूलो में रिआयत[1] की जावे। हम बहुत बर्दाश्त कर सकते हैं, लेकिन अपने विश्वास और अक़ीदे में अटल और अडिग हैं और इस मानी में हमारा किसी से मेल न है और न हो सकता है।

चूँकि इस ख़त का मज़मून सतसंगियों के लिए बहुत अहमियत[2] रखता है, आशा है कि आप इस पत्र का एक एक शब्द सरदार साहब को पढ़ कर सुनावेंगे और तब उनकी मंजूरी और रज़ामंदी से जवाब देने की कृपा करेंगे।

स्वामीबाग़ आगरा से पत्र सेक्रेटरी की तरफ़ से अंग्रेजी में भेजे गये, थे सब बाबूजी महाराज ने लिखाये थे।

---

(१) कमी। (२) महत्व।

CHAPTER 8

A NOTE DICTATED BY BABUJI MAHARAJ

1. Undue tolerance and sufferance extended under unavoidable circumstances to the sentiments of members of the families of departed Gurus accompanied in some cases by questionable motives have been productive of most pernicious results. Ordinarily Samadh alone should be the common place of worship while tacit acceptance of the moves of certain members of families (originally innocent though unnecessary) has resulted in the multiplicity of miniature shrines which when they fall into unscrupulous hands would certainly lead to formation of cliques and other undesirable results, the prevention of which was the primary object of the formation of the Council. Every effort should, therefore, be made to discourage this tendency.

2. There is absolutely no reason why the Samadh and the other subsidiary shrines and relics established by the Satsang for the worship of the Satsangis should not be enough for the expression of their devotional spirit towards the departed Gurus and should have to be supplemented by independent symbols of worship set up by members of the family in imitation of the system of setting up idols by members of the priestly class. We can conceive of no real justification for such action but the world, as it is constituted, shall not cease to indulge in such frivolities, to use the mildest term for it, but at the same time it is the duty of sensible and Parmarthi persons to check them as far as possible.

3. After the demise of Chachaji Sahib, an attempt was made to set up a coach with a photo upon it as a place of worship and this scheme was actually carried out but before it could gather a hallow of tradition around it, it was removed with the help of the most important member of the family to whom the absurdity and futility of the scheme was explained. Not long ago, a dummy was being set up as a symbol of family worship, into the details of which I do not wish to go here but the mischief was nipped in the bud.

4. There are still a few remnants of olden days of this type and efforts will be directed towards their extinction with as little friction as possible.

5. The position of Radhaji Maharaj was unique and exclusive. When the Supreme Name, *Radhasoami*, was disclosed, in course of time, by Soamiji Maharaj, those amongst His disciples in whom the awakening of spirit had

sufficiently asserted itself, at once recognized the sublimity of the Name and gave the appellation of "Soamiji" to Soamiji Maharaj and "Radhaji" to Radhaji Maharaj, thus recognizing the High and Exalted position of Radhaji Maharaj. This incident alone places the case of Radhaji Maharaj beyond the pale of comparison and parallelism.

6. There is absolutely no justification for setting up of miniature shrines by the members of the family or their protagonists within the Satsang itself, sometimes as rival shrines of the existing Samadh in the fashion of idols set up or discovered by the members of the priestly class. This system is bound to set up factions and cliques and create vested interests of a most reprehensible character. It was with the object of eradicating these evils that Central Council was established. For all legitimate purposes the existing Samadhs and relics preserved in their connection are enough for the Satsangis to pay homage to the departed Gurus and perfrom obeisance at their shrines. If any members of the family or any other persons possess any sacred relics, into possession of which they have come by legitimate means, they should either be preserved by them as precious heirlooms or made over to the Satsang to be placed side by side with the sacred relics or objects of sanctity in the possession of the Satsang.

7. Multiplicity of shrines in the vicinity of the Samadhs especially such as are run independently of Satsang have been productive of most pernicious results and every right minded Satsangi ought to view them with disfavour. Relics and shrines as they exist are more than enough for the homage of the Satsangis and to add to them is by no means desirable. If they happen to be under the influence of others than those who control and administer the Satsang they are bound to lead to the establishment of factions and cliques which it was the main object of the Central Administrative Council to exterminate.

8. The establishment of shrines especially on a factional basis for the sake of idle worship-mongers is not only objectionable but fraught with great danger of future disruptive and mischievous tendencies and can, on no account, receive encouragement from the Satsang.

9. I owe an obligation to the Council vis-a-vis of its obligation to me which cannot be disregarded. I do not want to leave a legacy which might cause embarrassment to my successor in management. These worship mongers simply dissipate the little urge for Parmarath created in them by contact with the Satsang in rigid and imitative observance of formalities which give

them ample opportunities for indulging in vagaries of the mind and evading the sacrifices of body and mind which the pursuit of real Parmarath involves. Their activities are apt to degenerate fast into fanatical opposition to true and real Parmarath.

10. The *modus operandi* of these separatist worship mongers is to hold fast to a sacred relic which they happen to possess or manage to get possession of and sometimes even create new ones which they set up as a separate show of their own outside the control and management of the Satsang. There is absolutely no conceivable justification for holding fast to a relic in this manner. If it is an object of sanctity in the eyes of the Satsangis, it should be made over to the Satsang to be kept with other sacred relics in order that all Satsangis may derive equal benefit from it.

अध्याय ८

बाबूजी महाराज के लिखाए हुए एक नोट का सारांश

पिछले गुरुओं के घरवालों के साथ ख़ास लिहाज़ मुरव्वत और ख़ातिरदारी का बर्ताव मुनासिब तो है मगर इसमें बहुत एहतियात की ज़रूरत है ख़ास कर अगर वह कोई ऐसी चाल या हरकत करें जो शुरू में निर्दोष अगर्चे ग़ैर-ज़रूरी हो मगर जिसको नजर-अंदाज़ करने से अंत में बुरे नतीजे पैदा हों। इस किस्म की हरकतों में से आम यह है कि वे लोग अलावा उन समाधों के जो कौन्सिल के कब्ज़े में हैं दूसरी छोटी २ समाधें बनाने की कोशिश करते हैं या पिछले गुरुओं की इस्तैमाल की हुई चीजें लोगों को दिखा कर अपनी मान प्रतिष्ठा कराना चाहते हैं और बजाय अंतरमुख कार्रवाई में लगने के बाहरमुख कार्रवाइयों में खुल खेलते हैं। इन बातों से अलेहदा २ दल या पार्टियाँ क़ायम होती हैं और आइन्दा आपस में फ़िसाद का बीज बोया जाता है। कौन्सिल क़ायम करने का एक ख़ास मतलब यह भी था कि वह इस क़िस्म की क़ाबिल एतराज बातों को रोके और जो ज़हूर में आ चुकी हैं उनको धीरे २ मिटा दे। सतसंगियों को पिछले गुरुओं की ताज़ीम और मत्था टेकने वग़ैरा के लिए मौजूदा समाधें और परसाद की चीजें जो कौन्सिल की तरफ से वहां रक्खी गई हैं, काफ़ी हैं। अगर सतसंगियों के पास ऐसी कोई चीज़े हैं तो या तो उनको बतौर यादगार के, बग़ैर किसी नुमाइश के, अपने पास रक्खें या कौन्सिल को दे दें ताकि दूसरे सतसंगियों को भी उनसे फ़ायदा उठाने का मौक़ा मिले।

अध्याय ९

सवाल जवाब

वह सवाल जो वक़्तन फ़वक़्तन ब-ज़रिये ख़त या ज़बानी बाबूजी महाराज से किए गए और उनके जवाब जो उन्होंने दिए, नीचे लिखे जाते हैं:—

सवाल १—उपदेश देते वक्त सत्तलोक से ऊपर अनामी पद का जो अलख लोक के नीचे है, उपदेश क्यों नहीं दिया जाता ?

जवाब— सत्तलोक के ऊपर जो अनामी पद है, उसमें रूप और शब्द दोनों गुप्त हैं। वहाँ के शब्द की उपासना की ज़रूरत नहीं होती। जो अभ्यासी संतों के प्रताप से सत्तलोक तक पहुँचता है, वह राधास्वामी अनामी पद तक राधास्वामी नाम की धारना के संग पहुँच सकता है और ऊपर जाने के लिये सत्तपुरुष से दूरबीन प्राप्त होती है और उसके बल से ऊपर जा सकता है।

सवाल २—सत्तलोक को चौथा लोक क्यों कहते हैं जब कि वह ऊपर से पाँचवाँ लोक है ?

जवाब— सत्तलोक को चौथा लोक इस वास्ते कहा है कि वह पिंड अंड और ब्रह्मांड इन तीनों लोकों के पार है।

सवाल ३—सुन्न को दसवाँ द्वार क्यों कहते हैं

जवाब— सुन्न को दसवाँ द्वार शुमार करने के लिये सात द्वारे ज्ञान इन्द्रियों के और एक सहसदल कँवल और एक त्रिकुटी गिने जाते हैं। यह संतों का दसवाँ द्वार है। जोगियों का दसवाँ द्वार तीसरे तिल में है जिसमें कि नीचे की दो कर्म इन्द्रियाँ यानी गुदा और इन्द्री शुमार की जाती हैं।

सवाल ४—पत्थर में रूह है या नहीं ? अगर है तो किस जगह पर वाक़ै है ? अगर किसी बड़ी चट्टान के पचासों टुकड़े कर दिये जावें तो हर एक टुकड़े में

जान रहती है या नहीं और फिर इन टुकड़ों को गढ़ कर दीवार में लगा दिया जावे तो इन टुकड़ों में भी जान बाक़ी रहती है या नहीं ?

जवाब—तमाम रचना में जहाँ तक किसी क़िस्म का आकार है, चैतन्य अंश मौजूद है। इस चैतन्य को जड़-चैतन्य कहते हैं।

सतगुरु आरत लीन्ह सिंगारी।
जड़ चेतन से सुरत निकारी ॥
जीव चैतन्य देश अब छोड़ा।
शब्द चैतन्य देश किया पोढ़ा ॥

हर ज़र्रे या परमाणु में जहाँ उसका केन्द्र है वहाँ उसकी जड़ चैतन्य रूपी जान है।

सवाल ५— बग़ैर तीसरे तिल में गुज़रे हुए ब्रह्मांड और सच्चखंड के लोकों में रसाई होती है या कि तीसरे तिल में गुज़रने पर रसाई हो सकती है ? मगर तीसरे तिल में गुज़रने से मौत वाक़ै हो जाती है।

जवाब— बग़ैर तीसरे तिल से गुज़रे हुए ब्रह्मांड और सच्चखंड में रसाई नहीं हो सकती। तीसरे तिल में पहुँचने पर नई जान, बहुत विशेष शक्ति की सुरत रूपी, प्राप्त होती है बशर्ते कि उस जगह बाहोश अभ्यास करके पहुँचे। ऐसे अभ्यासी की बारीक डोरी नीचे घाट के मन और तन से लगी रहती है जिससे कि वह मौत जिसमें तन सड़ने लगे, नहीं होती और उसी डोरी से जब चाहे उतर सक्ता है और जब चाहे चढ़ सकता है।

सवाल ६—जब कोई सुरत राधास्वामी धाम में पहुँच कर राधास्वामी दयाल में समा जाती है तो फिर वही सुरत संत सतगुरु रूप धारन करके इस संसार में दुबारा आ सकती है या नहीं ?

जवाब— जीव सुरत सत्तलोक या राधास्वामी धाम में पहुँच कर आम तौर पर संसार में उलट कर नहीं आती।

सवाल ७—'निजधार' से क्या मतलब है ? क्या यह कोई ख़ास धार है जो सिवाय संत सतगुरु के और किसी में होती ही नहीं है ? या कि इससे मतलब है कि शब्द की धार का मेल राधास्वामी दयाल के चरनों से होने पर रास्ता साफ़ खुल जाता है ?

जवाब—'निजधार' बड़ा भारी समूह चैतन्य का है और वही संत सतगुरु या गुरुमुख रूप धारन कर सकती है।

सवाल ८—पिंडी मन और निज मन और ब्रह्मांडी मन में क्या फ़र्क़ है और इनकी बैठक कहाँ २ है ?

जवाब—पिंडी मन का स्थान नेत्रों के पीछे और हृदय में है। निज मन का स्थान त्रिकुटी और सहसदल कँवल में है। इसी को संत ब्रह्मांडी मन कहते हैं।

सवाल ९—अभ्यास के वक़्त सुरत अपने मुक़ाम पर बैठी हुई ही ऊपर के लोकों की सैर करती है या कि दर असल भजन के वक़्त अपनी बैठक छठे चक्र को छोड़ कर ऊपर को चढ़ती है ?

जवाब—सुरत की जब पूरे तौर पर चढ़ाई हो तो तीसरे तिल से बैठक छोड़ कर सर्वाङ्ग करके ऊपर के स्थानों में जाती है। मगर जब तक मौज शरीर में रहने की है, सिलसिला देह में उतरने का रखती है। गौण अंग से भी सुरत की चढ़ाई होती है जिसमें कुछ हिस्सा चैतन्यता का तीसरे तिल के ऊपर के मुक़ामात पर मुन्तक़िल होता है।

सवाल १०—किताबों में हर जगह पिंड अंड और ब्रह्मांड आया है। पिंड तो तिमिर खंड को कहते हैं और ब्रह्मांड बीच के देश को कहते हैं, तो फिर अंड कौन से देश को कहते हैं ?

जवाब—जोत निरंजन की सृष्टि अंड कहलाती है और ऊपर उसके ब्रह्म सृष्टि ब्रह्मांड है।

सवाल ११—सुरत यानी रूह में और शब्द की धार में क्या फ़र्क़ है ? सुरत का बीज सत्तलोक से काल को बख़्शा गया था। क्या ये शब्द की धारें काल को दी गई थीं ? रूह और शब्द की धार का फ़र्क़ समझ में नहीं आता।

जवाब—सुरत भी शब्द रूप है। जिस जगह पर शब्द की धार ठेका ले, उसे सुरत कहते हैं। शब्द ही की धार से सब रचना हुई। जहाँ उसने ठेका लिया, सुर्त रूप है और जब फिर उससे धार निकली, वह शब्द रूप है।

ये सवालात अक्सर ऐसे हैं कि जिनको जानने की ज़रूरत अभ्यासी को शुरू में नहीं होनी चाहिए। सिर्फ़ इतना ज़रूरी है कि राधास्वामी नाम में प्रीत और भक्ति हो और यह विश्वास समझ कर धारन किया हो कि यही नाम मालिक का असली ज़ाती और ध्वन्यात्मक है और यह कि सुरत शब्द योग के बग़ैर पूरा और सच्चा उद्धार नहीं हो सक्ता। अनुरागी खोजी को अपने जीव के कल्याण की मुख्यता रहनी चाहिए और अभ्यास में रफ़्ता २ जब सुरत और मन सिमटेंगे और रूह की चढ़ाई होगी तब अनुभव जागेगा और रचना का भेद रोशन होता जावेगा। अन्तर का हाल जानने की ठीक रीत

यही है और इसके बगैर खौफ है कि महज समझौती से जो बात समझ में आवे, उसमें नए २ संशय और शुबहे पैदा हों।

सवाल १२—दया भी तो कर्मों के अनुसार होती है ?

जबाव—यह भी तो कहा है

यह भी सब तुम्हरे हाथा।
जो चाहो करो सनाथा॥

सवाल १३—जो लोग खाली दर्शन करते हैं, सुमरन ध्यान भजन नहीं बनता, उनको कर्म फल मिलेगा या भक्ति फल ?

जवाब—भक्ति फल। अंतर में जरूर चढ़ना चाहिए। स्वरूप के आसरे भी चढ़ सकता है।

सवाल १४—हम लोगों से न सतसंग बनता है, न अभ्यास बनता है, न सतसंग की रीत पर चल सकते हैं तो हम लोगों का उद्धार कैसे होगा ?

जवाब—जो लोग यहाँ हिल मिल कर रहते हैं, उनका बहुत जल्दी उद्धार होगा।

सवाल १५—मुक्ति और उद्धार एक ही बात है या अलग अलग ?

जवाब—मुक्ति दसवें द्वार में और उद्धार सत्तलोक में होता है।

सवाल १६—कई दफा कलियुग लग चुका है ?

जवाब—हाँ।

सबाल १७—हर कलियुग में ऐसा ही दुख तकलीफ़ हुआ होगा ?

जवाब—हाँ।

सवाल १८—और कलियुगों में राधास्वामी दयाल का अवतार हुआ था या नहीं ?

जवाब—जहाँ तक खयाल है, नहीं हुआ।

सवाल १९—कलियुग में सतयुग का सा जमाना आवेगा ?

जवाब—हाँ, एक हजार वर्ष के लिए आवेगा।

सवाल २०—महाराज ने फ़रमाया है कि एक समय ऐसा आवेगा कि सतसंगियों पर बड़े अत्याचार होंगे। हुज़ूर महाराज और महाराज साहब ने भी फ़रमाया है। तो क्या उस वक्त मालिक की दया गुप्त हो जावेगी ?

जवाब—हाँ, थोड़े वक्त के लिये। फिर राधास्वामी दयाल आवेंगे। सारी दुनिया में अमन हो जावेगा।

सवाल २१—जो सुरत ऊपर के लोकों में चढ़ाई करती है, वह अगर रास्ते में भूल जावे तो वहाँ पर संत सतगुरु से रास्ता पूछ सकती है ?

जवाब—यहीं पूछ सकती है। संत सतगुरु ज़रूर मिलेंगे, नर चोले में।

सवाल २२—जैसे यहां सतसंग लीला बिलास होता है, ऐसे वहां पर भी होता है ?

जवाब—हाँ, वहां पर भी सतसंग और दर्शन संत सतगुरु का होता है। जिसने तीन रोज़ भी संत सतगुरु की प्रीत प्रतीत सहित भजन किया है, वह सहस दल कँवल से नीचे रहता ही नहीं। आगे उसकी चढ़ाई है तो आगे के लोकों में चला जाता है।

सवाल २३—जोत फाड़ आगे चली—क्या जोत को फाड़ना होगा ?

जवाब—उसके भीतर होकर जाना पड़ेगा।

सवाल २४—ऊँचे मुक़ामों से जैसे त्रिकुटी या सुन्न से जो सुरत नर चोले में आती है, वह ख़ुशी से आती है या जबरन ?

जवाब—ख़ुशी से आती है। उसको मालूम हो जाता है कि और ऊँचा मुक़ाम मिलेगा।

सवाल २५—बच्चा सोता हुआ क्यों हँसता है ?

जवाब—उसको जोत का दर्शन होता है।

सवाल २६—जिसमें काम अंग ज्यादा है, उसको अगले जन्म में क्या जोन मिलेगी ?

जवाब—कर्म अच्छे हैं तो नर चोला और कर्म ख़राब हैं तो जानवर की जोन में जाता है।

सवाल २७—चिन्ता की जड़ कहाँ तक है ?

जवाब—दसवें द्वार तक।

सवाल २८—"राधास्वामी पूज पुजावें राधास्वामी", इसका क्या मतलब है ?

जवाब—राधास्वामी दयाल जिस चोले में आए, उस चोले में अभ्यास करके जो उनका निज रूप है, उसको प्राप्त किया यानी उसको पूजा और पुजवाया।

सवाल २९—"पीकदान ले पोक करावे, फिर सब पीक आप पी जावे" इसका क्या मतलब है ? जो करावे सोई पी जावे ?

जवाब—नहीं। चाहे पीवे, चाहे बाँट देवे। कोई न पीवे तो फेंक दे। स्वामीजी महाराज ने महिमा की है। सेवक को पीना चाहिये। चरनामृत और प्रसादी इमारत का खंभा है।

सवाल ३०—"तुम वहाँ रहना राज कमाना, हम पहुँचे जहाँ राधास्वामी डेरा"। वहाँ पर तो कितने ही मन होंगे, तो बहुत राजा होंगे ?

जवाब—वहाँ पर जो ब्रह्मांडी मन है, उसमें सब समा जाते हैं और सब एक हो जाते हैं। जहाँ से मन आया है, उसी में समा जाता है। ऐसे ही सुरत सत्तलोक से आई है। वहाँ जाकर सत्तपुरुष के चरनों में समा जाती है।

सवाल ३१— भजन में ऊपर के लोकों में चढ़ाई करते वक्त अगर सुरत राधास्वामी और गुरु को भूल जाय और काल व माया के जाल में फँस जाय तो क्या होगा ?

जवाब—सतगुरु सुरत को चेताते जावेंगे और कहीं फँसने न देंगे।

सवाल ३२—संत साध महात्माओं की उम्र मुक़र्रर रहती है या कि चाहे जितने दिन रह सकते हैं ?

जवाब—उनको सब मालूम है। जितनी उम्र की ज़रूरत होती है, वहीं से लेकर आते हैं।

सवाल ३३—जब संत सतगुरु गुप्त होते हैं और अपना जा-नशीन मुक़र्रर करते हैं तो जा-नशीन संत सतगुरु के दर्शन होते हैं या नहीं ?

जवाब—हाँ, होते हैं।

सवाल ३४—स्वप्न में या भजन में ?

जवाब—भजन में, सिर्फ़ एक दफ़ा।

सवाल ३५—तो फिर सतसंगी आपको छोड़ कर इधर उधर क्यों चले गये ?

जवाब—वह सब पहले ही चले गये। आगे पीछे सब अधिकारी वापस आ जावेंगे।

सवाल ३६—गनिका, अजामिल, सेवरी, बालमीकि वग़ैरा सब पापी भी कहे गए हैं। मालिक ने उनको तार लिया। वह लोग ऊँचे से आए थे या जीव थे ? अगर जीव थे तो हम लोग भी कामी क्रोधी लोभी पापी और नीच हैं, हम लोगों को क्यों देर लगती है ?

जवाब—ज़रूर तरोगे। ज़रूर तरोगे। ज़रूर तरोगे।

सवाल ३७—सतसंगी हो जाने पर अष्ट कुलों का उद्धार होता है या कोई गति प्राप्त करले, तब ?

जवाब—फ़रमाया है कि जिसकी पूरन भक्ति हो और जिसने तन मन धन भेंट कर दिया हो, उसके अष्ट कुलों का उद्धार होता है।

सवाल ३८—"महा सुन्न में लगन लगाई, गुप्त भेद दे सुरत चढ़ाई"। वह गुप्त भेद यहां नहीं बताया जा सकता ?

२५

जवाब—सुरत जब वहाँ जावेगी, तब भेद बताया जावेगा।

सवाल ३९—कौन बतावेगा ?

जवाब—गुरु बतावेंगे। संग २ चलेंगे।

सवाल ४०—क्या गुरु से सुरत बात चीत करती है ?

जवाब—हाँ, वहाँ की बोली में।

सवाल ४१—वहाँ की बोली क्या है ?

जवाब—शब्द।

सवाल ४२—अजपा जाप किसको कहते हैं ?

जवाब—शब्द को सुनना।

सवाल ४३—"गुरू सँग जागन का फल भारी"। गुरू सोते रहें तो उस वक्त सेवा का फल नहीं मिलता ?

जवाब—गुरु तो कभी सोते ही नहीं। और लिखा है, "सेवा करे दरस पुनि पावे, बचन सुनत गुलज़ारी"। अगर गुरू सोवेंगे तो बचन क्या कहेंगे ? और सेवक स्वामी एक हैं।

सवाल ४४—नींद की जड़ कहाँ तक है ?

जवाब—नींद तो सुरत के अंग में समाई हुई है। जैसे-जैसे सुरत ऊपर जावेगी, चैतन्यता बढ़ती जावेगी। त्रिकुटी में नींद बहुत कम रहेगी। दसवें द्वार में ख़तम हो जावेगी।

सवाल ४५—जो सतसंगी मरते हैं, उनमें से अगर कोई कर्मवश भूत जोन में चला जावे तो भूत जोन से नर चोला मिलेगा कि चौरासी में जावेगा ?

जवाब—उसको नर चोला मिलेगा।

सवाल ४६—संत सतगुरु बिना कमाई के सुरत को कहाँ तक ले जा सकते हैं ?

जवाब—सत्तलोक तक ले जा सकते हैं।

सवाल ४७—काल भी संत सतगुरु का रूप बना सकता है ?

जवाब—बना सकता है, मगर आँख और पेशानी नहीं बना सकता। संत सतगुरु की आँख और पेशानी का श्वेत रंग होता है। काल का सिर ओछा होता है। आँख लाल होती है। "राधास्वामी" नाम के सामने काल ठहर नहीं सकता, भाग जायगा। सेवक "राधास्वामी" नाम का उच्चारण करे या संत सतगुरु का रूप "राधास्वामी" बोलें तो समझना चाहिए कि यह संत सतगुरु का रूप है। संत सतगुरु के रूप और काल के रूप की पहचान "राधास्वामी नाम है।

सवाल ४८—जिसका तीसरा तिल खुल गया, उसने मौत को जीत लिया ?

जवाब—तिल के अन्दर जावे और फिर इतना होश रहे कि निकल आवे, नहीं तो शरीर छूट जावेगा। अगर इतना होश रहा तो मौत को जीत लिया।

सवाल ४९—काया पलट किसको कहते हैं ?

जवाब—जो खाना खाता था उसको नाम मात्र कर दे, नींद भूख स्वभाव पलट जावे, उसको काया पलट कहते हैं।

सवाल ५०—जहाँ पर संत सतगुरु विराजते हैं, वहां पर काल करम ज़्यादा ज़ोर करते हैं ?

जवाब—हाँ।

सवाल ५१—डरता नहीं ?

जबाब—डरता है, मगर उनके चेलों को भरमाता है और लड़ाता है और दुश्मनी करा देता है।

सवाल ५२—गुरू की सेवा बड़ी है या हुक्म ?

जवाब—हुक्म बड़ा है।

सवाल ५३—कोई गुरु भक्त है, नेक है, अच्छा है, अच्छी करनी करता है, उसको बहुत दुख उठाना पड़ता है, यहां तक कि हर वक्त दुख घेरे रहते हैं और पापी, चोर और बदमाश जल्दी मर जाते हैं, ज़ाहिरा उनको दुख नहीं भोगना पड़ता है। इसका क्या मतलब है ?

जवाब—भक्त इसी जन्म में सब अदा कर देता है और चोर बदमाश जो हैं, उनको कई जन्म भोगना पड़ेगा।

सवाल ५४—संत साध महात्माओं के नाखून और बाल जन्तर में पहनने से क्या होता है ?

जवाब—काल और माया से रक्षा और सम्हाल होती है।

CHAPTER 9

QUESTIONS AND ANSWERS
THE QUESTIONS ASKED, FROM TIME TO TIME, BY SATSANGIS, THROUGH LETTERS OR VERBALLY, AND THE ANSWERS GRACIOUSLY GIVEN BY BABUJI MAHARAJ

(*Translation*)

Question 1. Why is it that nothing is said, at the time of initiation, about the *Anami Pad*, which is above Sat Lok and below Alakh Lok ?

Answer Both Shabd and Form are in an unmanifest (*gupt*) form in the *Anami Pad*, which is above Sat Lok. The adoption of the Shabd of that region is not necessary. An Abhyasi, who reaches Sat Lok by the help and grace of Sant, can reach *Radhasoami Anami Pad* by adopting the Holy Name RADHASOAMI. For going upward, an Abhyasi obtains a telescope (power of spiritual vision) from Sat Purush with the aid of which the Abhyasi can go higher up.

Question 2. Why is Sat Lok called the fourth Lok, when it is the fifth on reckoning from the above ?

Answer Sat Lok is called the fourth Lok, as it is beyond the three Loks, viz., *Pind, And,* and *Brahmand.*

Question 3. Why is Sunn called Daswan Dwar (tenth orifice) ?

Answer The seven apertures of the sense organs, Sahasdal-kanwal and Trikuti are added to make nine; and thus the tenth aperture is Sunn. This is the Daswan Dwar of Sants. The Daswan Dwar of Yogis is in the third Til. In this reckoning, the two apertures of action, viz., the generative organ and the anus are also included.

Question 4. Is there soul in stone or not ? If so, where is it located ? If a large piece of stone is broken into small pieces, does each one of the small pieces contain soul or not ? Again if all these small pieces are joined together in the construction of a wall, do they all have soul or not ?

Answer — In the entire creation where *Akar* or form of any kind exists, there is *Chaitanya Ansh* (spirit force). This *Chaitanya* is called *Jarh Chaitanya* (spirit-force in inanimate objects).

सतगुरु आरत लीन्ह सिंगारी ।
जड़ चेतन से सुरत निकारी ॥
जीव चैतन्य देश अब छोड़ा ।
शब्द चैतन्य देश किया पोढ़ा ॥

Sat Guru Arat leenh singari.
Jarh Chetan se Surat nikari.
Jiva Chaitanya desh ab chhora.
Shabd Chaitanya desh kiya porha.

(Sar Bachan Poetry)

Translation :—By performing the Arti of Sat Guru, Surat was retrieved from Jarh Chaitanya. Thereupon in its upward march, Surat left behind the regions of Jiva Chaitanya and effected securely its ingress into the regions of Shabd Chaitanya.

In every particle or atom, its life or soul in the form of Jarh Chaitanya (non-intelligent spirit force or energy) is located at its nucleus.

Question 5. Can access to regions of Brahmand and Sach Khand be had without the translation of the spirit to the third Til or not ? It is said that death ensues when the spirit passes through the third Til.

Answer — Access into Brahmand and Sach Khand cannot be had without passing through the third Til. On arriving at the third Til, one gains a new life immensely more powerful and akin to Surat, provided one reaches the third Til in a conscious state by performing Abhyas (spiritual practices). In the case of such an Abhyasi a subtle link is duly maintained with the body and mind of the lower plane. It is because of this link that the death of the kind in which the body begins to decompose, does not take place. By means of this subtle link, the Abhyasi can come down or go up at will.

Question 6. Can a Surat, on having reached Radhasoami Dham and merged in Radhasoami Dayal, come back again to this world as Sant Sat Guru ?

Answer — A Jiva Surat, on reaching Sat Lok or Radhasoami Dham, generally does not come back to the world.

Question 7. What is meant by 'Nij Dhar' ? Is it some particular Dhar (current) not found in anybody except the Sant Sat Guru ? Or does it mean that when the current of Shabd unites with the Holy Feet of Radhasoami Dayal, the path is opened and cleared ?

Answer — 'Nij Dhar" is that mighty current of spirituality which alone can assume the form of Sant Sat Guru or Gurumukh.

Question 8. What is the difference between the Pindi Mana, Nij Mana and Brahmandi Mana ? Where is each one of them located ?

Answer — The seat of Pindi Mana is at the focus, of the eyes and at the heart centre. That of Nij Mana is at Trikuti and Sahas-dal-kanwal. This is called Brahmandi Mana by Sants.

Question 9. Does the Surat, while performing Abhyas, remain seated at the sixth Chakra from where it travels and enjoys the spectacles of higher regions, or does it actually leave this seat and goes up ?

Answer — If the elevation of the Surat is complete, it leaves its seat at the third Til, and goes to higher regions in entirety. But so long it is the Mauj to remain in the body, a link or connection is maintained, which enables it to descend. Even when partial elevation takes place, some portion of the spirit-current is transferred to regions above the third Til.

Question 10. In the holy books we repeatedly come across Pind, And and Brahmand. Pind is the Timir Khand (region of darkness), and Brahmand is the intermediate region. Which is the region called And ?

Answer — The Srishti (creation) of Jyoti Niranjan is called And. Above it is Brahm Srishti or Brahmand.

Question 11. What is the difference between the Surat or Ruh and the current of Shabd ? The seed of Surat was given to Kal, from Sat Lok. Were also the currents of Shabd given to him ? The difference between Ruh and the Shabd-current needs elucidation.

Answer — Surat has also the same form as Shabd. Where the current of Shabd halts, it is called Surat. All the creation has been brought into existence by the current of Shabd. Where Shabd takes location, it assumes the form of Surat. When again the current issues forth it becomes Shabd.

These questions are such that an Abhyasi, in the beginning, is not required to know their answers. What is required is simply this much that he should have love and devotion for the Holy Name RADHASOAMI. He should have intelligently understood and acquired faith that this is the true, real and Dhwanyatmak Name of the Supreme Being, and that true and complete salvation cannot be had without Surat Shabd Yoga. A true seeker should give priority to the welfare of his soul. Gradually when the spirit and mind withdraw, and the elevation of the spirit takes place, *Anubhav* (intuition) will be awakened and the secrets and mysteries of the creation will be fully known. This is the proper method of acquainting oneself with inner secrets. Without having recourse to this method, the knowledge acquired from and based on intellectual grasp, is likely to be assailed by new doubts and misgivings.

Question 12. Is not even Daya (grace) granted in accordance with Karams ?

Answer — It has also been said (in Sar Bachan Poetry) :—

यह भी सब तुम्हरे हाथा ।
जो चाहो करो सनाथा ।।

Yeh bhi sab tumhre hatha.
Jo chaho karo sanatha.

Translation :— This too is in Your hands. If you are pleased You afford shelter.

Question 13. Will those, who have Darshan only, but do not perform Sumiran, Dhyan or Bhajan, receive Karam-phal (consequences of this action) or Bhakti-phal (fruit of Bhakti or devotion) ?

Answer — Bhakti-phal (advancement in devotion). Everybody must strive to raise his mind and spirit internally. Elevation can take place by means of Swarup (Form) also.

Question 14. How will our Uddhar (salvation) be effected when we can neither attend Satsang properly, nor can we perform Abhyas, or act up to the principles of Satsang ?

Answer Those who identify themselves with Satsang here, will have their Uddhar (salvation) soon enough.

Question 15. Are Mukti and Uddhar one and the same or are they different ?

Answer Mukti is attained on getting access to Daswan Dwar, while Uddhar (salvation) is effected on securing entrance into Sat Lok.

Question 16. Have there been many Kali Yugas ?

Answer Yes.

Question 17. Was each Kali Yuga full of such miseries and troubles ?

Answer Yes.

Question 18. Did Radhasoami Dayal incarnate in other Kali Yogas ?

Answer I don't think so.

Question 19. Will the conditions of Sat Yuga ever supervene in Kali Yuga ?

Answer Yes, for one thousand years.

Question 20. Maharaj has observed that a time would come when great atrocities would be perpetrated on Satsangis. Huzur Maharaj and Maharaj Saheb also said so. Does it mean that the Supreme Father's Daya (mercy) would disappear at that time ?

Answer Yes, for a short while. Radhasoami Dayal would come again. Peace would then reign supreme in the whole world.

Question 21. If a Surat (spirit), advancing to higher regions, loses its way, can it inquire from the Sant Sat Guru how to proceed ?

Answer It can do so here. Sant Sat Guru will surely be met in human form.

Question 22. Are Satsang and other ancillary benefits available in higher regions as well ?

Answer Yes, Sant Sat Guru's Satsang and Darshan are had there. Whosoever has performed Bhajan for even three days, with love for and faith in the Sant Sat Guru, will not stop below Sahas-dal-kanwal. If he has succeeded in elevating his Surat still higher, he will go to higher regions.

Question 23. ' जोत फाड़ आगे चली The Surat went on penetrating through the Jyoti (flame)." Is it required to cut through Jyoti ?

Answer The spirit has to pass through Jyoti.

Question 24. Does a Surat descend from higher region, say from Trikuti or Sunn, and assume human form willingly or under compulsion ?

Answer Willingly. For it knows that it will go still higher up.

Question 25. Why does a baby smile in sleep ?

Answer It gets Darshan of Jyoti.

Question 26. What form will a man, with excessive Kam-ang (passion), get in the next birth ?

Answer If his Karams are good, he will be a human being otherwise a brute.

Question 27. Where is the root of Chinta (anxiety) ?

Answer In Daswan Dwar.

Question 28. What is the meaning of

राधास्वामी पूज पुजावो राधास्वामी

Radhasoami pooj Pujao Radhasoami
(Radhasoami worshipped and got worshipped Radhasoami)

Answer Radhasoami assumed human form. In that Form, He performed Abhyas and attained to His Nij Rup (Real Form). In other words, He worshipped the Nij Rup ; and got this Rup worshipped by others.

Question 29. What is the meaning of

पीकदान ले पीक करावे
फिर सब पीक आप पी जावे

Pikdan le pik karawe
Phir sab pik ap pee jawe

(The devotee should receive the spittle in a spittoon and should then drink all of it himself.)
Does it mean that the devotee should drink it all himself ?

Answer — Not necessarily. He may drink it or distribute it to others. If nobody drinks it, he may throw it away. Soamiji Maharaj has stressed its importance. A devotee must drink it. Charnamrit and Prashad are the pillars of the edifice of Parmarth.

Question 30.

तुम वहाँ रहना राज कमाना
हम पहुँचें जहाँ राधास्वामी डेरा

Tum wahan rahna raj kamana
Ham pahunchen jahan Radhasoami dera

(The mind should stop and rule there. The spirit will repair to the abode of Radhasoami.)

There must be innumerable minds there, so there would be as many rulers ?

Answer — All minds merge in the *Brahmandi Mana* (Universal Mind), and become one. The mind merges in Brahm, its origin. Similarly the Surat has come down from Sat Lok. It merges in the Feet of Sat Purush.

Question 31. What will happen, if in Bhajan, while the Surat is going up, into the higher regions, it forgets Radhasoami and the Guru, and is caught in the net of Kal and Maya ?

Answer — Sat Guru will keep company with the Surat, and will not allow it to be lost in the meshes of Kal and Maya.

Question 32. Is the life span of Sants, Sadhs and Mahatmas fixed or they can live as long as they wish ?

Answer — They know everything. They come to live for the period it is necessary.

Question 33. When the Sant Sat Guru departs from this world, He ordains someone as His successor. Do Satsangis get the Darshan of the successor Sant Sat Guru ?

Answer — Yes, they do get.

Question 34. In dream or in Bhajan ?

Answer — In Bhajan, only once.

Question 35. Then why did Satsangis leave You and go astray ?

Answer They had already left the true Satsang before the manifestation of the next Sant Sat Guru. However, the Adhikaris will sooner or later come back to the true Sant Sat Guru and Satsang.

Question 36. There have been Ganika,[1] Ajamil[2], Seori[3], Balmiki[4] and other sinners. They were all redeemed. Did they come from above or were they ordinary Jivas ? If they belonged to the latter category, then we are also libidinous, wrathful, greedy, sinners and worthless like them. Why should there be delay in our redemption ?

Answer You shall certainly be redeemed, redeemed, redeemed.

Question 37. Is the salvation of one's Asht-kul (corelated eight families) effected on one's becoming a Satsangi or when one secures some high spiritual status ?

Answer It has been said that the salvation of *Asht-kul* is effected in the case of those whose Bhakti (devotion) is perfect and who have surrendered their body, mind and wealth.

Questions 38. महासुन्न में लगन लगाई
गुप्त भेद दे सुरत चढ़ाई

Maha Sunn main lagan lagai
Gupt bhed de Surat charhai

(On reaching Maha-Sunn the secrets were given out and the Surat raised.)

Cannot these secrets be disclosed here ?

Answer. When the Surat reaches there, the secrets will be given out.

Question 39. Who will do so ?

Answer. The Guru. He will accompany the Surat.

Question 40. Does Surat converse with the Guru ?

(1) She was a dancing girl. (2) A certain Brahman who was a great sinner and a penitent. (3) A female worshipper of Ram Chandra. She belonged to a wild mountainous race who live on hunting. (4) He was s Brahman by birth, but being abandoned by his parents in his childhood, he was found by some wild mountaineers who taught him the art of thieving.

Answer. Yes, in the language of that region.

Question 41. What is the language of that region ?

Answer. Shabd.

Question 42. What is Ajpa Jap ?

Answer. The hearing of Shabd.

Question 43. "गुरू संग जागन का फल भारी Guru sang jagan ka phal bhari" (Great is the benefit of keeping awake with the Guru). Will Sewa be fruitful if Guru is sleeping ?

Answer. Guru never sleeps. It has also been said :—

सेवा मिले दरस पुनि पावे
बचन सुनत गुलज़ारी

Sewa mile daras puni pawe
Bachan sunat gulzari

(The devotee performs sewa, gets Darshan and is enraptured on hearing discourses).

If Guru is sleeping, how will He deliver discourses ? And Sewak (server) and Soami (Master) are one.

Question 44. Where is the root of sleep ?

Answer. Sleep is ingrained in Surat. As Surat rises higher and higher, Chaitanyata (spiritual consciousness) goes on increasing. In Trikuti, there is very little sleep ; in Daswan Dwar it ends.

Question 45. If a Satsangi, due to his Karams, becomes a ghost after death, will he pass from the ghost to human form or will he go to Chaurasi ?

Answer. He will get human form.

Question 46. If a devotee performs no Abhyas how far can the Sant Sat Guru take his Surat ?

Answer Upto Sat Lok.

Question 47. Can Kal assume the form of the Sant Sat Guru ?

Answer Yes, but he cannot imitate the eyes and forehead of the Sant Sat Guru, which are white in colour. The head of Kal is small and shallow. His eyes are red. Kal cannot stay before the Holy Word RADHASOAMI ; he will run away. if

the disciple utters RADHASOAMI or the Sant Sat Guru says RADHASOAMI then it should be understood that the Form is of the Sant Sat Guru. The Sant Sat Guru's Form can be distinguished from that of Kal by RADHASOAMI Nam.

Question 48. If a devotee has pierced through his third Til, can he be said to have conquered death ?

Answer On penetrating into the third Til, he should be able to retain consciousness so that he can come back in the body, otherwise death will ensue. He who retains so much consciousness, has conquered death.

Question 49. What is Kaya-palat (the changing of body) ?

Answer The quantity of food should become nominal. There should be change in the mode of sleeping, eating, behaviour, etc.

Question 50. Is it a fact that Kal and Karam work with greater vehemence at a place where the Sant Sat Guru resides ?

Answer Yes.

Question 51. Is he (Kal) not afraid ?

Answer He fears; but he beguiles the devotees, and makes them quarrel.

Question 52. Which is superior, Sewa or His order ?

Answer Guru's order.

Question 53. A person is devoted to the Guru. He is virtuous and good, and performs good deeds. But he suffers a great deal. He is all the time surrounded by troubles. On the other hand, sinners, thieves and rogues do not seem to suffer long; death comes to them easily. How is this to be explained ?

Answer A devotee pays off all his debt in this very life. But immoral persons will have to suffer for many lives.

Question 54. What benefit accrues from wearing amulets containing the hair and nails of Sants, Sadhs and Mahatmas ?

Answer The wearer gets protection against Kal and Maya.

अध्याय १०

बाबूजी महाराज के बचन और चंद सवाल और उनके जवाब जिनके ग्रामोफोन रेकार्ड बने

(1)

तारीख़ २६ दिसम्बर सन् १६४८ ईसवी बुधवार को सुबह सवा पाँच बजे और फिर क़रीब आठ बजे कुल्ली दाँतन से पहले :—

जिस जीव को सच्चे परमार्थ की चाह सच्ची है, उसको चाहिये कि पूरे संत सतगुरु की खोज करे। वही दुर्लभ रतन हैं और उनके बग़ैर मुमकिन नहीं है कि जीव इस तुच्छ देश को छोड़ करके ऊँचे अपने निज स्थान पर पहुँच सके या सुरत शब्द को पकड़ के जा सके। बिना सुरत शब्द योग के कोई रास्ता नहीं है कि जो सुरत उस मुक़ाम को प्राप्त कर सके। और जितने जतन कि पेश्तर के वक़्त में लोगों ने किए हैं, वह पहले स्थान हद्द दूसरे स्थान पर संतों के ख़तम हो गये। उसके आगे जाने के लिए, सिवा संत सतगुरू के कि जिनको सत्तपुरुष और राधास्वामी धाम तक जाने की शक्ति है, मार्ग प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए सर्वाङ्ग करके पहले संत सतगुरु के तलाश करने और उनके मिलने पर अपने तन मन धन को उनके सामने अर्पन करने में इसको संकोच नहीं करना चाहिये।

सवाल जवाब

गौरी बाबू—महाराज यह सवाल सब सतसंगियों की तबियत में है कि महाराज ने जो अपनी अवस्था इस तरह से कर रक्खी है, इसकी ख़ास क्या वजह है ?

बाबूजी महाराज—इसकी कोई वजह नहीं। यह तो उम्र का तक़ाजा है।

गौ०—नहीं तो उम्र का तो है महाराज, लेकिन जिस तरह से कि महाराज लेटे हुए हैं छः वर्ष से।

म०—चार वर्ष से।

गौ०—महाराज छः वर्ष हो गए अब तो।

म० —ऊँ हूँ।

गौ०—१६४३ पहली अपरेल को महाराज बीमार हुए थे।

म० —हूँ।

गौ०—और अब सन् ४६ आ गया महाराज।

म० —अच्छा।

गौ०—तो इसकी क्या ख़ास वजह है और सतसंगियों को इससे क्या फ़ायदा है ?

म० —इसकी कोई ख़ास वजह नहीं है। उम्र की दराज़ी[1] की वजह से हो गया है और अभी मृत्यु का समय नहीं आया, इसलिए प्राण हैंगे शरीर में।

गौ०—और सतसंगियों को इससे क्या लाभ होगा महाराज ?

म० —जब चाहें आवें, दर्शन कर सकते हैं, बातचीत कर सकते हैं। चलते फिरते वक़्त में तो ख़ास वक़्त में ही आ सकते थे।

गौ०—तो इसका तो मतलब महाराज यह है कि सतसंगियों के लिए इस वक़्त ज़्यादा फ़ायदा उठाने का मौक़ा है ?

म० —ज़्यादा फ़ायदा तो नहीं उठा सकते क्योंकि जो कि सतसंग में बचन कहते थे उससे जितना लाभ होता था, उतना इस पड़े रहने में नहीं हो सकता मगर थोड़ा बहुत हो जाता है।

(२)

गौ०—महाराज स्वामीबाग़ के लिये आगे तरक्क़ी का सवाल है यानी स्वामीबाग़ में महाराज आगे तरक्की होती जायगी ?

म० —हाँ हाँ।

गौ०—और समाध के लिये कब तक उम्मीद करें कि तैयार होगी ?

म० —यह कुछ नहीं कहा जा सकता। एक तरह पर तो तैयार होके ख़तम कर दी गई है।

गौ०—महाराज जो बिल्डिंग हाथ में है वह तो बहुत बड़ी है। उसकी उम्मीद रखना कि जल्दी तैयार हो जायगी।

म० —बहुत जल्दी नहीं हो सकती।

गौ०—जी। लेकिन होगी तो ज़रूर ?

म० —हाँ, होगी। होगी ज़रूर, मगर अभी देर लगेगी।

गौ०—और महाराज समाध का काम अब बंद तो नहीं होगा ? जारी रहेगा महाराज ?

म० —जारी रहेगा।

---

(१) लम्बाई। दीर्घता।

गौ०—और सतसंग बढ़ता जायगा दिन दिन ?

म० —हाँ।

संतो बाबू—और यह दयालबाग़ और स्वामीबाग़ के झगड़े किसी वक्त में ख़तम हो जावेंगे ?

म० —हाँ, किसी वक्त में कम होते चले जावेंगे और फिर ग़ायब हो जावेंगे। और कोई ज्यादा सूरत आपस में मेल की नहीं है।

हीरा भाई—महाराज ने एक मर्तबा इलाहाबाद में फ़रमाया था कि राधास्वामी संवत्सर निकाला जायगा तो यह महाराज कब से शुरू होगा ?

म० —अभी ज़रा देर है।

गौ०—और महाराज इसमें भी अभी देर है कि स्वामीजी महाराज और हुज़ूर महाराज का जो आना है।

म० —उसमें बहुत देर है।

प्रभाशंकर—महाराज ! यह प्रार्थना है कि बचनों में फ़रमाया है कि "जो मेरे प्रीतम से प्रीत करे, मोहि प्यारा लागे री" यह बात नहीं हो सकती हम लोग से।

म० —हो जायगी।

प्र० —इसके लिए कुछ दया का बचन होय !

म० —हाँ, जो सच्चे सतसंगी हैं और जिनको राधास्वामी दयाल से सच्ची प्रीत है, उनको ज़रूर वह लोग जो राधास्वामी दयाल से प्रीत करते हैं, प्यारे लगेंगे। यह उनके प्रीत की कसर है जो उनको प्यारे नहीं लगते।

संतो बाबू—और यहाँ सतसंगियों में ज़रा अकसर कुछ कम मेल भाव हो जाता है।

म० —हूँ।

सं० —तो यहाँ ज़रा ज्यादा मेल भाव हो जाय तो अच्छा है।

म० —हो जायगा धीरे धीरे।

---

(३)

गौ०—महाराज अर्ज़ यह है कि इस वक्त जो हिन्दुस्तान की हालत हो रही है यह कब तक रहेगी और इसमें कुछ सहूलियत और उसका

म० —इसमें बहुत सहूलियत और परमार्थ के लिये लाभ होगा और अब बहुत दिन नहीं हैं इस बात के आने के लिये। धीरे २ होती जावेगी।

गौ—और यह महाराज जो हिन्दुस्तान में अब इस वक्त हिन्दू मुसलमानों के भी झगड़े और आपस में झगड़े चल रहे हैं।

म० —यह सब अमन हो जायगा। जब तक कि राधास्वामी दयाल पिता पुत्र का अवतार लेकर आवें, उस वक्त तक सब अमन हो जावेगा।

गौ०—और हम लोगों को उसके बाद तो महाराज फिर आने की या रहने की ज़रूरत नहीं रहेगी महाराज ?

म० —हज़ार वर्ष वह रहेगा।

गौ०—जी महाराज।

म० —और हज़ार वर्ष के बाद सब खिंच जावेंगे, अपने २ ऊँचे स्थान पर मगर सब सत्तलोक नहीं चले जावेंगे।

गौ०—और उसके बाद में महाराज फिर ?

म० —रचना होगी।

गौ०—रचना होगी ! और महाराज फिर यही तकलीफ़ें झेलनी पड़ेंगी ?

म० —जो सत्तलोक चले गए हैं उनको नहीं।

गौ०—लेकिन जो बीच में रह गए हैं महाराज उनको फिर करना पड़ेगा ?

म० —उनको तकलीफ़ उठानी पड़ेगी थोड़ी बहुत, मगर बहुत कम ब-मुक़ाबले उनके कि जो नीचे घाट से आए हैं।

गौ०—और महाराज जिस वक़्त कि स्वामीजी महाराज और हुज़ूर महाराज यहाँ तशरीफ़ लावेंगे और जब दोनों साहब यहाँ मौजूद रहेंगे तो उससे हम लोगों को ज़्यादा फ़ायदा पहुँचेगा महाराज ?

म० —हाँ।

गौ०—क्योंकि जब दोनों होंगे तो ज़्यादा होगा ?

म० —हाँ। उसके संग सब जीवों का उद्धार हो जावेगा। मगर सब सत्तलोक नहीं चले जावेंगे। जहाँ से जो सुरत उत्पन्न हुई है वहाँ पहुँच जावेगी और रचना के पहले जो हाल था, वह हो जावेगा।

कैलाशचन्द्र—महाराज ! संत महात्मा अन्तर्यामी होते हैं तो उनके सामने जो जीव आता है उसको इस बात की जरूरत है या नहीं कि उनसे ज़बानी तौर पर अपनी अर्ज़ मारूज़ करे या वह अंतर्यामता के हिसाब से सब जानते हैं, कुछ अर्ज़ मारूज करने की ज़ाहिरा में ज़रूरत नहीं ?

म० —नहीं, यह बात नहीं है। बराबर अर्ज़ मारूज़ करनी चाहिए।

कै० —महाराज ! संत धार जैसे कि आई हैं और यह कहा जाता है कि जब तक कि सबका उद्धार नहीं हो जायगा, वह जारी रहेगी, बराबर रवाँ रहेगी तो ऐसा तो नहीं है कि बीच में कोई interregnum (इंटरेगनम)* हो जायगा ?

म० —नहीं, interregnum (इंटरेगनम) तो होगा मगर धार नहीं जायगी। फिर आवेंगे संत, interregnum (इंटरेगनम) तो बीच २ में बराबर होता रहेगा।

कै० —तो महाराज अभी तो

म० —मगर अख़ीर के वक़्त में जब आवेंगे तब interregnum (इंटरेगनम) नहीं होवेगा।

कै० —महाराज हाल में तो कोई interregnum (इंटरेगनम) होने की नहीं मौज है ?

म० —उम्मीद तो नहीं। मगर होगा।

कै० —दस बीस वर्ष तो महाराज नहीं होगा interregnum (इंटरेगनम) कोई ?

म० —उम्मीद तो नहीं है।

कै० —राधास्वामी।

गौ०—और महाराज इसकी पहचान हम लोगों को फिर कैसे होगी ?

म० —जीव के कल्याण के लिये जिस २ बात के पहचान की ज़रूरत होगी वह अपनी दया से आप बराबर बख़्शते जावेंगे।

(४)

संतदास—यह बात आपसे दरयाफ़्त करनी है कि स्वामीजी महाराज जब अंतर्द्धान हो गए, उसके बाद आप पढ़ने में लग गए और फिर हुज़ूर महाराज ने कैसे आपको सँभाला ? कहते हैं कि आपके घर ढूँढते २ गए थे। वह जो बात है ज़रा बतला दीजिये।

म० —नहीं। न महाराज साहब को न हमको उतने दिन तक अपने यहाँ सतसंग में नहीं लगाया। (तीन महीने की छुटाई बड़ाई थी)। वह इसलिये कि अगर वहाँ लग जाते तो फिर पढ़ नहीं सकते थे। पढ़ने के बाद यानी जब पढ़ना ख़तम हुआ, तब हुज़ूर महाराज ने बनारस में आने की मौज की और मुझको लिखा और उन्होंने भी—महाराजसाहब ने—कहा कि मैं भी स्टेशन चलूँगा। वह भी गए। हम दोनों संग ले करके, गाड़ी में बैठा करके, उनको लाए, और राजा मुँशी माधोलाल के बाग़ में उतारा और वहाँ यों तो दो ही तीन दिन रहते थे मगर उस मर्तबा वह दस रोज़ रहे।

*गद्दी का ख़ाली रहना।

सं० —यह जो बात है कि हुज़ूर महाराज आपको ढूँढ़ते हुए आये थे कि आपका कहाँ घर है, यह बात कहाँ तक ठीक है ?

म० —यह कहाँ ? यह तो वह जानते थे। जिस वक्त कि हमारी दादी मौजूद थीं, तब वह घर पर आए थे तो शायद दरयाफ़्त करने की बीच में ज़रूरत हुई होगी।

सं० —यों कहते हैं कि आप से यह पूछा था कि तुम कुछ अभ्यास वभ्यास भी करते हो कि नहीं ?

म० —यह स्वामीजी महाराज ने पूछा था। हुज़ूर महाराज ने नहीं। हमने कहा कि हम प्राणायाम करते हैं जो हमारे दादा ने सिखाया है। मैंने उनसे कहा कि मुझे अभ्यास दो तो कहने लगे कि उसमें कोई बंधन न हो तो हम दें। हमने कहा, कोई बंधन नहीं। फिर दिया। उसी मिट्टी की चौकी पर जो बनी थी, उस पर बैठे और मुझको अपने पास बैठा करके उपदेश दिया।

कं० —अगर कोई सतसंगी यह चाहे कि उसकी चाल कुछ मामूली से ज्यादा सतसंग में और परमार्थ में चल सके और वह संत सतगुरु से अर्ज़ करे इस बारे में तो कुछ तरक़्क़ी मामूल से ज्यादा कोई दूसरे क़ायदे से हो सकती है या कर्मानुसार जो चल रहा है, वही चक्र चलेगा ?

म० —कमोबेश तो वही चलेगा मगर इस दरख्वास्त करने से कुछ सहूलियत हो जावेगी।

कं० —महाराज संत सतगुरु के रूप को ध्यान में लाने की बड़ी कोशिश की जाती है मगर वह आते नहीं तो क्या काम किया जावे, क्या जतन किया जावे, कैसे उनके रूप को पकड़ा जावे ?

म० — वह ऊँचे स्थान पर हैं। इस वास्ते वहाँ तक सुरत नहीं पहुँचती और ध्यान में नहीं आते। जब अभ्यास करके सुरत वहाँ तक पहुँचने लगेगी तब स्वरूप प्रकट हो जावेगा।

तारीख ३० और ३१ दिसम्बर सन् १९४८ की रात ग्यारह से साढ़े बारह बजे तक जो ग्रामोफोन रेकार्ड तैयार हुए :—

बचन

(५)

सुरत इस देश की बासी नहीं है। वहाँ की बासी है जहाँ कि राधास्वामी दयाल का आदि धाम है और वहाँ पुरुष के संग अभेद थी और उसको अपना अलेहदा ज्ञान

पुरुष का नहीं था। इस देश में उतर करके जो कुछ कि काल और कर्म और माया के पर्दे हैं उनको हटा कर धीरे २ अभ्यास करके जो कि संत सतगुरु से उपदेश लेकर और उनकी मदद के बग़ैर नहीं हो सकता, पहुँचाना और वहाँ पहुँच करके उसको अपना अलेहदा ज्ञान राधास्वामी दयाल का प्राप्त हो तो इसी को सच्चा और पूरा उद्धार कहते हैं।

इसी अलेहदा ज्ञान प्राप्त करने के लिए सुरत इस देश में उतारी गई। सत्तलोक तक तो वह उतर करके आई और उसके नीचे से काल और माया की धार प्रकट हुई। उसने (काल ने) सुरत को माँगा क्योंकि वह आप कोई रचना नहीं कर सकता था और इस सुरत को अपना अलेहदा ज्ञान भी प्राप्त नहीं हो सकता था। इसलिये उसके माँगने पर मसलहत समझ करके सुरत को उसके सुपुर्द किया और वह, काल और माया के संग उतर करके पिंड देश में नौ द्वार में आकर कार्रवाई करने लगी। यहाँ कार्रवाई करने का मतलब यह है कि धीरे २ इसके ऊपर जिस क़दर काल और माया के ख़ोल है, वह उतर जायँ और वह होश में आकर अपने उस निज देश को जहाँ की कि असली बासी है पहुँच कर पूरा ज्ञान सतपुरुष राधास्वामी का प्राप्त करे। उसके लिये दरकार है कि इसको संत सतगुरु मिलें और यहां के प्रपंच से जिसमें कि सब इन्द्रियों के और काल के भोग हैं और उसके संग काल कर्म के भरमती रहती है, वह यहाँ से चले। मगर यह अपने बूते और बल से नहीं चल सकेगी और जब तक कि यह पिंडी स्थान के मन से न्यारी होकर के ऊपर चलना शुरू न करे तब तक इसको ऊपर के जाने की गति नहीं प्राप्त हो सकती।

(६)

इसके लिये ज़रूर है कि संत सतगुरू से इसका भेंटा हो और उनसे मदद लेकर के सुरत शब्द कमाई करके अपने निज देश को प्राप्त हो। वहाँ पहुँच कर इसको पूरा होश सत्तपुरुष राधास्वामी से अलेहदा हो कर के प्राप्त होगा और वहां का ज्ञान प्राप्त होगा। बग़ैर उनकी मदद के इस देश से चढ़ कर अपने निज धाम को पहुँचना सुरत के लिये ना-मुनकन है। सुरत शब्द का रास्ता उन्होंने जारी फ़रमाया और उनमें यह शक्ति और बल है कि जब जीव को अपनी ताक़त की मदद देकर के उस देश में धीरे २ अभ्यास करके पहुँचावें और सुरत के निज देश राधास्वामी धाम में पहुँचे तब संतों के मत के अनुसार उसका पूरा उद्धार हुआ और उस जगह का उसको पूरण ज्ञान अपना अलेहदा प्राप्त होगा और उसको जो प्रेम और आनन्द की दशा कि राधास्वामी धाम में है, प्राप्त होगी और उससे बा-ख़बर होकर के जब ज़रूरत हो तो संत सतगुरु का रूप धारन करे। वहाँ से शक्ति आती है और वह जीवों के उद्धार की कार्रवाई करती है। उनकी मदद के बग़ैर सुरत यहाँ से उलट करके अपनी ताक़त से वहाँ नहीं पहुँच सकती।

इस अभ्यास के लिए संत सतगुरु की जरूरत है और यह भी ज़रूरत है कि वह इस देश की कारवाई से किसी क़दर बैराग करके और यहाँ के भोग और बिलासों की परवाह छोड़ करके अपने तईं संत सतगुरु की सरन लेकर उनके अर्पण करदे तो उनकी मदद से और उनकी दया दृष्टि से इसकी सफ़ाई होने लगेगी और धीरे २ सुरत शब्द अभ्यास करके इसकी सुरत ऊपर के स्थानों में चलने लगेगी। मगर एक जन्म में तो यह काम पूरा नहीं हो सकता, चार जन्म में जाकर पूरा होगा।

एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम।
जन्म तीसरे मुक्ति पद, चौथे में निज धाम॥

(७)

इसे देश में मन और माया और काल और कर्म का इतना ज़ोर है कि यह सुरत अपने बल से चढ़ कर ऊपर नहीं जा सकती और नजात पूरी और सच्ची, जो संतों के मत के मुताबिक़ इसके आदि राधास्वामी धाम में बग़ैर पहुँचे नहीं हो सकती, नहीं प्राप्त होगी। इसलिये पहला काम यही है कि जिस सुरत को इस देश से नजात पाने की ख्वाहिश सच्ची और पूरी पैदा हुई जो कि इस देश में अर्से तक रह कर और काल और कर्म के दंड और भोग उठा कर पैदा होगी, वह असली चाह होगी। उस वक़्त में अगर इसको संत सतगुरू मिलेंगे तो उनकी दया से उनमें प्रीत और प्रतीत पैदा होगी जिसके ज़रिये से कि सुरत इसकी यहाँ के भोगों से बेज़ार होकर के अंतर में शब्द के पकड़ने के लिए रुजूअ होगी और वह तीसरे तिल से सुरत निकल कर शब्द में जुड़ करके अंतर में चलने लगेगी और वहाँ से सहसदल कँवल और त्रिकुटी और दो स्थान बीच के हैं, धीरे २ उनकी कमाई करते हुए अपने निज देश में प्राप्त होगी। मगर यह कारवाई एक जन्म में नहीं हो सकती। चार जन्म इसमें लगेंगे। यानी इतनी भक्ति पैदा हो राधास्वामी दयाल के संत सतगुरु रूप में कि इसको किसी क़दर इस देश के भोग विलास से सच्चा बैराग पैदा हो और उनमें इतनी आसक्ति न हो कि उनके बग़ैर इसका जीवन न चल सके। जब इतनी आसक्ति नहीं रहेगी तो इसकी तवज्जह संत सतगुरु की दया से अंतर में आने लगेगी और उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत जागने लगेगी। उनकी मदद से यह सुरत यहाँ से अलग हो कर के और तीसरे तिल में ठहर करके वहाँ से सहसदल कँवल और त्रिकुटी के मुक़ामात में जावेगी। त्रिकुटी में जाकर कुछ अर्से तक यह बासा करेगी कि वहाँ की आबोहवा से जो कुछ कि इसमें पेश्तर यहाँ का झुकाव पैदा हुआ था, वह कम हो जाय और बिल्कुल स्वच्छ और निर्मल वहाँ के घाट के ब-मूजिब होकर के तब अंतर में आगे कमाई कर सकेगी तो उस वक्त में इसको फिर संत सतगुरु मिलेंगे और अंतर के चलने की चाह पैदा होगी।

ता० ३१ दिसम्बर सन् १६४८ और १ जनवरी सन् १६४६ की रात को ग्यारह बजे से एक बजे तक जो रेकार्ड भरे गए :—

(८)

मन माया की सब हालतें जो कि पिंड देश में इसके ऊपर गुज़रती हैं, अपने ऊपर गुज़ारनी पड़ेंगी और इसको अंतर में ऊपर चढ़ने की ताक़त ब-निस्बत पेश्तर के बहुत ज्यादा हासिल हो जायगी और संत सतगुरु की दया से यह अंतर में जल्द चल सकगी और वहां से हो करके महा सुन्न जिसमें कि बहुत अंधकार है और गुप्त स्थान हैं और वहां का चलना अकेले अपने लिए सुरत के ना-मुमकिन है, वह संत सतगुरु की मदद और उनके संग रहने से जायगी और यह भँवरगुफा में जाकर प्राप्त होगी। उस जगह पर इसको पूरण होश हासिल हो जावेगा और इसकी अवस्था भी सत्य रूप होने लगेगी और उस जगह से यह और अंतर में मैदान देखती हुई सत्तलोक में दाख़िल होगी और उस जगह पर सत्त पुरुष का दर्शन करके इसको निहायत मगनता प्राप्त होगी और उस दर्शन की अभिलाषा इसको बहुत ही ज़बर होती चली जावेगी मगर उस जगह से फिर इसको संत सतगुरु अपनी मदद से ऊपर ले जा कर के अलख लोक में और अलख लोक में अलख पुरुष का दर्शन करा कर और वहाँ के बिलास अर्से तक दिखा कर—वहां बहुत ही मगनता इसको प्राप्त होगी—फिर आगे चलने की तैयारी करेगी और संत सतगुरु के संग हो करके यह अगम लोक में प्राप्त होगी। वहां की अवस्था बड़ी प्रबल है और वहां बिल्कुल नूरानी कार्रवाई बड़ी ज़बरदस्त है और उसको देख करके उस जगह पर बड़ी प्रसन्नता हासिल होगी और यह अंतर में और चल कर के राधास्वामी के धाम में प्राप्त होगी। वहां की दशा का कोई वर्णन नहीं हो सकता। आनन्द वहां का बे-इन्तहा और अत्यंत सुखदाई है। उसमें जाकर यह लीन होकर मगन हो जायगी।

(६)

सुरत असल में राधास्वामी धाम की बासी है और उस वक्त राधास्वामी से अभेद थी और उन्हीं में समाई हुई उनके संग थी मगर किसी क़दर ब-निस्बत राधास्वामी पुरुष के इसमें कुछ थोड़ी स्थूलता थी। उसके कारण उतर करके अगम में और अलख में—अगम लोक में अगम, अलख लोक में अलख—और सत्तलोक में आई और उसीसे उनकी अगम पुरुष की और अलख पुरुष की और सत्तपुरुष की, इन पुरुषों की काया बनी और और वहां की जो बासी सुरतें हैं वह उसी अंग में की बनी हुई काया उनकी भी है मगर वह काया अविनाशी है और उसका विनाश नहीं होता और वह उसी देश में हमेशा के लिये क़ायम रहेगी और जो कुछ कि उतरने में मलीनता थोड़ी बहुत ज़्यादा पैदा हुई वह सब आन कर सत्तपुरुष के द्वार पर इकट्ठी हुई और वहां से उतर करके भँवरगुफा में आई। मगर वहाँ भी वह काया बहुत ही शुद्ध है और मलीनता मन और माया की उस जगह पर नहीं है मगर जो कुछ कि स्थूलता उस जगह पर इकट्ठी

हुई वह भँवरगुफा से नीचे को उतरी और इकट्ठी होकर उतरने से उसमें विशेष स्थूलता आ गई। उसी धार का जो वहां से उतरी, नाम काल पुरुष है। मगर काल पुरुष उस जगह पर खड़ा रहा और क़ायम रहा, मगर वह आप कोई रचना नहीं कर सकता था इसलिये जो उसके संग करके वहां की सुरतों में थोड़ी बहुत मलीनता उसके संग से आई थी, उन सुरतों को अपनी मौज से नीचे उतारा और उसका—धार का—जिसके संग वह सुरतें और जीव उतरे जिनसे के आइन्दा चल करके जीव की रचना हुई, नाम आद्या है। वह काल और आद्या दोनों धारें उतर करके आईं और दसवें द्वार में आन करके ठहरीं।

(१०)

दसवें द्वार में अक्षर पुरुष की रचना देख करके काल और आद्या दोनों त्रास करने लगे कि यहाँ इस क़दर नूरानी और अच्छी रचना मौजूद है, हमको अपनी रचना करने की क्या गुँजाइश है। तब अक्षर पुरुष ने दिलासा दिया कि कोई घबराने की बात नहीं है' तुमको नीचे तीन लोक की रचना का मौक़ा है और वहाँ से काल और आद्या की धार उतर करके त्रिकुटी में आई। वहां से सूक्ष्म रूप में पाँच तत्व और तीन गुन पैदा हुए और उनकी मदद से नीचे उतर कर सहसदल कँवल में आई और सहसदल कँवल में मनुष्य चोले की जो सुरत है, उसने वहां ठेका लिया। मनुष्य चोले की सुरत सहसदल कँवल में रहती है। वहाँ से उतर करके मन के घाट पर आकर तमाम कार्रवाई मनुष्य चोले की करती है। इससे जब नीचे उतरे तब धार नाभि और इन्द्री और गुदा में उतरती है। इस जगह पर मनुष्य चोले की कार्रवाई न हो करके पशु चोले की कार्रवाई की रचना होती है और इसी जगह से जितने पशु कि जीव जन्तु इस देश में हैं, उनकी वहाँ से रचना प्रकट हुई है।

[रात बारह का घंटा बोलने के बाद यानी नया वर्ष सन् १६४६ ईसवी लगने पर जो लोग हाज़िर थे उन्होंने भेंटें पेश की और "गुरु की कर हर दम पूजा" वाला शब्द महाराज के सामने पढ़ा गया और उसका भी रेकार्ड तैयार हुआ।

तारीख़ १ जनवरी सन् १६४६ ई० को दिन में दो बजे बाबूजी महाराज समाध स्वामीजी महाराज पर पधारे। पलंग उठा कर ले गए। भीड़ बहुत ज्यादा थी। बहुत कोशिश करने पर भी शोर गुल बन्दर नहीं हुआ। लेकिन बचन फ़रमाते वक्त महाराज दया से तेज़ आवाज़ में बोले। इसलिये बा-वजूद शोर गुल ग्रामोफोन में बचन साफ सुनाई देता है। कई वर्षों के पश्चात् महाराज समाध पर तशरीफ़ ले गए। स्वामीजी महाराज की खड़ाऊँ समाध पर से उठा कर बाबूजी महाराज के हाथों में दी गईं और महाराज ने आँखों और माथे से लगाया। सतसंगियों ने शुकराने की भेंटें पेश कीं। क़रीब पौने तीन बजे वापिस आए। बचन जो फ़रमाया नीचे लिखा जाता है।]

(११)

यहाँ जहाँ कि मौजूद है, वह इसका असली देश नहीं है । वह काल और माया के भुलाव में आकर इस जगह आया है और इन्द्रियों और मन के भोग में इस क़दर फँस गया है कि इसको क़तई याद भी नहीं बाक़ी रही कि इसका निज देश कहाँ है और वहाँ किस तरह पर पहुँचे और इस जगह बराबर दुख सुख के चक्कर में महा दुखी और हैरान रहता है और रोज़ बरोज़ इसका उतार नीचे होता जाता है जिसमें कि इसके दुख की वृद्धि होती जाती है । ऐसी हालत और दशा देख करके संत सतगुरु को जीवों के ऊपर तरस आया और आप आकर संत सतगुरु रूप धारन करके जीवों को उपदेश करते हैं कि तुम अपने निज देश में चलो, वहाँ सिवा सुख और आनन्द के कुछ नहीं है और इस जगह के दुख सुख से बचाव, बग़ैर वहाँ पहुँचे, नहीं हो सकता । मगर जीव अपनी ताक़त से वहाँ नहीं जा सकता । इसलिये संत सतगुरु ने अपना बल देकर के और जिन्होंने कि उनका उपदेश माना, उन्होंने उनकी सरन ग्रहण की और सरन के ब-दौलत उस तरफ़ अन्तर में चलना शुरू किया । सुरत शब्द योग के सिवा कोई सूरत सुरत के अन्तर में चढ़ने की नहीं है । मगर यह मार्ग इस क़दर कठिन है उसके लिए जिसकी कि चैतन्यता क्षीण हो गई है, वरना निहायत सुगम रास्ता और बहुत ही आसानी से पहुँचने का जतन सुरत शब्द योग है । अगर सुरत इसकी यहाँ के मसाले और यहाँ के भोग बिलास से किसी क़दर बैराग करके अंतर में चले तो सुरत शब्द को पकड़ेगी और अंतर में संत सतगुरु की मदद से रफ़्ता २ चलेगी । जब कि यह तीसरे तिल पर पहुँच कर और वहाँ से सहसदल कँवल में जाकर पहुँचेगी, उसके बाद इसका रास्ता बहुत आसान हो जायगा और प्रेम और भक्ति के मार्ग से उस जगह से त्रिकुटी से आगे चल करके सुन्न और महा सुन्न और भँवरगुफा और सत्तलोक और अलख और अगम होते हुए राधास्वामी धाम में निवास पावेगी । वह असली धाम सुरत का है और परम आनन्द का । वहाँ सिवा प्रेम के और कुछ नहीं है । इसका रूप भी वहां जाकर प्रेम स्वरूप हो जायगा और प्रेम स्वरूप तो इसका असली है मगर जब वहाँ थी, तब बेहोश थी । अब जाकर पहुँचेगी तब उस जगह पर होश में आकर सत्तपुरुष राधास्वामी का पूर्ण आनन्द प्राप्त करेगी और इसकी तवज्जह इस तरफ़ आने की बिल्कुल बाक़ी नहीं रहेगी ।

CHAPTER 10

TRANSLATION OF BACHANS OF BABUJI MAHARAJ AND CONVERSATION BETWEEN HIM AND THE SATSANGIS, AS CONTAINED IN GRAMOPHONE RECORDS

Recorded on 29th December 1948, Wednesday, at quarter past 5 O'clock and then again at 8 O'clock in the morning.

(1)

BACHAN

A sincere seeker after true Parmarth, should search for a Perfect Sant Sat Guru who is like a rare jewel. Without His assistance, it is not possible for the Jiva to leave this contemptible world and gain access into his Real Abode high up, or for his Surat to ascend with the help of Shabd. Besides Surat-Shabd Yoga, there is no way whereby the Surat can revert to its Original Home. The paths so far followed by others, terminated either at the first or at most at the second stage of the relegion of Sants. For further advancement, the path cannot be found except through the Sant Sat Guru, who has access upto the regions of Sat Purush and Radhasoami. It is therefore incumbent upon the Jiva, in the first place, to exert his utmost to find out the Sant Sat Guru. When He is met, he should not hesitate to surrender to Him his mind, body and wealth in all respects.

QUESTIONS AND ANSWERS

(Questions put by Satsangis and answers given by Babuji Maharaj).

Gauri Babu : Satsangis are anxious to know why Maharaj (Babuji Maharaj) has chosen to confine Himself to bed.

Babuji Maharaj : No particular reason. It is due to old age.

G. : Of course, it is due to old age. But the manner in which Maharaj has been confined to bed for the last six years

B. J. M. : For four years.

G. : It is now 6 years, Maharaj !

B. J. M. : Is it ?

G. : Maharaj fell ill on April 1, 1943.

B. J. M.: Yes.

G.: "1949" is just to usher in now.

B. J. M.: All right.

G.: Is there any special reason for Maharaj's lying in bed? How is it good for Satsangis?

B. J. M.: There is no particular reason for it. It is due to old age, and the time of death has not yet come. That is why Pran (breath) is still there in the body.

G.: How will Satsangis be benefited by it?

B. J. M.: Whenever they like, they may come, have Darshan and talk. When I used to move about they could come at certain appointed hours only.

G.: Then it comes to this that Satsangis can derive greater benefit at present.

B. J. M.: Greater benefit they cannot derive. The benefit, which accrued from my discourses in Satsang, cannot be derived now. Some benefit, of course, they do derive.

(2)

G.: Will there be greater improvement in Soami Bagh?

B. J. M.: Yes, yes.

G.: When may we expect the construction of the Holy Samadh to be completed?

B. J. M.: Nothing definite can be said about it. In a way, the construction has already been completed.

G.: The proposed building of which the construction is in hand, is very large. Can we expect it to be completed soon?

B. J. M.: Not very soon.

G.: But completed it will be?

B. J. M.: Yes, it shall certainly be completed. But it will take time.

G.: And the construction work will not be interrupted. Will it go on?

B. J. M.: Yes, it will continue.

G. : Will Satsang go on increasing day by day ?

B. J. M. : Yes.

Santo Babu : Will the differences between Soami Bagh and Dayal Bagh come to an end one day ?

B. J. M. : Yes, a time will come when they will begin to diminish. Ultimately they will end. There are no appreciable signs of rapproachment.

Hira Bhai : Maharaj once said at Allahabad that there would be Radhasoami era. When will it begin ?

B. J. M. : There is yet some delay.

G. : Maharaj ! Is there delay too in the advent of Soamiji Maharaj and Huzur Maharaj ?

B. J. M. : That will take a very long time.

Prabha Shankar : Maharaj ! It has been enjoined in Bachans, "One who loves my Beloved, is dear to me." We are unable to follow this injunction.

B. J. M. : It will become possible.

P. : May we hear something about it ?

B. J. M. : The lovers of Radhasoami Dayal will cerainly be dear to those, who are true Satsangis and whose hearts are imbued with a sincere love for Radhasoami Dayal. It is due to deficiency in their love that they are not dear to them.

Santo Babu : At times there appears to be very little amity among Satsangis.

B. J. M. : It is so.

S. : It will be desirable if there is greater amity.

B. J. M. : Gradually there will be.

(3)

G. : Maharaj ! How long will the present condition of India continue ? May there be some improvement ?

B. J. M. : This will result in great improvement and spiritual good. The day is not far off. Gradually, it will be done.

G. : Maharaj ! What about the quarrels going on in the country, between Hindus and Musalmans. and one another ?

B. J. M. : All will end in peace. By the time Radhasoami Dayal incarnates as Father and Son, peace will reign supreme.

G. : Maharaj ! Will we have to come and dwell here after that ?

B. J. M. : That period of peace and tranquility will prevail for one thousand years. after which all will be withdrawn to their respective higher regions. But all will not repair to Sat Lok.

G. : And thereafter ?

B. J. M. : Creation will again be evolved.

G. : Maharaj ! Will the same troubles have to be undergone over again ?

B. J. M. : Not by those who will have secured admittance into Sat Lok.

G. : But will those, who are in intermediate regions, have to suffer ?

B. J. M. : Yes, they will have to undergo some hardship, but very little in comparison with those who rise from lower regions.

G. : Maharaj ! Will greater benefit accrue to us when both Soamiji Maharaj and Huzur Maharaj grace this earth and live here ?

B. J. M. : Yes.

G, : It is because both would be here.

B. J. M. : Yes. With their advent, salvation of all the Jivas will be effected. But all will not repair to Sat Lok. Every Surat (spirit) will go to the region of its origin. Precreational condition will supervene.

Kailash Chandra : Maharaj ! Sants and Mahatmas are omniscient. Is it necessary for a Jiva to relate his troubles and difficulties to them (Sants) and pray for their (Sants') grace, mercy and protection ? Or because they (Sants) are omniscient, and know everything, it is not necessary to do so ?

B. J. M. : One must always pray and supplicate.

K. : Maharaj ! It is said that the Sant Dhar (current of Sant) which has come down to this earth shall not recede until the salvation of all has been effected. It shall continue to be present here. Is there any likelihood of an "interregnum" taking place before this ?

B. J. M. 'Interregnum" there would be, but the current will not go back. Sants will again manifest. Of course, interregnum will be taking place from time to time.

K. : But not just now ?

B. J. M. : There would be no "interregnum", when they will come in the end.

K. : Maharaj : But there is going to be no "interregnum" in the near future ?

B. J. M. : Hope not. But interregnum there shall be.

K. : May there be none, at least for 10 or 20 years, Maharaj ?

B. J. M. : Hope not.

G. : How shall we know about it Maharaj ?

B. J. M. : For the welfare of Jiva, whatever things may be necessary for recogniton, He would Himself go on granting.

(4)

Sant Das : After the departure of Soamiji Maharaj, Your Grace had applied yourself to studies. How did Huzur Maharaj take you under His care ? It is said that He went on making enquiries about your house till He reached there.

B. J. M. : It is like this. Huzur Maharaj did not attract either Maharaj Saheb (who was senior to me by three months) or myself to His Satsang as long as we were students. The reason was that if we had attached ourselves to Satsang, our studies would have suffered. When our education was over, Huzur Maharaj was pleased to visit Benares (Varanasi). When He wrote to me about this,

Maharaj Saheb also wanted to accompany me to the railway station to receive Huzur Maharaj. We both (Maharaj Saheb and myself) took Huzur Maharaj in a carriage to the garden of Raja Munshi Madho Lal. Ordinarily Huzur Maharaj used to stay two or three days only. But on that occasion He stayed there for ten days.

S. D.: How far is it correct that Huzur Maharaj went, searching You, to Your house ?

B. J. M.: There was no necessity for it. Huzur Maharaj knew my house. When my grand mother (Soamiji Maharaj's elder sister) was alive, He had visited my house. To locate it later on, He might have made enquiries.

S. D.: It is said that Huzur Maharaj enquired from You if You were performing any Abhyas.

B. J. M.: This enquiry was made by Soamij Maharaj, not by Huzur Maharaj. I replied that I was performing the Abhyas (practice) of Pranayam as taught by my grand-father. I prayed to Soamiji Maharaj to initiate me. At this, He said, He would do so, if I was not tied to that Abhyas (Pranayam). I replied that I had no such attachment. Thereupon He initiated me. He took His seat on the very ChauKi (raised dias) made of earth on which He used to sit. He seated me by His side and initiated me.

K.: A Satsangi is desirous of effecting some greater progress in his Satsang and Parmarth, for this purpose he prays to the Sant Sat Guru. Will greater progress be possible by any other means or will the progress he is making in accordance with his Karams, continue ?

B. J. M.: More or less, the progress will be made in accordance with the usual law. But this prayer will ease it to some extent.

K.: Maharaj ! We strive very hard to bring the Rup (Form) of the Sant Sat Guru before our mental eye in the practice of Dhyan. But it does not appear. What should we do to fix His Form in Dhyan ?

B. J. M.: That Form is at a higher level. Surat does not reach there. Therefore that Form does not manifest. When by the performance of Abhyas, Surat is able to reach there, the Form will appear.

Recorded from half past eleven to half past twelve in the night between 30th and 31st December,1948.

(5)

Surat is not an inhabitant of this region. It belongs to the region which is the Adi Dham (Prime Abode) of Radhasoami Dayal. There it was merged in the Purush (the Supreme Being Radhasoami Dayal), and had no individual knowledge about Him. It has now to cut asunder all the covers of Kal, Karam and Maya, which it has assumed on descent to this region. After receiving initiation from the Sant Sat Guru it has to perform Abhyas (spiritual practice), which is not possible without His help. Thus it has gradually to proceed towards and reach that Region. There, it will obtain distinct knowledge of Radhasoami Dayal. This is termed as true and complete Uddhar (salvation).

For acquiring this very knowledge, the Surat has to descend to this region. Upto Sat Lok it is spirit and spirit alone. Below appeared the currents of Kal and Maya. Kal begged of Dayal to grant him Surats, as, by himself, he could not bring about any creation. Also Surats could not acquire individual knowledge. Kal's prayer was granted and Surats were entrusted to his care; because the good of all was involved in this arrangement. It was thus that Surats descended, with Kal and Maya, to the Pind Desh, and began to function through the nine apertures in the body. The object was that by this "functioning" gradually the covers of Kal and Maya are cast off and the Surat gains consciousness and returns to its Nij Desh, its real home. On reaching there it will acquire full knowledge of Sat Purush Radhasoami. For this it is imperative for the Surat to meet the Sant Sat Guru and to depart from here by getting out of delusions. These delusions include the pleasures of senses and Kal, in which the spirit entity is entangled due to its association with Kal and Karam, But it cannot go back of its own accord and by its own efforts. As long as it does not proceed upwards by disengaging itself from the region of Pindi Mana (individual mind), it cannot be fit to raise itself.

(6)

It is necessary to come in contact with the Sant Sat Guru, and with His help, to perform Surat Shabd Abhyas and to get admittance into the Nij Desh (Real Abode). On reaching there, the Surat will acquire individual

consciousness and knowledge, distinct from Sat Purush Radhasoami. Without the help of the Sant Sat Guru, it is impossible for the Surat to enter its Nij Dham. He has graciously opened the royal road of Surat Shabd. He alone has the power to admit the Surat into that region after imparting His own strength to the Jiva, and making him perform the Abhyas gradually. Complete salvation, according to Sants, is attained when the Surat reaches its Nij Desh, Radhasoami Dham. There it will individually acquire full knowledge of that Region. It will attain to the state of Prem and Anand prevailing in Radhasoami Dham. Retaining full consciousness it can whenever necessary, assume the form of Sant Sat Guru. The impulse comes from there, and effects salvation of Jivas. Without the help of Sant Sat Guru, Surat cannot revert there by its own endeavours.

Sant Sat Guru is necessary for the performance of this Abhyas. It is also necessary to be detached from the activities of this world to some extent. Being indifferent to the pleasures of this world, the Jiva should accept the Saran of the Sant Sat Guru and surrender himself to Him. It is then that, by His help and glance full of grace, purification will be effected and Surat will gradually proceed towards higher regions by the practice of Surat Shabd Abhyas. But this cannot be accomplished in one life. This is the work of four lives.

एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम ।
जन्म तीसरे मुक्ति पद चौथे में निज धाम ॥

EK janam Guru Bhakti kar, Janam dusre Nam
Janam tisre Mukti Pad, chauthe main Nij Dham.

Translatian :— Devote one life to the service of the Guru; attain Nam (i. e., Trikuti) in the second life; reach Mukti Pad (i. e. Sunn) in the third life; attain the final abode in the fourth life.

(7)

Mana, Maya, Kal and Karam are so dominant in this world that the Surat cannot ascend by itself. Nor can true and complete emancipation be attained, which according to Sant Mat, consists in gaining access to the Adi Dham, Radhasoami Dham. Therefore, the first essential is that a sincere and strong desire for attaining emancipation should be created. This would be done after undergoing punishment and suffering at the hands of Kal and Karam and after long sojourn in this world. If, thereafter, the Sant Sat Guru is met, by His Daya (grace and mercy), love and faith will be

engendered. This will detach the Surat from the pleasures of this world and incline it towards the Shabd internally. The Surat will emerge through the third Til, and intertwined in Shabd it will proceed internally. In this way progressing gradually, it will pass through Sahas-dal-Kanwal, Trikuti and two other intermediate regions and secure entrance into Nij Desh. But this task cannot be accomplished in one life. It will take four lives. In other words, there must be such an intense devotion for Radhasoami Dayal in the embodiment of the Sant Sat Guru that there is real detachment from pleasures of this world in an appreciable degree. And the Jiva is not so attached to them that he cannot do without them. When this state is achieved, his attention will be directed inwards with the grace of the Sant Sat Guru, and love for and faith in His Feet will be engendered. By His help, the Surat will get detached and separated from here. Abiding in the third Til, it will reach Sahas-dal-Kanwal and Trikuti. It will stay in Trikuti for some time, for reducing its inclinations towards lower regions. On being completely purified according to the standard of that region, when it is fit to resume further journey, it will meet the Sant Sat Guru, and a desire to make further progress will be created.

Recorded between 12 mid-night and 1 a. m. on January 1, 1949.

(8)

The Surat shall have to undergo all the strains and stresses of Kal and Maya to which all are subject in Pind. Its capacity to proceed inwards to higher regions will be augmented far beyond what it has at present. By the grace of the Sant Sat Guru it will be able to make inner progress swiftly. It will ultimately reach Maha-sunn, a region which is extremely dark and has un-manifested regions. Unaided, the Surat, by itself, will never be able to attain this region. It is the assistance and the company of the Sant Sat Guru alone that will enable it to do so and to reach Bhanwargupha. There the Surat will gain full consciousness and stable form of existence. Thenceforward, penetrating inwards, it will enter Sat Lok. There it will be fully absorbed in the rapturous bliss of the darshan of Sat Purush. Its longing for this darshan will become terribly acute. The Sant Sat Guru will then take the Surat still higher to Alakh Lok where it will have the darshan of Alakh Purush and stay

there for a considerable time to enjoy the wonderous spectacle and bliss of that region. The Surat will be ready for a still higher journey to Agam Lok. There will it reach in the company of Sant Sat Guru. Immense is the magnitude of the light and bliss of that most rapturous region, and the Surat will be simply overjoyed. Ultimately it will enter Radhasoami Dham, the bliss of which is indescribably immense and Surat will get merged therein and be happy.

(9)

The Surat, really speaking, is a denizen of Radhasoami Dham. It was originally one with Radhasoami and merged in Him. Compared to Radhasoami Dayal, it was however unrefined. Hence its descent to Agam Lok, Alakh Lok and Sat Lok. The bodies of the Presiding Deities of these regions were evolved by the Spirit-current descending from Radhasoami. The bodies of the denizens of these regions are also of the same essence. All these bodies are imperishable. These are not subject to decay and death. The dwellers of these regions shall permanently remain in these regions. The coarseness caused during this descent, was accentuated at the gate of Sat Purush and came down to Bhanwargupha. But still the creation of this region is pure, free from the impurity of Mana and Maya. But the coarseness collected at Bhanwargupha, descended further down. In the course of its descent, it was further denuded of spirituality. This current of denuded spirituality is known as Kal Purush. Kal Purush came down and stood helpless because he alone could not evolve any creation. Hence those Surats (spirits) which, due to their association with the current of lower spirituality, had become somewhat impure, were, by Mauj, made to descend. The current along which these Surats or spirit-entities descended and further evolved the creation of Jivas, is called "Adya". These two currents of Kal and Adya took their first location in Daswan Dwar.

(10)

Observing the creation of Akshar Purush, Kal and Adya were awe-stricken. Finding the creation there so refulgent and perfect, Kal and Adya felt that there was no scope for a creation of their own. Akshar Purush, however, consoled them that they could evolve the creation of the three regions below. Hence the currents of Kal and Adya descended to Trikuti. The subtle forces of five Tattwas (elements) and three Gunas (qualities) were created there, by the help of which the creation of Sahasdal-kanwal was

evolved. The Surats or spirits destined to assume human form, were located in Sahas-dal-kanwal because the spirit in man resides in Sahas-dal-kanwal. Descending to the plane of Mana (mind), it performs all the functions appertaining to the human body. The current descends further to Nabhi, Indri and Guda Chakras. These three Chakras are the centres of brute creation and functioning.

[At mid-night when the clock struck the hour of twelve and the New Year 1949 was ushered in, those present offered Bhents and the Shabd (hymn) "Guru ki kar har-dam-puja" was recited. (For translation of this Shabd see Sar Bachan (Poetry Part I, xviii .2 page 330).

On January 1, 1949, at 2 P.M., Babuji Maharaj visited the Holy Samadh of Soamiji Maharaj. He was taken there while lying in His bed. The concourse of Satsangis and Satsangins was very large. Inspite of weakness, while delivering the discourse, Babuji Maharaj spoke quite loudly. It was after several years that Maharaj visited the holy Samadh. The holy sandals of Soamiji Maharaj were placed in the hands of Babuji Maharaj. He placed them on His fore-head and eye-lids. As a token of thanksgiving, Satsangis and Satsangins offered Bhents. Maharaj came back to his room at quarter to 3. The Bachan delivered by Him is reproduced below.]

(11)

This region, where the Jiva is located at present, is not his real home. Kal and Maya have enticed him here. He is so much engrossed in the pleasures of mind and senses that he has lost all memory of his real home. He does not know how to repair there. He is in perpetual harassment and worry due to the round of pains and pleasures. He is day by day going down which adds to his troubles. Observing such a pitiable condition, Sant Sat Guru took pity upon the Jivas. He incarnated and gave His message to Jiva to return to his Nij Desh (real home) where there is nothing but bliss. There can be no escape from the pains and pleasures of this world without going back there. But the Jiva cannot undertake this return journey by his own efforts The Sant Sat Guru therefore imparts His own strength. Those who accept His teachings and adopt His Saran begin to move upwards internally. Besides Surat Shabd Yoga there is no remedy. But for those who are denuded

of spirituality this is difficult to perform. Otherwise it is the easiest and smoothest path leading to the real home. With some detachment from the objects and pleasures of the world the Surat can catch hold of Shabd, and move slowly upwards with the help of the Sant Sat Guru. On crossing third Til and reaching Sahas-dal kanwal the path would become smooth. Thereafter by Prem and Bhakti (love and devotion), it will go on crossing the regions of Trikuti, Sunn, Maha-sunn, Bhanwargupha, Sat Lok, Alakh Lok and Agam Lok, and ultimately rest and find abode in Radhasoami Dham. This is the Real Home and the Region of supreme bliss, where there is nothing but love. In fact the real form of Surat is love But in the pre-creational state it was unconscious. Now, when it returns there it will be fully conscious. and will fully partake of the bliss of Sat Purush Radhasoami. It will absolutely have no inclination to return to the lower regions.